संतबानी संग्रह

भाग १

(साखी)

जिस में

२४ संतो, साधों और परम भक्तों की चुनी हुई साखियाँ उन के संक्षिप्त जीवन-चरित्र और टिप्पनी के साथ छापी गई हैं।

"न भूतो न भविष्यति"— सुधाकर

——:※:——

All rights reserved.

[कोई साहब बिना इजाज़त के इस पुस्तक को नहीं छाप सकते]

प्रकाशक

बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग।

सन् १९३२ ई०

तीसरी बार] [दाम १।।)

॥ संतबानी ॥

संतबानी पुस्तक माला के छापने का अभिप्राय जगत-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी और उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उन में से विशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और जो छपी थीं सो ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में क्षेपक और त्रुटि से भरी हुई कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्तलिखित दुर्लभ ग्रन्थ या फुटकल शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये। भर-सक तो पूरे ग्रन्थ छापे गये हैं और फुटकल शब्दों की हालत में सर्व साधारण के उपकारक पद चुन लिये हैं। प्रायः कोई पुस्तक बिना दो लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है और कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत फ़ुट-नोट में दे दिये हैं। जिन महात्मा की बानी है उनका जीवन चरित्र भी साथ ही छापा गया है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उनके वृत्तान्त और कौतुक संक्षेप से फ़ुट-नोट में लिख दिए गये हैं।

दो अन्तिम पुस्तकें इस पुस्तक-माला की अर्थात् संतबानी संग्रह भाग १ (साखी) और भाग २ (शब्द) छप चुकीं, जिनका नमूना देख कर महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी बैकुंठ-बासी ने गद्गद होकर कहा था—"न भूतो न भविष्यति"।

एक अनूठी और अद्वितीय पुस्तक महात्माओं और विद्वानों के बचनों की "लोक परलोक हितकारी" नाम की गद्य में १९१६ में छपी है जिसके विषय में बैकुंठ बासी श्रीमान् महाराजा काशी नरेश ने लिखा था—"वह उपकारी शिक्षाओं का अचरजी संग्रह है जो सोने के तोल सस्ता है"।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तकमाला के जो दोष उनकी दृष्टि में आवें उन्हें हमको कृपा करके लिख भेजें जिससे वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें।

हिन्दी में और भी अनूठी पुस्तकें छपी हैं, जिनमें प्रेम कहानियों के द्वारा शिक्षा बतलाई गई है। उनके नाम और दाम सूची से, जो कि इस पुस्तक के अंत में छपी है, देखिये। अभी हाल में कबीर बीजक और अनुराग सागर भी छापे गए हैं जिनका दाम क्रमशः ॥।) और १) है।

मैनेजर, बेलवेडियर छापाख़ाना,

जुलाई १९३३ ई०

इलाहाबाद।

प्रथम संस्करण

की

सूचना

यह संग्रह प्राचीन संतों और महात्माओं की बानी का जिन में से बहुतों के पंथ भारतवर्ष में प्रचलित हैं हमारे बैकुंठबासी मित्र, संतबानी के रसिक, ज्योतिष विद्या के सूर्य्य महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी के आग्रह से छः बरस हुए आरंभ किया गया था और थोड़े से महात्माओं की साखियाँ और पद जो उनके जीवन समय में चुने जा चुके थे उन को दिखलाये गये जिन को पढ़ कर वह गदगद होकर बोले "न भूतो न भविष्यति"। इस पर महंत गुरुप्रसाद जी जो पास बैठे थे बोले कि पंडित जी आपने इस नमूने के विषय में जो "न भूतो" कहा वह तो ठीक है पर "न भविष्यति" कैसे कहा, क्या आगे इस से बढ़कर संग्रह संतबानी का नहीं रचा जा सकता? पंडित जी ने जवाब दिया कि हाँ यदि इन संतों से बढ़कर महात्मा औतार धरैं या यही संत फिर देह धर कर इस से उत्तम बानी कथैं तो हो सकता है क्योंकि इन महात्माओं की बानी का हीर संग्रहकर्त्ता ने काढ़ कर धर दिया है।

पंडित जी के चोला छोड़ने पर इस संग्रह के पूरा करने का उत्साह भी सम्पादक का ढीला हो गया परन्तु अब कि संतबानी पुस्तक-माला के जितने ग्रंथ छापने को थे छप चुके अपने मित्र की इच्छानुसार इस ग्रन्थ के पूरा करने की ओर ध्यान गया और यथा शक्ति ठीक करके वह अब छापा जाता है।

इस ग्रन्थ के दो भाग रक्खे गये हैं—पहिला साखी-संग्रह और दूसरा शब्द-संग्रह। पहिले भाग में कुल ऐसे महात्मा जिनकी साखियाँ हम को मिलीं छापी गईं हैं और उनका संक्षिप्त जीवन-चरित्र हर एक की बानी के सिरे पर दे दिया गया है। ऐसे महात्मा जिन के केवल पद मिले उनका संक्षिप्त जीवन-वृत्तान्त दूसरे भाग में इसी प्रकार से दिया गया है। सब मिला कर ३४ महात्माओं की चुनी हुई बानी इस ग्रन्थ के दोनों भागों में छपी हैं जिन में से २४ महात्मा वह हैं जिन के ग्रन्थ सन्तबानी पुस्तक-माला में छप चुके हैं—उन में ऐसी रोचक साखियाँ और पद बढ़ा दिये गये हैं जो पीछे से मिले। इन के सिवाय १० ऐसे महात्मा जिनकी बानी पहिले इस कारन से नहीं छपी कि या तो वह बहुत जगह छप चुकी है या उसके थोड़े ही पद मिले उनकी चुनी हुई साखी और शब्द भी इस संग्रह में छाप दिये गये हैं चाहे वह एक ही पद हो। इन महात्माओं के नाम दूसरे पृष्ठ पर दिये हैं:—

संतबानी पुस्तक-माला वाले महात्मा

१ कबीर साहिब
२ रैदास जी
३ धनी धर्म्मदासजी
४ गुरु नानक
५ मीरा बाई
६ दादू दयाल
७ बाबा मलूक दास
८ सुन्दरदासजी
९ धरनीदासजी
१० जगजीवन साहिब
११ यारी साहिब
१२ दरिया साहिब (बिहार)
१३ दरिया साहिब (मारवाड़)
१४ दूलनदासजी
१५ बुल्ला साहिब
१६ केशवदासजी
१७ गरीबदासजी
१८ सहजो बाई
१९ दया बाई
२० [illegible]
२१ गुलाल साहिब
२२ भीखा साहिब
२३ पलटू साहिब
२४ तुलसी साहिब

[गुरु नानक साहिब के पद और सुन्दरदासजी व पलटू साहिब की साखियाँ पहिले नहीं छपी थीं अब मिली हैं]

दूसरे महात्मा

१ पीपाजी
२ नामदेवजी
३ सदनाजी
४ सूरदासजी
५ स्वामी हरिदास
६ नरसी मेहता
७ गुसाईं तुलसीदासजी
८ नाभाजी
९ बुल्लेशाह
१० काष्ठजिह्वा स्वामी

बानियाँ महात्माओं की उनके जीवन समय के क्रम में रक्खी गई हैं जिस से समय समय की परमार्थी उन्नति, बिबेक, बिचार और भाषा की दशा दरस जाय।

शब्दों की अक्षर-रचना और मात्रा प्रत्येक देश की बोली और लेख के अनुसार रक्खी गई है जिस में मूल न बदले, सब को भाषा के एक ही साँचे में नहीं ढाला गया है—जैसे पंजाबी भाषा में "कुछ" को "कुज", "बैठ" को "बहु" कहते हैं; राजपूताना में "दाँव" को "डाँव", "दीक्षा" को "दख्या", "सुना" को "सुण्या", इत्यादि।

अन्य भाषाओं के पदों और शब्दों के अर्थ, और संकेतों या किस्सा-तलब बातों की कथा या भेद फुट-नोट में थोड़े में जता दिये गये हैं।

भूल और अशुद्धियाँ जो संतबानी पुस्तक-माला के मूल पाठ या नई लिपियों में पाई गईं वह भर सक सुधार दी गई हैं और छापे की त्रुटियां जो आँख की चूक से रह गईं और बिशेष कर मात्राओं के प्रेस के दबाव से टूट जाने से पैदा हो गईं एक अशुद्धि पत्र में दिखला दी गई हैं।

अंत में हम अपने उन सहायकों को हृदय से धन्यवाद देते हैं जिन्होंने नये पद या साखियाँ भेज कर या पदों और साखियों के क्रम से बैठालने और

मूल या छापे की त्रुटियों के शोधने में इस काम में सहायता की। पंडित हरि-नारायण जी पुरोहित बी० ए० (जयपुर राज के अकौन्टन्ट-जेनरल) ने महात्मा सुन्दरदासजी की उत्तम साखियाँ, और ठाकुर गंगाबख्श सिंह (ज़मींदार मौज़ा टँडवा ज़िला फैज़ाबाद) ने पलटू साहिब और दूलनदासजी की बहुत सी साखियाँ और पद भेजे, और लाला गिरधारी लाल साहिब (रईस धौलपुर) ने कबीर साहिब की साखियों की तर्तीब और नई साखियों के भेजने में सहायता की। बाबा अचिन्त मग्न साधू राधास्वामी मत (इलाहाबाद) ने मूल पाठ के शोधने और संकेतों का भेद लिखने में असली और पूरी मदद दी, और बाबू वैष्नवदास सहिब बी० ए० (अकौन्टन्ट जेनरल रियासत इन्दौर) और बाबू तेजसिंहजी बी० ए०, एल० एल० बी० (गत बख़शी ख़ुमानसिंह साहिब सी० एस० आई० इन्दौरवाले के पोते) से पदों को क्रम से स्थापन करने और प्रूफ़ के शोधने में सहायता मिली। राव बहादुर लाला श्याम सुन्दर लाल साहिब, बी० ए०, सी० आई० ई० (मुरार, ग्वालियर) जो इस परोपकार के काम में जीवन-चरित्र आदि का मसाला भेजने में मददगार रहे उनकी सहायता किसी से कम नहीं रही। इन सब महाशयों को हम पुनः पुनः धन्यबाद देते हैं॥

जो प्रेमी और रसिक जन इस निवेदन के पृष्ठ २ वाले महात्माओं की उत्तम और मनोहर साखियाँ या पद जो संतबानी पुस्तक माला के किसी ग्रंथ में नहीं छपे हैं कृपा पूर्वक चुन कर भेज देंगे वह धन्यबाद सहित दूसरे छापे में शामिल किये जायँगे।

अब सब लिपियाँ संतबानी की जो सम्पादक ने अनुमान बीस बरस के उद्योग से इकट्ठा करके यथा शक्ति उन की त्रुटियों को ठीक किया था छप चुकीं सिवाय पलटू साहिब की थोड़ी सी मनोहर साखियों और बहुत से उत्तम पदों के जो उन महात्मा की बानी छापने के पीछे हम को मिले। यह पुराने पदों के साथ तीन भागों में इस क्रम से रक्खी गई हैं कि पहले भाग में केवल कुंडलियाँ दूसरे भाग में रेख़ते, झूलने, अरिल, छंद इत्यादि, और तीसरे भाग में साखियाँ और रागों के पद वा भजन। अनेक त्रुटियाँ भी जो पुराने छापे में रह गई थीं नई लिपि से मिलान करके सुधार दी गई हैं॥

इलाहाबाद,
मई सन १९१५

अधम,
संतबानी पुस्तक-माला संपादक।

सूचीपत्र

—०:*:०—

विषय	साखी संख्या	पृष्ठ
१ कबीर साहिब	७००	१—६४
२ रैदासजी	१४	६५—६६
३ गुरु नानक	२८	६७—७०
४ गुसाईं तुलसीदास जी	४१ ५०	७१—७५ २२९—२४७
५ दादू दयाल	२२५	७६—९९
६ बाबा मलूकदास	७०	९९—१०५
७ सुंदरदासजी	६२	१०६—१११
८ धरनीदासजी	५०	११२—११६
९ जगजीवन साहिब	२२	११७—११९
१० यारी साहिब	१०	१२०—१२१
११ दरिया साहिब (बिहार वाले)	४२	१२१—१२५
१२ दरिया साहिब (मारवाड़ वाले)	८०	१२६—१३३
१३ दूलनदासजी	६७	१३३—१३९
१४ बुल्ला साहिब	७	१४०
१५ केशवदास जी	११	१४१
१६ चरनदासजी	१०१ ७	१४२—१५१ २४७
१७ बुल्लेशाह	२२	१५१—१५४
१८ सहजो बाई	१३०	१५४—१६६
१९ दया बाई	१४१	१६७—१८०
२० गरीबदासजी	२८२	१८१—२०८
२१ गुलाल साहिब	२१	२०८—२१०
२२ भीखा साहिब	३०	२१०—२१३
२३ पलटू साहिब	१३७	२१३—२२६
२४ तुलसी साहिब	१२७	२२६—२३८
२५ फुटकर	११	२४८

कबीर साहिब

जीवन समय—१४५५ से १५७५ तक। जन्म और सतसंग स्थान—काशी। आश्रम—गृहस्थ। गुरू—स्वामी रामानंद।

कबीर साहिब का एक बिधवा ब्राह्मनी के उदर से स्वामी रामानन्द के आशिर्बाद से उत्पन्न होना कहा जाता है। माता ने लाजबश नौजन्मतुआ बालक को लहरतारा के तलाव में बहा दिया जिस के किनारे नूरअली जुलाहा सूत धोने आया और बालक को बहता देखकर निकाल लाया और पाला पोसा इसी से कबीर जुलाहा कहलाये जिस की महिमा संसार में सूरज के समान प्रकाशमान है। यह प्रथम संत सतगुरु हुए। इन्होंने मूर्त्ति पूजा, देवी देव की उपासना, जाति भेद, और मद्य मांस के अहार का बड़े ज़ोर से खंडन किया है। इन की ऊँची गति, प्रचंड भक्ति और बैराग असदश थे और इन के अनुभवी उपदेश और शिक्षा ऐसी अनूठी हैं जिस के हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सबही क़ायल हैं और उनका सविस्तर जीवन-चरित्र और बहुत से बचन और उपदेश अँगरेज़ी व फ़ारसी में छापे हैं। इन्होंने मगहर (ज़िला बस्ती) में जाकर अपना चोला छोड़ा जहाँ के मरने से पंडितों के मति के अनुसार गदहे का जन्म मिलता है। मगहर में इनके हिन्दू शिष्यों की बनाई हुई समाधि और मुसलमानों की बनाई हुई क़बर दोनों अब तक मौजूद हैं। [सबिस्तर जीवन-चरित्र कबीर शब्दावली भाग १ में छपा है]।

॥ गुरु देव ॥

गुरु को कीजै दंडवत, कोटि कोटि परनाम।
कीट न जानै भृङ्ग को, वह करि ले आप समान ॥ १ ॥
सतगुरु सम को है सगा, साधू सम को दात।
हरि समान को हितू है, हरिजन सम को जात ॥ २ ॥
सतगुरु की महिमा अनँत, अनँत किया उपकार।
लोचन अनँत उघारिया, अनँत दिखावनहार ॥ ३ ॥

गुरु गोबिंद दोऊ खड़े, का के लागू पाँय।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोबिंद दियो बताय ॥ ४ ॥
सब धरती कागद करूँ, लेखनि सब बनराय।
सात समुँद की मसि करूँ, गुरु गुन लिखा न जाय ॥ ५ ॥
सत्त नाम के पटतरे, देवे को कछु नाहिं।
क्या लै गुरु संतोषिये, हवस रही मन माहिं ॥ ६ ॥
मन दीया तिन सब दिया, मन की लार[1] सरीर।
अब देवे को कछु नहीं, यों कह दास कबीर ॥ ७ ॥
तन मन दिया तो भल किया, सिर का जासो भार।
कबहूँ कहै कि मैं दिया, धनी सहैगा मार ॥ ८ ॥
गुरु कुम्हार सिष कुंभ[2] है, गढ़ि गढ़ि काढ़ै खोट।
अंतर हाथ सहार दै, बाहर बाहै[3] चोट ॥ ९ ॥
सतगुरु महल बनाइया, प्रेम गिलावा दीन्ह।
साहिब दरसन कारने, सबद झरोखा कीन्ह ॥ १० ॥
ज्ञान समागम प्रेम सुख, दया भक्ति बिस्वास।
गुरु सेवा तें पाइये, सतगुरु[4] चरन निवास ॥ ११ ॥
कबीर ते नर अंध हैं, गुरु को कहते और।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर ॥ १२ ॥
गुरू बड़े गोबिंद तें, मन में देखु बिचार।
हरि सुमिरै सो वार है, गुरु सुमिरै सो पार ॥ १३ ॥
गुरू मिला तब जानिये, मिटै मोह तन ताप।
हर्ष सोक ब्यापै नहीं, तब गुरु आपै आप ॥ १४ ॥
जल परमानै माछरी, कुल परभावै बुद्धि।
जा को जैसा गुरु मिलै, ता को तैसो सुद्धि ॥ १५ ॥

---

(१) साथ। (२) घड़ा (३) लगाता है। (४) सत्य पुरुष।

यह तन बिष की बेलरी, गुरु अमृत की खान।
सीस दिये जो गुरु मिलैं, तौ भी सस्ता जान ॥ १६॥
बहे बहाये जात थे, लोक बेद के साथ।
पैंड़ा में सतगुरु मिले, दीपक दीन्हा हाथ ॥ १७॥
ऐसा कोई ना मिला, सत्त नाम का मीत।
तन मन सौंपै मिरग ज्यौं, सुनै बधिक का गीत ॥ १८॥
ऐसे तो सतगुरु मिले, जिन से रहिये लागि।
सब ही जग सीतल भया, जब मिटी आपनी आगि ॥ १९॥
सतगुरु हम से रीझि कै, एक कहा परसंग।
बरसा बादल प्रेम का, भींजि गया सब अंग ॥ २०॥
सतगुरु साचा सूरमा, नख सिख मारा पूर।
बाहर घाव न दीसई, भीतर चकनाचूर ॥ २१॥
सतगुरु मारा तान कर, सबद सुरंगी बान।
मेरा मारा फिर जिये, तो हाथ न गहूँ कमान ॥ २२॥
सतगुरु मारा प्रेम से, रही कटारी टूट।
वैसी अनी न सालही, जैसी सालै मूठ[१] ॥ २३॥
कोटिन चंदा ऊगवैं, सूरज कोटि हजार।
सतगुरु मिलिया बाहरे, दीसत घोर अँधार ॥ २४॥
जीव अधम औ कुटिल है, कबहूँ नहिं पतियाय।
ता को औगुन मेटि कै, सतगुरु होत सहाय ॥ २५॥
जन कबीर बंदन करै, केहि बिधि कीजै सेव।
वार पार की गम नहीं, नमो नमो गुरुदेव ॥ २६॥

---

(१) अनी अर्थात नोक कटारी की जो टूट कर हृदय में रह गई वह इतना कष्ट नहीं देती है जितना मूठ का बाहर रह जाना, यानी प्रेम कटारी समूची क्यों न घुस गई।

॥ झूठे गुरु ॥

जा का गुरु है आँधरा, चेला निपट निरंध[१]।
अंधे अंधा ठेलिया, दोऊ कूप परंत ॥ १ ॥
पूरा सतगुरु ना मिला, सुनी अधूरी सीख।
स्वाँग जती का पहिरि कै, घर घर माँगै भीख ॥ २ ॥
गुरू गुरू में भेद है, गुरू गुरू में भाव।
सोई गुरु नित बंदिये, (जो) सबद बतावै दाव ॥ ३ ॥
कनफूका गुरु हद्द का, बेहद का गुरु और।
बेहद का गुरु जब मिलै, (तब) लहै ठिकाना ठौर ॥ ४ ॥
बंधे को बंधा मिलै, छूटै कौन उपाय।
कर सेवा निरबंध की, पल में लेत छुड़ाय ॥ ५ ॥
झूठे गुरु के पच्छ को, तजत न कीजै बार।
द्वार न पावै सबद का, भटकै बारंबार ॥ ६ ॥

॥ नाम ॥

आदि नाम पारस अहै, मन है मैला लोह।
परसत ही कंचन भया, छूटा बंधन मोह ॥ १ ॥
आदि नाम निज मूल है, और मंत्र सब डार[२]।
कहै कबीर निज नाम बिनु, बूड़ि मुआ संसार ॥ २ ॥
कोटि नाम संसार में, ता तें मुक्ति न होय।
आदि नाम जो गुप्त जप, बूझै बिरला कोय ॥ ३ ॥
राम राम सब कोइ कहै, नाम न चीन्है कोय।
नाम चीन्हि सतगुरु मिलै, नाम कहावै सोय ॥ ४ ॥
जो जन होइहै जौहरी, रतन लेहि बिलगाय।
सोहं सोहं जपि मुआ, मिथ्या जनम गँवाय ॥ ५ ॥

---

(१) जिसकी आँखें बिलकुल बंद हैं। (२) शाखा।

नाम रतन धन मुझ्झ में, खान खुली घट माहिं ।
सैंतमैंत ही देत हौं, गाहक कोई नाहिं ॥ ६ ॥
ज्ञान दीप परकास करि, भीतर भवन जराय ।
तहाँ सुमिर सतनाम को, सहज समाधि लगाय ॥ ७ ॥
एक नाम को जानि करि, दूजा देइ बहाय ।
तीरथ ब्रत जप तप नहीं, सतगुरु चरन समाय ॥ ८ ॥
अस अवसर नहिं पाइहौ, धरौ नाम कढ़िहार[1] ।
भवसागर तरि जाव तब, पलक न लागै बार ॥ ९ ॥
आसा तो इक नाम की, दूजी आस निरास ।
पानी माहीं घर करै, तौहू मरै पियास ॥ १० ॥
नाम जो रत्ती एक है, पाप जो रती हजार ।
आध रती घट संचरै, जारि करै सब छार ॥ ११ ॥
सत्त नाम निज औषधी, सतगुरु दई बताय ।
औषधि खाय रुपथ[2] रहि, ता की बेदन जाय ॥ १२ ॥
सुपनहुँ में बर्राइ के, धोखेहु निकरै नाम ।
वा के पग की पैंतरी[3], मेरे तन को चाम ॥ १३ ॥
जा की गाँठी नाम है, ता के है सब सिद्धि ।
कर जोरे ठाढ़ी सबै, अष्ट सिद्धि नव निद्धि ॥ १४ ॥
नाम जपत कुष्टी भला, चुइ चुइ परै जु चाम ।
कंचन देंह केहि काम की, जा मुख नाहीं नाम ॥ १५ ॥
सुख के माथे सिलि परै, (जो) नाम हृदय से जाय ।
बलिहारी वा दुक्ख की, पल पल नाम रटाय ॥ १६ ॥
लेने को सतनाम है, देने को अन दान ।
तरने को आधीनता, बूड़न को अभिमान ॥ १७ ॥

---

(१) निकालने वाला । (२) पहरेज़ी खाना । (३) जूती ।

जैसा माया मन रम्यो, तैसो नाम ध्याय।
तारा मंडल बेधि कै, तब [illegible] सतपुर जाय॥ १८॥
नाम पीव का छोड़ि कै, करै आन का जाप।
बेस्या केरा पूत ज्यौं, कहै कौन को बाप॥ १९॥
पावक रूपी नाम है, सब घट रहा समाय।
चित चकमक लागै नहीं, धूआँ ह्वै ह्वै जाय॥ २०॥
लूटि सकै तो लूटि ले, सत्त नाम को लूटि।
पाछे फिरि पछिताहुगे, प्रान जाहिं जब छूटि॥ २१॥

॥ सुमिरन ॥

सुमिरन से सुख होत है, सुमिरन से दुख जाय।
कह कबीर सुमिरन किये, साईं माहिं समाय॥ १॥
दुख में सुमिरन सब करै, सुख में करै न कोय।
जो सुख में सुमिरन करै, तो दुख काहे होय॥ २॥
सुमिरन की सुधि यों करै, ज्यौं गागर पनिहार।
हालै डोलै सुरति में, कहै कबीर बिचार॥ ३॥
सुमिरन की सुधि यों करै, जैसे दाम कँगाल।
कह कबीर बिसरै नहीं, पल पल लेइ सम्हाल॥ ४॥
सुमिरन सुरति लगाइ के, मुख तें कछू न बोल।
बाहर के पट देइ के, अंतर के पट खोल॥ ५॥
माला फेरत मन खुसी, ता तें कछू न होय।
मन माला के फेरते, घट उँजियारो होय॥ ६॥
कबीर माला मनहि को, और संसारी भेख।
माला फेरे हरि मिलैं, तो गले रहट के देख॥ ७॥
माला तो कर में फिरै, जीभ फिरै मुख माहिं।
मनुवाँ तो दहुँ दिसि फिरै, यह तो सुमिरन नाहिं॥ ८॥

तन थिर मन थिर बचन थिर, सुरत निरत थिर होय ।
कह कबीर इस पलक को, कलप न पावै कोय ॥ ९ ॥
सहजेही धुनि होत है, हर दम घट के माहि ।
सुरत सबद मेला भया, मुख की हाजत नाहि ॥ १० ॥
जाप मरै अजपा मरै, अनहद भी मरि जाय ।
सुरत समानी सबद में, ताहि काल नहिं खाय ॥ ११ ॥
जप तप संजम साधना, सब सुमिरन के माहि ।
कबीर जानै भक्त जन, सुमिरन सम कछु नाहि ॥ १२ ॥
कबीर निर्भय नाम जपु, जब लगि दीवा बाति ।
तेल घटै बाती बुझै, तब सोवो दिन राति ॥ १३ ॥
जिवना थोरा ही भला, जो सत सुमिरन होय ।
लाख बरस का जीवना, लेखे धरै न कोय ॥ १४ ॥
सुमिरन का हल जोतिये, बीजा नाम जमाय ।
खंड ब्रह्मंड सूखा पड़ै, तहू न निस्फल जाय ॥ १५ ॥
देखा देखी सब कहै, भोर भये हरि नाम ।
अर्ध रात कोइ जन कहै, खानाजाद गुलाम ॥ १६ ॥
कबीर धारा अगम को, सतगुरु दई लखाय ।
उलटि ताहि सुमिरन करो, स्वामी संग मिलाय ॥ १७ ॥

॥ अनहद शब्द ॥

गगन मँडल के बीच में, जहाँ सोहंगम डोरि ।
सबद अनाहद होत है, सुरत लगी तहँ मोरि ॥ १ ॥
कबीर कमल प्रकासिया, ऊगा निर्मल सूर ।
रैन अँधेरी मिटि गई, बाजै अनहद तूर ॥ २ ॥
निझर झरै अनहद बजै, तब उपजै ब्रह्म गियान ।
अविगति अंतर प्रगट ही, लगा प्रेम निज ध्यान ॥ ३ ॥

सुन्न मँडल में घर किया, बाजै सबद रसाल।
रोम रोम दीपक भया, प्रगटे दीनदयाल ॥ ४ ॥
कबीर सबद सरीर में, बिन गुन[1] बाजै ताँत।
बाहर भीतर रमि रहा, ता तें छूटी भ्राँत ॥ ५ ॥
सबद सबद बहु अंतरा, सार सबद चित देय।
जा सबदै साहिब मिलै, सोई सबद गहि लेय ॥ ६ ॥
सबद सबद सब कोइ कहै, वो तो सबद बिदेह।
जिभ्या पर आवै नहीं, निरखि परखि करि लेह ॥ ७ ॥
एक सबद सुखरास है, एक सबद दुखरास।
एक सबद बंधन कटै, एक सबद गल फाँस ॥ ८ ॥
सबद गुरू को कीजिए, बहुतक गुरू लबार।
अपने अपने लोभ को, ठौर ठौर बटमार ॥ ९ ॥
सबद बिना स्रुति आँधरी, कहो कहाँ को जाय।
द्वार न पावै सबद का, फिरि फिरि भटका खाय ॥ १० ॥
सोरठा—ज्ञानी सुनहु सँदेस, सबद बिबेकी पेखिया।
कह्यो मुक्ति पुर देस, तीनि लोक के बाहिरे ॥ ११ ॥
मन तहँ गगन समाय, धुनि सुनि सुनि कै मगन ह्वै।
नहिं आवै नहिं जाय, सुन्न सबद थिति पावही ॥ १२ ॥

॥ चितावनी ॥

कबीर गर्ब न कीजिये, काल गहे कर केस।
ना जानौं कित मारिहै, क्या घर क्या परदेस ॥ १ ॥
हाड़ जरै ज्यों लाकड़ी, केस जरै ज्यों घास।
सब जग जरता देखि करि, भये कबीर उदास ॥ २ ॥

---

(१) रस्सी।

झूठे सुख को सुख कहैं, मानत हैं मन मोद।
जगत चबेना काल का, कुछ मुख में कुछ गोद ॥ ३ ॥
कुसल कुसल हो पूछते, जग में रहा न कोय।
जरा[1] मुई ना भय मुआ, कुसल कहाँ से होय ॥ ४ ॥
पानी केरा बुदबुदा, अस मानुष की जाति।
देखत ही छिपि जायगी, ज्यों तारा परभाति ॥ ५ ॥
रात गँवाई सोय करि, दिवस गँवायो खाय।
हीरा जनम अमोल था, कौड़ी बदले जाय ॥ ६ ॥
लूटि सकै तो लूटि ले, सत्त नाम भंडार।
काल कंठ तैं पकरिहै, रोकै दसो दुवार ॥ ७ ॥
आछे दिन पाछे गये, गुरु से किया न हेत।
अब पछतावा क्या करै, जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत ॥ ८ ॥
आज कहै मैं काल्ह भजूँगा, काल्ह कहै फिर काल्ह।
आज काल्ह के करत ही, औसर जासी चाल ॥ ९ ॥
काल्ह करै सो आज करु, आज करै सो अब्ब।
पल में परलै होयगी, बहुरि करैगा कब्ब ॥ १० ॥
पाव पलक की सुधि नहीं, करै काल्ह का साज।
काल अचानक मारसी, ज्यों तीतर को बाज ॥ ११ ॥
कबीर नौबत आपनी, दिन दस लेहु बजाय।
यह पुर पट्टन[2] यह गली, बहुरि न देखौ आय ॥ १२ ॥
पाँचो नौबत बाजती, होत छतीसो राग।
सो मंदिर खाली पड़ा, बैठन लागे काग ॥ १३ ॥
कबीर थोड़ा जीवना, माँडै बहुत मँडान।
सबहि उभा[3] में लगि रहा, राव रंक सुल्तान ॥ १४ ॥

कहा चुनावै मेड़ियाँ, लंबो भीति उसारि[1]।
घर तो साढ़े तीन हथ, घना तो पौने चार[2] ॥१५॥
कबीर गर्ब न कीजिये, ऊँचा देखि अवास।
काल्ह परौं भुइँ लेटना, ऊपर जमसो घास ॥१६॥
पक्की खेती देखि करि, गर्बै कहा किसान।
अजहूँ झोला बहुत है, घर आवै तब जान ॥१७॥
माटी कहै कुम्हार को, तूँ क्या रूँदै मोहिं।
इक दिन ऐसा होइगा, मैं रूँदूँगी तोहिं ॥१८॥
कहा कियो हम आइ के, कहा करैंगे जाइ।
इत के भये न उत्त के, चाले मूल गँवाइ ॥१९॥
यह तन काँचा कुंभ[3] है, लिये फिरै था साथ।
टपका[4] लागा फूटिया, कछु नहिं आया हाथ ॥२०॥
कबीर यह तन जात है, सकै तो ठौर लगाव।
कै सेवा कर साध को, कै गुरु के गुन गाव ॥२१॥
मोर तोर की जेवरी[5], बटि बाँधा संसार।
दास कबीरा क्यों बँधै, जा के नाम अधार ॥२२॥
आये हैं सो जाइँगे, राजा रंक फकीर।
एक सिंघासन चढ़ि चले, इक बाँधे जात जँजीर ॥२३॥
कबीर यह तन जात है, सकै तो राखु बहोरि।
खाली हाथों वे गये, जिन के लाख करोरि ॥२४॥
आस पास जोधा खड़े, सभी बजावैं गाल।
मंझ महल से लै चला, ऐसा काल कराल ॥२५॥

---

(१) ओसारा। (२) जीव का घर जो शरीर है उसका नाप साढ़े तीन हाथ होता है या बहुत लम्बा हुआ तो पौने चार हाथ। (३) मिट्टी का घड़ा। (४) ठोकर। (५) रस्सी।

हाँकौं परबत फाटते, समुँदर घूँट भराय।
ते मुनिवर धरती गले, क्या कोइ गर्ब कराय॥२६॥
या दुनिया में आइ के, छाड़ि देइ तू ऐंठ।
लेना होय सो लेइ ले, उठी जात है पैंठ॥२७॥
तन सराय मन पाहरू[1], मनसा उतरी आय।
कोउ काहू का है नहीं, (सब) देखा ठोंक बजाय॥२८॥
मैं मैं बड़ी बलाय है, सको तो निकसो भागि।
कहै कबीर कब लगि रहै, रूई लपेटी आगि॥२९॥
कबीर आप ठगाइये, और न ठगिये कोय।
आप ठगे सुख ऊपजै, और ठगे दुख होय॥३०॥
कुल करनी के कारने, हंसा गया बिगोय।
तब क्या कुल की लाज है, चार पाँव का होय॥३१॥
मैं भँवरा तोहिं बरजिया, बन बन बास न लेय।
अटकैगा कहुँ बेल से, तड़पि तड़पि जिय देय॥३२॥
ऐसी गति संसार की, ज्यों गाड़र की ठाट[2]।
एक पड़ा जेहि गाड़[3] में, सबै जाहिं तेहि बाट॥३३॥
तू मत जानै बावरे, मेरा है सब कोय।
पिंड प्राण से बँधि रहा, सो अपना नहिं होय॥३४॥
एक सीस का मानवा, करता बहुतक होस[4]।
लंकापति रावन गया, बीस भुजा दस सीस॥३५॥
इक दिन ऐसा होयगा, कोउ काहू का नाहिं।
घर की नारी[5] को कहै, तन की नारी[6] जाहिं॥३६॥

---

(१) पहरेदार। (२) भेंड़ का झुंड। (३) गड़हा। (४) हिर्स। (५) स्त्री। (६) नाड़ी।

काल चक्र चक्की चलै, सदा दिवस अरु रात।
सगुन अगुन दुइ पाटला, ता मेँ जीव बिसात ॥३७॥
आसै पासै जो फिरै, निपट पिसावै सोय।
कीला से लागा रहै, ता को बिघन न होय[1] ॥३८॥
नाम भजो तो अब भजो, बहुरि भजोगे कब्ब।
हरियर हरियर रूखड़े, ईँधन हो गये सब्ब ॥३९॥
माली आवत देखि कै, कलियाँ करैँ पुकारि।
फूली फूली चुनि लिये, कालिह हमारो बारि[2] ॥४०॥
हम जानैँ थे खाहिँगे, बहुत जमीँ बहु माल।
ज्योँ का त्योँ ही रहि गया, पकरि लै गया काल ॥४१॥
दव[3] की दाहो लाकड़ो, ठाढ़ो करै पुकार।
अब जो जावँ लुहार घर, डाहै दूजी बार ॥४२॥
मेरा बीर[4] लुहारिया, तू मत जारै मोहिँ।
इक दिन ऐसा होयगा, मैँ जारौँगी तोहि ॥४३॥
मरती बिरिया पुन[5] करै, जीवत बहुत कठोर।
कहै कबीर क्योँ पाइये, काढ़े खाँड़ा चोर[6] ॥४४॥
जा को रहना उत्त घर, सो क्योँ लोड़ै[7] इत्त।
जैसे परघर पाहुना, रहै उठाये चित्त ॥४५॥
कबीर नाव है झाँझरो, कूरा[8] खेवनहार।
हलके हलके तिरि गये, बूड़े जिन सिर भार ॥४६॥

---

(१) मुँह से सभी कहते हैँ कि काल की चक्की चल रही है पर सच्चे मन से कोई नहीँ मानता नहीँ तो कीला जिसकी सत्ता से वह घूमती है अर्थात भगवंत को ऐसा दृढ़ कर पकड़ै कि आवागवन से रहित हो जाय। (२) पारी। (३) अगिन। (४) भाई। (५) पुन्य दान। (६) जब चोर तलवार निकाले खड़ा है उसको कैसे पकड़ सकोगे। (७) चाहै या चाह करै। (८) कुटिल।

जो ऊगै सो अत्थवै[1], फूलै सो कुम्हिलाय।
जो चुनिये सो ढहि परै, जामै[2] सो मरि जाय ॥४७॥
मनुष जन्म दुर्लभ अहै, होय न बारंबार।
तरवर से पत्ता झरै, बहुरि न लागै डार ॥४८॥
साथी हमरे चलि गये, हम भी चालनहार।
कागद में बाकी रही, ता तेँ लागी बार ॥४९॥
खुलि खेलो संसार मेँ, बाँधि न सक्कै कोय।
घाट जगाती क्या करै, सिर पर पोट[3] न होय ॥५०॥

॥ भक्ती ॥

गुरु भक्ती अति कठिन है, ज्योँ खाँड़े की धार।
बिना साच पहुँचै नहीँ, महा कठिन ब्यौहार ॥ १ ॥
कबीर गुरु की भक्ति का, मन मेँ बहुत हुलास।
मन मनसा माँजै नहीँ, होन चहत है दास ॥ २ ॥
हरष बड़ाई देखि करि, भक्ति करै संसार।
जब देखै कछु हीनता, औगुन धरै गँवार ॥ ३ ॥
भक्ति भेष बहु अंतरा, जैसे धरनि अकास।
भक्त लीन गुरु चरन मेँ, भेष जगत की आस ॥ ४ ॥
देखा देखी भक्ति कौ, कबहूँ न चढ़सी रंग।
बिपति पड़े योँ छाड़सी, ज्योँ केँचुली भुजंग ॥ ५ ॥
भक्ति भाव भादोँ नदी, सबै चलीँ घहराय।
सरिता सोई सराहिये, जो जेठ मास ठहराय ॥ ६ ॥
भक्ति दुवारा साँकरा, राई दसवेँ भाव[4]।
मन ऐरावत[5] ह्वै रहा, कैसे होइ समाव ॥ ७ ॥

(१) अस्त होय ; डूबै। (२) जनमै। (३) कर्म का बोझ। (४) राई के दसवेँ

भक्ति निसेनी[1] मुक्ति की, संत चढ़े सब धाय।
जिन जिन मन आलस किया, जनम जनम पछिताय ॥ ८ ॥
सत्त नाम हल जोतिया, सुमिरन बीज जमाय।
खंड ब्रह्मंड सूखा पड़ै, भक्ति बीज नहिं जाय ॥ ९ ॥
जब लगि भक्ति सकाम है, तब लगि निरफल सेव।
कह कबीर वह क्यों मिलै, निःकामी निज देव ॥ १० ॥

॥ लव ॥

लव लागी तब जानिये, छूटि कभूँ नहिं जाय।
जीवत लव लागी रहै, मूए तहँहिं समाय ॥ १ ॥
जैसी लव पहिले लगी, तैसी निबहै ओर।
अपनी देह की को गिनै, तारै पुरुष करोर ॥ २ ॥
लागी लागी क्या करै, लागी बुरी बलाय।
लागी सोई जानिये, जो वार पार ह्वै जाय ॥ ३ ॥
लगी लगन छूटै नहीं, जीभ चोंच जरि जाय।
मीठा कहा अँगार में, जाहि चकोर चबाय ॥ ४ ॥
सोओं तो सुपने मिलै, जागों तो मन माहिं।
लोचन[2] राता सुधि हरी, बिछुरत कबहूँ नाहिं ॥ ५ ॥
ज्यों तिरिया पीहर[3] बसै, सुरति रहै पिय माहिं।
ऐसे जन जग में रहैं, हरि को भूलैं नाहिं ॥ ६ ॥

॥ बिरह ॥

बिरहिनि देइ सँदेसरा, सुनो हमारे पीव।
जल बिन मच्छी क्यों जिये, पानी में का जीव ॥ १ ॥
बिरह तेज तन में तपै, अंग सबै अकुलाय।
घट सूना जिव पीव में, मौत ढूँढ़ि फिरि जाय ॥ २ ॥

---

(१) सीढ़ी। (२) आँख। (३) मायके।

बिरह जलंती देखि करि, साईं आये धाय।
प्रेम बूँद से छिरकि कै, जलती लई बुझाय ॥ ३ ॥
अँखियाँ तो झाँईं परी, पंथ निहार निहार।
जिभ्या तो छाला परा, नाम पुकार पुकार ॥ ४ ॥
नैनन तो झरि लाइया, रहट बहै निसु बास।
पपिहा ज्यों पिउ पिउ रटै, पिया मिलन की आस ॥ ५ ॥
बिरह बड़ो बैरी भयो, हिरदा धरै न धीर।
सुरत-सनेही ना मिलै, तब लगि मिटै न पीर ॥ ६ ॥
बिरहिनि ऊभी पंथ सिर, पंथिनि पूछै धाय[1]।
एक सबद कहु पीव का, कब रे मिलैंगे आय ॥ ७ ॥
बहुत दिनन की जोवती, रटत तुम्हारो नाम।
जिव तरसै तुव मिलन को, मन नाहीं बिस्राम ॥ ८ ॥
बिरह भुवंगम[2] तन डसा, मंत्र न लागै कोय।
नाम बियोगी ना जिये, जिये तो बाउर[3] होय ॥ ९ ॥
बिरह भुवंगम पैठि कै, किया कलेजे घाव।
बिरही अंग न मोड़िहै, ज्यों भावै त्यों खाव ॥ १० ॥
कबीर सुंदरि यों कहै, सुनिये कंत सुजान।
बेग मिलौ तुम आइ कै, नहीं तो तजिहौं प्रान ॥ ११ ॥
कै बिरहिनि को मीच दे, कै आपा दिखलाय।
आठ पहर का दाझना, मो पै सहा न जाय ॥ १२ ॥
बिरह कमंडल कर लिये, बैरागी दोउ नैन।
माँगै दरस मधूकरी, छके रहैं दिन रैन ॥ १३ ॥

---

(१) बिरहिन रास्ते में खड़ी हो कर बटोही से पूछती है। (२) साँप। (३) बौड़हा।

येहि तन का दिवला करौं, बाती मेलौं जीव।
लोहू सींचौं तेल ज्यों, कब मुख देखौं पीव ॥ १४॥
कबीर हँसना दूर करु, रोने से करु चीत।
बिन रोये क्यों पाइये, प्रेम पियारा मीत ॥ १५॥
हँसौं तो दुख ना बीसरै, रोवौं बल घटि जाय।
मनहीं माहीं बिसुरना, ज्यों घुन काठहिं खाय ॥ १६॥
कीड़े काठ जो खाइया, खात किनहुँ नहिं दीठ।
छाल उपार[1] जो देखिया, भीतर जमिया चोठ[2] ॥ १७॥
हँस हँस कंत न पाइया, जिन पाया तिन रोय।
हाँसी खेले पिउ मिलैं, तो कौन दुहागिनि होय ॥ १८॥
सुखिया सब संसार है, खावै औ सोवै।
दुखिया दास कबीर है, जागै औ रोवै ॥ १९॥
नाम बियोगी बिकल तन, ताहि न चीन्है कोय।
तम्बोली का पान ज्यों, दिन दिन पीला होय ॥ २०॥
माँस गया पिंजर रहा, ताकन लागे काग।
साहिब अजहुँ न आइया, मंद हमारे भाग ॥ २१॥
बिरहा सेती मति अड़े, रे मन मोर सुजान।
हाड़ माँस सब खात है, जीवत करै मसान ॥ २२॥
आय सकौं नहि तोहिं पै, सकौं न तुज्झ बुलाय।
जियरा यों लय होयगा, बिरह तपाय तपाय ॥ २३॥
हवस करै पिय मिलन की, औ सुख चाहै अंग।
पीड़ सहे बिनु पद्मिनी, पूत न लेत उचंग[3] ॥ २४॥
बिरहिनि ओदी लाकड़ी, सपचे औ धुँधुआय।
छूटि पड़ौं या बिरह से, जो सिगरो जरि जाय ॥ २५॥

---

(१) उखाड़ कर। (२) लकड़ी का चूर या बुरादा। (३) उत्साह से।

तन मन जोबन यों जला, बिरह अगिनि से लागि।
मिर्तक पोड़ा जान हो, जानैगो क्या आगि ॥२६॥
बिरह जलंतो मैं फिरौं, मो बिरहिनि को दुक्ख।
छाँह न बैठौं डरपती, मत जलि उट्ठै रुक्ख[१] ॥२७॥
चूड़ो पटकौं पलँग से, चोली लावौं आगि।
जा कारन यह तन धरा, ना सूतो गल लागि ॥२८॥
रक्त माँस सब भखि गया, नेक न कोन्हो कानि[२]।
अब बिरहा कूकर भया, लागा हाड़ चबान ॥२९॥
बिरहा भयो बिछावना, ओढ़न बिपति बिजोग।
दुख सिरहाने पायतन[३], कौन बना संजोग ॥३०॥
बिरहिनि बिरह जगाइया, पैठि ढँढोरै छार[४]।
मत कोइ कोइला ऊबरै, जारै दूजो बार ॥३१॥
अंक भरी भरि भेंटिये, मन नहिं बाँधै धोर।
कह कबोर ते क्या मिले, जब लगि दोय सरोर ॥३२॥
जो जन बिरहो नाम के, झोना पिंजर तासु।
नैन न आवै नींदड़ो, अंग न जामै माँसु ॥३३॥
कबोर चिनगो बिरह की, मो तन पड़ो उड़ाय।
तन जरि धरतो हू जरो, अंबर जरिया जाय ॥३४॥
हिरदे भोतर दव[५] बलै, धुवाँ न परगट होय।
जा के लागो सो लखै, को जिन लाई सोय ॥३५॥
पावक रूपो नाम है, सब घट रहा समाय।
चित चकमक चहुटै[६] नहीं, धूवाँ ह्वै ह्वै जाय ॥३६॥

---

(१) पेड़। (२) लिहाज़, मुरौवत। (३) पैताने। (४) राख को ढँढोलता है। (५) आग। (६) चोट लगाना।

बिरह प्रबल दल साजि के, घेर लियो मोहिं आय।
नहिं मारै छाड़ै नहीं, तलफि तलफि जिय जाय ॥ ३७॥

जो जन बिरहो नाम के, तिन की गति है येह।
देंही से उद्यम करैं, सुमिरन करैं बिदेह ॥ ३८॥

बिरहा बिरहा मत कहो, बिरहा है सुल्तान।
जा घट बिरह न संचरै, सो घट जान मसान ॥ ३९॥

सो दिन कैसा होयगा, गुरू गहैंगे बाँह।
अपना करि बैठावहीं, चरन कँवल की छाँहिं ॥ ४०॥

बिरहिनि थी तो क्यौं रही, जरी न पिउ के साथ।
रहि रहि मूढ़ गहेलरी, अब क्यौं मीजै हाथ ॥ ४१॥

सब रग ताँत रबाब[1] तन, बिरह बजावै नित्त।
और न कोई सुनि सकै, कै साईं के चित्त ॥ ४२॥

आगि लगी आकास में, झरि झरि परे अँगार।
कबीर जरि कंचन भया, काँच भया संसार ॥ ४३॥

कबीर बैद बुलाइया, पकरि के देखी बाँहि।
बैद न बेदन जानई, करक करेजे माहिं ॥ ४४॥

जाहु बैद घर आपने, तेरा किया न होय।
जिन या बेदन निर्मई[2], भला करैगा सोय ॥ ४५॥

॥ प्रेम ॥

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारै भुइँ धरै, तब पैठै घर माहिं ॥ १ ॥

सीस उतारै भुइँ धरै, ता पर राखै पाँव।
दास कबीरा यौं कहै, ऐसा होय तो आव ॥ २ ॥

---

(१) एक बाजा जो मुँह से बजाया जाता है। (२) उपजाई, पैदा की।

प्रेम न बाड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा परजा जेहि रुचै, सीस देइ लै जाय ॥ ३ ॥
प्रेम पियाला भरि पिया, राचि रहा गुरु ज्ञान।
दिया नगारा सबद का, लाल खड़े मैदान ॥ ४ ॥
छिनहिं चढ़ै छिन ऊतरै, सो तो प्रेम न होय।
अघट[1] प्रेम पिंजर बसै, प्रेम कहावै सोय ॥ ५ ॥
आया प्रेम कहाँ गया, देखा था सब कोय।
छिन रोवै छिन मैं हँसै, सो तो प्रेम न होय ॥ ६ ॥
प्रेम प्रेम सब कोइ कहै, प्रेम न चीन्है कोय।
आठ पहर भीना रहै, प्रेम कहावै सोय ॥ ७ ॥
जब मैं था तब गुरु नहीं, अब गुरु हैं हम नाहिं।
प्रेम गली अति साँकरी, ता मैं दो न समाहिं ॥ ८ ॥
जा घट प्रेम न संचरै[2], सो घट जान मसान।
जैसे खाल लुहार की, साँस लेत बिन प्रान ॥ ९ ॥
प्रेम बिकंता मैं सुना, माथा साटे[3] हाट[4]।
बूझत बिलँब न कीजिये, तत्छिन दीजै काट ॥ १० ॥
प्रेम बिना धीरज नहीं, बिरह बिना बैराग।
सतगुरु बिन जावै नहीं, मन मनसा का दाग ॥ ११ ॥
प्रेम तो ऐसा कीजिए, जैसे चंद चकोर।
घींच[5] टूटि भुइँ माँ गिरै, चितवै वाही ओर ॥ १२ ॥
अधिक सनेही माछरी, दूजा अलप सनेह।
जबहीं जल तें बीछुरै, तबहीं तयागै देह ॥ १३ ॥
प्रीति जो लागी घुल गई, पैठि गई मन माहिं।
रोम रोम पिउ पिउ करै, मुख की सरधा नाहिं ॥ १४ ॥

---

(१) जो कभी घटता नहीं। (२) बसै। (३) बदले। (४) बाज़ार। (५) गर्दन।

जो जागत सो सुपन में, ज्यौं घट भीतर स्वास।
जो जन जा को भावता, सो जन ता के पास ॥ १५॥
सोना सज्जन साधु जन, टूटि जुटै सौ बार।
दुर्जन कूम्भ कुम्हार का, एकै धका दरार[1] ॥ १६॥
जहाँ प्रेम तहँ नेम नहिं, तहाँ न बुधि ब्योहार।
प्रेम मगन जब मन भया, तब कौन गिने तिथि बार ॥ १७॥
प्रेम पाँवरी पहिरि कै, धीरज काजर देइ।
सील सिंदूर भराइ कै, यौं पिय का सुख लेइ ॥ १८॥
प्रेम छिपाया ना छिपै, जा घट परघट होय।
जो पै मुख बोलै नहीं, तो नैन देत हैं रोय ॥ १९॥
प्रेम भाव इक चाहिये, भेष अनेक बनाय।
भावै घर में बास करु, भावै बन में जाय ॥ २०॥
पीया चाहै प्रेम रस, राखा चाहै मान।
एक म्यान में दो खड़ग, देखा सुना न कान ॥ २१॥
प्रेमी ढूँढ़त मैं फिरौं, प्रेमी मिलै न कोय।
प्रेमी से प्रेमी मिलै, गुरु भक्ती दृढ़ होय ॥ २२॥
कबीर प्याला प्रेम का, अंतर लिया लगाय।
रोम रोम में रमि रहा, और अमल क्या खाय ॥ २३॥
कबीर भाठी प्रेम की, बहुतक बैठे आय।
सिर सौंपै सो पीवसी, नातर[2] पिया न जाय ॥ २४॥
सबै रसायन मैं किया, प्रेम समान न कोय।
रति इक तन में संचरै, सब तन कंचन होय ॥ २५॥

---

(१) सज्जन और साधुजन सोने के समान हैं कि सौ बार भी टूटने पर जुट जाते हैं पर दुष्ट जन मट्टी के घड़े के सदृश हैं जो एक ही धक्का लगने से चिरा जाता है। (२) नहीं तो।

साधू सीपि समुद्र के, सतगुरु स्वाँती बुंद।
तृषा गई इक बुंद से, क्या लै करूँ समुंद ॥२६॥
जैसो प्रीति कुटुम्ब से, तैसिहु गुरु से होय।
कहै कबीर वा दास का, पला न पकड़ै कोय ॥२७॥
नैनों कों करि कोठरी, पुतली पलँग बिछाय।
पलकों की चिक डारि के, पिय को लिया रिझाय ॥२८॥
पिय का मारग कठिन है, खाँड़ा हो जैसा।
नाचन निकसो बापुरो, फिर घूँघट कैसा ॥२९॥
पिय का मारग सुगम है, तेरा चलन अबेड़ा।
नाच न जानै बापुरो, कहै आँगना टेढ़ा ॥३०॥
जल में बसै कमोदनी, चंदा बसै अकास।
जो है जा का भावता, सो ता ही के पास ॥३१॥
पासा पकड़ा प्रेम का, सारी[1] किया सरीर।
सतगुरु दाव बताइया, खेलै दास कबीर ॥३२॥
खेल जो मँडा खेलाड़ि से, आनँद बढ़ा अघाय।
अब पासा काहू परौ, प्रेम बँधा जुग जाय ॥३३॥
प्रीतम को पतियाँ लिखूँ, जो कहुँ होय बिदेस।
तन में मन में नैन में, ता को कहा सँदेस ॥३४॥

॥ बिश्वास ॥

कबीर क्या मैं चिंत हूँ, मम चिंते क्या होय।
मेरी चिंता हरि करै, चिंता मोहिं न कोय ॥ १ ॥
चिंता न करु अचिंत रहु, देनहार समरत्थ।
पसू पखेरू जीव जंत, तिन के गाँठि न हत्थ ॥ २ ॥

(१) गोट।

अंडा पालै काछुई, बिन थन राखै पोख[1] ।
यों करता सब की करै, पालै तीनिउ लोक ॥ ३ ॥
साईं इतना दीजिये, जा में कुटुंब समाय ।
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाय ॥ ४ ॥

॥ दुबिधा ॥

दुबिधा जा के मन बसै, दयावंत जिव नाहिं ।
कबीर त्यागै ताहि को, भूलि देहु जनि बाहिं ॥ १ ॥
हिरदे माहीं आरसी, मुख देखा नहिं जाय ।
मुख तो तबही देखई, दुबिधा देइ बहाय ॥ २ ॥
चींटी चावल लै चली, बिच में मिलि गइ दार[2] ।
कह कबीर दोउ ना मिलै, इक ले दूजी डार ॥ ३ ॥
संसा खाया सकल जग, संसा किनहु न खद्ध ।
जो बेधा गुरु अच्छरा, तिन संसा चुनि चुनि खद्ध ॥ ४ ॥

॥ सामर्थ ॥

साहिब से सब होत है, बंदे तें कछु नाहिं ।
राई तें पर्बत करै, पर्बत राई नाइँ[3] ॥ १ ॥
साहिब सा समरथ नहीं, गरुआ गहिर गँभीर ।
औगुन छाड़ै गुन गहै, छिनक उतारै तीर ॥ २ ॥
ना कछु किया न करि सका, ना करने जोग सरीर ।
जो कीया साहिब किया, ता तें भया कबीर ॥ ३ ॥
जिस नहिं कोई तिसहिं तूँ, जिस तूँ तिस सब होय ।
दरगह तेरी साइयाँ, मेटि न सक्कै कोय ॥ ४ ॥
इत कूआ उत बावड़ी, इत उत थाह अथाहि ।
दुहूँ दिसा फनि[4] फन कढ़े, समरथ पार लगाहि ॥ ५ ॥

---

(१) परवरिश । (२) दाल । (३) तुल्य । (४) साँप ।

घट समुद्र लखि ना परै, उठै लहरि अपार।
दिल दरिया समरथ बिना, कौन उतारै पार॥ ६॥
साईं तुझ से बाहिरा, कौड़ो नाहिं बिकाय।
जा के सिर पर तूँ धनी, लाखौं मोल कराय॥ ७॥
बालक रूपी साइयाँ, खेलै सब घट माहिँ।
जो चाहै सो करत है, भय काहू का नाहिँ॥ ८॥

॥ बेहद ॥

हद में पीव न पाइये, बेहद में भरपूर।
हद बेहद की गम लखै, ता से पीव हजूर॥ १॥
हद में बैठा कथत है, बेहद की गम नाहिँ।
बेहद की गम होयगी, तब कछु कथना काहि॥ २॥
हद में रहै सो मानवो, बेहद रहै सो साध।
हद्द बेहद दोऊ तजै, ता का मता अगाध॥ ३॥

॥ निज करता का निर्णय ॥

अछै पुरुष इक पेड़ है, निरंजन वा की डार।
तिरदेवा साखा भये, पात भया संसार॥ १॥
नाद बिंदु तें अगम अगोचर, पाँच तत्त तें न्यार।
तीन गुनन तें भिन्न है, पुरुष अलक्ख अपार॥ २॥
संपुट[1] माहिँ समाइया, सो साहिब नहिँ होय।
सकल माँड में रमि रहा, मेरा साहिब सोय॥ ३॥
जा के मुँह माथा नहीं, नाहीं रूप अरूप।
पुहुप बास तें पातरा, ऐसा तत्त्व अनूप॥ ४॥
समुँद पाटि लंका गयो, सीता को भरतार।
ताहि अगस्त अचै[2] गयो, इन में को करतार॥ ५॥

(१) डिबिया शालग्राम के रखने को। (२) कथा है कि अगस्त मुनि ने समुद्र का पानी सब पी लिया था।

॥ बिनय ॥

बिनवत हौं कर जोरि कै, सुनिये कृपा निधान।
साधु सँगति सुख दीजिये, दया गरीबी दान ॥ १ ॥
जो अब के सतगुरु मिलैं, सब दुख आखौं रोय।
चरनों ऊपर सीस धरि, कहौं जो कहना होय ॥ २ ॥
सुरति करौ मेरे साइयाँ, हम हैं भवजल माहिं।
आपे ही बहि जायँगे, जो नहिं पकरौ बाहिं ॥ ३ ॥
क्या मुख लै बिनती करौं, लाज आवत है मोहिं।
तुम देखत औगुन करौं, कैसे भावौं तोहिं ॥ ४ ॥
मैं अपराधी जनम का, नखसिख भरा बिकार।
तुम दाता दुख-भंजना, मेरी करौ सम्हार ॥ ५ ॥
अवगुन मेरे बाप जी, बकसु गरीब-निवाज।
जो मैं पूत कपूत हौं, तऊ पिता को लाज ॥ ६ ॥
औगुन किये तो बहु किये, करत न मानी हार।
भावै बंदा बकसिये, भावै गरदन मार ॥ ७ ॥
साइँ केरा बहुत गुन, औगुन कोई नाहिं।
जो दिल खोजौं आपना, सब औगुन मुझ माहिं ॥ ८ ॥
अंतरजामी एक तुम, आतम एक अधार।
जो तुम छोड़ौ हाथ तें, कौन उतारै पार ॥ ९ ॥
साहिब तुमहिं दयाल हौ, तुम लगि मेरी दौर।
जैसे काग जहाज को, सूझै और न ठौर ॥ १० ॥
साइँ तेरा कछु नहीं, मेरा होय अकाज।
बिरद[1] तुम्हारे नाम को, सरन परे को लाज ॥ ११ ॥

---

(१) महिमा, प्रण।

मुझ मैं औगुन तुज्झ गुन, तुझ गुन औगुन मुज्झ।
जो मैं बिसरौं तुज्झ को, तू मत बिसरै मुज्झ ॥१२॥
मन परतीत न प्रेम रस, ना कछु तन मैं ढंग।
ना जानौं उस पीव से, क्योंकर रहसी रंग ॥१३॥
तुम तो समरथ साइयाँ, दृढ़ करि पकरो बाहिं।
धुरही लै पहुँचाइयो, जनि छाड़ो मग माहिं ॥१४॥
भक्ति दान मोहिं दीजिये, गुरु देवन के देव।
और नहीं कछु चाहिये, निसि दिन तेरी सेव ॥१५॥

॥ गुरुमुख ॥

गुरुमुख गुरु चितवत रहै, जैसे मनी भुवंग।
कह कबीर बिसरै नहीं, यह गुरुमुख को अंग ॥ १ ॥
गुरुमुख गुरु चितवत रहै, जैसे साह दिवान।
और कबीर न देखता, है वाही को ध्यान ॥ २ ॥
पहिले दाता सिष भया, जिन तन मन अरपा सीस।
पाछे दाता गुरु भये, जिन नाम दिया बकसीस ॥ ३ ॥

॥ मनमुख ॥

फल कारन सेवा करै, तजै न मन से काम।
कह कबीर सेवक नहीं, चहै चौगुना दाम ॥ १ ॥
सतगुरु सबद उलंघि कै, जो सेवक कहिं जाय।
जहाँ जाय तहँ काल है, कह कबीर समुझाय ॥ २ ॥
मेरा मुझ मैं कुछ नहीं, जो कछु है सो तोर।
तेरा तुझ को सौंपते, क्या लागैगा मोर ॥ ३ ॥
तेरा तुझ मैं कुछ नहीं, जो कछु है सो मोर।
मेरा मुझको सौंपते, जो धड़कैगा तोर ॥ ४ ॥

॥ निगुरा ॥

जो निगुरा सुमिरन करै, दिन मेँ सौ सौ बार।
नगर नायका सत करै, जरै कौन की लार[1] ॥ १ ॥
जो कामिनि परदे रहै, सुनै न गुरुमुख बात।
होइ जगत मेँ कूकरी, फिरै उघारे गात ॥ २ ॥

॥ गुरुशिष्य खोज ॥

ऐसा कोऊ ना मिला, हम को दे उपदेस।
भवसागर मेँ बूड़ता, कर गहि काढ़ै केस ॥ १ ॥
ऐसा कोई ना मिला, जा से कहूँ दुख रोय।
जा से कहिये भेद को, सो फिर बैरी होय ॥ २ ॥
हम देखत जग जात है, जग देखत हम जाहिँ।
ऐसा कोई ना मिला, पकड़ि छुड़ावै बाहिँ ॥ ३ ॥
सारा सूरा बहु मिले, घायल मिला न कोय।
घायल को घायल मिलै, गुरु भक्ती दृढ़ होय ॥ ४ ॥
सिष तो ऐसा चाहिये, गुरु को सब कछु देय।
गुरु तो ऐसा चाहिये, सिष से कछु नहिँ लेय ॥ ५ ॥
सर्पहिँ दूध पिलाइये, सोई बिष ह्वै जाय।
ऐसा कोई ना मिला, आपेही विष खाय[2] ॥ ६ ॥
पुहुपन केरी बास ज्योँ, व्यापि रहा सब ठाहिँ।
बाहर कबहुँ न पाइये, पावै संतोँ माहिँ ॥ ७ ॥
जिन ढूँढ़ा तिन पाइया, गहिरे पानी पैठि।
मैँ बपुरा बूड़न डरा, रहा किनारे बैठि ॥ ८ ॥

(१) सहर की कसबी अगर सती होने का ढौंग रचै तो किस मर्द के साथ जलै। (२) अपने शिष्य के बिकारोँ को खींच ले।

॥ साध ॥

साध बड़े परमारथी, घन ज्यों बरसैं आय।
तपन बुझावैं और को, अपनो पारस लाय ॥ १ ॥
दुख सुख एक समान है, हरष सोक नहिं ब्याप।
उपकारी निःकामता, उपजै छोह न ताप ॥ २ ॥
सदा रहे संतोष में, धरम आप दृढ़ धार।
आस एक गुरुदेव की, और न चित्त बिचार ॥ ३ ॥
सावधान औ सीलता, सदा प्रफुल्लित गात।
निरबिकार गम्भीर मति, धीरज दया बसात ॥ ४ ॥
निरबैरी निःकामता, स्वामी सेतो नेह।
बिषया से न्यारा रहै, साधन का मत येह ॥ ५ ॥
मान अपमान न चित धरै, औरन को सनमान।
जो कोई आसा करै, उपदेसै तेहि ज्ञान ॥ ६ ॥
सीलवंत दृढ़ ज्ञान मत, अति उदार चित होय।
लज्यावान अति निछलता, कोमल हिरदा सोय ॥ ७ ॥
दयावंत धरमक-ध्वजा, धीरजवान प्रमान।
संतोषी सुखदायक रु, सेवक परम सुजान ॥ ८ ॥
ज्ञानी अभिमानी नहीं, सब काहू से हेत।
सत्यवान परस्वारथी, आदर भाव सहेत[1] ॥ ९ ॥
निस्चय भल अरु दृढ़ मता, ये सब लच्छन जान।
साध सोई है जगत में, जो यह लच्छनवान ॥ १० ॥
ऐसा साधू खोजि कै, रहिये चरनों लाग।
मिटै जनम की कल्पना, जा के पूरन भाग ॥ ११ ॥

(१) सहित।

सिंहोँ के लेहँड़े नहीं, हंसोँ की नहिं पाँत।
लालोँ की नहि बोरियाँ, साध न चलैँ जमात[1] ॥१२॥
सिंह साध का एक मत, जीवत ही को खाय।
भाव-हीन मिरतक दसा, ता के निकट न जाय ॥१३॥
साध कहावन कठिन है, ज्योँ खाँड़े की धार।
डिगमिगाय तो गिर परै, निःचल उतरै पार ॥१४॥
गाँठी दाम न बाँधई, नहिं नारी से नेह।
कह कबीर ता साध के, हम चरनन की खेह ॥१५॥
साध हमारी आतमा, हम साधन के जीव।
साधन मद्धे योँ रहौँ, ज्योँ पय मद्धे घीव ॥१६॥
साधु साधु सब एक हैं, जस पोस्ता का खेत।
कोई बिबेकी लाल है, कोई सेत का सेत ॥१७॥
हरि से तू जनि हेत कर, कर हरिजन से हेत।
माल मुलुक हरि देत है, हरिजन हरि हीं देत ॥१८॥
निराकार की आरसी, साधोँहीं की देँह।
लखा जो चाहे अलख को, (तो) इनहीं मेँ लखि लेह ॥१९॥
कबीर दरसन साध का, साहिब आवैँ याद।
लेखे मेँ सोई घड़ी, बाकी के दिन बाद ॥२०॥
साध मिले साहिब मिले, अंतर रही न रेख।
मनसा बाचा कर्मना, साधू साहिब एक ॥२१॥
सुख देवैँ दुख को हरैँ, दूर करैँ अपराध।
कहैँ कबीर वे कब मिलैँ, परम सनेही साध ॥२२॥
जाति न पूछो साध की, पूछि लीजिये ज्ञान।
मोल करो तरवार का, पड़ा रहन दो म्यान ॥२३॥

---

(१) गरोह, भीड़ भाड़।

साध सेव जा घर नहीं, सतगुरु पूजा नाहिं ।
सो घर मरघट सारिखा[1], भूत बसै ता माहिं ॥ २४ ॥

॥ भेष ॥

तन को जोगी सब करै, मन को बिरला कोय ।
सहजै सब सिधि पाइये, जो मन जोगी होय ॥ १ ॥
मन माला तन मेखला, भय को करै भभूत ।
अलख मिला सब देखता, सो जोगी अवधूत ॥ २ ॥
हम तो जोगी मनहिं के, तन के हैं ते और ।
मन को जोग लगावते, दसा भई कछु और ॥ ३ ॥
भर्म न भागा जीव का, बहुतक धरिया भेष ।
सतगुरु मिलिया बाहरे, अंतर रहिगा लेख ॥ ४ ॥

॥ असाध ॥

जेता मीठा बोलवा, तेता साधु न जान ।
पहिले थाह दिखाइ कै, औंड़े देसी आन ॥ १ ॥
उज्जल देखि न धीजिये, बग ज्यों माँडे ध्यान ।
धूरे[2] बैठि चपेटही, यों लै बूड़ै मान ॥ २ ॥
केसन[3] कहा बिगारिया, जो मूँड़ो सौ बार ।
मन को क्यों नहिं मुँड़िये, जा में बिषय बिकार ॥ ३ ॥
साकट संग न बैठिये, अपनो अंग लगाय ।
तत्व सरीरा झरि परै, पाप रहै लपटाय ॥ ४ ॥
सोवत साधु जगाइये, करै नाम का जाप ।
ये तीनों सोवत भले, साकट सिंह रु साँप ॥ ५ ॥

---

(१) सरीखा, मिस्ल । (२) एक तरह की मोटी घास । (३) बाल ।

॥ सतसंग ॥

[सज्जन के लिये]

संगति कीजे संत की, जिन का पूरा मन ।
अनतोले ही देत हैं, नाम सरीखा धन ॥ १ ॥

कबीर संगत साध की, हरै और की व्याधि ।
संगत बुरी असाध की, आठो पहर उपाधि ॥ २ ॥

कबीर संगत साध की, जौ की भूसी खाय ।
खीर खाँड़ भोजन मिलै, साकट संग न जाय ॥ ३ ॥

कबीर संगत साध की, ज्यौं गंधी का बास ।
जो कछु गंधी दे नहीं, तौ भी बास सुबास ॥ ४ ॥

ऋद्धि सिद्धि माँगौं नहीं, माँगौं तुम पै येह ।
निसि दिन दरसन साध का, कह कबीर मोहिं देय ॥ ५ ॥

कबीर संगत साध की, निस्फल कधी न होय ।
होसी चंदन बासना, नीम न कहसी कोय ॥ ६ ॥

राम बुलावा भेजिया, दिया कबीरा रोय ।
जो सुख साधू संग में, सो बैकुंठ न होय ॥ ७ ॥

बंधे को बंधा मिलै, छूटै कौन उपाय ।
कर संगत निरबंध की, पल में लेइ छुड़ाय ॥ ८ ॥

जा पल दर्सन साधु का, ता पल की बलिहारि ।
सत्त नाम रसना बसै, लीजै जनम सुधारि ॥ ९ ॥

कबीर खाई कोट की, पानी पिवै न कोय ।
जाय मिलै जब गंग से, सब गंगोदक होय ॥ १० ॥

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी हूँ से आध ।
कबीर संगति साध की, कटै कोटि अपराध ॥ ११ ॥

॥ सतसंग ॥

[दुर्जन के लिये]

संगति भई तो क्या भया, हिरदा भया कठोर ।
नौ नेजा पानी चढ़ै, तऊ न भीजै कोर ॥ १ ॥
हरिया जानै रूखड़ा, जो पानी का नेह ।
सूखा काठ न जानही, केतहु बूड़ा मेह ॥ २ ॥
साखी सबद बहुत सुना, मिटा न मन का दाग ।
संगति से सुधरा नहीं, ता का बड़ा अभाग ॥ ३ ॥
सत्त नाम रटिबो करै, निसि दिन साधुन संग ।
कहो जो कौन बिचार तें, नाहीं लागत रंग ॥ ४ ॥
मन दीया कहुँ औरही, तन साधुन के संग ।
कह कबीर कोरी गजी, कैसे लागै रंग ॥ ५ ॥

॥ कुसंग—दुर्जन और मूरख ॥

मूरख से क्या बोलिये, सठ से कहा बसाय ।
पाहन में क्या मारिये, चोखा तीर नसाय ॥ १ ॥
जानि बूझि साचो तजै, करै झूठ से नेह ।
ता की संगति हे प्रभू, सपनेहू मति देह ॥ २ ॥
दाग जो लागा नील का, सौ मन साबुन धोय ।
कोटि जतन परबोधिये, कागा हंस न होय ॥ ३ ॥
लहसुन से चंदन डरै, मत रे बिगारै बास ।
निगुरा से सगुरा डरै, (यों) डरपै जग से दास ॥ ४ ॥
हरिजन सेती रूसना, संसारी से हेत ।
ते नर कधी न नीपजैं, ज्यों कालर[1] का खेत ॥ ५ ॥
मारी मरै कुसंग की, ज्यों केला ढिंग बेर ।
वह हालै वह चीरई[2], साकट संग निबेर ॥ ६ ॥

---

(१) रेहार यानी रेह का । (२) फाड़े अर्थात पत्ते को चीर दे ।

केला तबहिं न चेतिया, जब ढिंग जागी बेरि।
अब के चेते क्या भया, काँटों लीन्हा घेरि ॥ ७ ॥
ऊँचे कुल कहा जनमिया, (जो) करनी ऊँच न होय।
कनक कलस मद से भरा, साधन निंदा सोय ॥ ८ ॥
काँचा सेती मति मिलै, पाका सेती बान।
काँचा सेती मिलत ही, होय भक्ति में हान ॥ ९ ॥
तोहि पीर जो प्रेम की, पाका सेतो खेल।
काँचो सरसों पेरि कै, खलो भया ना तेल ॥ १० ॥
समझा का घर और है, अनसमझा का और।
जा घर में साहिब बसै, बिरला जानै ठौर ॥ ११ ॥
बुद्धि बिहूना आदमी, जानै नहीं गँवार।
जैसे कपि परबस पर्यौ, नाचै घर घर बार[1] ॥ १२ ॥
बुद्धि बिहूना अंध गज, पर्यौ फंद में आय।
ऐसे ही सब जग बँधा, कहा कहौं समुझाय ॥ १३ ॥
पंख छता[2] परिबस पर्यौ, सूवा के बुधि नाहिं।
बुद्धि बिहूना आदमी, यों बंधा जग माहिं ॥ १४ ॥

॥ मध्य ॥

भजूँ तो को है भजन को, तजूँ तो को है आन।
भजन तजन के मध्य में, सो कबीर मन मान ॥ १ ॥
हिंदू कहूँ तो मैं नहीं, मुसलमान भी नाहिं।
पाँच तत्व का पूतला, गैबी खेलै माहिं ॥ २ ॥
अति का भला न बोलना, अति की भली न चूप।
अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप ॥ ३ ॥

---

(१) द्वार। (२) होते।

॥ समदृष्टी ॥

समदृष्टी सतगुरु किया, मेटा भरम बिकार।
जहँ देखौं तहँ एकही, साहिब का दीदार ॥ १ ॥
समदृष्टी तब जानिये, सीतल समता होय।
सब जीवन की आतमा, लखै एक सी सोय ॥ २ ॥

॥ सहज ॥

सहज सहज सब कोउ कहै, सहज न चीन्है कोय।
जा सहजै साहिब मिलै, सहज कहावै सोय ॥ १ ॥
सहज मिलै सो दूध सम, माँगा मिलै सो पानि।
कह कबीर वह रक्त सम, जा में ऐंचा तानि ॥ २ ॥
काहे को कलपत फिरै, दुखी होत बेकार।
सहजै सहजै होयगा, जो रचिया करतार ॥ ३ ॥

॥ सार गहनी ॥

साधू ऐसा चाहिये, जैसा सूप सुभाय।
सार सार को गहि रहै, थोथा देइ उड़ाय ॥ १ ॥
औगुन को तो ना गहै, गुनही को लै बीन।
घट घट महकै[1] मधुप[2] ज्यौं, परमातम लै चीन्ह ॥ २ ॥
हंसा पय को काढ़ि ले, छीर नीर निरवार।
ऐसे गहै जो सार को, सो जन उतरै पार ॥ ३ ॥

॥ असार गहनी ॥

कबीर कीट[3] सुगंधि तजि, नरक गहै दिन रात।
असार-ग्राही मानवा, गहै असारहि बात ॥ १ ॥
आटा तजि भूसी गहै, चलनी देखु निहारि।
कबीर सारहि छाड़ि कै, करै असार अहार ॥ २ ॥

---

(१) सूघै। (२) भँवरा। (३) कीड़ा।

रसहिँ छाड़ि छोहो गहै, कोल्हू परतछ देख ।
गहै असारहिँ सार तजि, हिरदे नाहिँ बिबेक ॥ ३ ॥

॥ सूक्ष्म मार्ग ॥

उन तेँ कोई न बाहुरा, जा से बूझूँ धाय ।
इत तेँ सबही जात हैँ, भार लदाय लदाय ॥ १ ॥
उत तेँ सतगुरु आइया, जा की बुधि है धीर ।
भवसागर के जीव को, खेइ लगावैँ तीर ॥ २ ॥
गागर ऊपर गागरी, चोले ऊपर द्वार ।
सूली ऊपर साँथरा, जहाँ बुलावै यार ॥ ३ ॥
जो आवै तो जाय नहिँ, जाय तो आवै नाहिँ ।
अकथ कहानी प्रेम की, समझ लेहु मन माहिँ ॥ ४ ॥
सूली ऊपर घर करै, बिष का करै अहार ।
ता का काल कहा करै, जो आठ पहर हुसियार ॥ ५ ॥
यार बुलावै भाव से, मो पै गया न जाय ।
धन मैली पिउ ऊजला, लागि न सकौँ पाँय ॥ ६ ॥
नाँव न जानौँ गाँव का, बिन जाने कित जाँव ।
चलता चलता जुग भया, पाव कोस पर गाँव ॥ ७ ॥
सतगुरु दीनदयाल हैँ, दया करी मोहिँ आय ।
कोटि जनम का पंथ था, पल मैँ पहुँचा जाय ॥ ८ ॥
चलन चलन सब कोइ कहै, मोहिँ अँदेसा और ।
साहिब से परिचय नहीँ, पहुँचगे केहि ठौर ॥ ९ ॥
कबीर का घर सिखर पर, जहाँ सिलहली गैल ।
पाँव न टिकै पपीलि[1] का, पंडित लादे बैल ॥ १० ॥

---

(१) चींटी ।

बिन पाँवन को राह है, बिन बस्ती का देस।
बिना पिंड का पुरुष है, कहै कबीर सँदेस ॥११॥
घाटहि पानी सब भरै, औघट भरै न कोय।
औघट घाट कबीर का, भरै सो निर्मल होय ॥१२॥
पहुँचैंगे तब कहैंगे, वही देस की सोच[1]।
अबहीं कहा तड़ागिये[2], बेड़ी पायन बीच ॥१३॥
प्रान पिंड को तजि चलै, मुआ कहै सब कोय।
जीव छता[3] जामै मरै, सूछम लखै न सोय ॥१४॥
मरिये तो मरि जाइये, छूटि परै जंजार।
ऐसा मरना को मरै, दिन मैं सौ सौ बार ॥१५॥

॥ घट मठ (सर्व घट व्यापी) ॥

कस्तूरी कुंडल बसै, मृग ढूँढ़ै बन माहिं।
ऐसे घट मैं पीव है, दुनियाँ जानै नाहिं ॥ १ ॥
तेरा साईं तुज्झ मैं, ज्यौं पुहुपन मैं बास।
कस्तूरी का मिरग ज्यों, फिरि फिरि ढूँढ़ै घास ॥ २ ॥
सब घट मेरा साइयाँ, सूनो सेज न कोय।
बलिहारी वा घट्ट की, जा घट परघट होय ॥ ३ ॥
ज्यौं तिल माहीं तेल है, ज्यौं चकमक मैं आगि।
तेरा साईं तुज्झ मैं, जागि सकै तो जागि ॥ ४ ॥
पावक रूपी साइयाँ, सब घट रहा समाय।
चित चकमक लागै नहीं, ता तें बुझि बुझि जाय ॥ ५ ॥

॥ सेवक और दास ॥

सेवक सेवा में रहै, अनत कहूँ नहिं जाय।
दुख सुख सिर ऊपर सहै, कह कबीर समुझाय ॥ १ ॥

---

(१) सीतल स्थान। (२) डींग मारिये, उछलिये। (३) मौजूद रहते।

द्वार धनी के पड़ि रहै, धका धनी का खाय।
कबहुँक धनी निवाजई, जो दर छाड़ि न जाय॥ २॥
कबीर गुरु सब को चहैं, गुरु को चहै न कोय।
जब लग आस सरीर को, तब लगि दास न होय॥ ३॥
निरबंधन बंधा रहै, बंधा निरबँध होय।
करम करै करता नहीं, दास कहावै सोय॥ ४॥
गुरु समरथ सिर पर खड़े, कहा कमी तोहिं दास।
ऋद्धि सिद्धि सेवा करैं, मुक्ति न छाड़ै पास॥ ५॥
दास दुखी तो हरि दुखी, आदि अंत तिहुँ काल।
पलक एक में प्रगट ह्वै, छिन में करै निहाल॥ ६॥
दात धनी याचै[1] नहीं, सेव करै दिन रात।
कह कबीर ता सेवकहिं, काल करै नहिं घात॥ ७॥
दासातन हिरदे नहीं, नाम धरावै दास।
पानी के पीये बिना, कैसे मिटै पियास॥ ८॥
मुक्ति मुक्ति माँगौं नहीं, भक्ति दान दे मोहि।
और कोई याचौं नहीं, निसि दिन याचौं तोहिं॥ ९॥
कबीर खालिक जागिया, और न जागै कोय।
कै जागै बिषया भरा, कै दास बंदगी जोय॥ १०॥

॥ सजीवन ॥

जरा मीच ब्यापै नहीं, मुआ न सुनिये कोय।
चलु कबीर वा देस को, जहँ बैद साइयाँ होय॥ १॥
कबीर मन तीखा किया, लाइ बिरह खरसान।
चित चरनौं से चिपटिया, का करै काल का बान॥ २॥

(१) माँगै।

भवसागर में यों रहौ, ज्यों जल कँवल निराल।
मनुवाँ व्हाँ लै राखिये, जहाँ नहीं जम काल ॥ ३ ॥

॥ मौन ॥

ऐसो अद्भुत मत कथो, कथो तो धरो छिपाय।
बेद कुराना ना लिखी, कहौं तो को पतियाय ॥ १ ॥
जो देखै सो कहै नहिं, कहै सो देखै नाहि।
सुनै सो समझावै नहीं, रसना दृग स्रवन काहि ॥ २ ॥
जो पकरै सो चलै नहिं, चलै सो पकरै नाहिं।
कह कबीर या साखि को, अरथ समझ मन माहिं ॥ ३ ॥
जानि बूझि जड़ होइ रहै, बल तजि निर्बल होय।
कह कबीर वा दास को, गंजि सकै नहिं कोय ॥ ४ ॥
बाद बिबादे बिष घना, बोले बहुत उपाध।
मौन गहै सब की सहै, सुमिरै नाम अगाध ॥ ५ ॥
साकट का मुख बिम्ब[1] है, निकसत बचन भुवंग।
ता की औषधि मौन है, बिष नहिं व्यापै अंग ॥ ६ ॥

॥ सूरमा ॥

गगन दमामा बाजिया, पड़त निसाने चोट।
कायर भाजै कछु नहीं, सूरा भाजै खोट ॥ १ ॥
सूरा सोई सराहिये, लड़ै धनी के हेत।
पुरजा पुरजा होइ रहै, तऊ न छाड़ै खेत ॥ २ ॥
सूरा सोई सराहिये, अंग न पहिरै लोह।
जूझै सब बँद खोलि कै, छाड़ै तन का मोह ॥ ३ ॥

---

(१) बाँबी।

खेत न छाड़ै सूरमा, जूझै दो दल माहिँ ।
आसा जीवन मरन की, मन मेँ आनै नाहिँ ॥ ४ ॥
अब तो जूझे ही बनै, मुड़ चाले घर दूर ।
सिर साहिब को सौंपते, सोच न कीजै सूर ॥ ५ ॥
घायल तो घूमत फिरै, राखा रहै न ओट ।
जतन किये नहिँ बाहुरै[1], लगो मरम की चोट ॥ ६ ॥
घायल की गति और है, औरन की गति और ।
प्रेम बान हिरदे लगा, रहा कबीरा ठौर ॥ ७ ॥
सूरा सीस उतारिया, छाड़ी तन की आस ।
आगे से गुरु हरखिया, आवत देखा दास ॥ ८ ॥
कबीर घोड़ा प्रेम का, (कोइ) चेतन चढ़ि असवार ।
ज्ञान खड़ग लै काल सिर, भली मचाई मार ॥ ९ ॥
चित चेतन ताजी[2] करै, लव की करै लगाम ।
सबद गुरू का ताजना[3], पहुँचै संत सुठाम ॥ १० ॥
हरि घोड़ा ब्रह्मा कड़ी, बिस्नू पीठ पलान ।
चंद सूर दुइ पायड़ा[4], चढ़सी संत सुजान ॥ ११ ॥
साध सती औ सूरमा, ज्ञानी औ गज-दंत ।
एते निकसि न बाहुरैं, जो जुग जाहिँ अनंत ॥ १२ ॥
सिर राखे सिर जात है, सिर काटे सिर सोय ।
जैसे बाती दीप की, कटि उँजियारा होय ॥ १३ ॥
धड़ से सीस उतारि कै, डारि देइ ज्यौँ ढेल ।
कोई सूर को सोहसी, घर जाने का खेल ॥ १४ ॥
लड़ने को सबही चले, सस्तर बाँधि अनेक ।
साहिब आगे आपने, जूझैगा कोइ एक ॥ १५ ॥

---

(१) मुड़ै । (२) घोड़ा । (३) ताज़ियाना = कोड़ा । (४) रकाब ।

जूझैंगे तब कहैंगे, अब कछु कहा न जाय।
भीड़ पड़े मन मसखरा, लड़ै किधौं भागि जाय ॥१६॥
साईं सैंति[1] न पाइये, बातन मिलै न कोय।
कबीर सौदा नाम का, सिर बिन कबहुँ न होय ॥१७॥
जेता तारा रैन का, एता बैरी मुज्झ।
धड़ सूली सिर कंगुरे[2], तउ न बिसारूँ तुज्झ ॥१८॥
अगिनि आँच सहना सुगम, सुगम खड़ग की धार।
नेह [illegible] एक रस, महा कठिन व्योहार ॥१९॥
नेह निभाये ही बनै, सोचे बनै न आन।
तन दे मन दे सीस दे, नेह न दीजै जान ॥२०॥
बाँकी तेग[3] कबीर की, अनी पड़ै दुइ टूक।
मारा मोर[4] महाबली, ऐसी मूठ अचूक ॥२१॥
सूरा नाम धराइ के, अब का डरपै बीर।
मँड़ि रहना मैदान में, सन्मुख सहना तीर ॥२२॥
तीर तुपक[5] से जो लड़ै, सो तो सूर न होय।
माया तजि भक्ती करै, सूर कहावै सोय ॥२३॥
जाय पूछ वा घायलै, पीर दिवस निसि जागि।
बाहनहारा जानिहै, कै जानै जिन लागि ॥२४॥
सूर सिलाह[6] न पहिरई, जब रन बाजा तूर।
माथा काटै धड़ लड़ै, तब जानीजे सूर ॥२५॥
सूरा के मैदान में, कायर का क्या काम।
सूरा से सूरा मिलै, तब पूरा संग्राम ॥२६॥

---

(१) मुफ़्त। (२) अगले समय में शत्रु को सूली चढ़ा कर उसका सिर काट लिया करते थे, और कंगूरे पर लगा देते थे। (३) तलवार। (४) मन। (५) बंदूक़। (६) लड़ाई के हथियार, ढाल तलवार।

धुजा फरक्कै सुन्न मैं, बाजै अनहद तूर।
तकिया है मैदान मैं, पहुँचैगा कोइ सूर ॥ २७॥

कायर भागा पीठ दै, सूर रहा रन माहिं।
पटा लिखायो गुरू पै, खरा जमीन खाहि ॥ २८॥

॥ पतिब्रता ॥

पतिबरता को सुख घना, जा के पति है एक।
मन मैलो बिभिचारिनी, ता के खसम अनेक ॥ १ ॥
पतिबरता मैली भली, काली कुचिल कुरूप।
पतिबरता के रूप पर, वारौं कोटि सरूप ॥ २ ॥
पतिबरता पति को भजै, और न आन सुहाय।
सिंह बचा जो लंघना, तौ भी घास न खाय ॥ ३ ॥
नैनौं अंतर आव तूँ, नैन झाँपि तोहि लेवँ।
ना मैं देखौं और को, ना तोहि देखन देवँ ॥ ४ ॥
कबीर सीप समुद्र की, रटै पियास पियास।
और बूँद को ना गहै, स्वाँति बूँद की आस ॥ ५ ॥
पपिहा का पन देखि करि, धीरज रहै न रंच।
मरते दम जल मैं पड़ा, तऊ न बोरो चंच[1] ॥ ६ ॥
मैं सेवक समरत्थ का, कबहुँ न होय अकाज।
पतिबरता नाँगी रहै, तो वाही पति को लाज ॥ ७ ॥
चढ़ी अखाड़े सुंदरी, माँड़ा पिउ से खेल।
दीपक जोया ज्ञान का, काम जरै ज्यौं तेल ॥ ८ ॥
सूरा के तो सिर नहीं, दाता के धन नाहिं।
पतिबरता के तन नहीं, सुरति बसै पिउ माहिं ॥ ९ ॥

---

(१) चोंच।

पतिबरता मैली भली, गले काँच की पोत।
सब सखियन मैं यों दिपै, ज्यों रबि ससि की जोत ॥१०॥
नाम न रटा तो क्या हुआ, जो अंतर है हेत।
पतिबरता पति को भजै, मुख से नाम न लेत ॥११॥
जो यह एकै जानिया, तौ जानौ सब जान।
जो यह एक न जानिया, (तौ) सबही जान अजान ॥१२॥
सब आये उस एक मैं, डार पात फल फूल।
अब कहो पाछे क्या रहा, गहि पकड़ा जब मूल ॥१३॥
कबीर रेख सिंदूर अरु, काजर दिया न जाय।
नैनन प्रीतम मिलि रहा, दूजा कहाँ समाय ॥१४॥
आठ पहर चौंसठ घड़ी, मेरे और न कोय।
नैना माहीं तू बसै, नींद को ठौर न होय ॥१५॥
पतिबरता तब जानिये, रतिउ[1] न उघरै नैन।
अंतर गति सकुची रहै, बोलै मधुरे बैन ॥१६॥

॥ सती ॥

अब तो ऐसी ह्वै परी, मन अति निर्मल कीन्ह।
मरने को भय छाड़ि कै, हाथ सिंधोरा लीन्ह ॥ १ ॥
ढोल दमामा बाजिया, सबद सुना सब कोय।
जो सर[2] देखि सती भगै, दो कुल हाँसी होय ॥ २ ॥
सती जरन को नीकसी, चित धरि एक बिबेक।
तन मन सौंपा पीव को, अंतर रही न रेख ॥ ३ ॥
सती जरन को नीकसी, पिउ का सुमिरि सनेह।
सबद सुनत जिय नीकसा, भूलि गई निज देह ॥ ४ ॥

---

(१) रत्ती भर भी। (२) आग।

काँटौं सेज बिछाय ।
सती बिचारी सत किया, चहुँ दिसि अगिन लगाय ॥ ५ ॥
लै सूती पिउ आपना,

॥ बिभिचारिन ॥

रहै और सँग सोय ।
नारि कहावै पोव की, ख़सम ख़ुसी क्यौं होय ॥ १ ॥
जार सदा मन मैं बसे, अंतर परदा होय ।
सेज बिछावै सुन्दरी, सदा दुहागिन सोय ॥ २ ॥
तन सौंपै मन दे नहीं, आठ पहर हुसियार ।
बिभिचारिन बिभिचार मैं, क्यौं रीझै भरतार ॥ ३ ॥
कहै कबीर पतिबर्त बिन, कीया बहुतक मिंत[1] ।
कबीर या जग आइ कै, सोवै निःचिंत ॥ ४ ॥
जिन दिल बाँधा एक से, ते

॥ पारख ॥

जब गुन को गाहक मिलै, तब गुन लाख बिकाय ।
जब गुन को गाहक नहीं, (तब) कौड़ी बदले जाय ॥ १ ॥
कबीर देखि के परखि ले, परखि के मुखाँ बुलाय ।
जैसी अंतर होयगी, मुख निकसैगी ताय ॥ २ ॥
हीरा तहाँ न खोलिये, जहँ खोटी है हाट ।
कस करि बाँधौ गाठरी, उठ करि चालो बाट ॥ ३ ॥
पिउ मोतियन की माल है, पोई काचे धाग ।
जतन करो झटका घना, नहिं टूटै कहुँ लाग ॥ ४ ॥
हीरा परखै जौहरी, सब्दहिं परखै साध ।
कबीर परखै साध को, ता का मता अगाध ॥ ५ ॥
हीरा पाया परखि के, घन मैं दीया आनि ।
चोट सही फूटा नहीं, तब पाई पहिचानि ॥ ६ ॥

---

(१) मित्र ।

हंसा बगुला एक सा, मानसरोवर माहिं ।
बगा ढँढोरै माछरी, हंसा मोती खाहिं ॥ ७ ॥

॥ अपारख ॥

चंदन गया बिदेसड़े, सब कोइ कहै पलास ।
ज्यों ज्यों चूल्हे झोंकिया, त्यों त्यों अधिकी बास ॥ १ ॥
कबीर ये जग आँधरा, जैसी अंधी गाय ।
बछरा था सो मरि गया, ऊभी[1] चाम चटाय ॥ २ ॥

॥ परिचय ॥

पिउ परिचय तब जानिये, पिउ से हिलमिल होय ।
पिउ की लाली मुख पड़ै, परगट दीसै सोय ॥ १ ॥
लाली मेरे लाल की, जित देखौं तित लाल ।
लाली देखन मैं गई, मैं भी होगइ लाल ॥ २ ॥
हम बासी वा देस के, जहँ बारह मास बिलास ।
प्रेम झिरै बिगसै कँवल, तेज पुंज परकास ॥ ३ ॥
पिंजर प्रेम प्रकासिया, जागी जोति अनंत ।
संसय छूटा भय मिटा, मिला पियारा कंत ॥ ४ ॥
अगवानी तो आइया, ज्ञान बिचार बिबेक ।
पीछे गुरु भी आयँगे, सारे साज समेत ॥ ५ ॥
भेद ज्ञान तौ लौं भला, जौ लौं मेल न होय ।
परम जोति प्रगटै जहाँ, तहँ बिकल्प नहिं कोय ॥ ६ ॥
कबीर कमल प्रकासिया, ऊगा निर्मल सूर ।
रैन अँधेरी मिटि गई, बाजे अनहद तूर ॥ ७ ॥
आकासे औंधा कुआँ, पाताले पनिहार ।
जल हंसा कोइ पावई, बिरला आदि बिचार ॥ ८ ॥

---

(१) खड़ी ।

गगन गरजि बरसै अमी, बादल गहिर गँभीर ।
चहुँ दिसि दमकै दामिनी, भींजै दास कबीर ॥ ९ ॥
कबीर जब हम गावते, तब जाना गुरु नाहिं ।
अब गुरु दिल में देखिया, गावन को कछु नाहि ॥ १० ॥

॥ अनुभव ज्ञान ॥

आतम अनुभव जब भयो, तब नहि हर्ष विषाद ।
चित्त दीप सम ह्वै रह्यो, तजि करि बाद बिवाद ॥ १ ॥
लिखा लिखी की है नहीं, देखा देखि की बात ।
दुलहा दुलहिन मिलि गये, फीकी पड़ी बरात ॥ २ ॥

॥ बाचक ज्ञान ॥

ज्यों अँधरे को हाथिया, सब काहू को ज्ञान ।
अपनी अपनी कहत हैं, का को धरिये ध्यान ॥ १ ॥
ज्ञानी से कहिये कहा, कहत कबीर लजाय ।
अंधे आगे नाचते, कला अकारथ जाय ॥ २ ॥
ज्ञानी मूल गँवाइया, आप भये करता ।
ता तैं संसारी भला, जो सदा रहै डरता ॥ ३ ॥

॥ उपदेश ॥

जो तो को काँटा बुवै, ताहि बोव तू फूल ।
तोहि फूल को फूल है, वा को है तिरसूल ॥ १ ॥
दुर्बल को न सताइये, जा की मोटी हाय ।
बिना जीव की स्वास से[1], लोह भसम ह्वै जाय ॥ २ ॥
कबीर आप ठगाइये, और न ठगिये कोय ।
आप ठगा सुख होत है, और ठगे दुख होय ॥ ३ ॥

---

(१) भाथी या धौंकनी निर्जीव होती है उसकी हवा से लोहा गल जाता है ।

या दुनियाँ मैं आइ के, छाड़ि देइ तू ऐंठ।
लेना होइ सो लेइ ले, उठी जात है पैंठ ॥ ४ ॥
ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को सीतल करै, आपहुँ सीतल होय ॥ ५ ॥
जग मैं बैरी कोइ नहीं, जो मन सीतल होय।
या आपा को डारि दे, दया करै सब कोय ॥ ६ ॥
हस्ती चढ़िये ज्ञान की, सहज दुलीचा डारि।
स्वान रूप संसार है, भूसन दे झख मारि ॥ ७ ॥
आवत गारी एक है, उलटत होय अनेक।
कह कबीर नहिं उलटिये, वही एक की एक ॥ ८ ॥

॥ सोरठा ॥

हरिजन तो हारा भला, जीतन दे संसार।
हारा सतगुरु से मिलै, जीता जम की लार ॥ ९ ॥
जैसा अन जल खाइये, तैसा ही मन होय।
जैसा पानी पीजिये, तैसी बानी सोय ॥ १० ॥
माँगन मरन समान है, मत कोइ माँगो भीख।
माँगन तें मरना भला, यह सतगुरु की सीख ॥ ११ ॥
कथा कीतरन रात दिन, जा के उद्यम येह।
कह कबीर ता साधु की, हम चरनन की खेह ॥ १२ ॥
जो कोइ समझै सैन मैं, ता से कहिये बैन।
सैन बैन समझै नहीं, ता से कछु नहिं कहन ॥ १३ ॥
बहते को मत बहन दे, कर गहि ऐंचहु ठौर।
कहा सुना मानै नहीं, बचन कहो दुइ और ॥ १४ ॥
बन्दे तूँ कर बन्दगी, तो पावे दीदार।
औसर मानुष जनम का, बहुरि न बारम्बार ॥ १५ ॥

साधु भया तो क्या भया, बोलै नाहिं बिचार ।
हतै पराई आतमा, जीभ बाँधि तरवार ॥ १६॥
मधुर बचन है औषधी, कटुक बचन है तीर ।
स्रवन द्वार ह्वै संचरै, सालै सकल सरीर ॥ १७॥
बोलत ही पहिचानिये, साहु चोर को घाट ।
अंतर की करनी सबै, निकसै मुख की बाट ॥ १८॥
जिन ढूँढ़ा तिन पाइया, गहिरे पानी पैठि ।
जो बौरा डूबन डरा, रहा किनारे बैठि ॥ १६॥
ज्ञान रतन की कोठरी, चुप करि दीजे ताल ।
पारख आगे खोलिये, कुंजी बचन रसाल ॥ २०॥
पढ़ना गुनना चातुरी, यह तो बात सहल ।
काम दहन मन बसि करन, गगन चढ़न मुसकल ॥ २१॥
करता था तो क्यों रहा, अब करि क्यों पछिताय ।
बोवै पेड़ बबूल का, आम कहाँ तेँ खाय ॥ २२॥
भय बिनु भाव न ऊपजै, भय बिनु होय न प्रीति ।
जब हिरदे से भय गया, मिटी सकल रस रीति ॥ २३॥
डर करनी डर परम गुरु, डर पारस डर सार ।
डरत रहै सो ऊबरै, गाफिल खावै मार ॥ २४॥

॥ गृहस्थ की रहनी ॥

जो मानुष गृह-धर्म युत, राखै सील बिचार ।
गुरुमुख बानी साधु सँग, मन बच सेवा सार ॥ १ ॥
सत्त सील दाया सहित, बरतै जग ब्योहार ।
गुरु साधू का आस्रित, दीन बचन उच्चार ॥ २ ॥
गिरही सेवै साधु को, साधू सुमिरै नाम ।
या में धोखा कछु नहीँ, सरै दोऊ को काम ॥ ३ ॥

॥ बैरागी की रहनी ॥

धारन तो दोऊ भली, गिरही के बैराग।
गिरही दासातन करै, बैरागी अनुराग ॥ १ ॥
बैरागी बिरकत[1] भला, ग्रेही चित्त उदार।
दोउ बातौं खाली पड़ै, ता को वार न पार ॥ २ ॥

॥ करनी और कथनी ॥

कथनी मीठी खाँड़ सी, करनी बिष की लोय।
कथनी तजि करनी करै, तौ बिष से अमृत होय ॥ १ ॥
कथनी के सूरे घने, थोथे बाँधे तीर।
बिरह बान जिन के लगा, तिन के बिकल सरीर ॥ २ ॥
लाया साखि बनाय करि, इत उत अच्छर काट।
कह कबीर कब लग जिये, जूठी पत्तल चाट ॥ ३ ॥
पानी मिलै न आप को, औरन बकसत छीर।
आपन मन निस्चल नहीं, और बँधावत धीर ॥ ४ ॥
मारग चलते जो गिरै, ता को नाहीं दोस।
कह कबीर बैठा रहै, ता सिर करड़े कोस ॥ ५ ॥

॥ जीवत मृतक ॥

जीवन मिरतक होइ रहै, तजै खलक की आस।
रच्छक समरथ सतगुरू, मत दुख पावै दास ॥ १ ॥
मोती निपजै सीप मेँ, सीप समुंदर माहिं।
कोइ मरजीवा काढ़सी, जीवन की गम नाहिं ॥ २ ॥
खरी कसौटी नाम की, खोटा टिकै न कोय।
नाम कसौटी सो टिकै, जो जीवत मिरतक होय ॥ ३ ॥

---

(१) बिरक्त।

ऊँचा तरवर[१] गगन फल, बिरला पंछी खाय।
इस फल को तो सो चखै, (जो) [illegible] मरि जाय ॥ ४ ॥
कबीर मन मिरतक भया, दुर्बल भया सरीर।
पाछे लागे हरि फिरैं, कहैं कबीर कबीर ॥ ५ ॥
मन को मिरतक देखि कै, मत मानै बिस्वास।
साध जहाँ लौं भय करैं, जब लग पिंजर स्वास ॥ ६ ॥
मैं जानौं मन मरि गया, मरि के हूआ भूत।
मूए पीछे उठि लगा, ऐसा मेरा पूत ॥ ७ ॥
भक्त मरे क्या रोइये, जो अपने घर जाय।
रोइये साकट बापुरे, (जो) हाटो हाट बिकाय ॥ ८ ॥
आपा मेटे गुरु मिलै, गुरु मेटे सब जाय।
अकथ कहानी प्रेम की, कहे न कोइ पतियाय ॥ ९ ॥
कबीर चेरा संत का, दासनहूँ का दास।
अब तो ऐसा होइ रहु, ज्यौं पाँव तले की घास ॥ १० ॥
रोड़ा होइ रहु बाट का, तजि आपा अभिमान।
लोभ मोह तृस्ना तजै, ताहि मिलै निज नाम ॥ ११ ॥
रोड़ा भया तो क्या भया, पंथी को दुख देय।
साधू ऐसा चाहिये, ज्यौं पैंड़े की खेह ॥ १२ ॥
खेह भई तो क्या भया, उड़ि उड़ि लागै अंग।
साधू ऐसा चाहिये, जैसे नीर निपंग ॥ १३ ॥
नीर भया तो क्या भया, ताता सीरा जोय।
साधू ऐसा चाहिये, जो हरि ही जैसा होय ॥ १४ ॥
हरि भया तो क्या भया, जो करता हरता होय।
साधू ऐसा चाहिये, जो हरि भज निरमल होय ॥ १५ ॥

---

(१) पेड़।

निरमल भया तो क्या भया, निरमल माँगै ठौर।
मल निरमल तेँ रहित है, ते साधू कोइ और ॥ १९ ॥

॥ साच ॥

साच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जा के हिरदे साच है, ता हिरदे गुरु आप ॥ १ ॥
साईं से साचा रहौ, साईं साच सुहाय।
भावै लम्बे केस रखु, भावै घोट मुँड़ाय ॥ २ ॥
तेरे अंदर साच जो, बाहर कछु न जनाव।
जाननहारा जानिहै, अंतरगति का भाव ॥ ३ ॥
साचे स्राप न लागई, साचे काल न खाय।
साचे को साचा मिलै, साचे माहिं समाय ॥ ४ ॥
साचे कोइ न पतीजई, झूँठे जग पतियाय।
गली गली गोरस फिरै, मदिरा बैठि बिकाय ॥ ५ ॥
साचे को साचा मिलै, अधिका बढ़ै सनेह।
झूँठे को साचा मिलै, तड़दे टूटै नेह ॥ ६ ॥
कबीर पूँजी साहु की, तू मत खोवै ख्वार।
खरी बिगुर्चन होयगी, लेखा देती बार ॥ ७ ॥
लेखा देना सहज है, जो दिल साचा होय।
साईं के दरबार में, पला न पकरै कोय ॥ ८ ॥

॥ उदारता ॥

कबीर गुरु के मिलन की, बात सुनी हम दोय।
कै साहिब को नाम लै, कै कर ऊँचा होय ॥ १ ॥
बसंत ऋतु जाचक भया, हरषि दिया द्रुम[1] पात।
ता तेँ नव पल्लव[2] भया, दिया दूर नहिं जात ॥ २ ॥

---

(१) पेड़। (२) पत्तियाँ।

देह धरे का गुन यही, देह देह कछु देह।
बहुरि न देही पाइये, अब की देह सो देह ॥ ३ ॥
दान दिये धन ना घटै, नदी न घटै नीर।
अपनी आँखों देखिये, यों कथि कहै कबीर ॥ ४ ॥

॥ सहन ॥

काँच कथीर अधीर नर, जतन करत है भंग।
साधू कंचन ताइये, चढ़ै सवाया रंग ॥ १ ॥
कसत कसौटी जो टिकै, ता को सबद सुनाय।
सोई हमरा बंस है, कह कबीर समुझाय ॥ २ ॥

॥ शील ॥

सीलवंत सब तें बड़ा, सर्ब रतन की खानि।
तीन लोक की संपदा, रही सील में आनि ॥ १ ॥
घायल ऊपर घाव लै, टोटे त्यागी सोय।
भर जोबन में सीलवँत, बिरला होय तो होय ॥ २ ॥

॥ क्षमा ॥

छिमा बड़न को चाहिये, छोटन को उतपात।
कहा बिस्नु को घटि गयो, जो भृगु मारी लात ॥ १ ॥
जहाँ दया तहँ धर्म है, जहाँ लोभ तहँ पाप।
जहाँ क्रोध तहँ काल है, जहाँ छिमा तहँ आप ॥ २ ॥
करगस[१] सम दुर्जन बचन, रहै संत जन टारि।
बिजुली परै समुद्र में, कहा सकैगी जारि ॥ ३ ॥
खोद खाद धरती सहै, काट कूट बनराय।
कुटिल बचन साधू सहै, और से सहा न जाय ॥ ४ ॥

---

(१) तीर।

॥ संतोष ॥

साध सँतोषी सर्वदा, निरमल जा के बैन ।
ता के दरस रु परस तेँ, जिय उपजै सुख चैन ॥ १ ॥
चाह गई चिंता मिटी, मनुवाँ बेपरवाह ।
जिन को कछू न चाहिये, सोई साहंसाह ॥ २ ॥
गोधन गजधन बाजधन, और रतन धन खान ।
जब आवै संतोष धन, सब धन धूरि समान ॥ ३ ॥

॥ धीरज ॥

धीरे धीरे रे मना, धीरे सब कछु होय ।
माली सींचै सौ घड़ा, ऋतु आये फल होय ॥ १ ॥
कबीर तू काहे डरै, सिर पर सिरजनहार ।
हस्ती चढ़ि कर डोलिये, कूकर भुसै हजार ॥ २ ॥

॥ दीनता ॥

दीन लखै मुख सबन को, दीनहिं लखै न कोय ।
भली बिचारी दीनता, नरहुँ देवता होय ॥ १ ॥
कबीर नवै सो आप को, पर को नवै न कोय ।
घालि तराजू तौलिये, नवै सो भारी होय ॥ २ ॥
आपा मेटे पिउ मिलै, पिउ में रहा समाय ।
अकथ कहानी प्रेम की, कहै तो को पतियाय ॥ ३ ॥
ऊँचे पानी ना टिकै, नीचे ही ठहराय ।
नीचा होय सो भरि पिवै, ऊँचा प्यासा जाय ॥ ४ ॥
सब तेँ लघुताई भली, लघुता तेँ सब होय ।
जस दुतिया को चंद्रमा, सीस नवै सब कोय ॥ ५ ॥
बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय ।
जो दिल खोजौं आपना, मुझसा बुरा न होय ॥ ६ ॥

॥ दया ॥

दया भाव हिरदे नहीं, ज्ञान कथै बेहद्द ।
ते नर नरकहिं जाहिंगे, सुनि सुनि साखी सब्द ॥ १ ॥
दाया दिल में राखिये, तू क्यों निरदई होय ।
साईं के सब जीव हैं, कीड़ी कुंजर सोय ॥ २ ॥
हम रोवैं संसार को, रोय न हम को कोय ।
हम को तो सो रोइहै, जो सब्द-सनेही होय ॥ ३ ॥

॥ बिचार ॥

बोली तो अनमोल है. जो कोइ जानै बोल ।
हिये तराजू तोल के, तब मुख बाहर खोल ॥ १ ॥
आधी साखी सिर कटै, जो रे बिचारी जाय ।
मनहिं प्रतीत न ऊपजै, राति दिवस भरि गाय ॥ २ ॥
सहज तराजू आन करि, सब रस देखा तोल ।
सब रस माहीं जीभ रस, जो कोइ जानै बोल ॥ ३ ॥
ज्यों आवै त्योंहीं कहै, बोलै नाहि विचारि ।
हतै पराई आतमा, जीभ लेइ तरवारि ॥ ४ ॥

॥ बिबेक ॥

साधू मेरे सब बड़े, अपनी अपनी ठौर ।
सबद बिबेकी पारखी, सो माथे के मौर ॥ १ ॥
गुरुपसु नरपसु नारिपसु, बेदपसू संसार ।
मानुष सोई जानिये, जाहि बिबेक बिचार ॥ २ ॥
प्रगटै प्रेम बिबेक दल, अभय निसान बजाय ।
उग्र ज्ञान उर आवतां, यह सुनि मोह दुराय ॥ ३ ॥
सत्तनाम सब कोइ कहै, कहिबे माहिं बिबेक ।
एक अनेकै फिरि मिलै, एक समाना एक ॥ ४ ॥

॥ काम ॥

कामी क्रोधी लालची, इन से भक्ति न होय।
भक्ति करै कोइ सूरमा, जाति बरन कुल खोय ॥ १ ॥
कामी कबहुँ न गुरु भजै, मिटै न संसय सूल।
और गुनह सब बकसिहौं, कामी डार न मूल ॥ २ ॥
जहाँ काम तहँ नाम नहि, जहाँ नाम नहिं काम।
दोनों कबहूँ ना मिलैं, रबि रजनी इक ठाम ॥ ३ ॥
काम क्रोध मद लोभ की, जब लगि घट में खान।
कहा मूरख कहा पंडिता, दोनों एक समान ॥ ४ ॥

॥ क्रोध ॥

कोटि करम लागे रहैं, एक क्रोध की लार।
किया कराया सब गया, जब आया हंकार ॥ १ ॥
दसो दिसा से क्रोध की, उठी अपरबल आगि।
सीतल संगति साध की, तहाँ उबरिये भागि ॥ २ ॥
कुबुधि कमानी चढ़ि रही, कूटिल बचन का तीर।
भरि भरि मारै कान में, सालै सकल सरीर ॥ ३ ॥

॥ लोभ ॥

जब मन लागा लोभ से, गया बिषय में मोय[1]।
कहै कबीर बिचारि कै, कस भक्ती घन होय ॥ १ ॥
आब गई आदर गया, नैनन गया सनेह।
ये तीनों जबहीं गये, जबहिं कहा कछु देह ॥ २ ॥
जग में भक्त कहावई, चुकट[2] चून नहि देय।
सिष जोरू का ह्वै रहा, नाम गुरू का लेय ॥ ३ ॥

(१) सन जाना। (२) चुटकी।

॥ मोह ॥

जब घट मोह समाइया, सबै भया अँधियार ।
निर्मोह ज्ञान बिचारि कै, (कोइ) साधू उतरै पार ॥ १ ॥
सलिल मोह की धार में, बहि गये गहिर गँभीर ।
सुच्छम मछरी सुरत है, चढ़िहै उलटे नीर ॥ २ ॥

॥ मान और हँगता ॥

कंचन तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह ।
मान बड़ाई ईरषा, दुरलभ तजनी येह ॥ १ ॥
बडा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर ।
पंथी को छाया नहीं, फल लागे अति दूर ॥ २ ॥
जहँ आपा तहँ आपदा, जहँ संसय तहँ सोग ।
कह कबीर कैसे मिटै, चारो दीरघ रोग ॥ ३ ॥
बड़ा बड़ाई ना तजै, छोटा बहु इतराय ।
ज्यों प्यादा फरजी भया, टेढ़ा टेढ़ा जाय[1] ॥ ४ ॥
जग में बैरी कोउ नहीं, जो मन सीतल होय ।
यह आपा तू डारि दे, दया करै सब कोय ॥ ५ ॥

॥ कपट ॥

चित कपटी सब से मिलै, माहीं कुटिल कठोर ।
इक दुरजन इक आरसी, आगे पीछे और ॥ १ ॥
हेत प्रीति से जो मिलै, ता को मिलिये धाय ।
अंतर राखे जो मिलै, ता से मिलै बलाय ॥ २ ॥

---

(१) शतरंज के खेल में जब प्यादा वज़ीर बन जाता है तो वह टेढ़ा चल सकता है ।

॥ आशा ॥

जो तू चाहै मुझ को, राखौ और न आस।
मुझहिं सरीखा होइ रहु, सब सुख तेरे पास ॥ १ ॥
कबीर जोगी जगत गुरु, तजै जगत की आस।
जो जग की आसा करै, तो जगत गुरू वह दास ॥ २ ॥
बहुत पसारा जनि करै, करु थोरे की आस।
बहुत पसारा जिन किया, तेई गये निरास ॥ ३ ॥

॥ तृष्णा ॥

की त्रिस्ना है डाकिनी, की जीवन का काल।
और और निसु दिन चहै, जीवन करै बिहाल ॥ १ ॥
त्रिस्ना अग्नि प्रलय किया, तृप्त न कबहूँ होय।
सुर नर मुनि औ रंक सब, भस्म करत है सोय ॥ २ ॥

॥ मन ॥

मन के मते न चालिये, मन के मते अनेक।
जो मन पर असवार है, सो साधू कोइ एक ॥ १ ॥
मन मुरीद संसार है, गुरु मुरीद कोइ साध।
जो मानै गुरु बचन को, ता का मता अगाध ॥ २ ॥
मन को मारूँ पटकि के, टूक टूक होइ जाय।
बिष की क्यारी बोइ के, लुनता क्यों पछिताय ॥ ३ ॥
कबीर मन तो एक है, भावै तहाँ लगाय।
भावै गुरु की भक्ति करु, भावै बिषय कमाय ॥ ४ ॥
मन के मारे बन गये, बन तजि बस्ती माहिं।
कहै कबीर क्या कीजिये, यह मन ठहरै नाहिं ॥ ५ ॥
जेती लहर समुद्र की, तेती मन की दौर।
सहजै हीरा नीपजै, जो मन आवै ठौर ॥ ६ ॥

दौड़त दौड़त दौड़िया, जहँ लग मन की दौड़ ।
दौड़ थकी मन थिर भया, बस्तु ठौर की ठौर ॥ ७ ॥
कबीर मन परबत हुता, अब मैं पाया जानि ।
टाँकी लागी सबद की, निकसी कंचन खानि ॥ ८ ॥
अगम पंथ मन थिर करै, बुद्धि करै परवेस ।
तन मन सबही छाड़ि कै, तब पहुँचै वा देस ॥ ९ ॥
मनहीं को परमोधिये, मनहीं को उपदेस ।
जो यहि मन को बसि करै, (तो) सिष्य होय सब देस ॥ १० ॥
गुरु धोबी सिष कापड़ा, साबुन सिरजनहार ।
सुरत सिला पर धोइये, निकसै रंग अपार ॥ ११ ॥
मन पंछी तब लगि उड़ै, बिषय बासना माहिं ।
प्रेम बाज की झपट में, जब लगि आयो नाहिं ॥ १२ ॥
यह तो गति है अटपटी, सटपट लखै न कोय ।
जो मन की खटपट मिटै, चटपट दरसन होय ॥ १३ ॥
मन मनसा को मारि करि, नन्हा करि के पीस ।
तब सुख पावै सुन्दरी, पदुम झलक्कै सीस ॥ १४ ॥
तन तुरंग असवार मन, कर्म पियादा साथ ।
त्रिस्ना चली सिकार को, बिषै बाज लिये हाथ ॥ १५ ॥
मना मनोरथ छाड़ि दे, तेरा किया न होय ।
जो पानी घी नीकसै, सूखा खाय न कोय ॥ १६ ॥
मन नाहीं छाड़ै बिषय, बिषय न मन को छाड़ि ।
मन का यही सुभाव है, पूरी लागी आड़ि[1] ॥ १७ ॥

॥ माया ॥

माया छाया एक सी, बिरला जानै कोय।
भगता के पाछे फिरै, सनमुख भागै सोय[1] ॥ १ ॥
माया तो ठगनी भई, ठगत फिरै सब देस।
जा ठग या ठगनी ठगी, ता ठग को आदेस ॥ २ ॥
कबीर माया पापिनी, ताही लागे लोग।
पूरी किनहूँ न [illegible], या का यही बियोग ॥ ३ ॥
कबीर माया बेसवा, दोनोँ की इक जात।
आवत कौँ आदर करै, जात न पूछै बात ॥ ४ ॥
कबीर माया रूखड़ी, दो फल की दातार।
खावत खरचत मुक्ति दे, संचत नरक दुवार ॥ ५ ॥
खान खरचन बहु अंतरा, मन मेँ देख बिचार।
एक खवाया साधु को, एक मिलाया छार ॥ ६ ॥
माया तो है राम की, मोदी सब संसार।
जा को चिट्ठी ऊतरी, सोई खरचनहार ॥ ७ ॥
माया संचै संग्रहै, वह दिन जानै नाहिं।
सहस बरस की सब करै, मरै महूरत[2] माहिं ॥ ८ ॥
माया के झक[3] जग जरै, कनक कामिनी लागि।
कहै कबीर कस बाचिहै, रुई लपेटी आगि ॥ ९ ॥
कबीर माया सूम की, देखनहीं का लाड़।
जो वा मेँ कौड़ी घटै, साईँ तोड़ै हाड़ ॥ १० ॥
सौ पापन को मूल है, एक रुपैया रोक[4]।
साधू है संग्रह करै, हारै हरि सा थोक[5] ॥ ११ ॥

---

(१) जो माया अर्थात संसार से भागै उस के तो वह छाया की नाईं पीछे लगी फिरती है, और जो उसके सन्मुख हो कर उस का याचक हो उस से भागती है, अर्थात नहीं मिलती। (२) छिन। (३) जोश। (४) नक़द। (५) जमा; माल।

माया है दुइ भाँति की, देखो ठोंक बजाय।
एक मिलावै नाम से, एक नरक लै जाय॥१२॥
मीठा सब कोइ खात है, बिष ह्वै लागै धाय।
नीब न कोई पीवसी, सर्ब रोग मिटि जाय॥१३॥

॥ कनक और कामिनी ॥

चलौं चलौं सब कोइ कहै, पहुँचै बिरला कोय।
एक कनक अरु कामिनी, दुरगम घाटी दोय॥ १ ॥
नारी की झाँई परत, अंधा होत भुजंग।
कबीर तिन की कौन गति, (जो) नित नारी के संग॥ २ ॥
कामिनि सुंदर सर्पिनी, जो छेड़े तेहि खाय।
जो गुरु चरनन राचिया, तिन के निकट न जाय॥ ३ ॥
नैनों काजर पाइ कै, गाढ़े बाँधे केस।
हाथों मिहँदी लाइ कै, बाघिनि खाया देस॥ ४ ॥
पर नारी पैनी छुरी, मति कोइ लावो अंग।
रावन के दस सिर गये, पर नारी के संग॥ ५ ॥
नारी निरखि न देखिये, निरखि न कीजै दौर।
देखेही तें बिष चढ़ै, मन आवै कछु और॥ ६ ॥
सब सोने की सुंदरी, आवै बास सुबास।
जो जननी ह्वै आपनी, तऊ न बैठै पास॥ ७ ॥
नारि नसावै तीन गुन, जो नर पासे होय।
भक्ति मुक्ति निज ध्यान में, पैठि न सक्कै कोय॥ ८ ॥
गाय रोय हँसि खेलि के, हरत सबन के प्रान।
कह कबीर यह घात को, समझैं संत सुजान॥ ९ ॥
नारि कहौं की नाहरी, नख सिख से यह खाय।
जल बूड़ा तो ऊबरै, भग बूड़ा बहि जाय॥१०॥

कबीर नारि की प्रीति से, केते गये गड़ंत।
केते और जाहिंगे, नरक हसंत हसंत ॥११॥

नारी नाहीं जम अहै, तू मत राचै जाय।
मंजारी[1] ज्यों बोलि कै, काढ़ि करेजा खाय ॥१२॥

एक कनक अरु कामिनी, बिष फल लिया उपाय।
देखत ही तें बिष चढ़ै, चाखतही मरि जाय ॥१३॥

छोटी मोटी कामिनी, सबही बिष को बेल।
बैरो मारै दाँव दै, यह मारै हँसि खेल ॥१४॥

नारि पुरुष की इसतरी, पुरुष नारि का पूत।
याही ज्ञान बिचारि कै, छाड़ि चला अवधूत ॥१५॥

॥ निद्रा ॥

कबीर सोया क्या करै, जागि के जपो दयार।
एक दिना है सोवना, लम्बे पाँव पसार ॥ १ ॥

कबीर सोया क्या करै, उठि न रोवै दुक्ख।
जा का बासा गोर[2] में, सो क्यों सोवै सुक्ख ॥ २ ॥

कबीर सोया क्या करै, जागन की करु चौंप।
ये दम हीरा लाल है, गिनि गिनि गुरु को सौंप ॥ ३ ॥

नींद निसानी मीच की, उठु कबीरा जागु।
और रसायन छाड़ि कै, नाम रसायन लागु ॥ ४ ॥

सोया सो निरफल गया, जागा सो फल लेय।
साहिब हक्क न राखसी, जब माँगे तब देय ॥ ५ ॥

पिउ पिउ कहि कहि कूकिये, ना सोइये इसरार[3]।
रात दिवस के कूकते, कबहुँक लगै पुकार ॥ ६ ॥

(१) बिल्ली। (२) क़बर। (३) भेद।

सोता साध [illegible], करै नाम का जाप।
यह तीनौं सोते भले, साकट सिंह और साँप ॥ ७ ॥

जागन से सोवन भला, जो कोइ जानै सोय।
अंतर लौ लागी रहै, सहजै सुमिरन होय ॥ ८ ॥

जागन मैं सोवन करै, सोवन मैं लौ लाय।
सुरति डोरि लागी रहै, तार टूटि नहि जाय ॥ ९ ॥

कबीर खालिक जागता, और न जागै कोय।
कै जागे बिषया भरा, (कै) दास बंदगी सोय ॥ १० ॥

॥ निंदा ॥

निन्दक नियरे राखिये, आँगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना, निर्मल करै सुभाय ॥ १ ॥

निन्दक हमरा जनि मरो, जीवो आदि जुगादि।
कबीर सतगुरु पाइया, निन्दक के परसादि ॥ २ ॥

कबीर मेरे साधु को, निन्दा करौ न कोय।
जो पै चन्द्र कलंक है, तऊ उँजारा होय ॥ ३ ॥

तिनका कबहुँ न निन्दिये, जो पाँवन तर होय।
कबहूँ उड़ि आँखिन परै, पीर घनेरी होय ॥ ४ ॥

दोष पराये देखि करि, चले हसंत हसंत।
अपने याद न आवई, जिन का आदि न अंत ॥ ५ ॥

निन्दक एकहु मत मिलै, पापी मिलै हजार।
इक निन्दक के सीस पर, कोटि पाप को भार ॥ ६ ॥

॥ स्वादिष्ट अहार ॥

खट्टा मीठा चरपरा, जिभ्या सब रस लेय।
चोरौं कुतिया मिलि गई, पहरा किस का देय ॥ १ ॥

माखी गुड़ में गड़ि रही, पंख रह्यो लिपटाय।
हाथ मलै औ सिर धुनै, लालच बुरी बलाय॥ २॥

॥ माँस अहार ॥

माँस अहारी मानवा, परतछ राछस अंग।
ता की संगति मत करो, परत भजन में भंग॥ १॥
माँस मछरिया खात हैं, सुरा पान से हेत।
सो नर जड़ से जाहिंगे, ज्यों मूरी का खेत॥ २॥
माँस माँस सब एक है, मुरगी हिरनी गाय।
आँखि देखि नर खात है, ते नर नरकहिं जाय॥ ३॥
मुरगी मुल्ला से कहै, जिबह करत है मोहि।
साहिब लेखा माँगसी, संकट परिहै तोहि॥ ४॥
कहता हौं कहि जात हौं, कहा जो मान हमार।
जा का गर तुम काटिहौ, सो फिर काटि तुम्हार॥ ५॥
हिन्दू के दाया नहीं, मिहर तुरुक के नाहिं।
कहै कबीर दोनों गये, लख चौरासी माहिं॥ ६॥

॥ नशा ॥

औगुन कहौं सराब का, ज्ञानवंत सुनि लेय।
मानुष से पसुआ करै, द्रव्य गाँठि को देय॥ १॥
अमल अहारी आतमा, कबहुँ न पावै पारि।
कहै कबीर पुकारि कै, त्यागो ताहि बिचारि॥ २॥
मद तो बहुतक भाँति का, ताहि न जानै कोय।
तनमद मनमद जातिमद, मायामद सब लोय॥ ३॥
बिद्यामद अरु गुनहुँ मद, राजमद्द उनमद्द।
इतने मद को रद करै, तब पावै अनहद्द॥ ४॥

कबीर मतवाला नाम का, मद [illegible] नाहिँ ।
नाम पियाला जो पिये, सो मतवाला नाहि ॥ ५ ॥

॥ सादा खान पान ॥

रूखा सूखा खाइ कै, ठंढा पानी पीव ।
देखि बिरानी चूपड़ी, मत ललचावै जीव ॥ १ ॥
कबीर साइँ मुज्झ को, रूखी रोटी देय ।
चुपड़ी माँगत मैं डरूँ, (कहूँ) रूखी छीनि न लेय ॥ २ ॥

॥ आनदेव की पूजा ॥

सत्त नाम को छाड़ि कै, करै और को जाप ।
बेस्या केरे पूत ज्योँ, कहै कौन को बाप ॥ १ ॥
कामी तरै क्रोधी तरै, लोभी तरै अनंत ।
आन उपासी कृतघ्नी, तरै न गुरू कहंत ॥ २ ॥
एकै साधे सब सधै, सब साधे सब जाय ।
जो गहि सेवै मूल को, फूलै फलै अघाय ॥ ३ ॥

॥ तीर्थ ब्रत ॥

तीरथ ब्रत करि जग मुआ, जूड़े पानी न्हाय ।
सत्त नाम जाने बिना, काल जुगन जुग खाय ॥ १ ॥
तीरथ चाले दुइ जना, चित चंचल मन चोर ।
एको पाप न ऊतरा, मन दस लाये और ॥ २ ॥
न्हाये धोये क्या भया, (जो) मन का मैल न जाय ।
मीन सदा जल मैं रहै, धोये बास न जाय ॥ ३ ॥
पाहन को क्या पूजिये, जो नहि देइ जवाब ।
अंधा नर आसामुखी, योँहीं होय खराब ॥ ४ ॥
पाहन पूजे हरि मिलै, तो मैं पुजौं पहार ।
ता तेँ ये चाकी भली, पीसि खाय संसार ॥ ५ ॥

मन मथुरा दिल द्वारिका, काया कासी जान।
दस द्वारे का देहरा, ता में जोति पिछान ॥ ६ ॥
काँकर पाथर जोरि कै, मसजिद लई चुनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बाँग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय ॥ ७ ॥
पूजा सेवा नेम ब्रत, गुड़ियन का सा खेल।
जब लगि पिउ परिचय नहीं, तब लगि संसय मेल ॥ ८ ॥

॥ पंडित और संस्कृत ॥

संस्किरत है कूप जल, भाषा बहता नीर।
भाषा सतगुरु सहित है, सत मत गहिर गँभीर ॥ १ ॥
पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित हुआ न कोय।
ढाई अच्छर प्रेम का, पढ़ै सो पंडित होय ॥ २ ॥
पंडित केरो पोथियाँ, ज्यों तीतर को ज्ञान।
औरन सगुन बतावहीं, अपना फंद न जान ॥ ३ ॥
पंडित और मसालची, दोनों सूझै नाहि।
औरन को करैं चाँदना, आप अँधेरे माहिं ॥ ४ ॥

॥ मिश्रित ॥

सपने में साईं मिले, सोवत लिया जगाय।
आँखि न खोलूँ डरपता, मति सुपना है जाय ॥ १ ॥
सोऊँ तो सुपने मिलूँ, जागूँ तो मन माहिं।
लोचन राते सुभ घड़ी, बिसरत कबहूँ नाहिं ॥ २ ॥
यार बुलावै भाव से, मो पै गया न जाय।
धन मैलो पिउ ऊजला, लागि न सक्कूँ पाँय ॥ ३ ॥
साँझ पड़े दिन बीतवे, चकवी दीन्हा रोय।
चल चकवा वा देस को, जहाँ रैन ना होय ॥ ४ ॥

चकवी बिछुड़ी साँझ की, आन मिलै परभात।
जो नर बिछुड़े नाम से, दिवस मिलैं ना रात ॥ ५ ॥
तरवर तासु बिलंबिये, बारह मास फलंत।
सीतल छाया सघन फल, पंछी केल करंत ॥ ६ ॥
कबीर सीप समुद्र की, खारा जल नहि लेय।
पानी पीवै स्वाँति का, सोभा सागर देय ॥ ७ ॥
पपिहा पन को ना तजै, तजै तो तन बेकाज।
तन छूटै तो कछु नहीं, पन छूटे है लाज ॥ ८ ॥
चात्रिक[1] सुतहि पढ़ावही, आन नीर मत लेय।
मम कुल यही सुभाव है, स्वाँति बूंद चित देय ॥ ९ ॥
आदि होत सब आप में, सकल होत ता माहि।
ज्यौं तरवर के बीज में, डार पात फल छाँहि ॥ १० ॥
खुलि खेलो संसार में, बाँधि न सक्कै कोय।
घाट जगाती क्या करै, जो सिर बोझ न होय ॥ ११ ॥
देह धरे का दंड है, सब काहू को होय।
ज्ञानी भुगतै ज्ञान से, मूरख भुगतै रोय ॥ १२ ॥
जूआ चोरी मुखबिरी, ब्याज घूस पर नार।
जो चाहै दीदार को, एती बस्तु निवार ॥ १३ ॥
मो में इतनी सक्ति कहँ, गाओं गला पसार।
बंदे को इतनी घनी, पड़ा रहै दरबार ॥ १४ ॥
नाचै गावै पद कहै, नाहीं गुरु से हेत।
कह कबीर क्यों नीपजै, बीज बिहूना खेत ॥ १५ ॥
नाम रतन धन संत पहँ, खान खुली घट माहि।
सँत मँत ही देत हैं, गाहक कोई नाहिं ॥ १६ ॥

---

(१) पपीहा।

रैदास जी

—:०:—

जीवन समय—पंद्रहवें शतक के पिछले हिस्से से सोलहवें शतक के मध्य तक। जन्म और सतसंग स्थान—काशी। जात और आश्रम—चमार, गृहस्थ। गुरू—स्वामी रामानंद।

यह कबीर साहिब के सहकाली और मीरा बाई के गुरू थे। मोची का काम उमर भर किया। हिन्दुस्तान के बहुत से भागों में, मुख्यकर गुजरात प्रांत में, रैदास पंथ के लाखों आदमी हैं। [सविस्तर जीवन चरित्र रैदास जी की बानी में छपा है]

॥ दीनता ॥

जा देखे घिन ऊपजै, नरक कुंड में बास।
प्रेम भगति से ऊधरे, प्रगटत जन रैदास ॥ १ ॥
रैदास तूँ कावँच[1] फली, तुझै न छीपै[2] कोइ।
तैं निज नावँ न जानिया, भला कहाँ तैं होइ ॥ २ ॥

॥ उपदेश ॥

हरि सा हीरा छाड़ि कै, करै आन की आस।
ते नर जमपुर जाहिंगे, सत भासै रैदास ॥ १ ॥
अंतरगति राचैं नहीं, बाहर कथैं उदास।
ते नर जमपुर जाहिंगे, सत भासै रैदास ॥ २ ॥
रैदास कहै जा के हृदै, रहै रैन दिन राम।
सो भगता भगवंत सम, क्रोध न ब्यापै काम ॥ ३ ॥
रैदास राति न सोइया, दिवस न करिये स्वाद।
अहि-निसि[3] हरि जी सुमिरिये, छाड़ि सकल प्रतिबाद ॥ ४ ॥

॥ मिश्रित ॥

केहि बिधि पार पाइबो, कोउ न कहै समुझाइ।
कवन जुगत अस कीजिये, जा तैं आवागवन बिलाइ ॥ १ ॥

---

(१) केवाँच जिसके बदन में छूजाने से खाज़ पैदा होकर ददोरे पड़ जाते हैं। (२) छुपै। (३) दिन रात।

६

गुरु नानक

—:o:—

जीवन समय—१५२६ से १५९६ तक। जनम स्थान—तलवंडी नगर, ज़िला लाहौर।
सतसंग स्थान - सुलतानपुर और करतारपुर, पंजाब।
जाति और आश्रम - बेदी खत्री, गृहस्थ। गुरु—नारद मुनी।

गुरु नानक ने जीवों के चिताने के लिये देशाटन बहुत किया। पहली जात्रा उनकी पूरब को संबत १५५४ में शुरू हुई—पंजाब से आगरा, बिहार, बंगाल, उड़ीसा और आसाम के प्रान्तों में अनुमान बारह बरस तक घूम कर [तवारीख़ गुरु खालसा में बर्मा देश में जाना भी लिखा है] अपने स्थान सुलतानपुर पंजाब को लौट आये और वहाँ थोड़े दिन ठहर कर संबत १५६७ में दूसरे सफ़र दक्खिन को निकले और मारवाड़, गौड़ देश हैदराबाद, मदरास के सूबों में बिचरते हुए संगलद्वीप (लंका) तक गये और वहाँ के राजा शिवनाभ को मंत्र उपदेश दिया और उन्हीं के हेतु प्राण संगली का ग्रन्थ रचा। संगलदीप के राजा की गोष्ठि का समाचार पढ़ने जोग है जो गुरु नानक के सबिस्तर जीवन-चरित्र में प्राण-संगली के आदि में छपा है। फिर सुलतानपुर को लौट कर वहाँ बिश्राम किया और कुछ दिन पीछे अपनी तीसरी जात्रा में उत्तर को सिधारे। बद्री नारायण, नैपाल, सिकिम, भुटान आदि देशों की सैर करते हुए पहाड़ के रास्ते से लौट कर सुलतानपुर में पधारे। चौथी यात्रा पच्छिम की संबत १५७० में शुरू हुई और सिंध, मक्का, जद्दा, मदीना, रूम, बग़दाद, ईरान, बिलुचिस्तान, कंधार, काबुल, और कश्मीर घूमते हुए संबत १५७९ में कर्तारपुर में आन बिराजे और अनुमान चौबीस बरस के देशाटन के पीछे वहाँ सोलह बरस बिश्राम करके परमधाम को सिधारे। गुरु नानक ने ६९ बरस ० महीना १० दिन की अवस्था तक परमार्थ का दौलत दोनों हाथों से लुटाकर और लाखों जीवों को सिख (शिष्य) बना कर चोला छोड़ा।

॥ नाम ॥

साचा नामु अराधिया, जम लै भग्गा जाहि[1]।
नानक करनी सार है, गुरमुख घड़िया राहि[2]॥ १॥
क्या लीता धनवंतिया, क्या छोड़या निर्धनियाँ।
नानक सच्चे नाम बिनु, आगे दोवें सक्खणियाँ[3]॥ २॥

---

(१) जम भाग जाता है। (२) गुरुमुख ने अपना रास्ता गढ़ या बना लिया है। (३) आगे दोनों ख़ाली हाथ होंगे।

इक सूही दूजी सोहवी, तीजी सोभावंती नारि ।
सुइने रुप्पे पचअरी, नानक बिनु नावैं कुड़िआरि[1] ॥ ३ ॥
अठ्ठे पहर भचंदड़ा, कच्चे कूड़े कंम[2] ।
नाम अराधन ना मिले, नानक हीन करंम ॥ ४ ॥
सहस स्याणप[3] नाम बिनु, करि देखै सभि बाद ।
सोई स्याणप [illegible], हिरदे जिन के याद ॥ ५ ॥
भूषण पहिरे भोजन खाये, फूल बहे[4] नर अंधु ।
नानक नामु न चेतनी, लागि रहे दुर्गंधु ॥ ६ ॥

॥ चितावनी ॥

कलियाँ थीं धउले भये[5], धउलिओं भये सुपेद ।
नानक मता मतोँ दियाँ, उज्जरि गइया खेड़ु[6] ॥ १ ॥
जागो रे जिन जागना, अब जागनि की बारि ।
फेरि कि जागो नानका, जब सोवउ पाँउ पसारि[7] ॥ २ ॥
जित मुह मिलनि मुबारखाँ, लक्खाँ मिलै असीस ।
ते मुह फेर तपाइयहि, तन मन सहै कसीस[8] ॥ ३ ॥
इक दब्बीअहि इक साड़ियहि, इक दिचनि ढंढ लुड़ाइ[9] ।
गई मुबारख नानका, है है पहुतो आय ॥ ४ ॥
मित्राँ दोस्त माल धन, छड्डि चले अति भाइ ।
संग न कोई नानका, उह हंस[10] इकेला जाइ ॥ ५ ॥

(१ यद्यपि कोई स्त्री रक्त-वरण, सुंदर, शोभावाली और सोने रूपे से जड़ी हुई है तो भी नाम बिना कूड़े के तुल्य है। (२) कच्चे और कूड़े कामों में आठ पहर जलता रहता है। (३) चतुरता। ४) फूल कर बैठे। (५) काले से भूरे बाल हुए। (६ सोचते २ खेल ही बर्बाद गया। (७) फिर क्या जागोगे जब कि मर जावगे। (८) जिस मुँह को मुबारकबाद और लाखों आसीस मिलती है वही मुँह जलाये जायँगे और तन मन को कष्ट होगा। (९) एक गाड़े जाते हैं, एक जलाए जाते हैं, और एक योंही डाल दिये जाते हैं। (१०) जीव।

॥ भक्ति ॥

मैं धरि[1] तेरी साहिबा, और नहीं परवाहि ।
जगत पधाणू पंथ सिर, गिणवैं लैंदा साहि[2] ॥ १ ॥
जेही पिरीति लगांदिए, तोड़[3] निबाहू होइ ।
नानक दरगह जाँदियाँ, ठक[4] न सक्कै कोइ ॥ २ ॥
सै सै बारी कट्टियै, जे सीस कीचै कुरबान ।
नानक कीमति ना पवै, परिया दूर मकान[5] ॥ ३ ॥

॥ शूर ॥

सूरा एह न आखियन, जो लड़नि दलाँ में जाय ।
सूरे सोई नानका, जो मंनणु[6] हुकम रजाय ॥ १ ॥
हिरदे जिन के हरि बसै, से जन काहियहि सूर ।
कही न जाई नानका, पूरि रह्या भरपूर ॥ २ ॥

॥ अहंकार ॥

कूड़े करहिं तकब्बरी[7], हिंदू मूसलमान ।
लहन सजाईं[8] नानका, बिनु नाँवैं सुलतानु ॥ १ ॥

॥ दुबिधा ॥

मन को दुबिधा ना मिटै, मुक्ति कहाँ ते होइ ।
कउड़ी बदले नानका, जन्म चल्या नर खोइ ॥ १ ॥

॥ उपदेश ॥

जित बेले अमृत वसै[9], जीयाँ होवे दाति ।
तित वेले तू उठि बहु[10], त्रिह पहरे पिछली राति ॥ १ ॥

---

(१) सहारा । (२) जगत (मुसाफिर) मारग के सिर पर खड़ा है क्योंकि वह गिनती के दम भर रहा है । (३) अंत तक । (४) रोक । (५) जो सिर [अहं से तात्पर्य है] को कुरबान करै तो सौ सौ बार काट कर धरदे, ऐसे भक्त की महिमा कोई नहीं जान सकता, उसका घर बहुत दूर पर [अर्थात ऊँचे लोक में] हो गया । (६) मानते हैं । (७) झूठे घमंड करते हैं । (८) बिना नाम के बादशाह भी सज़ा (दंड) पावैंगे । (९) बरसे । (१०) उठ कर बैठ ।

खत्री ब्रह्मण सूद वैस, जातीं पूछि न देई दाति ।
नानक भागँ पाइये, त्रिह पहरे [illegible] राति ॥ २ ॥
सबद न जानउ गुरू का, पार परउ किन घाट ।
ते नर डूबे नानका, जिन का बड़ बड़ ठाट[1] ॥ ३ ॥
धर अंबर विच वेलड़ी, तहँ लाल सुगंधा फूल[2] ।
अक्खर इक[3] नाँ आयो, नानक नहीं कबूल ॥ ४ ॥

॥ मिश्रित ॥

रँडियाँ एह न आखियन, जिन के चलन भतार ।
रँडियाँ सेई नानका, जिन विसारिया करतार[4] ॥ १ ॥
देख अजाणाँ जहियाँ, पसँगु मुहणु बिसाड़ ।
तत्ते तावण ताइयहि, मुँह मिलनीयाँ अँगियार[5] ॥ २ ॥
देखि कै सूडी[6] झोपडी, चोरी करदे चोरु ।
वसि पये धर्मराय दै, कढ्ढ लये सभ खोरु[7] ॥ ३ ॥
वरतु नेमु तीरथु भ्रमँ, बहुतरा बोलणा कूड़[8] ।
अंतरि तीरथु नानका, सोधत नाहीं मूड़[9] ॥ ४ ॥
लै फुरमान दिवान दा, खसि प्यादे खाहि ।
बाँही बद्धे मारियहि, मारेँ दे कुरलाहि[10] ॥ ५ ॥
पाधे मिस्सर अंधुरु[11], काजी मुल्लाँ कोरु[12] ।
(नानक) तिनाँ पास न भिटोये, जो सबद दे चोरु ॥ ६ ॥

---

(१) सामान । (२) फूल । (३) रकार की धुन अर्थात "राम" । (४) राँड वह नहीं कहलाती जिनके पति मर गये [चलन] हैं, बिधवा वह हैं जिन्हों ने करतार को भुला दिया है। (५) जो बनिये अनजान ज़मींदारों का देख कर पासंग मारते हैं वह तत्ते तंदूर में भूने जायँगे और उन के मुँह में अंगारे डाले जायँगे। (६) सूना। (७) वह जमराज के बस में पड़ गये जो सब कसर निकाल लेगा। (८) बहुत बकवाद मिथ्या है। (९) अंतर के तीर्थ को मूरख नहीं खोजते। (१०) दीवान का हुक्म लेकर प्यादे बकरे मार कर खाते हैं, ऐसे लोग मुश्क बाँधकर मारे जायँगे और तब चिल्लायँगे। (११) पाधा और ब्राह्मण अंधे हैं। (१२) कोरे।

गुसाईं तुलसीदास जी

जीवन समय—सं० १५८९ से १६८० तक।

जन्म स्थान—राजापुर गाँव परगना मऊ ज़िला बाँदा।

सतसंग स्थान—काशी। जाति और आश्रम—कान्यकुब्ज ब्राह्मण, भेष।

गुरू—नरहरिदासजी जो स्वामी रामानन्द के शिष्य थे।

इन को बालमीकि जी का अवतार कहते हैं और इस में संदेह नहीं कि इनकी हिन्दी भाषा की रामायण बालमीकि जी की संस्कृत रामायण से सुंदरता में कम नहीं बरन इस से सब साधारण का कहीं बढ़कर उपकार हुआ है। यह ३१ बरस तक सूरदास जी के समकालीन थे और नाभा जी (भक्त-माल के कर्त्ता) तो इन के परम मित्र और सतसंगी थे। एक बार बाबा मलूकदास से भी मेला हुआ था। गुसाईं जी मथुरा, वृन्दावन, कुरुक्षेत्र, प्रयाग, चित्रकूट, जगन्नाथपुरी, सोरों आदि तीर्थों में घूमते रहे परन्तु मुख्य स्थान इन के सतसंग का काशी था और वहीं ९१ बरस की अवस्था में अस्सी घाट पर चोला छोड़ा। कथा है कि युवा अवस्था में इन की गाढ़ी प्रीति अपनी स्त्री के साथ थी एक दिन वह मायके गई थी तो यह उस के वियोग में ऐसे विकल हुए कि बरसात की रात में बढ़ी हुई नदी को एक मुर्दे पर बैठ कर पार किया और एक भारी साँप को जो उन की स्त्री के कोठे से लटकता था पकड़ कर चढ़ गये और स्त्री के सामने जा खड़े हुए। स्त्री बोली कि जो कहीं तुम्हारा ऐसा प्रेम राम के साथ होता तो मट्टी से सोना बन जाते। पूर्ब संस्कार बश यह बचन गुसाईं जी के हृदय में धस गया और उसी दम राम की खोज में घरबार त्याग कर निकल पड़े। इनके ग्रंथों में रामायण और बिनय-पत्रिका जक्त-प्रसिद्ध हैं जिनकी महिमा भारतवर्ष के गाँव २ में और फ़रंगिस्तान तथा अमरीका तक फैली हुई है।

॥ नाम ॥

राम नाम मनि दीप धरु, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरो, जो चाहसि उजियार ॥ १ ॥

राम नाम को अंक है, सब साधन है सून।
अंक गहे कछु हाथ नहिं, अंक रहे दसगून ॥ २ ॥

प्रीति प्रतीति सुरीति से, रामनाम जपु राम।
तुलसी तेरो है भलो, आदि मध्य परिनाम ॥ ३ ॥

ब्रह्म राम तेँ नाम बड़, [illegible] ।
राम चरित सत कोटि[1] महँ, लिय महेस जिय जानि ॥ ४ ॥
रे मन सब से निरसि कै, सरस राम से होहि ।
भलो सिखावन देत है, निसि दिन तुलसी तोहि ॥ ५ ॥

॥ प्रेम ॥

तुलसी के मत चातकहिं, केवल प्रेम पियास ।
पियत स्वाँति जल जान जग, याचक बारह मास ॥ १ ॥
रटत रटत रसना लगी, तृषा सूखि गइ अंग ।
तुलसी चातक प्रेम को, नित नूतन रुचि रंग ॥ २ ॥

॥ बिश्वास ॥

बिनु बिस्वासै भक्ति नहिं, तेहि बिनु द्रवहिँ न राम ।
राम कृपा बिनु सपनेहू, जीव न लहि बिस्राम ॥ १ ॥
बढ़ि प्रतीत गठिबन्ध तेँ, बड़ो योग तेँ छेम ।
बड़ो सुसेवक साइँ तेँ, बड़ो नेम तेँ प्रेम ॥ २ ॥

॥ भक्तजन ॥

सबै कहावत राम के, सबहि राम की आस ।
राम कहँ जेहि आपनो, तेहि भजु तुलसीदास ॥ १ ॥
तुलसी दिन भल साह कहँ, भली चोर कहँ रात ।
निसिबासर ता कहँ भलो, मानै रामहिँ नात ॥ २ ॥

॥ बिनय ॥

मो सम दीन न दीन हित, तुम समान रघुबीर ।
अस बिचारि रघुबंस मनि, हरहु बिषम भव भीर ॥ १ ॥

---

(१) सौ करोड़ = एक अरब ।

॥ सतसंग ॥

बिनु सतसंग न हरि कथा, तेहि बिन मोह न भाग ।
मोह गये बिनु राम पद, होय न दृढ़ अनुराग ॥ १ ॥
साहिब तें सेवक बड़ो, जो निज धर्म सुजान ।
राम बाँधि उतरे उदधि[1], नाघि गयो हनुमान ॥ २ ॥

॥ सूरमा ॥

सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु ।
विद्यमान[2] रन पाय रिपु, कायर करहिं प्रलापु[3] ॥

॥ उपदेश ॥

जूझे तें भल बूझिबो, भली जीति तें हारि ।
डहँके तें डहकाइबो[4], भलो जो करिय बिचारि ॥ १ ॥
रोस[5] न रसना खोलिये, बरु खोलिय तरवार ।
सुनत मधुर परिणाम हित, बोलिय बचन बिचार ॥ २ ॥
तुलसी जस भवितब्यता, तैसी मिलै सहाय ।
आपुन आवै ताहि पै, की ताहि तहाँ लै जाय ॥ ३ ॥
मंत्री गुरु अरु वैद्य जो, प्रिय बोलहिं भय आस ।
राज धर्म्म तन तीन कर, होइ बेगही नास ॥ ४ ॥
अवसर कौड़ी जो चुकै[6], बहुरि दिये का लाख ।
दुइज न चंदा देखिये, उदय कहा भरि पाख ॥ ५ ॥
आपु आपु कहँ सब भलो, आपुन कहँ कोइ कोइ ।
तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सुराहिय सोइ ॥ ६ ॥
कलियुग सम युग आन नहिं, जो नर करि बिस्वास ।
गाइ राम गुन गन बिमल, भव तर बिनहि प्रयास ॥ ७ ॥

---

(१) समुद्र। (२) स्थित। (३) डींग। (४) ठगने से ठगा जाना अच्छा है। (५) कड़ी जबान। (६) चूकै।

॥ साच ॥

मिथ्या माहुर सज्जनहिं, खलहिं गरल सम साच ।
तुलसी छुवत पराय ज्यौं, पारद पावक आँच[1] ॥

॥ धीरज ॥

तुलसी असमय को सखा, धीरज धर्म बिबेक ।
साहित साहस सत्य ब्रत, राम भरोसो एक ॥

॥ बिचारि ॥

लखै अघाने भूख ज्यौं, लखै जीति में हारि ।
तुलसी सुमति सराहिये, मग पग धरै बिचारि ॥

॥ काम क्रोध लोभ ॥

तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि विज्ञान सुधाम मन, करहिं निमिष महँ छोभ[2] ॥

॥ कपट ॥

हृदय कपट बरवेष[3] धरि, बचन कहै गढ़ि छोलि ।
अब के लोग मयूर[4] ज्यौं, क्यौं मिलिये मन खोलि ॥ १ ॥
हँसनि मिलिनि बोलनि मधुर, कटु करतब मन माहँ ।
छुवत जो सकुचै सुमति सो, तुलसी तिन की छाहँ ॥ २ ॥

॥ आशा ॥

तुलसी अद्भुत देवता, आसा देवी नाम ।
सेये सोक समर्पई, बिमुख भये अभिराम[5] ॥

॥ कामिनी ॥

काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह की धारि ।
तिन महँ अति दारुन दुखद, माया रूपी नारि ॥ १ ॥
कहा न अबला कर सकै, कहा न सिंधु समाय ।
कहा न पावक में जरै, काल काहि नहिं खाय ॥ २ ॥

---

(१) सज्जन को झूठ ज़हर सरीखा और दुर्जन को सच विष समान है वह इन से ऐसे भागते हैं जैसे आग से पारा। (२) चलायमान। (३) अच्छा रूप। (४) मोर। (५) सुख।

अमिय गारि गारेउ गरल, नारि करी करतार।
प्रेम वैर की जननि युग, जानहि बिधि न गँवार॥ ३॥

॥ निन्दा ॥

तुलसी जे कीरति चहहिं, पर की कीरति खोइ।
तिन के मुँह मसि[1] लागिहै, मिटहि न मरिहैं धोइ॥ १॥
परद्रोही परदार[2] रत, परधन परअपवाद[3]।
ते नर पामर[4] पापमय, देह धरे मनुजाद[5]॥ २॥

॥ संस्कृत ॥

का भाषा का संस्कृत, प्रेम चाहिये साच।
काम जो आवै कामरी, का लै करै कमाँच[6]॥

॥ मिश्रित ॥

ग्रह गृहीत पुनि बात बस, तेहि पुनि बीछी मार।
ताहि पियाई बारुनी[7], कहहु कौन उपचार[8]॥ १॥
तुलसी अपनो आचरन, भलो न लागत कासु।
तेहि न बसात जो खात नित, लहसुनहूँ की बासु॥ २॥
मुखिया मुख सो चाहिये, खान पान को एक।
पालै पोषै सकल अँग, तुलसी सहित बिबेक॥ ३॥
हित पुनीत सब स्वारथहि, अरि असुद्ध बिनु जाड़।
निज मुख मानिकसम दसन[9], भूमि परे तें हाड़॥ ४॥
बरषि बिस्व हर्षित करत, हरत ताप औ प्यास।
तुलसी दोष न जलद[10] को, जो जल जरै जवास[11]॥ ५॥
तुलसी पावस के समय, धरी कोकिलन मौन।
अब तो दादुर बोलिहैं, हमैं पूछिहै कौन॥ ६॥

---

(१) स्याही। (२) पराई स्त्री। (३) दूसरों को निंदा। (४) नीच। (५) राक्षस। (६) दुशाला। (७) शराब। (८) इलाज, यत्न। (९) दाँत। (१०) बादल। (११) जवासा घास जो बरसात में जल जाती है।

दादू

—.0:—

जीवन समय—१६०१ से १६६० तक। जन्म स्थान—[illegible] गुजरात देश। सतसंग स्थान—नराना नगर और भराना की पहाड़ी [illegible] में। जाति—गुजराती ब्राह्मण दादू पंथियों के अनुसार; धुनियाँ लोक [illegible] अनुसार। आश्रम—गृहस्थ। गुरू—परम पुरुष एक बूढ़े साधू के [illegible] में।

यह अकबर बादशाह के सहकाली थे जो उन में बड़ी श्रद्धा रखता था। इन का क्षमा और दया का अंग इतना बड़ा था कि लोग दादू दयाल के नाम से पुकारने लगे। इन के मत के ५२ प्रसिद्ध अखाड़े राजपूताना [illegible], पंजाब, गुजरात आदि देशों में हैं। इस पंथ में दो प्रकार के साधू हैं एक भेषधारी विरक्त जो गेरुआ वस्त्र पहिनते है, दूसरे नागा जो सफेद कपड़े पहिनते हैं और लेन देन खेती नौकरी वैद्यक आदि व्योहार करते हैं।

[पूरा जीवन चरित्र दादू दयाल की बानी भाग १ में दिया है]

॥ गुरुदेव ॥

(दादू) गैब माहिं गुरुदेव मिल्या, पाया हम परसाद।
मस्तक मेरे कर धर्या, देख्या अगम अगाध ॥ १ ॥
(दादू) सतगुरु सूँ सहजे मिल्या, लीया कंठ लगाइ।
दाया भई दयाल की, तब दीपक दिया जगाइ ॥ २ ॥
सतगुरु काढ़े केस गहि, डूबत इहि संसार।
दादू नाव चढ़ाइ करि, कीये पैली पार[1] ॥ ३ ॥
दादू उस गुरुदेव की, मैं बलिहारी जाउँ।
जहँ आसन अमर अलेख था, ले राखे उस ठाउँ ॥ ४ ॥
(दादू) सतगुरु मारे सबद सौं, निरखि निरखि निज ठौर।
राम अकेला रहि गया, चीत[2] न आवै और ॥ ५ ॥
सबद दूध घृत राम रस, कोइ साध बिलोवणहार।
दादू अमृत काढ़ि ले, गुरमुखि गहै बिचार ॥ ६ ॥

---

(१) पल्ली पार। (२) चित्त।

देवै किरका[1] दरद का, टूटा जोड़ै तार।
दादू साधै सुरति को, सो गुर पीर हमार॥ ७॥
सतगुर मिलै तो पाइये, भक्ति मुक्ति भंडार।
दादू सहजैं देखिये, साहिब का दीदार॥ ८॥
(दादू) सतगुर माला मन दिया, पवन सुरति सूँ पोइ।
बिन हाथौं निस दिन जपै, परम जाप यूँ होइ॥ ९॥
(दादू) यहु मसीत[2] यहु देहुरा[3], सतगुर दिया दिखाइ।
भीतरि सेवा बंदगी, बाहरि काहे जाइ॥ १०॥
मन ताजी[4] चेतन चढ़ै, ल्यौ[5] की करै लगाम।
सबद गुरू का ताजना[6], कोइ पहुँचै साध सुजान॥ ११॥

॥ शब्द ॥

(दादू) सबदैं बंध्या सब रहै, सबदैं सब ही जाय।
सबदैं ही सब ऊपजै, सबदैं सबै समाइ॥ १॥
(दादू) सबदैं ही सचु पाइये, सबदैं ही संतोष।
सबदैं ही इस्थिर भया, सबदैं भागा सोक॥ २॥
(दादू) सबदैं ही सूषिम भया, सबदैं सहज समान।
सबदैं ही निर्गुण मिलै, सबदैं निर्मल ज्ञान॥ ३॥
(दादू) सबदैं ही मुक्ता भया, सबदैं समझै प्राण।
सबदैं ही सूझै सबै, सबदैं सुरझै जाण[7]॥ ४॥
पहली किया आप थैं, उतपत्ती ओंकार।
ओंकार थैं ऊपजे, पंच तत्त आकार॥ ५॥

---

(१) किनका। (२) मसजिद। (३) मंदिर। (४) घोड़ा। (५) लौ। (६) कोड़ा। (७) ज्ञान।

पंच तत्त थैं घट भया, बहु बिधि सब [illegible] ।
दादू घट थैं ऊपजे, मैं तैं बरण [illegible] ॥ ६ ॥
एक सबद सौं ऊनवै, बर्षन लागे आइ ।
एक सबद सौं बीखरै, आप आप कौं जाइ ॥ ७ ॥
(दादू) सबद बाण गुर साध के, दूरि दिसंतर जाइ ।
जेहि लागे सो ऊबरे, सूते लिये जगाइ ॥ ८ ॥
सबद जरै सो मिलि रहै, एकै रस पूरा ।
कायर भागे जीव ले, पग माँडै सूरा ॥ ९ ॥
सबद सरोवर[1] सूभर[2] भर्या, हरि जल निर्मल नीर ।
दादू पीवै प्रीत सौं, तिनके अखिल[3] सरीर ॥ १० ॥

॥ सुमिरन ॥

दादू नीका नाँव है, हरि हिरदे न बिसारि ।
मूरति मन माहैं बसै, साँसै साँस सँभारि ॥ १ ॥
साँसै साँस सँभालताँ, इक दिन मिलि है आइ ।
सुमिरण पैंड़ा सहज का, सतगुर दिया बताइ ॥ २ ॥
दादू राम सँभालि ले, जब लग सुखी सरीर ।
फिर पीछैं पछिताहिगा, जब तन मन धरै न धीर ॥ ३ ॥
मेरे संसा को नहीं, जीवन मरन का राम ।
सुपनैं हीं जनि बीसरै, मुख हिरदे हरि नाम ॥ ४ ॥
हरि भजि साफल[4] जीवना, पर उपगार समाइ ।
दादू मरणा तहँ भला, जहँ पसु पंखी खाइ ॥ ५ ॥
(दादू) अगम बस्त पानैं[5] पड़ी, राखी मंझि छिपाइ ।
छिन छिन सोई सँभालिये, मति वै बीसरि जाइ ॥ ६ ॥

---

(१) तालाब । (२) शुभ्र = प्रकाशमान । (३) पूरा । (४) सुफल । (५) हाथ ।

(दादू) राम नाम निज औषधी, काटै कोटि बिकार।
बिषय ब्याधि थैं ऊबरै, काया कंचन सार ॥ ७ ॥
(दादू) सब सुख सरग पयाल[1] के, तोल तराजू बाहि।
हरि सुख एक पलक्क का, ता सम कह्या न जाय ॥ ८ ॥
कौन पटंतर[2] दीजिये, दूजा नाहीं कोइ।
राम सरीखा राम है, सुमिर्याँ ही सुख होइ ॥ ९ ॥
नाँव लिया तब जाणिये, जे तन मन रहै समाइ।
आदि अंत मध एक रस, कबहूँ भूलि न जाइ ॥ १० ॥

॥ चितावनी ॥

(दादू) जे साहिब कौं भावै नहीं, सो बाट न बूझी रे।
साईं सौं सन्मुख रहौ, इस मन सौं जूझी रे ॥ १ ॥
दादू अचेत न होइये, चेतन सौं चित लाइ।
मनवाँ सोता नींद भरि, साईं संग जगाइ ॥ २ ॥
आपा पर सब दूरि करि, राम नाम रस लागि।
दादू औसर जात है, जागि सकै तो जागि ॥ ३ ॥
दुख दरिया संसार है, सुख का सागर राम।
सुख सागर चलि जाइये, दादू तजि बेकाम ॥ ४ ॥
(दादू) झाँती पाये पसु पिरी, हाँणे लाइ म बेर।
साथ सभोई हल्यौ, पोइ पसंदो केर ॥ ५ ॥[3]
काल न सूझै कंध पर, मन चितवै बहु आस।
दादू जिव जाणै नहीं, कठिन काल की पास[4] ॥ ६ ॥

---

(१) पाताल। (२) दृष्टांत। (३) झाँको पाकर प्रीतम का दर्शन कर, अब (हाँणे) देर (बेर) मत (म) लगा (लाइ)—साथी सभी (सभोई) चल दिये (हल्या) पीछे (पोइ) कौन (केर) देखेगा [पसँदो]। (४) फाँस।

जहँ जहँ दादू पग धरै, तहाँ काल का फंध।
सिर ऊपर साँधे[1] खड़ा, अजहूँ न चेतै अंध ॥ ७ ॥
यहु बन हरिया देखि करि, फूल्यो फिरै गँवार।
दादू यहु मन मिरगला, काल अहेड़ी लार ॥ ८ ॥
कहताँ सुनताँ देखताँ, लेताँ देताँ प्राण।
दादू सो कतहूँ गया, माटी धरी मसाण ॥ ९ ॥
पंथ दुहेला[2] दूरि घर, संग न साथी कोय।
उस मारग हम जाहिंगे, दादू क्यौं सुख सोइ ॥ १० ॥
काल झाल मैं जग जलै, भाजि न निकसै कोइ।
दादू सरणै साच कै, अभय अमर पद होइ ॥ ११ ॥
ये सज्जन दुर्जन भये, अंति काल की बार।
दादू इन मैं को नहीं, बिपति बटावणहार ॥ १२ ॥
काल हमारा कर गहै, दिन दिन खैंचत जाइ।
अजहुँ जीव जागै नहीं, सोवत गई बिहाइ ॥ १३ ॥
धरती करते एक डग, दरिया करते फाल।
हाँकौं परबत फाड़ते, सो भी खाये काल ॥ १४ ॥

॥ भक्ति और लव ॥

जोग समाधि सुख सुरति सौं, सहजैं सहजैं आव।
मुक्ता द्वारा महल का, इहै भगति का भाव ॥ १ ॥
ल्यौ लागी तब जाणिये, जे कबहूँ छूटि न जाइ।
जीवत यौं लागी रहै, मूवाँ मंझि समाइ ॥ २ ॥
मन ताजी चेतन चढ़ै, ल्यौ की करै लगाम।
सबद गुरू का ताजना, कोइ पहुँचै साध सुजान ॥ ३ ॥

---

(१) कमान खींचे। (२) कठिन।

आदि अंत मधि एक रस, टूटै नहिं धागा ।
दादू एकै रहि गया, जब जाणी जागा ॥ ४ ॥
अर्थ अनूपम आप है, और अनरथ भाई ।
दादू ऐसो जानि करि, ता सौं ल्यौ लाई ॥ ५ ॥
सुरति अपूठी[1] फेरि करि, आतम माहैं आणा ।
लागि रहै गुरदेव सौं, दादू सोई सयाणा ॥ ६ ॥
जहँ आतम तहँ राम है, सकल रह्या भरपूर ।
अंतरगति ल्यौ लाइ रहु, दादू सेवग सूर ॥ ७ ॥
एक मना लागा रहै, अंत मिलैगा सोइ ।
दादू जा के मन बसै, ता कौं दरसन होइ ॥ ८ ॥
दादू निबहै त्यूँ चलै, धरि धीरज मन माहिं ।
परसैगा पिव एक दिन, दादू थाकै नाहिं ॥ ९ ॥

॥ बिरह ॥

मन चित चातृक ज्यूँ रटै, पिव पिव लागी प्यास ।
दादू दरसन कारने, पुरवहु मेरी आस ॥ १ ॥
(दादू) बिरहिनि दुख कासनि[2] कहै, कासनि देइ सँदेस ।
पंथ निहारत पीव का, बिरहिनि पलटे केस[3] ॥ २ ॥
ना वहु मिलै न मैं सुखी, कहु क्यूँ जीवन होइ ।
जिन मुझ कौं घायल किया, मेरी दारू[4] सोइ ॥ ३ ॥
(दादू) मैं भिखारी मंगिता, दरसन देहु दयाल ।
तुम दाता दुख भंजिता, मेरी करहु सँभाल ॥ ४ ॥
दीन दुनी सदकै[5] करौं, टुक देखण दे दीदार ।
तन मन भी छिन छिन करौं, भिस्त दोजग[6] भी वार ॥ ५ ॥

(१) पीछे । (२) किस से । (३) बाल सपेद हो गये । (४) दवा । (५) न्योछावर । (६) स्वर्ग और नर्क ।

बिरह अगिन तन [illegible], ज्ञान [illegible] दौं लाइ।
दादू नख सिख परजलै[1], तब राम बुझावै आइ॥ ६॥
अंदर पीड़ न ऊभरै, बाहर करै पुकार।
दादू सो क्योंकरि लहै, साहिब का दीदार॥ ७॥
(दादू) कर बिन सर बिन कमान बिन, मारै खैंचि कसीस[2]।
लागी चोट सरीर मैं, नख सिख सालै सीस॥ ८॥
(दादू) बिरह जगावै दरद कौं, दरद जगावै जीव।
जीव जगावै सुरति कौं, पंच पुकारै पीव॥ ९॥
(दादू) नैन हमारे ढीठ हैं, नाले नीर न जाहिं।
सूके सराँ सहेत वै, करंक भये गलि माहिं॥ १०॥
(दादू) जब बिरहा आया दरद सौं, तब कड़वे लागे काम।
काया लागी काल ह्वै, मीठा लागा नाम॥ ११॥
जे कबहूँ बिरहिनि मरै, तौ सुरति बिरहिनी होइ।
दादू पिव पिव जीवताँ, मुवा भी टेरै सोइ॥ १२॥
मीयाँ मैंडा आव घर, वाँढी वत्ताँ लोइ।
दुखड़े मुँहडे गये, मराँ बिछोहे रोइ[4]॥ १३॥

॥ प्रेम ॥

प्रेम भगति जब ऊपजै, निहचल सहज समाध।
दादू पीवै प्रेम रस, सतगुर के परसाद॥ १॥

---

(१) भभक कर जले। (२) कसकर। (३) कहावत है कि असह दुख में आँसू भी सूख जाते हैं इसी मसल को दादू साहिब अलंकार में फ़र्माते हैं कि जैसे तलैया (सरा) के जीव मछली मछुए में ढक आदि ऐसे निडर (ढीठ) या बेपरवाह होते हैं कि तलैया से पानी के साथ बह कर नाले में अपनी रक्षा नहीं करते बल्कि तलैया ही में पड़े रहते हैं और उसी के साथ (सहित) सूख कर चमड़ी (करंक) बन जाते हैं ऐसी ही दशा हमारी आँखों की है कि आँसू की धारा को त्याग कर जहाँ की तहाँ सूख या बैठ गई। (४) हे मेरे मालिक मेरे घर आ अर्थात मेरे मन में बासकर, मैं दुहागिन लोक में फिरती हूँ। मेरे दुख बढ़ गये हैं, और तेरे बियोग में मरती हूँ।

दादू राता राम का, पीवै प्रेम अघाइ ।
मतवाला दीदार का, माँगै मुक्ति बलाइ ॥ २ ॥
ज्यूँ अमली के चित अमल है, सूरे के संग्राम ।
निरधन के चित धन बसै, योँ दादू के राम ॥ ३ ॥
जो कुछ दिया हम कौँ, सो सब तुमहीँ लेहु ।
तुम बिन मन मानै नहीँ, दरस आपणा देहु ॥ ४ ॥
भोरे भोरे तन करै, वंडै करि कुरबाण ।
मीठा कौड़ा ना लगै, दादू तौहू साण[1] ॥ ५ ॥
जब लग सीस न सौंपिये, तब लग इसक न होइ ।
आसिक मरणै ना डरै, पिया पियाला सोइ ॥ ६ ॥
इसक मुहब्बत मस्त मन, तालिब दर दीदार ।
दोस्त दिल हर दम हजूर, यादगार हुसियार ॥ ७ ॥
दादू इसक अलाह का, जे कबहूँ प्रगटै आइ ।
(तौ) तन मन दिल अल्लाह[2] का, सब पड़दा जलि जाय ॥ ८ ॥
दादू पाती प्रेम की, बिरला बाँचै कोइ ।
बेद पुरान पुस्तक पढ़ैं, प्रेम बिना क्या होइ ॥ ९ ॥
प्रीत जो मेरे पीव की, पैठी पिंजर माँहिं ।
रोम रोम पिव पिव करै, दादू दूसर नाहि ॥ १० ॥
आसिक मासुक ह्वै गया, इसक कहावै सोइ ।
दादू उस मासूक का, अल्लहि आसिक होइ ॥ ११ ॥
इसक अलह की जाति है, इसक अलह का अंग ।
इसक अलह औजूद[3] है, इसक अलह का रंग ॥ १२ ॥

---

(१) अपने तन की प्रीतम के आगे बोटी २ करके कुरबानी करै और बाँट दे फिर भी वह मधुर प्रीतम कड़वा न लगै तब वह तुझे मिले [साण=साथ] ।
(२) सुरत । (३) वजूद, व्यक्ति ।

॥ बिश्वास ॥

(दादू) सहजैं सहजैं होइगा, जे कुछ रचिया राम ।
काहे कैाँ कलपै मरै, दुखी होत बेकाम ॥ १ ॥

(दादू) मनसा बाचा कर्मना, साहिब का बेसास[1] ।
सेवग सिरजनहार का, करै कैान की आस ॥ २ ॥

(दादू) च्यंता कीयाँ कुछ नहीँ, च्यंता जिव कूँ खाय ।
हूणा था सो ह्वै रह्या, जाणा है सो जाइ ॥ ३ ॥

(दादू) राजिक[2] रिजक[3] लिये खड़ा, देवै हाथैाँ हाथ ।
पूरिक पूरा पासि है, सदा हमारे साथ ॥ ४ ॥

॥ दुबिधा ॥

जब हम ऊजड़ चालते, तब कहते मारग माहि ।
दादू पहुँचे पंथ चलि, कहैं यहु मारग नाहिँ ॥ १ ॥

द्वै पष उपजी परिहरै, निर्पष अनभै सार ।
एक राम दूजा नहीँ, दादू लेहु बिचार ॥ २ ॥

दादू संसा आरसी, देखत दूजा होइ ।
भरम गया दुबिध्या मिटी, तब दूसर नाहीँ कोइ ॥ ३ ॥

॥ समरथ ॥

समरथ सब बिधि साइयाँ, ता की मैं बलि जाउँ ।
अंतर एक जु सो बसै, औराँ चित्त न लाउँ ॥ १ ॥

ज्यूँ राखैं त्यूँ रहैंगे, अपणे बल नाहीँ ।
सबै तुम्हारे हाथि है, भाजि कत जाहीँ ॥ २ ॥

दादू दूजा क्यूँ कहै, सिर परि साहिब एक ।
सो हम कूँ क्यूँ बीसरै, जे जुग जाहि अनेक ॥ ३ ॥

---

(१) बिश्वास । (२) रोज़ी देने वाला । (३) रोज़ी ।

कर्म फिरावै जीव कौं, कर्मौं कौं करतार।
करतार कौं कोई नहीं, दादू फेरनहार ॥ ४ ॥
आप अकेला सब करै, औरूँ के सिर देइ।
दादू सोभा दास कूँ, अपना नाम न लेइ ॥ ५ ॥

॥ बेहद ॥

देखि दिवाने ह्वै गये, दादू खरे सयान।
वार पार कोइ ना लहै, दादू है हैरान ॥ १ ॥
पार न देवै आपणा, गोप गुझ[1] मन माहिं।
दादू कोई ना लहै, केते आवैं जाहिं ॥ २ ॥

॥ निज करता का निर्णय ॥

जाती[2] नूर अलाह का, सिफाती[3] अरवाह।
सिफाती सिजदा करै, जाती बेपरवाह ॥ १ ॥
वार पार नहि नूर का, दादू तेज अनंत।
कोमति नहिं करतार की, ऐसा है भगवंत ॥ २ ॥
जीयँ[4] तेल तिलन्हि मैं, जीयँ गंधि फुलन्हि।
जीयँ माखण षीर मैं, ईयँ रब रूहन्हि[5] ॥ ३ ॥

॥ बिनय ॥

तिल तिल का अपराधी तेरा, रती रती का चोर।
पल पल का मैं गुनही[6] तेरा, बकसौ औगुण मोर ॥ १ ॥
गुनहगार अपराधी तेरा, भाजि कहाँ हम जाहि।
दादू देख्या सोधि सब, तुम बिन कहिं न समाहिं ॥ २ ॥
आदि अंत लौं आइ करि, सुकिरत कछू न कीन्ह।
माया मोह मद मंछरा, स्वाद सबै चित दीन्ह ॥ ३ ॥

---

(१) गुप्त और छिपा। (२) निर्गुण। (३) सर्गुण। (४) जैसे। (५) तैसे ही मालिक सुरतों में है। (६) गुनहगार। (७) मत्सर = अहंकार।

दादू बंदीवान[1] है, तू बंदीछोड़ दिवान।
अब जनि राखौ बंदि मैं, मीराँ[2] मेहरबान॥ ४॥
दिन दिन नौतम भगति दे, दिन दिन नौतम नाँव।
दिन दिन नौतम नेह दे, मैं बलिहारी जाँव॥ ५॥
साँई सत संतोष दे, भाव भगति बेसास।
सिदक सबूरी साच दे, माँगै दादू दास॥ ६॥
पलक माँहि प्रगटै सही, जे जन करै पुकार।
दीन दुखी तब देखि करि, अति आतुर तिहि बार॥ ७॥
आगैं पीछैं सँगि रहै, आप उठाये भार।
साध दुखी तब हरि दुखी, ऐसा सिरजनहार॥ ८॥
अंतरजामी एक तूँ, आतम के आधार।
जे तुम छाड़हु हाथ थैं, तौ कौण सँवाहणहार[3]॥ ९॥
तुम हौ तैसी कीजिए, तौ छूटैंगे जीव।
हम हैं ऐसी जनि करौ, मैं सदिकै जाऊँ पीव॥ १०॥
साहिब दर दादू खड़ा, निसि दिन करै पुकार।
मीराँ मेरा मिहर करि, साहिब दे दीदार॥ ११॥
तुम कूँ हम से बहुत हैं, हम कूँ तुम से नाहिं।
दादू कूँ जनि परिहरौ, तूँ रहु नैनहुँ माहिं॥ १२॥

॥ साध ॥

साधू जन संसार मैं, पारस परगट गाइ।
दादू केते ऊधरे, जेते परसे आइ॥ १॥
साधू जन संसार मैं, सीतल चंदन बास।
दादू केते ऊधरे, जे आये उन पास॥ २॥

(१) क़ैदी। (२) हे मालिक। (३) सम्हालनेवाला।

जहँ अरंड अरु आक थे, तहँ चंदन ऊगया माहिं।
दादू चंदन करि लिया, आक कहै को नाहिं ॥ ३ ॥
साध मिलै तब ऊपजै, हिरदै हरि का हेत।
दादू संगति साध की, कृपा करै तब देत ॥ ४ ॥
जब दरवौ तब दीजियौ, तुम पैं माँगौं येहु।
दिन प्रति दरसन साध का, प्रेम भगति दिढ़ देहु ॥ ५ ॥
दादू चंदन कदि कह्या, अपना प्रेम प्रकास।
दह दिसि परगट ह्वै रह्या, सीतल गंध सुबास ॥ ६ ॥
पर उपगारी संत सब, आये यहि कलि माहिं।
पिवैं पिलावैं राम रस, आप सुआरथ नाहिं ॥ ७ ॥
साध सबद सुख बरखिहै, सीतल होइ सरीर।
दादू अंतर आतमा, पीवै हरि जल नीर ॥ ८ ॥
औगुण छाड़ै गुण गहै, सोई सिरोमणि साध।
गुण औगुण थैं रहित है, सो निज ब्रह्म अगाध ॥ ९ ॥
बिष का अमृत करि लिया, पावक का पाणी।
बाँका सूधा करि लिया, सो साध बिनाणी[1] ॥ १० ॥

॥ भेष ॥

ज्ञानी पंडित बहुत हैं, दाता सूर अनेक।
दादू भेष अनंत हैं, लागि रह्या सो एक ॥ १ ॥
कनक कलस बिष सूँ भस्या, सो किस आवै काम।
सो धनि कूटा चाम का, जा मैं अमृत राम[2] ॥ २ ॥
स्वाँग साध बहु अंतरा, जेता धरनि अकास।
साधू राता राम सूँ, स्वाँग जगत की आस ॥ ३ ॥

---

(१) विज्ञानी। (२) सोने का कलसा जिस में बिष भरा हो बेकाम है, परंतु कूटे चमड़े का कुप्पा भी जिस में नाम (राम) रूपी अमृत भरा हो धन्य (धनि) है।

[दादू] स्वाँगी सब संसार है, साधू कोई एक ।
हीरा दूरि दिसंतरा, कंकर और अनेक ॥ ४ ॥
दादू एकै आतमा, साहिब है सब माहिं ।
साहिब के नाते मिलै, भेष पंथ के नाहिं ॥ ५ ॥
[दादू] जग दिखलावै बावरी, षोड़स करै सिंगार ।
तहँ न सँवारै आप कूँ, जहँ भीतर भरतार ॥ ६ ॥

॥ दुर्जन ॥

निगुणा गुण मानै नहीं, कोटि करै जे कोइ ।
दादू सब कुछ सौंपिये, सो फिर बैरी होइ ॥ १ ॥
दादू सगुणा लीजिये, निगुणा दीजै डारि ।
सगुणा सन्मुख राखिये, निगुणा नेह निवारि ॥ २ ॥
दादू दूध पिलाइये, बिषहर बिष करि लेइ ।
गुण का अवगुण करि लिया, ताही कौं दुख देइ ॥ ३ ॥
मूसा जलता देख करि, दादू हंस-दयाल ।
मानसरोवर ले चल्या, पंखा काटै काल[1] ॥ ४ ॥

॥ सतसंग दुर्जन को ॥

सतगुर चंदन बावना, लागे रहैं भुवंग ।
दादू बिष छाड़ैं नहीं, कहा करै सतसंग ॥ १ ॥
कोटि बरस लौं राखिये, बंसा[2] चंदन पास ।
दादू गुण लीये रहै, कदे न लागे बास ॥ २ ॥
कोटि बरस लौं राखिये, लोहा पारस संग ।
दादू रोम का अंतरा, पलटै नाहीं अंग ॥ ३ ॥

---

(१) कथा है कि एक चूहे को आग में जलता देख कर एक हंस ने दया करके रक्षा के लिये उसे अपने परों पर बैठा लिया और समुद्र पार ले उड़ा, परंतु चूहे ने अपने सुभाव बस हंस के परों को काट डाला जिस से दोनों समुद्र में गिर पड़े । (२) बाँस ।

कोटि बरस लौं राखिये, पत्थर पानी माहिं।
दादू आड़ा अंग है, भीतर भेदै नाहिं ॥ ४ ॥

॥ सार गहनी ॥

पहिलो न्यारा मन करै, पीछै सहज सरीर।
दादू हंस बिचार सौं, न्यारा कीया नीर ॥ १ ॥
मन हंसा मोती चुणै, कंकर दीया डारि।
सतगुर कहि समझाइया, पाया भेद बिचारि ॥ २ ॥
दादू हंस परेखिये, उत्तिम करणी चाल।
बगुला बैसे ध्यान धरि, परतषि कहिये काल ॥ ३ ॥
गऊ बच्छ का ज्ञान गहि, दूध रहै ल्यौ लाइ।
सींग पूँछ पग परिहरै, अस्थन लागै धाइ ॥ ४ ॥

॥ मध्य ॥

सहज रूप मन का भया, जब द्वै द्वै मिटी तरंग।
ताता सीला सम भया, तब दादू एकै अंग ॥ १ ॥
कुछ न कहावै आप कौं, काहू संगि न जाइ।
दादू निर्पष ह्वै रहै, साहिब सौं ल्यौ लाइ ॥ २ ॥
ना हम छाड़ै ना गहैं, ऐसा ज्ञान बिचार।
मद्धि भाइ[1] सेवैं सदा, दादू मुकति दुवार ॥ ३ ॥
बैरागी बन मैं बसै, घरबारी घर माहिं।
राम निराला रहि गया, दादू इन मैं नाहिं ॥ ४ ॥

॥ घट मठ ॥

(दादू) जा कारनि जग ढूँढिया, सो तौ घट ही माहिं।
मैं तैं पड़दा भरम का, ता थैं जानत नाहिं ॥ १ ॥
सब घटि माहैं रमि रह्या, बिरला बूझै कोइ।
सोई बूझै राम को, जो राम सनेही होइ ॥ २ ॥

---

(१) मध्य भाव।

॥ सेवक ॥

सेवग सेवा करि डरै, हम थैं कछू न होइ।
तूँ है तैसो बंदगी, करि नहि जानै कोइ ॥ १ ॥
फल कारण सेवा करै, याचै त्रिभुवन राव।
दादू सो सेवग नहीं, खेलै अपना डाव[1] ॥ २ ॥
सूरज सन्मुख आरसी, पावक किया प्रकास।
दादू साईं साध बिच, सहजैं निपजै दास ॥ ३ ॥

॥ मौन ॥

(दादू) मनहीं माहैं समझि करि, मनहीं माहि समाइ।
मन हीं माहैं राखिये, बाहरि कहि न जनाइ ॥ १ ॥
जरणा[2] जोगी जुगि जुगि जीवै, झरना[3] मरि मरि जाइ।
दादू जोगी गुरमुखी, सहजैं रहै समाइ ॥ २ ॥

॥ सूरमा ॥

(दादू) जे मुझ होते लाख सिर, तौ लाखौं देती वारि।
सह[4] मुझ दीया एक सिर, सोई सौंपै नारि ॥ १ ॥
सूरा चढ़ि संग्राम कौं, पाछा पग क्यौं देइ।
साहिब लाजै भाजतौं, धृग जीवन दादू तेइ ॥ २ ॥
काइर काम न आवई, यहु सूरे का खेत।
तन मन सौंपै राम कौं, दादू सीस सहेत ॥ ३ ॥
जब लग लालच जीवका, (तब लग) निर्भय हुआ न जाइ।
काया माया मन तजै, तब चौड़े रहै बजाइ ॥ ४ ॥
काया कबज कमान करि, सार सबद करि तीर।
दादू यहु सर साँधि करि, मारै मोटे मीर[5] ॥ ५ ॥
(दादू) तन मन काम करीम के, आवै तौ नीका।
जिस का तिस कौं सौंपिये, सोच क्या जी का ॥ ६ ॥

---

(१) दाँव। (२) हज़म करने वाला, गुप्त रखने वाला। (३) उबल पड़ने वाला। (४) मालिक। (५) मन।

दादू पाखर पहरि करि, सब को भूझण जाइ।
अंगि उघाड़ै सूरिवाँ, चोट मुँहै मुँह खाइ॥ ७॥
(दादू कहै) जे तूँ राखै साइयाँ, तौ मारि न सक्कै कोइ।
बाल न बंका करि सकै, जे जग बैरी होइ॥ ८॥

॥ पतिब्रता ॥

(दादू) मेरे हिरदे हरि बसै, दूजा नाहीं और।
कहौ कहाँ धौं राखिये, नहीं आन कौं ठौर॥ १॥
(दादू) पीव न देख्या नैन भरि, कंठि न लागी धाइ।
सूती नहिं गल बाँहि दे, बिच हौं गई बिलाइ॥ २॥
प्रेम प्रीति इसनेह बिन, सब झूठे सिंगार।
दादू आतम रत नहीं, क्यौं मानै भरतार॥ ३॥
(दादू) हूँ सुख सूती नींद भरि, जागै मेरा पीव।
क्यौं करि मेला होइगा, जागै नाहीं जीव॥ ४॥
सुन्दरि कबहूँ कंत का, मुख सौं नाँव न लेइ।
अपणे पिव के कारणे, दादू तन मन देइ॥ ५॥
तन भी तेरा मन भी तेरा, तेरा प्यंड परान।
सब कुछ तेरा तू है मेरा, यहु दादू को ज्ञान॥ ६॥
(दादू) नीच ऊँच कुल सुंदरी, सेवा सारी होइ।
सोई सोहागनि कीजिये, रूप न पीजै धोइ॥ ७॥

॥ बिभिचारिन ॥

नारी सेवग तब लगैं, जब लग साईं पास।
दादू परसै आन को, ता की कैसी आस॥ १॥
कीया मन का भावताँ, मेटी आज्ञाकार।
क्या मुख ले दिखलाइये, दादू उस भरतार॥ २॥
पतिबरता के एक है, बिभिचारणि के दोइ।
पतिबरता बिभिचारणी, मेला क्यौं करि होइ॥ ३॥

पुरिष हमारा एक है, हम नारी बहु अंग।
जे जे जैसी ताहि सौं, खेलै तिस ही रंग ॥ ४ ॥

॥ पारख ॥

(दादू) जैसे माहैं जिव रहै, तैसो आवै बास।
मुखि बोलै तब जाणिये, अंतर का परकास ॥ १ ॥
मति बुधि बिबेक बिचार बिन, माणस पसू समान।
समझाया समझै नहीं, दादू परम गियान ॥ २ ॥
काचा उछलै ऊफणै, काया हाँडी माहिं।
दादू पाका मिलि रहै, जीव ब्रह्म द्वै नाहिं ॥ ३ ॥
अंधे हीरा परखिया, कीया कौड़ी मोल।
दादू साधू जौहरी, हीरे मोल न तोल ॥ ४ ॥
(दादू) साहिब कसै सेवग खरा, सेवग कौं सुख होइ।
साहिब करै सो सब भला, बुरा न कहिये कोइ ॥ ५ ॥

॥ परिचय ॥

(दादू) निरंतर पिउ पाइया, तीन लोक भरपूरि।
सब सेजौं साँईं बसै, लोग बतावैं दूरि ॥ १ ॥
दादू देखौं निज पीव कौं, दूसर देखौं नाहि।
सबै दिसा सौं सोधि करि, पाया घट ही माहिं ॥ २ ॥
पुहुप प्रेम बरिषै सदा, हरि जन खेलैं फाग।
ऐसा कौतिग देखिये, दादू मोटे भाग ॥ ३ ॥
(दादू) देही माहैं दोइ दिल, इक खाकी इक नूर।
खाकी दिल सूझै नहीं, नूरी मंझि हजूर ॥ ४ ॥
(दादू) जब दिल मिला दयाल सौं, तब अंतर कुछ नाहिं।
ज्यौं पाला पानी कौं मिल्या, त्यौं हरि जन हरि माहिं ॥ ५ ॥

॥ उपदेश ॥

पहिलो था सो अब भया, अब सो आगैं होइ।
दादू तीनौं ठौर की, बूझै बिरला कोइ ॥ १ ॥

जे जन बेधे प्रीति सौं, ते जन सदा सजीव ।
उलटि समाने आप मैं, अंतर[1] नाहीं पीव ॥ २ ॥
देह रहै संसार मैं, जीव राम के पास ।
दादू कुछ व्यापै नहीं, काल झाल दुख त्रास ॥ ३ ॥
दादू छूटै जीवतां, मूआँ छूटै नाहिं ।
मूआँ पीछैं छूटिये, तौ सब आये उस माहिं ॥ ४ ॥
संगी सोई कीजिये, जे इस्थिर इहि संसार ।
ना वहु खिरै न हम खपैं, ऐसा लेहु बिचार ॥ ५ ॥
संगी सोई कीजिये, सुख दुख का साथी ।
दादू जीवण मरण का, सो सदा सँगाती ॥ ६ ॥
कबहुँ न बिहड़ै सो भला, साधू दिढ़-मति होइ ।
दादू हीरा एक रस, बाँधि गाँठड़ी सोइ ॥ ७ ॥

॥ करनी और कथनी ॥

दादू कथणी और कुछ, करणी करैं कुछ और ।
तिन थैं मेरा जिव डरै, जिन के ठीक न ठौर ॥

॥ जीवत मृतक ॥

जीवन माटी ह्वै रहै, साईं सनमुख होइ ।
दादू पहिली मरि रहै, पीछैं तौ सब कोइ ॥ १ ॥
आपा गर्व गुमान तजि, मद मंछर हंकार ।
गहै गरीबी बंदगी, सेवा सिरजनहार ॥ २ ॥
(दादू) मेरा बैरी मैं मुवा, मुझे न मारै कोइ ।
मैं हीं मुझ कौं मारता, मैं मरजीवा होइ ॥ ३ ॥
मेरे आगे मैं खड़ा, ता थैं रह्या लुकाइ ।
दादू परगट पीव है, जे यहु आपा जाइ ॥ ४ ॥

---

(१) भेद, दूरी ।

दादू आप [illegible] जहाँ न देखै कोइ ।
पिव कौं देखि दिखाइये, त्यौं त्यौं आनंद होइ ॥ ५ ॥
(दादू) साईं कारण माँस का, लोही[1] पानी होइ ।
सूकै आठा अस्थि[2] का, दादू पावै सोइ ॥ ६ ॥

॥ साच ॥

साचा नाँव अलाह का, सोई सति करि जाणि ।
निहचल करि ले बंदगी, दादू सो परवाणि ॥ १ ॥
दुई दरोग[3] लोग कौं भावै, साईं साच पियारा ।
कौण पंथ हम चलैं कहौ धौं, साधौ करौ बिचारा ॥ २ ॥
औषद खाइ न पछि[4] रहै, बिषम ब्याधि क्यौं जाइ ।
दादू रोगी बावरा, दोस बैद कौं लाइ ॥ ३ ॥
जे हम जाण्या एक करि, तौ काहे लोक रिसाइ ।
मेरा था सो मैं लिया, लोगौं का क्या जाइ ॥ ४ ॥
दादू पैंड़े पाप के, कदे न दीजै पाँव ।
जिहि पैंड़े मेरा पिव मिलै, तिहि पैंड़े का चाव ॥ ५ ॥
ऊपरि आलम[5] सब करै, साधू जन घट माहिं ।
दादू एता अंतरा, ता थैं बनती नाहिं ॥ ६ ॥
झूठा साचा करि लिया, बिष अमृत जाना ।
दुख कौं सुख सब को कहै, ऐसा जगत दिवाना ॥ ७ ॥
साचे का साहिब धणी, समरथ सिरजनहार ।
पाखँड की यहु पिर्थमी[6], परपंच का संसार ॥ ८ ॥
(दादू) पाखँड पीव न पाइये, जे अंतरि साच न होइ ।
ऊपरि थैं क्यौंहीं रहौ, भीतरि के मल धोइ ॥ ९ ॥

---

(१) लोहू । (२) हड्डी । (३) झूठ । (४) पथ्य, खाने में परहेज़ । (५) संसार ।
(६) पृथ्वी ।

जे पहुँचे ते कहि गये, तिनकी एकै बाति ।
सबै सयाने एक मति, उनकी एकै जाति ॥ १० ॥

॥ दया ॥

काल जाल थैं काढ़ि करि, आतम अंगि लगाइ ।
जीव दया यहु पालिये, दादू अमृत खाइ ॥ १ ॥
कहिये जे पिरथमी, दया बिहूणा देस ।
भगति नहीँ भगवंत की, तहँ कैसा परवेस ॥ २ ॥
काला मुँह करि करद[1] का, दिल थैं दूरि निवार ।
सब सूरति सुबहान की, मुल्लाँ मुग्ध न मारि[2] ॥ ३ ॥

॥ बिचार ॥

कोटि अचारी एक बिचारी, तऊ न सरभरि[3] होइ ।
आचारी सब जग भर्‌या, बिचारी बिरला कोइ ॥ १ ॥
सहज बिचार सब सुख में रहै, दादू बड़ा बमेक[4] ।
मन इंद्री पसरै नहीं, अंतरि राखै एक ॥ २ ॥
(दादू) सोचि करै सो सूरमा, करि सोचै सो कूर ।
करि सोच्याँ मुख स्याम है, सोच कर्‌याँ मुख नूर ॥ ३ ॥
जो मति पीछैं ऊपजै, सो मति पहिली होइ ।
कबहुँ न होवै जी दुखी, दादू सुखिया सोइ ॥ ४ ॥

॥ मान ॥

आपा मेटै हरि भजै, तन मन तजै बिकार ।
निरबैरी सब जीव सौं, दादू यहु मति सार ॥ १ ॥
किस सौं बैरी ह्वै रह्या, दूजा कोई नाहिं ।
जिसके अंग थैं ऊपज्या, सोई है सब माहिं ॥ २ ॥

---

(१) छुरी। (२) मुल्ला जी दीन जीवों को मत मारो क्योंकि वह मालिक ही की अंश हैं। (३) सरवरि=बराबरी। (४) बिवेक।

जहाँ राम तहँ मैं नहीं, मैं तहँ नाहीं राम।
दादू महल बरीक है, दुइ को नाहीं ठाम ॥ ३ ॥

॥ मन ॥

सोई सूर जे मन गहै, निमिष न चलने देइ।
जब हीं दादू पग भरै, तब हीं पाकड़ि लेइ ॥ १ ॥
जब लगि यहु मन थिर नहीं, तब लगि परस न होइ।
दादू मनवाँ थिर भया, सहजि मिटैगा सोइ ॥ २ ॥
यहु मन कागद की गुड़ी[1], उड़ि चढ़ी आकास।
दादू भीगै प्रेम जल, तब आइ रहै हम पास ॥ ३ ॥
सो कुछ हम थैं ना भया, जा पर रीझै राम।
दादू इस संसार में, हम आये बेकाम ॥ ४ ॥
इंद्री स्वारथ सब किया, मन माँगै सो दीन्ह।
जा कारण जग सिरजिया, सो दादू कछू न कीन्ह ॥ ५ ॥
(दादू) ध्यान धरैं का होत है, जे मन नाहिं निर्मल होइ।
तौ बग[2] सब हीं ऊधरैं, जे यहि बिधि सीझै कोइ ॥ ६ ॥
(दादू) जिस का दर्पण ऊजला, सो दर्सण देखै माहिं।
जिस की मैली आरसी, सो मुख देखै नाहिं ॥ ७ ॥
जागत जहँ जहँ मन रहै, सोवत तहँ तहँ जाइ।
दादू जे जे मन बसै, सोइ सोइ देखै आइ ॥ ८ ॥
जहँ मन राखै जीवताँ, मरताँ तिस घरि जाइ।
दादू बासा प्राण का, जहँ पहली रह्या समाइ ॥ ९ ॥
जीवत लूटैं जगत सब, मिरतक लूटैं देव।
दादू कहाँ पुकारिये, करि करि मूए सेव ॥ १० ॥

---

(१) गुड्डी, पतंग। (२) बकुला।

॥ माया ॥

साहिब है पर हम नहीं, सब जग आवै जाइ ।
दादू सुपिना देखिये, जागत गया बिलाइ ॥ १ ॥
(दादू) माया का सुख पंच दिन, गर्ब्यौ कहा गँवार ।
सुपिनैं पायो राज धन, जात न लागै बार ॥ २ ॥
कालरि[1] खेत न नीपजै, जे बाहै[2] सौ बार ।
दादू हाना बीज का, क्या पचि मरै गँवार ॥ ३ ॥
राहु गिलै[3] ज्यौं चंद कौं, गहन गिलै ज्यौं सूर ।
कर्म गिलै यौं जीव कौं, नखसिख लागै पूर ॥ ४ ॥
कर्म कुहाड़ा[4] अंग बन, काटत बारम्बार ।
अपने हाथौं आप कौं, काटत है संसार ॥ ५ ॥
(दादू) सब को बणिजे खार खलि[5], हीरा कोइ न लेइ ।
हीरा लेगा जौहरी, जो माँगे सो देइ ॥ ६ ॥
सुर नर मुनियर बसि किये, ब्रह्मा बिस्नु महेस ।
सकल लोक के सिर खड़ी, साधू के पग हेठ ॥ ७ ॥
(दादू) पहिली आप उपाइ करि, न्यारा पद निर्बाण ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस मिलि, बंध्या सकल बँधाण ॥ ८ ॥
दादू बाँधे बेद बिधि, भरम करम उरझाइ ।
मरजादा माहैं रहै, सुमिरण किया न जाइ ॥ ९ ॥
(दादू) माया मीठी बोलणी, नै नै[6] लागै पाँइ ।
दादू पैसै[7] पेट मैं, काढ़ि कलेजा खाइ ॥ १० ॥
भँवरा लुबधो बास का, कँवल बँधाना आइ ।
दिन दस माहैं देखताँ, दून्यूँ गये बिलाइ ॥ ११ ॥

---

(१) ऊसर । (२) जोतै । (३) ग्रसै । (४) कुल्हाड़ा । (५) संसार खारो और फोक चीज़ैं अर्थात कूड़ा करकट का गाहक है । (६) झुक झुक कर । (७) पैठे, घुसै ।

॥ निन्दा ॥

(दादू) जिहिं घर निंदा साध की, सो घर गये समूल[१]।
तिन की नीव न पाइये, नाँव न ठाँव न धूल ॥ १ ॥
(दादू) निंदा नाँव न लीजिये, सुपनै हीँ जिनि होइ।
ना हम कहैँ न तुम सुणौ, हम जिनि भाखै कोइ ॥ २ ॥
अणदेख्या अनरथ कहै, कलि प्रथमी का पाप।
धरती अंबर जब लगैँ, तब लग करैँ कलाप ॥ ३ ॥
(दादू) निंदक बपुरा जिन मरै, पर-उपकारी सोइ।
हम कूँ करता ऊजला, आपण मैला होइ ॥ ४ ॥

॥ माँस अहार ॥

माँस अहारी मद पिवै, बिषै बिकारी सोइ।
दादू आतम राम बिन, दया कहाँ थैँ होइ ॥ १ ॥
आपस[२] कौँ मारै नहीँ, पर कौँ मारन जाँहि।
दादू आपा मारै बिना, कैसे मिलै खुदाय ॥ २ ॥

॥ मिश्रित ॥

आपा उरझैँ उरझिया, दीसै सब संसार।
आपा सुरझैँ सुरझिया, यहु गुर-ज्ञान बिचार ॥ १ ॥
सब गुण सब ही जीव के, दादू ब्यापैँ आइ।
घर माहैँ जामै मरै, कोइ न जाणै ताहि ॥ २ ॥
दादू बेली आतमा, सहज फूल फल होइ।
सहज सहज सतगुर कहै, बूझै बिरला कोइ ॥ ३ ॥
हरि तरवर तत आतमा, बेली करि बिस्तार।
दादू लागै अमर फल, कोइ साधू सींचनहार ॥ ४ ॥
दया धर्म का रूखड़ा, सत सौँ बधता[३] जाइ।
संतोष सौँ फूलै फलै, दादू अमर फल खाइ ॥ ५ ॥

---

(१) जड़ से। (२) अपनपो। (३) बढ़ता।

माया बिहड़ै देखताँ, काया संग न जाइ ।
कृत्तम बिहड़ै बावरे, अजराबर[1] ल्यौ लाइ ॥ ६ ॥
जेते गुण ब्यापैं जीव कौं, तेते तैं तजै रे मन ।
साहिब अपणे कारणै, भलो निबाहो पन[2] ॥ ७ ॥

बाबा मलूकदास ।

जीवन समय—१६३१ से १७३९ तक । जन्म और सतसंग स्थान—मौज़ा कड़ा, ज़िला इलाहाबाद । जाति और आश्रम—खत्री कक्कड़, गृहस्थ । गुरू—बिट्ठल-दास द्राविड़ ।

१०८ बरस की अवस्था में अपने जन्म स्थान ही में चोला छोड़ा । इन के पंथ की अनेक गद्दियाँ हिन्दुस्तान में और (कहते हैं कि) नैपाल और काबुल में भी हैं । जगन्नाथ जी में इन के नाम का रोट अब तक जारी है ।

[पूरा जीवन-चरित्र इन की बानी के आदि में छपा है]

॥ गुरुदेव ॥

जीती बाजी गुरु प्रताप तैं, माया मोह निवार ।
कह मलूक गुरु कृपा तैं, उतरा भवजल पार ॥ १ ॥
सुखद पंथ गुरुदेव यह, दीन्हो मोहिं बताय ।
ऐसो ऊपठ पाय अब, जग मग चलै बलाय[3] ॥ २ ॥
भ्रम भागा गुरु बचन सुनि, मोह रहा नहिं लेस ।
तब माया छल हित किया, महा मोहनी भेस ॥ ३ ॥
ता को आवत देखि कै, कही बात समुझाय ।
अब मैं आया गुरु सरन, तेरी कछु न बसाय ॥ ४ ॥
मलुका सोई पीर है, जो जानै पर पीर ।
जो पर पीर न जानही, सो काफ़िर बेपीर ॥ ५ ॥
बहुतक पीर कहावते, बहुत करत हैं भेस ।
यह मन कहर खुदाय का, मारै सो दुरवेस ॥ ६ ॥

---

(१) बलवान, समरथ । (२) प्रतिज्ञा । (३) गुरुदेव का बताया हुआ ऐसा सुगम रास्ता मिलने पर संसारी रास्ते (जग मग) पर कौन चलैगा ।

॥ नाम ॥

जीवहुँ तैं प्यारे अधिक, लागैं मोहीं राम।
बिन हरि नाम नहीं मुझै, और किसी से काम ॥ १ ॥
कह मलूक हम जबहिं तैं, लीन्ही हरि की ओट।
सोवत हैं सुख नींद भरि, डारि भरम की पोट ॥ २ ॥
राम नाम एकै रती, पाप के कोटि पहाड़।
ऐसी महिमा नाम की, जारि करै सब छार ॥ ३ ॥
धर्महिं का सौदा भला, दाया जग ब्योहार।
रामनाम की हाट लै, बैठा खोल किवार ॥ ४ ॥
साहिब मेरा सिर खड़ा, पलक पलक सुधि लेइ।
जबहीं गुरु किरपा करैं, तबहिं राम कछु देइ ॥ ५ ॥
मोदी सब संसार है, साहिब राजा राम।
जा पर चीठी ऊतरै, सोई खरचै दाम ॥ ६ ॥

॥ सुमिरन ॥

सुमिरन ऐसा कीजिये, दूजा लखै न कोय।
ओंठ न फरकत देखिये, प्रेम राखिये गोय ॥ १ ॥
माला जपौं न कर[१] जपौं, जिभ्या कहौं न राम।
सुमिरन मेरा हरि करै, मैं पाया बिसराम ॥ २ ॥

॥ चितावनी ॥

गर्ब भुलाने देह के, रचि रचि बाँधे पाग।
सो देही नित देखि के, चोंच सँवारे काग ॥ १ ॥
उतरे आइ सराय में, जाना है बड़ कोह[२]।
अटका आकिल[३] काम बस, ली अहिंकारी मोह ॥ २ ॥
जेते सुख संसार के, इकठे किये बटोरि।
कन थोरे काँकर घने, देखा फटक पछोरि ॥ ३ ॥

(१) हाथ यानी उँगलियों की पोर से गिनना। (२) कोस। (३) बुद्धिमान, सयाना।

इस जीने का गर्ब क्या, कहाँ देँह की प्रीत।
बात कहत ढह जात है, बारू की सो भीत ॥ ४ ॥
मलूक कोटा झाँझरा, भीत परी भहराय।
ऐसा कोई ना मिला, (जो) फेर उठावै आय ॥ ५ ॥
देँही होय न आपनी, समुझि परी है मोहिं।
अबहीं तें तजि राख तूँ, आखिर तजिहै तोहिं ॥ ६ ॥

॥ प्रेम ॥

प्रेम नेम जिन ना कियो, जीतो नाहीं मैन[1]।
अलख पुरुष जिन ना लख्यो, छार परो तेहि नैन ॥ १ ॥
कठिन पियाला प्रेम का, पियै जो हरि के हाथ।
चारो जुग माता रहै, उतरै जिय के साथ ॥ २ ॥
बिना अमल माता रहै, बिन लसकर बलवंत।
बिना बिलायत साहिबी, अंत माहिं बेअंत ॥ ३ ॥
रात न आवै नींदड़ी, थरथर काँपे जीव।
ना जानूँ क्या करैगा, जालिम मेरा पीव ॥ ४ ॥
मलूक सु माता सुंदरी, जहाँ भक्त औतार।
और सकल बाँझै भईं, जनमे खर कतवार ॥ ५ ॥
सोई पूत सपूत है, (जो) भक्ति करै चित लाय।
जरा मरन तें छुटि परै, अजर अमर ह्वै जाय ॥ ६ ॥
सब बाजे हिरदे बजैं, प्रेम पखावज तार।
मंदिर ढूँढ़त को फिरै, मिल्यो बजावनहार ॥ ७ ॥
करै पखावज प्रेम का, हृदे बजावै तार।
मनै नचावै मगन ह्वै, तिस का मता अपार ॥ ८ ॥

(१) कामदेव।

जो तेरे घट प्रेम है, तो कहि कहि न सुनाव।
अंतरजामी जानिहै, अंतरगत का भाव ॥ ९ ॥

॥ बिनय ॥

नमो निरंजन निरंकार, अविगत पुरुष अलेख।
जिन संतन के हित धरयो, जुग जुग नाना भेख ॥ १ ॥
हरि भक्तन के काज हित, जुग जुग करी सहाय।
सो सिव सेस न कहि सकै, कहा कहौं मैं गाय ॥ २ ॥
राम राय असरन सरन, मोहिं आपन करि लेहु।
संतन सँग सेवा करौं, भक्ति मजूरी देहु ॥ ३ ॥
भक्ति मजूरी दीजिये, कीजै भवजल पार।
बोरत है माया मुझे, गहे बाँह अरियार ॥ ४ ॥

॥ साधु ॥

जहाँ जहाँ बच्छा फिरै, तहाँ तहाँ फिरै गाय।
कहै मलूक जहँ संत जन, तहाँ रमैया जाय ॥ १ ॥
भेष फकीरी जे करै, मन नहिं आवै हाथ।
दिल फकीर जे हो रहै, साहिब तिनके साथ ॥ २ ॥

॥ दुर्जन ॥

मलूक बाद न कीजिये, क्रोधै देव बहाय।
हार मानु अनजान तें, बकि बकि मरै बलाय ॥ १ ॥
कलपि डाहि[1] जे लेत हैं, या तें पाप न और।
कह मलूक तेहि जीव के, तीन लोक नहिं ठौर ॥ २ ॥
मूरख को का बोधिये, मन में रहो बिचार।
पाहन मारे क्या भया, जहँ टूटै तरवार ॥ ३ ॥
चार मास घन बरसिया, महा सुखम घन नीर।
ऐसो मुहकम[2] बखतरो, लगा न एकौ तीर ॥ ४ ॥

---

(१) कलपा और सता कर। (२) मजबूत।

दाग जो लागा लील का, सौ मन साबुन धोय।
कोटि बार समझाइया, कौवा हंस न होय॥ ५ ॥
दुर्जन दुष्ट कठोर अति, ता की जाति न ऐंड़।
स्वान पूँछ सूधरै नहीं, अंत टेढ़ की टेढ़॥ ६ ॥
चार पहर दिन होत रसोई, तनिक न निकसत टूक।
कह मलूक ता मँदिल में, सदा रहत हैं भूत॥ ७ ॥

॥ माया ॥

माया मिसरी की छुरी, मत कोई पतियाय।
इन मारे रसबाद के, ब्रह्महिं ब्रह्म लड़ाय॥ १ ॥
नारी नाहिं निहारिये, करै नैन की चोट।
कोइ एक हरिजन ऊबरे, पारब्रह्म की ओट॥ २ ॥
नारी चेंटो अमल की, अमली सब संसार।
कोइ ऐसा सूफी[1] न मिला, जा सँग उतरै पार॥ ३ ॥

॥ माँस अहार ॥

पीर सभन की एक सी, मूरख जानत नाहिं।
काँटा चूभे पीर है, गला काट कोउ खाय॥ १ ॥
कुंजर चौंटो पसू नर, सब मैं साहिब एक।
काटै गला खुदाय का, करै सूरमा लेख॥ २ ॥
सब कोउ साहिब बन्दते, हिन्दू मूसलमान।
साहिब तिन को बन्दता, जिस का ठौर इमान॥ ३ ॥

॥ अनुभव ॥

जब लगि थो अँधियार घर, मूँस थके सब चोर।
जब मंदिल दीपक बस्यो, वही चोर धन मोर॥ १ ॥
मन मिरगा बिन मूड़ का, चहुँ दिसि चरने जाय।
हाँक लेआया ज्ञान तब, बाँधा ताँत लगाय॥ २ ॥

---

(१) ज्ञानो।

हम जानत तीरथ बड़े, तीरथ हरि की आस।
जिन के हिरदे हरि बसै, कोटि तिरथ तिन पास ॥ ४ ॥
संध्या तर्पन सब तजा, तीरथ कबहुँ न जाउँ।
हरि हीरा हिरदे बसै, ताही भीतर न्हाउँ ॥ ५ ॥
मक्का मदिना द्वारिका, बद्री और केदार।
बिना दया सब झूठ है, कहै मलूक बिचार ॥ ६ ॥
राम राय घट में बसै, ढूँढ़त फिरैं उजाड़।
कोई कासी कोइ प्राग में, बहुत फिरैं झख मार ॥ ७ ॥

॥ मिश्रित ॥

अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम।
दास मलूका यौं कहै, सब के दाता राम ॥ १ ॥
जहाँ जहाँ दुख पाइया, गुरु को थापा सोय।
जबहीं सिर टक्कर लगै, तब हरि सुमिरन होय ॥ २ ॥
आदर मान महत्त्व सत, बालापन को नेह।
ये चारो तबही गये, जबहिं कहा कछु देह ॥ ३ ॥
प्रभुता ही को सब मरै, प्रभु को मरै न कोय।
जो कोई प्रभु को मरै, तो प्रभुता दासी होय ॥ ४ ॥
मानुष बैठै चुप करै, कदर न जानै कोय।
जबहीं मुख खोलै कली, प्रगट बास तब होय ॥ ४ ॥
सब कलियन में बास है, बिना बास नहिं कोय।
अति सुचित्त में पाइये, जा कोइ फूली होय ॥ ६ ॥

सुंदरदास जी

जीवन समय—१६५३ से १७४६ तक। जन्म स्थान—जयपुर की पहिली राजधानी द्यौसा नगर। सतसंग स्थान—फ़तेहपुर शेखावाटी। जाति—खंडेलवाल बनिया। आश्रम—भेष। गुरु—दादू दयाल।

सुंदरदास जी बाल साध और बाल कवि और संसकृत के भारी पंडित थे और हिन्दी, पूरबी, पंजाबी, गुजराती, मारवाड़ी, फ़ारसी आदि भाषाएँ भी जानते थे। संसकृत में कविता का रचना नापसंद था क्योंकि उस से सर्व साधारण का उपकार नहीं होता। यद्यपि बड़े गहरे भक्त थे परंतु दिल्लगी हँसी का सुभाव था। इन के शिष्यों की पाँच गद्दियाँ फ़तेहपुर शेखावाटी, मोर, चूरू (बीकानेर) आदि स्थानों में हैं।

[पूरा जीवन-चरित्र सुंदर बिलास के आदि में छपा है]

॥ गुरुदेव ॥

दादू सतगुरु बंदिये, सो मेरे सिर-मौर।
सुंदर बहिया जाय था, पकरि लगाया ठौर ॥ १ ॥
सुंदर सतगुरु बंदिये, सोई बंदन जोग।
औषध सबद दिवाइ करि, दूर किये सब रोग ॥ २ ॥
परमेसुर अरु परमगुरु, दोनौं एक समान।
सुंदर कहत बिसेष यह, गुरु तें पावै ज्ञान ॥ ३ ॥
सुंदर सतगुरु आपु तें, किया अनुग्रह आइ।
मोह निसा में सोवतें, हमकौं लिया जगाइ ॥ ४ ॥
सुंदर सतगुरु सारिखा, कोऊ नहीं उदार।
ज्ञान खजीना खोलिया, सदा अटूट भँडार ॥ ५ ॥
समदृष्टी सीतल सदा, अद्भुत जा की चाल।
ऐसा सतगुरु कीजिये, पल में करै निहाल ॥ ६ ॥
सुंदर सतगुर मिहर करि, निकट बताया राम।
जहाँ जहाँ भटकत फिरैं, काहे को बेकाम ॥ ७ ॥

गोरखधंधा लोह मैं, कड़ो लोह ता माहिं।
सुंदर जानै ब्रह्म मैं, ब्रह्म जगत द्वै नाहिं ॥ ८ ॥
परमातम से आत्मा, जुदे रहे बहु काल।
सुंदर मेला करि दिया, सतगुरु मिले दलाल ॥ ९ ॥
परमातम अरु आतमा, उपज्या यह अबिबेक।
सुंदर भ्रम तैं दोय थे, सतगुरु कोये एक ॥१०॥
सुंदर सूता जीव है, जाग्या ब्रह्म स्वरूप।
जागन सोवन तैं परे, सतगुरु कह्या अनूप ॥११॥
मूरख पावै अर्थ कौं, पंडित पावै नाहिं।
सुंदर उलटी बात यह, है सतगुरु के माहिं ॥१२॥
सुंदर सतगुरु ब्रह्ममय, पर सिष को चम दृष्टि।
सूधी ओर न देखई, देखै दर्पन पृष्ट[1] ॥१३॥
सुंदर काटै सोध करि, सतगुरु सोना[2] होइ।
सिष सुबरन निर्मल करै, टाँका रहै न कोइ ॥१४॥
नभमनि चिंतामनि कहै, हीरामनि मनिलाल।
सकल सिरोमनि मुकटमनि, सतगुरु प्रगट दयाल ॥१५॥
सुंदर सतगुरु आप तैं, अतिही भये प्रसन्न।
दूर किया संदेह सब, जीव ब्रह्म नहिं भिन्न ॥१६॥
सुंदर सतगुरु हैं सही, सुंदर सिच्छा दीन्ह।
सुंदर बचन सुनाइ कै, सुंदर सुंदर कीन्ह ॥१७॥

॥ सुमिरन ॥

सुंदर सतगुरु यौं कह्या, सकल सिरोमनि नाम।
ता कौं निसु दिन सुमरिये, सुखसागर सुखधाम ॥ १ ॥

---

(१) पीठ। (२) सोनार।

हिरदे मैं हरि सुमिरिये, [illegible] राइ ।
सुंदर नीके जतन सौं, अपनौं चित्त छिपाइ ॥ २ ॥
रंक हाथ हीरा चढ़्यो, ता कौ मोल न तोल ।
घर घर डोलै बेचतो, सुंदर याही भोल[1] ॥ ३ ॥
राम नाम मिसरी पोये, दूरि जाहिं सब रोग ।
सुंदर औषध कटुक सब, जप तप साधन जोग ॥ ४ ॥
राम नाम जा के हिये, ताहि नवैं सब कोय ।
ज्यौं राजा की संक तें, सुंदर अति डर होइ ॥ ५ ॥
सुंदर सबही संत मिलि, सार लियौ हरि नाम ।
तक्र[2] तजो घृत काढ़ि कै, और क्रिया किहि काम ॥ ६ ॥
लोन भया बिचरत फिरै, छीन भया गुन देह ।
दीन भई सब कल्पना, सुंदर सुमिरन येह ॥ ७ ॥
भजन करत भय भागिया, सुमिरन भागा सोच ।
जाप करत जौंरा[3] टल्या, सुंदर साची लोच[4] ॥ ८ ॥
सुंदर भजिये राम को, तजिये माया मोह ।
पारस के परसे बिनाँ, दिन दिन छीजै लोह ॥ ९ ॥
प्रीति सहित जे हरि भजैं, तब हरि होहि प्रसन्न ।
सुंदर स्वाद न प्रीति बिन, भूख बिना ज्यौं अन्न ॥ १० ॥
एक भजन तन सौं करै, एक भजन मन होइ ।
सुंदर तन मन के परे, भजन अखंडित सोइ ॥ ११ ॥
जाही कौ सुमिरन करै, है ताही को रूप ।
सुमिरन कोयें ब्रह्म के, सुंदर है चिद्रूप ॥ १२ ॥

---

(१) भूला । (२) छाछ । (३) पुष्ट और मस्त भैंस अर्थात् व्याधि । (४) नरमी ।

॥ बिरह ॥

मारग जोवै बिरहिनी, चितवै पिय की ओर।
सुंदर जियरे जक नहीं, कल न परत निस भोर ॥ १ ॥
सुंदर बिरहिनि अधजरी, दुःख कहै मुख रोइ।
जरि बरि कै भस्मी भई, धुवाँ न निकसै कोइ ॥ २ ॥
ज्यों ठगमूरी खाइ कै, मुखहि न बोलै बैन।
टुगर टुगर देख्या करै, सुंदर बिरहा अैन ॥ ३ ॥
लालन मेरा लाडिला, रूप बहुत तुझ माहिं।
सुंदर राखै नैन में, पलक उघारै नाहिं ॥ ४ ॥
अब तुम प्रगटहु रामजी, हृदय हमारे आइ।
सुंदर सुख संतोष ह्वै, आनँद अंग न माइ[1] ॥ ५ ॥

॥ बंदगी ॥

सुंदर अंदर पैसि करि, दिल में गोता मारि।
तौ दिलही में पाइये, साईं सिरजनहारि ॥ १ ॥
सखुन हमारा मानिये, मत खोजै कहुँ दूर।
साईं सोने बीच है, सुंदर सदा हजूर ॥ २ ॥
जो यह उसका ह्वै रहै, तौ वह इसका होइ।
सुंदर बातौं ना मिलै, जब लग आप न खोइ ॥ ३ ॥
सुंदर दिल की सेज पर, औरति है अरवाह[2]।
इस को जाग्या चाहिये, साहिब बेपरवाह ॥ ४ ॥
जो जागै तौ पिय लहै, सोयें लहिये नाहि।
सुन्दर करिये बंदगी, तौ जाग्या दिल माहिं ॥ ५ ॥

॥ पतिब्रत ॥

सुंदर और न ध्याइये, एक बिना जगदीस।
सो सिर ऊपर राखिये, मन क्रम बिसवाबीस ॥ १ ॥

---

(१) समाय। (२) सुरत, जीवात्मा।

सुंदर पतिब्रत राम सोँ, सदा रहै इकतार ।
सुख देवै तो अति सुखी, दुख तो सुखी अपार ॥ २ ॥
जो पिय को ब्रत लै रहै, कंत पियारी सोइ ।
अंजन मंजन दूरि करि, सुंदर सनमुख होइ ॥ ३ ॥
प्रीतम मेरा एक तूँ, सुंदर और न कोइ ।
गुप्त भया किस कारने, काहि न परगट होइ ॥ ४ ॥

॥ उपदेश ॥

सुंदर मनुषा देह की, महिमा कहिये काहि ।
जाकौँ बंछैँ देवता, तूँ क्योँ खोवै ताहि ॥ १ ॥
सुंदर पंछी बिरछ पर, लियौ बसेरा आनि ।
राति रहे दिन उठि गये, त्योँ कुटुंब सब जानि ॥ २ ॥
सुंदर तेरी मति गई, समभत नहीं लगार ।
कूकर रथ नीचे चलै, हूँ खैँचत हौँ भार ॥ ३ ॥
सुंदर यह औसर भलो, भजि ले सिरजनहार ।
जैसेँ ताते लोह कौँ, लेत मिलाइ लुहार ॥ ४ ॥
सुंदर योँही देखतेँ, औसर बीतयो जाइ ।
अँजुरी माहेँ नीर ज्योँ, किती बार ठहराइ ॥ ५ ॥
दीया की बतियाँ कहैँ, दीया किया न जाइ ।
दीया करै सनेह करि, हीये जोति दिखाय ॥ ६ ॥
साईँ दीया है सही, इसका दीया नाहि ।
यह अपना दीया कहै, दीया लखै न माहि ॥ ७ ॥

॥ चितावनी ॥

काल ग्रसत है बावरे, चेतन क्योँ न अजान ।
सुंदर काया कोट मेँ, होइ रह्यो सुलतान ॥ १ ॥

सुंदर मछरी नीर मैं, बिचरत अपने ख्याल।
बगुला लेत उठाइ कैं, तोहि ग्रसै यौं काल ॥ २ ॥
बेर बेर नहि पाइये, सुंदर मानुष देह।
राम भजन सेवा सुकृत[1], यह सौदा करि लेह ॥ ३ ॥
सुंदर मानुष देह यह, ता मैं दोइ प्रकार।
या तैं बूड़ै जगत महँ, या तैं उतरै पार ॥ ४ ॥
सुंदर काल महाबली, मारे मोटे मीर।
तूँ है कौन कि गनति मैं, चेतत काहे न बीर ॥ ५ ॥
मेरे मंदिर माल धन, मेरो सकल कुटंब।
सुंदर ज्यौं को त्यौं रहै, काल दियो जब बंब ॥ ६ ॥
सुंदर गर्ब कहा करै, कहा मरोरै मूँछ।
काल चपेटो मारिहै, समुझि कहूँ के भूँछ[2] ॥ ७ ॥
सुंदर या संसार तैं, काहि न निकसत भागि।
सुख सोवत क्यौं बावरे, घर मैं लागी आगि ॥ ८ ॥
जो जो मन मैं कल्पना, सो सो कहिये काल।
सुंदर तूँ निःकल्प हो, छाडि कल्पना जाल ॥ ९ ॥
काल ग्रसै आकार कौं, जा मैं सकल उपाधि।
निराकार निर्लेप है, सुंदर तहाँ न ब्याधि ॥ १० ॥

॥ नारी पुरुष ॥

नारी पुरुष सनेह अति, देखैं जीवैं सोइ।
सुंदर नारी बीछुरै, आपु मृतक तब होइ ॥

॥ देहात्मा बिछोह ॥

सुंदर देह परी रही, निकसि गयौ जब प्रान।
सब कोऊ यौं कहतु है, अब ले जाहु मसान ॥

---

(१) पुन्य कर्म। (२) भोंदू, मूर्ख।

धरनीदास जी

—:*:—

जन्म समय—सम्बत १७१३। जन्म और सतसंग स्थान—माँझी गाँव (ज़िला छपरा)। जाति और आश्रम—[illegible] कायस्थ, भेष। गुरू—चंद्रदास।

इन का पंथ अब तक जारी है और हज़ारों आदमी उस मत के हिन्दुस्तान भर में फैले हैं। इन के दो ग्रंथ "सत्य प्रकाश" और "प्रेम प्रकाश" सुनने में आये हैं।

[पूरे जीवन-चरित्र के लिये उन की बानी देखो]

॥ गुरुदेव ॥

धरनी जहँ लग देखिये, तहँ लौं सबै भिखारि।
दाता केवल सतगुरू, देत न मानै हारि ॥ १ ॥
धरनि फिरहिँ देसंतरो, धरि धरि के बहु भेस।
कोई कोई देखिहैं, अंतर गुरु उपदेस ॥ २ ॥
धूवाँ के धौरेहरा, ओ धूरो को धाम।
ऐसे जीवन जगत में, बिनु गुरु बिन हरि नाम ॥ ३ ॥
धरनी सब दिन सुदिन है, कबहुँ कुदिन है नाहि।
लाभ चहूँ दिसि चौगुनो, (जो) गुरु सुमिरन हिये माहिँ ४

॥ ध्यान ॥

धरनी ध्यान तहाँ धरै, प्रगट जोति फहराहि।
मनि मानिक मोती झरै, चुनि चुनि हंस अघाहि ॥ १ ॥
धरनी ध्यान तहाँ धरै, त्रिकुटी कुटी मँझार।
घर के बाहर अघर है, सनमुख सिरजनहार ॥ २ ॥

॥ चितावनी ॥

धरनी धरि रहु हरि ब्रतहिं, परिहरि सब ही मोह।
धन सुत बंधु बिभव[1] जत, होवै अंत बिछोह ॥ १ ॥

---

(१) ऐश्वर्य्य।

धरनी धोख न लाइये, कबहीं अपनो ओर।
प्रभु सोँ प्रीति निबाहिये, जीवन है जग थोर ॥ २ ॥
गोरिया गरब करहु जिनि, अपने गोरे गात।
कान्हि परोँ चलि जाइहै, जैसे पियरे पात ॥ ३ ॥
धरनी चहुँ दिसि चरचिया[1], करि करि बहुत पुकार।
नाहीं हम हैं काहु के, नाहीं कोउ हमार ॥ ४ ॥

॥ बिरह ॥

धरनी धन वो बिरहनी, धारै नाहीं धीर।
बिहबल बिकल सदा चित, दुर्बल दुखित सरीर ॥ १ ॥
धरनी परबत पर पिया, चढ़ते बहुत डेराँव।
कबहुँक पाँव जु डिगमिगै, पावौं कतहुँ न ठाँव ॥ २ ॥
धरनी धरकत है हिया, करकत आहि करेज।
ढरकत लोचन भरि भरी, पीया नाहिन सेज ॥ ३ ॥
धरनी धवल[2] धरेहरहि, चढ़ि चढ़ि चहुँ दिसि हेर।
आवत पिय नहिं दीखतो, भइलो बहुत अबेर ॥ ४ ॥
धरनी सो दिन धन्न है, मिलब जबै हम नाह[3]।
संग पौंढ़ि सुख बिलसिहौं, सिर तर धरि के बाँह ॥ ५ ॥
धरनी धन की भूल हो, कछू बरनि नहिं जाय।
सनमुख रहतो रैन दिन, मिलत नहीं पिय धाय ॥ ६ ॥

॥ प्रेम ॥

धरनो पलक परै नहीं, पिय का झलक सुहाय।
पुनि पुनि पीवत परम रस, तबहूँ प्यास न जाय ॥ १ ॥
धरनी धन तन जिवन यह, चाहे रहै कि जाय।
हरि के चरन हृदय धरि, अब तो हेत बढ़ाय ॥ २ ॥

---

(१) ढूँढ़ा। (२) सफ़ेद। (३) पति।

धरनी सो धन धन्य हो, धन धन कुल उजियार ।
जा कर बाँह धइल पिया, आपन हाथ पसार ॥ ३ ॥
धरनी पिय जिन पावल, मेटि गइल सब दुंद ।
अरध उरध सुर गावल, हिरदय होय अनंद ॥ ४ ॥
धरनी खेती भक्ति की, उपजे होत निहाल ।
खर्चै खाये निबरै नहीं, परे न दुक्ख दुकाल ॥ ५ ॥
धरनी मन मिलबो कहा, जो तनिक माहिं मिलि जाय ।
मन को मिलन सराहिये, जो एकमेक होइ जाय ॥ ६ ॥

॥ विनय ॥

धरनी जन की बीनती, करु करुनामय कान ।
दीजै दरसन आपनो, माँगों कछु नहिं आन ॥ १ ॥
धरनी बिलखि[1] बिनती करे, सुनिये प्रभू हमार ।
सब अपराध छिमा करो, मैं हौं सरन तिहार ॥ २ ॥
धरनी सरनो रावरो, राम गरीब-निवाज ।
कवन करेगो दूसरो, मोहि गरीब के काज ॥ ३ ॥
काहू के बहु बिभव भइ, काहू बहु परिवार ।
धरनी कहत हमहिं बल, ए हो राम तुम्हार ॥ ४ ॥
तिनुका दाँत के अंतरे, कर जोरे भुइँ सीस ।
धरनी जन बिनती करै, जानु[2] परो जगदीस ॥ ५ ॥
धरनी नहिं बैराग बल, नाहिँ जोग सन्यास ।
मनसा बाचा कर्मना, बिस्वंभर बिस्वास ॥ ६ ॥
बिनती लीजे मानि करि, जानि दास को दास ।
धरनी सरनी राखिये, अवर न दूसर आस ॥ ७ ॥

(१) रोकर। (२) जाँघ, चरन।

॥ भेष ॥

कुल तजि भेष अनुहरया, हिये न आयो साच ।
धरनी प्रभु रीझै नहीं, देखत ऐसो नाच ॥ १ ॥
भेष लियो दाया नहीं, ध्यान धतूरा भाँग ।
धरनी प्रभु काँचा नहीं, जो भूलै ऐसे स्वाँग ॥ २ ॥

॥ घट मठ ॥

दिया दिया घर भीतरे[1], बाती तेल न आगि ।
धरनी मन बच कर्मना, ता सोँ रहना लागि ॥ १ ॥
बिनु पगु निरत करो तहाँ, बिनु कर दैदै तारि ।
बिनु नैनन छबि देखना, बिनु सरवन झनकारि ॥ २ ॥
धरनी अरध उरध चढ़ि, उदयो जोति सरूप ।
देखु मनोहर मूरती, अतिहीँ रूप अनूप ॥ ३ ॥
तब लगि प्रगट पुकारिया, जब लगि निबरी नाहिँ ।
धरनी जब निबरो परी, मन की मनहीँ माहिँ ॥ ४ ॥
धरनी हृदय पलंगरी, प्रीतम पौढ़े आय ।
सभा सुनी जो स्रवन तेँ, कहे कवन पतियाय ॥ ५ ॥
धरनी तन मेँ तख्त है, ता ऊपर सुलतान ।
लेत मोजरा सबहिँ को, जहँ लौँ जीव जहान ॥ ६ ॥

॥ मौन ॥

धरनी आपन मरम हो, कहिये नाहीँ काहि ।
जाननहार सो जानि है, जैसो जो कछु आहि ॥

॥ कामिनी ॥

दामिनि ऐसी कामिनी, फाँसी ऐसो दाम ।
धरनी दुइ तेँ बाचिये, कृपा करै जो राम ॥ १ ॥

---

(१) अंतर में दीपक धरा है ।

धरनी ब्याहो छोड़िये, जो हरिजन देखि लजाय।
बेस्या संग बिसारिये, जो भक्ति अंग ठहराय ॥ २ ॥

॥ माँस अहार ॥

धरनी जिव जिनि मारिये, माँसहि नाहीं खाहु।
नंगे पाँव बबूर बन, होइ नाहि निरबाहु ॥ १ ॥
माँस अहारी जीयरा, सो पुनि कथै गियान।
नाँगी ह्वै घूँघट करै, धरनी देखि लजान ॥ २ ॥
धरनी यह मन जम्बुका[1], बहुत कुभोजन खात।
साधु संग मृग होइ रहु, सब्द सुगंध बसात ॥ ३ ॥

॥ ब्राह्मण ॥

धरनी भरमी बाम्हने, बसहि भरम के देस।
करम चढ़ावहि आपु सिर, अवर जे ले उपदेस ॥ १ ॥
करनी पार उतारिहै, धरनी किये पुकार।
साकित बाम्हन नहि भला, भक्ता भला चमार ॥ २ ॥
मास अहारी बाम्हना, सो पापी बाँहि जाउ।
धरनी सूद्र बइस्नवा, ताहि चरन सिर नाउ ॥ ३ ॥
धरनी सो पंडित नहीं, जो पढ़ि गुन कथै बनाय।
पंडित ताहि सराहिये, जो पढ़ा बिसरि सब जाय ॥ ४ ॥

॥ मिश्रित ॥

धरनी काहि असीसिये, औ दीजै काहि सराप।
दूजा कतहुँ न देखिये, सब घट आपै आप ॥ १ ॥
धरनी कथनी लोक की, ज्यों गोदर को ज्ञान।
आगम भाखै और के, आपु परे मुख स्वान ॥ २ ॥
परमारथ को पंथ चहि, करते करम किसान।
ज्यों घर में घोड़ा अछत, गदहा करै पलान[2] ॥ ३ ॥

---

(१) स्यार। (२) काठी कसे।

जगजीवन साहिब

इन के जीवन समय के विषय में दुमता है। "मिश्रबंधु बिनोद" मे इनका ग्रंथ-रचना काल सम्बत १८१८ लिखा है और पादरी अहमद-शाह ने भी इसी के लग भग कहा है परन्तु इन के सत्तनामी पंथवाले इन की जन्म तिथि माघ सुदी सत्तमी मंगलवार सम्बत १७२७ और मृत्यु तिथि बैशाख बदी सत्तमी मंगलवार सम्बत १८१७ बतलाते हैं जिस का प्रमाण उन के एक ग्रंथ से भी होता है जो मानने योग्य है। यह भारी गति के संत थे जिन की बानी दीनता और प्रेम रस में पगी हुई है। जाति के चँदेल क्षत्री थे और सदा गृहस्थ आश्रम ही में रहे। जन्म इन का ज़िला बाराबंकी (अवध) के सरदहा गाँव में हुआ था और उसी ज़िले के कोटवा गाँव में उमर भर सतसंग कराया। भीखा पंथी इन को गुलाल साहिब का शिष्य बतलाते हैं और अपने गुरु घराने में शामिल करते हैं (देखो जीवन-चरित्र जगजीवन साहिब की बानी के भाग १ में) परन्तु सत्तनामियों के अनुसार इन के गुरू "बिश्वेश्वर पुरी" थे जिन का भीखा पंथ से कोई सम्बन्ध नहीं था। इन के अनुयाई दहनी कलाई पर काला और सपेद धागा बाँधते हैं। इन के मुख्य ग्रंथ "ज्ञान प्रकाश," "महा प्रलय" और "प्रथम ग्रंथ" हैं।

॥ चितावनी ॥

मैं तैं ग़ाफ़िल होहु नहिं, समुझि कै सुद्धि सँभार।
जौने घर तें आयहू, तहँ का करहु बिचार ॥ १ ॥
काहे भूल गइसि तैं, का तोहि काँ हित लाग।
जवने पठवा कौल करि, तेहि कस दीन्ह्यो त्याग ॥ २ ॥
इहाँ तो कोऊ रहि नहिं, जो जो धरिहै देह।
अंत काल दुख पाइहौ, नाम तें करहु सनेह ॥ ३ ॥
तजु आसा सब झूठ ही, सँग साथी नहिं कोय।
केउ केहू न उबारही, जेहि पर होय सो होय ॥ ४ ॥
मारहिं काटहिं बाँठहीं, जानि मानि करु त्रास।
छाड़ि देहु गफिलाई, गहहु नाम की आस ॥ ५ ॥

जगजीवन गुरु [illegible], अंतर धरि रहु ध्यान।
अजपा जपु [illegible] करि, [illegible] सब [illegible] ॥ ६ ॥

॥ विनय ॥

पपिहे जाय पुकारेऊ, पंछिन आगे रोय।
तीनि लोक फिरि आयेऊँ, बिनु दुख लख्यो न कोय ॥ १ ॥
जोगिन ह्वै जग ढूँढेऊँ, पहिर्यौं कुंडल कान।
पिय का अंत न पायेऊँ, खोजत जनम सिरान ॥ २ ॥
बैठि मैं रहेऊँ पिया सँग, नैनन सुरति निहारि।
चाँद सुरज दोउ देखेऊँ, नहिं उनकी अनुहारि[1] ॥ ३ ॥
माया रच्यो हिंडोलना, सब कोइ झूल्यो आय।
पैंग मारि वहिं गिरि गयो, काहू अंत न पाय ॥ ४ ॥
बिसुन औ ब्रह्मा झूलेऊ, झूल्यो आइ महेस।
मुनि जन इंदर झूलि सब, झूले गौरि गनेस ॥ ५ ॥
सतगुरू सत खंभन गगन, सूरति डोरि लगाय।
उतरै गिरै न टूटई, झूलहि पैंग बढ़ाय ॥ ६ ॥
जगजीवन कहि भाखही, संतन समझहु ज्ञान।
गगन लगन लै लावहू, निरखहु छबि निरबान ॥ ७ ॥
माया बहुत अपरबल, अलख तुम्हार बनाउ।
जगजीवन बिनती करै, बहुरि न फेरि झुलाउ ॥ ८ ॥

॥ उपदेश ॥

सदा सहाई दास पर, मनहिं बिसरैं नाहिं।
जगजीवन साची कहै, कबहूँ न्यारे नाहिं ॥ १ ॥
सत समरथ तें राखि मन, करिय जगत को काम।
जगजीवन यह मंत्र है, सदा सुक्ख बिसराम ॥ २ ॥

---

(१) बराबर।

सत्त नाम जपु जीयरा, और बृथा करि जान।
माया तकि नहि भूलसो, समुझि पाछिला ज्ञान ॥ ३ ॥
कहँवाँ तैं चलि आयहू, कहाँ रहा अस्थान।
सो सुधि बिसरि गई तोहि, अब कस भयसि हेवान ॥ ४ ॥
अबहूँ समुझि के देखु तैं, तजु हंकार गुमान।
यहि परिहरि[१] सब जाइ है, होइ अंत नुकसान ॥ ५ ॥
दीन लीन रहु निसु दिना, और सर्बसो त्यागु।
अंतर बासा किये रहु, महा हितू तैं लागु ॥ ६ ॥
काया नगर सोहावना, सुख तब हौं पै होय।
रमत रहै तेहि भीतरे, दुख नहिँ ब्यापै कोय ॥ ७ ॥
मृत मंडल कोउ थिर नहीं, आवा सो चलि जाय।
गफिल ह्वै फंदा पर्यो, जहँ तहँ गयो बिलाय ॥ ८ ॥
जगजीवन गहि चरन गुरु, ऐनन[२] निरखि निहार।
ऐसो जुगुती रहै जे, लेहैं ताहि उबारि ॥ ९ ॥

---

(१) छोड़ कर। (२) आँख से।

यारी साहिब

—— :o※o: ——

इन का जीवन समय सम्बत १७२५ और १७८० के दर्मियान था। जाति के मुसलमान फ़क़ीरी भेस मे॑ थे और बीरू साहिब इन के गुरू थे। दिल्ली में अपने गुरू के जीवन समय मे॑ उन की सेवा में बराबर रहे और उन के बाद उन की गद्दी पर बैठे और वहाँ चोला छोड़ा। दिल्ली में उनकी समाधि मौजूद है। सिवाय इन के, बुल्ला साहिब के चार प्रसिद्ध चेले और केशवदास, सूफ़ीशाह, शेख़नशाह, और हस्तमुहम्मद शाह।

॥ घट मठ ॥

जोति सरूपी आतमा, घट मठ रहो समाय।
परम तत्त मन-भावनो, नेक न इत उत जाय ॥ १ ॥
रूप रेख बरनौं कहा, कोटि सूर परगास।
अगम अगोचर रूप है, [कोऊ] पावै हरि को दास ॥ २ ॥
नैनन आगे देखिये, तेज पुंज जगदीस।
बाहर भीतर रमि रह्यो, सो धरि राखौ सीस ॥ ३ ॥
बाजत अनहद बाँसुरी, तिरबेनी के तीर।
राग छतीसो होइ रहे, गरजत गगन गँभीर ॥ ४ ॥
आठ पहर निरखत रहौ, सन्मुख सदा हजूर।
कह यारी घर ही मिलै, काहे जाते दूर ॥ ५ ॥
बेला फूला गगन में, बंक नाल गहि मूल।
नहिं उपजै नहिं बीनसै, सदा फूल के फूल ॥ ६ ॥
दच्छिन दिसा मोर नइहरो, उत्तर पंथ ससुरार।
मान सरोवर ताल है, [तहँ] कामिनी करत सिंगार ॥७॥
आतम नारि सुहागिनी, सुन्दर आपु सँवारि।
पिया मिलबे को उठि चली, चौमुख दियना बारि ॥ ८ ॥
धरनि[1] अकास के बाहरे, यारी पिय दीदार।
सेत छत्र तहँ जगमगे, सेत फटिक उँजियार ॥ ९ ॥

---

(१) पृथ्वी।

तारनहार समर्थ है, अवर न दूजा कोय।
कह यारो सतगुरु मिलै, [तो] अचल अरु अम्मर होय ॥ १० ॥

दरिया साहिब (बिहार वाले)

जीवन समय—१७३१ से १८३७ तक। जन्म और सतसंग स्थान—मौज़ा धरकंधा ज़िला आरा। जाति—छत्री (दरिया पंथियों के कथन अनुसार), मुसलमान (आम शुहरत से)। गुरु—परम पुरुष साधू के भेष में।

इन के अनुयाई इन्हें कबीर साहिब का अवतार मानते हैं। दरिया-पंथी खड़े हुए झुक कर मालिक की बंदगी करते हैं जिसे वह "कोरनिश" कहते हैं और फिर मत्था टेक कर सिरदा (सिजदा) करते हैं। हर एक साधू एक रखना (मिट्टी का हुक्का) और भरुका पानी पीने का अपने पास रखता है चाहे ज़रूरत हो या न हो। इन का मारवाड़वाले दरिया साहिब के साथ विचित्र मिलान दोनों की बानी के आदि में दिखलाया है।

॥ गुरुदेव ॥

दरिया भवजल अगम है, सतगुरु करहु जहाज।
तेहि पर हंस चढ़ाइ कै, जाय करहु सुख राज ॥ १ ॥
पहुँचै हंस सत सबद से, सतगुरु मिलै जो मोत।
कह दरिया सब भर्म तजि, बसै चरन महँ चोत ॥ २ ॥
सतगुरु साहिब साच हहिं, देखो सबद बिचारि।
गहो डोरि यह सबद को, तन मन डारो वारि ॥ ३ ॥
सत्त गुरू गमि ज्ञान करु, बिमल सदा परकास।
मम सतगुरु का दास हौं, पद पंकज की आस ॥ ४ ॥
सुकृत पिरेमहिं हितु करहु, सत बोहित[1] पनवार।
खेवट सतगुरु ज्ञान है, उतरि जाव भौ पार ॥ ५ ॥

॥ नाम ॥

सत्त नाम निजु सार है, अमर लोक के जाय।
कह दरिया सतगुरु मिलै, संसय सकल मिटाय ॥ १ ॥

(१) नाव।

जा के पूँजी नाम है, कबहि न होखै हानि ।
नाम बिहूना मानवा, जम के हाथ बिकानि ॥ २ ॥
हंस नाम अमृत नहि चाख्यो, नहि पाये पैसार[१] ।
कह दरिया जग [illegible], इक नाम बिना संसार ॥ ३ ॥

॥ सुमिरन ॥

सुमिरन माला भेष नहि, नाहि मसी को अंक ।
सत्त सुकृति दृढ़ लाइ कै, तब तारै गढ़ बंक ॥ १ ॥
सुमिरहु सत्त नाम गति, प्रेम प्रीति चित लाय ।
बिना नाम नहिं बाचिहो, मिर्था जनम गँवाय ॥ २ ॥

॥ शब्द ॥

जैसे तिल मेँ फूल जो, बास जो रहा समाय ।
ऐसे सबद सजीवनी, सब घट सुरति दिखाय ॥ १ ॥
कह दरिया सुन संत यह, सबदहि करो बिचार ।
जब होरा हिरंबर होइहै, तब छुटिहै संसार ॥ २ ॥

॥ चितावनी ॥

कोठा महल अटारिया, सुने स्रवन बहु राग ।
सतगुरु सबद चीन्हे बिना, ज्योँ पंछिन महँ काग ॥ १ ॥
कनक कामिनि के फंद मेँ, ललची मन लपटाय ।
कलपि कलपि जिव जाइहै, मिर्था जनम गँवाय ॥ २ ॥
मातु पिता सुत बंधवा, सब मिलि करैँ पुकार ।
अकेल हंस चलि जातु है, कोइ नहिँ संग तुहार ॥ ३ ॥

॥ बिश्वास ॥

भजन भरोसा एक बल, एक आस बिस्वास ।
प्रीति प्रतीति इक नाम पर, (सोइ) संत बिबेको दास ॥ १ ॥
है खुसबोई पास मेँ, जानि परै नहिँ सोय ।
भरम लगे भटकत फिरैँ, तिरथ बरत सब कोय ॥ २ ॥

---

(१) धसने न पावै ।

घट मठ

दरिया तन से नहिं जुदा, सब किछु तन के माहिं ।
जोग जुगत सों पाइये, बिना जुगति किछु नाहिं ॥ १ ॥
अछै बृच्छ ओइ पुरुष हहिं, जिंदा अजर अमान ।
मुनिवर थाके पंडिता, बेद कथहि अनुमान ॥ २ ॥

॥ भेद ॥

तीनि लोक के ऊपरे, (तहँ) अभय लोक बिस्तार ।
सत्त सुकृत परवाना[1] पावै, पहुँचै जाय करार ॥ १ ॥
अगम पंथ को खेड़ि[2] यह, बूझै बिरला कोइ ।
सत साहिब सामरथ हहिं, दरिया सबद बिलोइ[3] ॥ २ ॥
सोभा अगम अपार, हंस बंस सुख पावहीं ।
कोइ ज्ञानी करै बिचार, प्रेम तत्तु जा के बसै ॥ ३ ॥
एकै सों अनंत भौ, फूटि डारि बिस्तार ।
अंतहूँ फिरि एक है, ताहि खोजु निजु सार ॥ ४ ॥

॥ परिचय ॥

अमी तत्तु अमृत पियै, देखहु सुरति लगाय ।
कहत सुनत नहिं बनि परै, जो गति काहु लखाय ॥ १ ॥
सुधा अग्र परिमल झरै, छिरकहिं बहुत सुढारि ।
दया दरस दीदार मैं, मिटा कलपना झारि ॥ २ ॥
वेवाहा[4] के मिलन सों, नैन भया खुसहाल ।
दिल मन मस्त मतवल हुआ, गूँगा गहिर रसाल[5] ॥ ३ ॥
निकट जाय जमराज नहिं, सिर धुनि जम पछिताय ।
बुन्द सिन्ध मैं मिलि रहा, कवन सकै बिलगाय ॥ ४ ॥

---

(१) एक पाठ में "परवाना" की जगह "का बीड़ा" है । (२) समाज । (३) मथो । (४) दरिया पंथियों के मूल मंत्र और इष्ट का नाम । (५) बोलनेवाला ।

॥ सूरमा ॥

सूरा सोई सराहिये, जो जूझै दल मन खोल ।
कायर कादर औचलै[1], मिला न सब्द अमोल ॥

॥ उपदेश ॥

काम क्रोध मद लोभ तजु, गरब गरूरी झारि ।
बिमल प्रेम मनि बारि के, राखु दृष्टि उजियार ॥

॥ साच ॥

जहाँ साँच तहँ आपु हहिं, निसि दिन होहिं सहाय ।
पल पल मनहिं बिलोइये, मीठो मोल बिकाय ॥

॥ दया ॥

जौं लगि दया न ऊपजै, सम जुग जाहिं अनंत ।
तौं लगि भगति न प्रेम पद, सुकृत सोक बिनु बंत ॥

॥ मन ॥

कह दरिया मन कैद करु, जो चाहो सत नाम ।
करम काटि नर निजपुर, जाय बसै निजु धाम ॥ १ ॥
मन के जीते औलिया, मन हारे भौ हानि ।
मनहिं बिलोय ज्ञान करि मथनो, तब सुख उपजै जानि ॥ २ ॥

॥ मान ॥

मन को ममता काल है, करम करावै जानि ।
गरब मिलायो गरद में, रावन को भइ हानि ॥

॥ कामिनो ॥

जो जिव फंदे नारि से, सो नहिं बंस हमार ।
बंस राखि नारी जो त्यागै, सो उतरे भव पार ॥

॥ पंडित ॥

पंडित पढ़ि जिनि भूलहू, खोजहु मुक्ति के भेव ।
सास्तर गीता ज्ञान बिचारहु, करहु जमन[2] के सेव ॥ १ ॥

---

(१) फिसल जाय, पलट जाय । (२) जम जो गिनती में चौदह हैं ।

तब तोहिँ जानौँ पंडिता, मुक्तो कहि देहु आय ।
छप[1] लोक की बात कह, तब मोर मन पतिआइ ॥ २ ॥

॥ मिश्रित ॥

है मगु साफ बराबरे, मंदा लोचन माहिँ ।
कवन दोष मगु भान कहँ, आपै सूझत नाहिँ ॥ १ ॥
पहिले गुण सक्कर हुआ, चीनो मिसरो कीन्ह ।
मिसरो से कन्दा भया, यहो सुहागिनि चीन्ह ॥ २ ॥
पाँच तत्त की कोठरो, ता मेँ जाल जँजाल ।
जोव तहाँ बासा करै, निपट नगीचे काल ॥ ३ ॥
दरिया दिल दरियाव है, अगम अपार बेअंत ।
सब महँ तुम तुम मेँ सभे, जानि मरम कोइ संत । ४ ॥
बूड़े भेख अलेख स्वाँग धरि, काल बली धरि खाय ।
बाचे सो जेहिँ भर्म नाहिँ, सतगुरु भये सहाय ॥ ५ ॥
जंगम जोगो सेवड़ा, पड़े काल के हाथ ।
कह दरिया सोइ बाचिहै, (जो) सत्त नाम के साथ ॥ ६ ॥

(१) "छप" अर्थात गुप्त या छिपा ।

दरिया साहिब (मारवाड़ वाले)

जीवन समय—संवत् १७३२ और १८४४ के दर्मियान। जन्म स्थान—जैतारन गाँव, मारवाड़। सतसंग स्थान—मौज़ा रैन परगना मेड़ता। [illegible] धुनियाँ। गुरू—प्रेमजी बीकानेरी।

इन के पिता जब यह सात बरस के थे मर गये जिस से यह अपने नाना के घर रैन गाँव में आकर रहे। इन्हों ने महाराज बख़्तसिंहजी अपने देश के राजा को अपने गुरुमुख चेले सुखरामदास लोहार के द्वारा एक असाध रोग छुड़ा कर मंत्र-उपदेश किया।

॥ गुरुदेव ॥

दरिया सतगुरु भेंटिया, जा दिन जन्म सनाथ।
स्रवना सबद सुनाइ के, मस्तक दीन्हा हाथ ॥ १ ॥
दरिया सतगुरु सबद की, लागी चोट सुठौर।
चंचल सों निस्चल भया, मिटि गइ मन की दौड़ ॥ २ ॥
डूबत रहा भवसिंध में, लोभ मोह की धार।
दरिया गुरु तैरू[1] मिला, कर दिया पैले पार ॥ ३ ॥
जन दरिया सतगुरु मिला, कोई पुरबले पुन्न।
जड़ु पलट चेतन किया, आनि मिलाया सुन्न ॥ ४ ॥
दरिया गुरु किरपा करी, सबद लगाया एक।
लागतही चेतन भया, नेतर खुला अनेक ॥ ५ ॥
जैसे सतगुरु तुम करी, मुझ से कछू न होय।
बिष भाँड़े बिष काढ़ करि, दिया अमी रस मोय ॥ ६ ॥
गुरु आये घन गरज करि, अंतर कृपा उपाय।
तपता से सीतल किया, सोता लिया जगाय ॥ ७ ॥
गुरु आये घन गरज करि, सबद किया परकास।
बीज पड़ा था भूमि में, भई फूल फल आस ॥ ८ ॥

---

(१) तैराक।

यह दरिया की बीनती, तुम सेती महराज ।
तुम भृंगी मैं कीट हूँ, मेरी तुम को लाज ॥ ९ ॥
सतगुरु सा दाता नहीं, नहिं नाम सरोखा[1] देव ।
सिष सुमिरन साचा करै, हो जाय अलख अभेव ॥ १० ॥
भवजल बहता जात था, संसय मोह की बाढ़ ।
दरिया मोहिं गुरु कृपा करि, पकड़ बाँह लिया काढ़ ॥ ११ ॥

॥ नाम ॥

दरिया सूरज ऊगिया, चहुँ दिसि भया उजास ।
नाम प्रकासै देह में, [illegible] भरम का नास ॥ १ ॥
दरिया नर तन पाय करि, कीया चाहै काज ।
राव रंग दोनौं तरैं, जो बैठे नाम जहाज ॥ २ ॥
लोह पलट कंचन भया, करि पारस को संग ।
दरिया परसै नाम को, सहजहिं पलटै अंग ॥ ३ ॥
दरिया नाके नाम के, बिरला आवै कोय ।
जो आवै तो परम पद, आवा गवन न होय ॥ ४ ॥
दरिया परछे[2] नाम के, दूजा दिया न जाय ।
तन मन आतम वार करि, राखीजे उर माँय ॥ ५ ॥
दरिया सतगुरु सबद ले, करै नाम संजोग ।
ज्ञान खुलै अरबल[3] बढ़ै, देही रहै निरोग ॥ ६ ॥
जरिया अमल[4] है आसुरी, पिये होय सैतान ।
नाव रसायन जो पीयै, सदा छाक[5] सुलतान ॥ ७ ॥

॥ सुमिरन ॥

नाम भजै गुरु सबद ले, तौ पलटै मन देह ।
दरिया छाना[6] क्यों रहै, भू पर बूठा[7] मेंह ॥ ७ ॥

---

(१) बराबर । (२) बदले । (३) उमर । (४) नशा । (५) मस्त । (६) छप्पर ।
(७) बरसा ।

दरिया नाम है निरंजन, पूरन ब्रह्म अगाध।
कहे सुने सुख ना लहै, सुमिरै पावै स्वाद ॥ २ ॥
दरिया सुमिरै नाम को, दूजो आस निवारि।
एक आस लागा रहै, तो कधी न आवै हारि ॥ ३ ॥
दरिया सुमिरै नाम को, [illegible] को आधार।
काया काँचो काँच सो, कंचन होत न बार ॥ ४ ॥
जो काया कंचन भई, रतनों अड़िया चाम।
दरिया कहै किस काम का, जो मुख नाहीं नाम ॥ ५ ॥

॥ बिरह ॥

दरिया हरि किरपा करो, बिरहा दिया पठाय।
यह बिरहा मेरे साध को, सोता लिया जगाय ॥ १ ॥
बिरह बियापो देह में, किया निरंतर बास।
तालाबेली जीव में, सिसके साँस उसाँस ॥ २ ॥
दरिया बिरही साध का, तन पीला मन सूख।
रैन न आवै नींदड़ी, दिवस न लागे भूख ॥ ३ ॥
बिरहिन पिउ के कारने, ढूँढ़न अनखँड जाय।
निसि बीती पिउ न मिला, दरद रहा लिपटाय ॥ ४ ॥

॥ साध ॥

दरिया लच्छन साध का, क्या गिरही क्या भेष।
निहकपटी निरसंक रहि, बाहर भीतर एक ॥ १ ॥
सत्त सबद सत गुरुमुखी, मत गजंद[1] मुख दंत।
यह तो तोड़ै पौल गढ़, वह तोड़ै करम अनंत ॥ २ ॥
दाँत रहै हस्ती बिना, (तो) पौल न टूटै कोय।
कै कर धारै कामिनी, कै खेलाराँ[2] होय ॥ ३ ॥

---

(१) हाथी। (२) खिलौना।

साध कह्यो भगवंत कह्यो, कहै ग्रन्थ और बेद।
दरिया लहै न गुरु बिना, तत्त नाम का भेद॥ ४॥
मतबादी जानै नहीं, ततबादी की बात।
सूरज ऊगा उल्लुवा, गिनै अँधारी रात॥ ५॥
साधू जल का एक अँग, बरतै सहज सुभाव।
ऊँचो दिसा न संचरै, निवन[1] जहाँ ढलकाव॥ ६॥
मच्छी पंछी साध का, दरिया मारग नाहिं।
अपनी इच्छा से चलैं, हुकम धनी के माहिं॥ ७॥
दरिया संगत साध की, सहजै पलटै अंग।
जैसे संग मजीठ के, कपड़ा होय सुरंग॥ ८॥
जन दरिया अँग साध का, सीतल बचन सरीर।
निर्मल दसा कमोदनी, मिले मिटावै पीर॥ ९॥

॥ सतसंग ॥

दरिया छुरी कसाब[2] की, पारस परसै आय।
लोह पलट कंचन भया, आमिष[3] भखा न जाय॥ १॥
लोह काला भीतर कठिन, पारस परसै सोय।
उर नरमी अति निरमला, बाहर पीला होय॥ २॥
पारस परसा जानिये, जो पलटै अँग अंग।
अंग अंग पलटै नहीं, तौ है झूठा संग॥ ३॥

॥ सूरमा ॥

इष्टी स्वाँगी बहु मिले, हिरसी मिले अनंत।
दरिया ऐसा ना मिला, नाम रता कोइ संत॥ १॥
दरिया सूरा गुरमुखी, सहै सबद का घाव।
लागत ही सुधि बीसरै, भूलै आन सुभाव॥ २॥

---

(१) नीचा। (२) कसाई। (३) माँस।

सबहि कटक[1] सूरा नहीं, कटक माहिं कोइ सूर।
दरिया पड़ै पतंग ज्यों, जब बाजे रन तूर ॥ ३ ॥
पड़ै पतंगा अगिन में, दैह की नाहिं सँभार।
दरिया सिष सतगुरु मिलै, तौ हो जाय निहाल ॥ ४ ॥
दरिया खेत बुहारिया[2], चढ़ा दई को गोद।
कायर काँपै थरहरै, सूरा के मन मोद ॥ ५ ॥
सूर बीर की सभा में, कायर बैठे आय।
सूरातन आवे नहीं, कोठि भाँति समुझाय ॥ ६ ॥
सूर न जानै कायरी, सूरातन से हेत।
पुरजा पुरजा है पड़ै, तहू न छाड़ै खेत ॥ ७ ॥
सूरा के सिर साम[3] है, साधों के सिर राम।
दूजो दिस ताकैं नहीं, पड़ै जो करड़ा काम ॥ ८ ॥
सूर चढ़ै संग्राम को, मन में संक न कोय।
आपा अरपै राम को, होनो होय सो होय ॥ ९ ॥
दरिया सो सूरा नहीं, जिन दैह करी चकचूर।
मन को जीति खड़ा रहै, मैं बलिहारी सूर ॥ १० ॥

॥ भेद ॥

जन दरिया हिरदा बिचे, हुआ ज्ञान परकास।
हौद भरा जहँ प्रेम का, तहँ लेत हिलोरा दास ॥ १ ॥
दरिया चढ़िया गगन को, मेरु उलंघा[4] डंड।
सुख उपजा साईं मिला, भैंटा ब्रह्म अखंड ॥ २ ॥
दरिया मेरु उलंघि करि, पहुँचा त्रिकुटी संध।
दुख भाजा सुख ऊपजा, मिटा भर्म का धुंध ॥ ३ ॥

---

(१) फ़ौज। (२) साफ़ कर डाला—दूसरे पाठ में "जुझारिया" है जिस के अर्थ जुझाने या ललकारने के होते हैं। (३) हथियार का नाम। (४) लाँघ गया।

अनंतहि चंदा ऊगिया, सूरज कोटि प्रकास।
बिन बादल बरषा घनो, छह रितु बारह मास ॥ ४ ॥
दरिया सूरज ऊगिया, सब भ्रम गया बिलाय।
उर में गंगा परगटो, सरवर काहे जाय ॥ ५ ॥
नौबत बाजै गगन में, बिन बादल घन गाज।
महल बिराजैं परम गुरु, दरिया के महराज ॥ ६ ॥
मन मेरू[1] से बावड़ै[2], त्रिकुटी लग ओंकार।
जन दरिया इन के परे, ररंकार निरधार ॥ ७ ॥
ररंकार धुन हौद में, गरक[3] भया कोइ दास।
जन दरिया ब्यापै नहीं, नींद भूख और प्यास ॥ ८ ॥
दरिया त्रिकुटी हद्द लग, कोइ पहुँचै संत सयान।
आगे अनहद ब्रह्म है, निराधर निरबान ॥ ९ ॥
दरिया अनहद अगिन का, अनुभव धूँवा जान।
दूरा सेती देखिये, परसे होय पिछान ॥ १० ॥
अगम दरीचा अगम घर, जहँ कोइ रूप न रेख।
जहँ दरिया दुबिधा नहीं, स्वामी सेवक एक ॥ ११ ॥
पाँच तत्त गुन तीन से, आतम भया उदास।
सरगुन निरगुन से मिला, चौथे पद में बास ॥ १२ ॥
मन बुधि चित पहुँचै नहीं, सबद[4] सकै नहिं जाय।
दरिया धन वे साधवा, जहाँ रहे लौ लाय ॥ १३ ॥

---

(१) पहाड़ अर्थात त्रिकुटी जिस के नीचे तक मन की गम है परंतु ओंकार शब्द उस के परे से आता है। (२) लौट आवै। (३) डूब गया। (४) अनहद शब्द ब्रह्मांड में होता है चौथे लोक या निर्मल चेतन्य देश मे जो उस के परे है सत्य शब्द गाजता है।

॥ पारख ॥

दरिया निरमोलिक रतन, धस्यो स्वान पै जाय।
स्वान सूँघि कानैं[1] भया, वह टूका हो चाय ॥ १ ॥
हीरा लेकर जौहरो, गया गँवारै देस।
देखा जिन कंकर कहा, भीतर परख न लेस ॥ २ ॥
पारख आइ चेतन[2] भया, मन दे लीना मोल।
गाँठ बाँध भीतर धसा, मिट गइ डावाँडोल ॥ ३ ॥

॥ जाग्रत ॥

दरिया सोता सकल जग, जागत नाहीं कोय।
जागे में फिर जागना, जागा कहिये सोय ॥ १ ॥
साध जगावै जीव को, मत[3] कोइ उट्ठे जाग।
जागे फिर सोवै नहीं, जन दरिया बड़ भाग ॥ २ ॥
माया मुख जागे सबै, सो सूता करि जान।
दरिया जागे ब्रह्म दिस, सो जागा परमान ॥ ३ ॥

॥ कपटी ॥

कबहुक भरिया समुँद सा, कबहुक नाहीं छाँट[4]।
जन दरिया इत उत रता, ते कहिये किरकाँट[5] ॥ १ ॥
किरकाँटा किस काम का, पलट करै बहु रंग।
जन दरिया हंसा भला, जद तद एकै रंग ॥ २ ॥
दरिया बगुला ऊजला, उज्जल हो है हँस।
ये सरवर मोती चुगैं, वा के मुख में मंस ॥ ३ ॥
बाहर से उज्जल दसा, भीतर मैला अंग।
ता सेती कौवा भला, तन मन एकहि रंग ॥ ४ ॥
सीखत ज्ञानी ज्ञान गम, करै ब्रह्म की बात।
दरिया बाहर चाँदना, भीतर काली रात ॥ ५ ॥

---

(१) किनारे। (२) पहचाना। (३) कदाचित। (४) छींटा। (५) गिरगिट।

॥ उपदेश ॥

जन दरिया उपदेस दे, जा के भीतर चाय।
नातर गैला[1] जगत से, बकि बकि मरै बलाय ॥ १ ॥
बिरही प्रेमी मोम-दिल, जन दरिया निहकाम।
आसिक दिल दीदार का, जा से कहिये राम ॥ २ ॥
दरिया गैला जगत से, समझ औ मुख से बोल।
नाम रतन की गाँठड़ी, गाहक बिन मत खोल ॥ ३ ॥
दरिया गैला जगत को, क्या कीजै सुलझाय।
सुलझाया सुलझै नहीं, फिर सुलझ सुलझ उलझाय ॥४॥
दरिया सौ अंधा बिचै, एक सुझाको जाय।
वह तो बात देखी कहै, वा के नाहीं दाय[2] ॥ ५ ॥
कंचन कंचन ही सदा, काच काच सो काच।
दरिया झूठ सो झूठ है, साच साच सो साच ॥ ६ ॥
साध पुरुष देखी कहैं, सुनी कहैं नहिं कोय।
कानों सुनो सो झूठ सब, देखो साची होय ॥ ७ ॥

दूलनदासजी

यह परम भक्त जगजीवन साहिब के गुरुमुख शिष्य थे इस लिये इन का जन्म समय उन के जन्म के अनुमान बीस पचीस बरस पीछे अर्थात अट्ठारहवें शतक के मध्य में मान लेना चाहिये। मिश्र-बन्धु बिनोद में इन का ग्रंथ रचना काल सम्बत १८७० लिखा है परंतु सत्तनामियों के अनुसार इस के पहिले ठहरेगा। यह जाति के सोमबंशी क्षत्री थे, मौज़ा समेसी ज़िला लखनऊ में जन्म लिया और मौज़ा धर्मे ज़िला रायबरैली में रह कर सतसंग कराया; सदा गृहस्थ आश्रम ही में रहे।

॥ गुरु महिमा ॥

गुरु ब्रह्मा गुरु बिसनु हैं, गुरु संकर गुरु साध।
दूलन गुरु गोबिन्द भजु, गुरुमत अगम अगाध ॥ १ ॥

---

(१) गँवार। (२) पसंद।

पति सनमुख सो पतिब्रता, रन सनमुख सो सूर।
दूलन सत सनमुख सदा, गुरुमुख गनी[1] सो पूर॥ २॥

दूलन दुइ कर जोरि कै, याचै सतगुरु दानि।
राखहु सुरति हमारि दिढ़, चरन कँवल लपटानि॥ ३॥

श्रीसतगुरु मुख चंद्र तेँ, सबद सुधा झरि लाग।
हृदय सरोवर राखु भरि, दूलन जागे भाग॥ ४॥

दूलन गुरु तेँ बिषै बस, कपट करहिं जे लोग।
निर्फल तिन की सेव है, निर्फल तिन का जोग॥ ५॥

॥ नाम महिमा ॥

गावै सूरति सुन्दरी, बैठी सत अस्थान।
जन दूलन मन मोहनी, नाम सुरंगी तान॥ १॥

दूलन यहि जग जनमि कै, हर दम रटना नाम।
केवल नाम सनेह बिनु, जन्म समूह[2] हराम॥ २॥

स्वास पलक माँ नाम भजु, बृथा स्वास जनि खोउ।
दूलन ऐसो स्वास को, आवन होउ न होउ॥ ३॥

स्वास पलक माँ जातु है, पलकहिं माँ फिरि आउ।
दूलन ऐसो स्वास से, सुमिरि सुमिरि रट लाउ॥ ४॥

रसना रटि जेहि लागिगे, चाखि भयो मस्तान।
दूलन पायो परम पद, निरखि भयो निर्बान॥ ५॥

सुनत चिकार पिपील की, ताहि रटहु मन माहिं।
दुलनदास बिस्वास भजु, साहिब बहिरा नाहिं॥ ६॥

चितवन नीची ऊँच मन, नामहिं जिकिर लगाय।
दूलन सूझै परम पद, अंधकार मिटि जाय॥ ७॥

---

(१) धनी, बेपरवाह। (२) समस्त।

ताति बाउ लागै नहीं, आठौ पहर अनंद ।
दूलन नाम सनेह तेँ, दिन दिन दसा दुचंद ॥ ८ ॥
दूलन केवल नाम धुनि, हृदय [illegible] ठानु ।
लागत लागत लागिहै, जानत जानत जानु ॥ ९ ॥
दूलन केवल नाम लिय, तिन भेँटेउ जगदीसु ।
तन मन छाकेउ दरस रस, थाकेउ पाँच पचीस ॥ १० ॥
सीतल हृदय सुचित्त है, तजि कुतर्क कुबिचार ।
दूलन चरनन परि रहै, नाम कि करत पुकार ॥ ११ ॥
गुरू बचन बिसरै नहीं, कबहुँ न टूटै डोरि ।
पियत रहौ सहजै दुलन, नाम रसायन घोरि ॥ १२ ॥
दुलन नाम पारस परसि, भयो लोह तेँ सोन ।
कुन्दन होइ कि रेसमो, बहुरि न लोहा होन ॥ १३ ॥
दुलन भरोसे नाम के, तन तकिया धरि घोर ।
रहै गरीब अतीम[1] होइ, तिन काँ कहौ फकीर ॥ १४ ॥
अंध कूप संसार तेँ, सूरति आनहु फेरि ।
चरन सरन बैठारि कै, दुलन नाम रहु टेरि ॥ १५ ॥
चारा पोल पिपोल को, जो पहुँचावत रोज ।
दूलन ऐसे नाम की, कीन्ह चाहिये खोज ॥ १६ ॥
यहि कलि काल कुचाल तकि, आयो भागि डराइ ।
दूलन चरनन परि रहे, नाम की रटनि लगाइ ॥ १७ ॥
दुलन नाम रस चाखि सोइ, पुष्ट पुरुष परबीन ।
जिन के नाम हृदय नहीं, भये ते हिजरा होन ॥ १८ ॥
मरने को डर छोड़ि कै, नाम भजौ मन माहिँ ।
दूलद यहि जग जनमि कै, कोऊ अमर है नाहिँ ॥ १९ ॥

---

(१) जिसके मा बाप मर गये हैं ।

नामो लोग सबै बड़े, काको कहिये छोट ।
सब हित दूलनदास जिन, लीन्ह नाम को ओट ॥ २०॥
दूलन [illegible] सीस दै, नाम रटहु मन माँह ।
सदा सर्बदा जनम भरि, जा तेँ खैर सलाह ॥ २१॥
नाम पुकारत राम जो, लागहिं भक्त गुहारि ।
दूलन नाम सनेह को, गहि रहु डोरि सँभारि ॥ २२॥
राम नाम दुइ अच्छरै, रटै निरंतर कोइ ।
दूलन दीपक बरि उठै, मन परतीत जो होइ ॥ २३॥

॥ शब्द महिमा ॥

सूर चंद नहिं रैन दिन, नाहिँ तहँ साँझ बिहान ।
उठत सबद धुनि सुन्य माँ, जन दूलन अस्थान ॥ १ ॥
जगजीवन के चरन मन, जन दूलन आधार ।
निसु दिन बाजै बाँसुरी, सत्य सबद झनकार ॥ २ ॥
चरचा बाद बिबाद को, संगति दीन्हेउ त्यागि ।
दूलन माते अधर धुनि, भक्ति खुमारी[1] लागि ॥ ३ ॥
कोउ सुनै राग रु रागिनी, कोउ सुनै कथा पुरान ।
जन दूलन अब का सुनै, जिन सुनी मुरलिया तान ॥ ४ ॥
सबदै नानक नामदे, सबदै दास कबीर ।
सबदै दूलन जगजिवन, सबदै गुरु अरु पीर ॥ ५ ॥

॥ चितावनी ॥

दूलन यह परिवार सब, नदी नाव संजोग ।
उतरि परे जहँ तहँ चले, सबै बटाऊ लोग ॥ १ ॥
दूलन यहि जग आइ कै, का को रहो दिमाक[2] ।
चंद रोज को जीवना, आखिर होना खाक ॥ २ ॥

---

(१) नशा । (२) अहंकार ।

दूलन काया कबर है, कहँ लगि करौं बखान ।
जीवत मनुआँ मरि रहै, फिरि नहिं कबर समान[1] ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥

दूलन सत मनि छबि लहै, निरखि चरन धरि सीस ।
लागि प्रेम रस मस्त ह्वै, थाके पाँच पचीस ॥ १ ॥
दुलन कृपा तेँ पाइये, भक्ति न हाँसी ख्याल ।
काहू पाई सहज हीं, कोउ ढूँढ़त फिरत बिहाल ॥ २ ॥
दूलन बिरवा प्रेम को, जामेउ जेहि घट माहिँ ।
पाँच पचीसो थकित भे, तेहि तरवर की छाहिँ ॥ ३ ॥
जग्य दान तप तीर्थ ब्रत, धर्म जे दूलनदास ।
भक्ति-आसरित तप सबै, भक्ति न केहु को आस ॥ ४ ॥
दुलन तिरथ तप दान तेँ, और पाप मिटि जाइ ।
भक्त-द्रोह अघ ना मिटै, करै जे कोटि उपाइ ॥ ५ ॥
धृग तन धृग मन धृग जनम, धृग जीवन जग माहिँ ।
दूलन प्रीति लगाय जिन्ह, और निबाहौं नाहिं ॥ ६ ॥
समरथ दूलनदास के, आस तोष[2] तुम राम ।
तुम्हरे चरनन सीस दै, रटौं तुम्हारो नाम ॥ ७ ॥

॥ धीरज ॥

दूलन सतगुरु मत कहै, धीरज बिना न ज्ञान ।
निरफल जोग सँतोष बिन, कहौं सबद परमान ॥ १ ॥
दूलन धीरज खंभ कहँ, जिकिरि बड़ेरा लाइ ।
सूरत डोरी पोढ़ि करि, पाँच पचीस झुलाइ ॥ २ ॥

॥ बिनय ॥

साईं तेरी सरन हौं, अब की मोहिं निवाज ।
दूलन के प्रभु राखिये, यहि बाना की लाज ॥ १ ॥

(१) फिर तन रूपी कबर में न पैठैगा अर्थात आवागमन से छूट जायगा ।
(२) आनंद ।

इत उत की लज्जा तुम्हैं, शरनराय सिर मौर ।
दूलन चरनन लगि रहे, राखि भरोसा तोर ॥ २ ॥
चहिये सो करिहै, सरम साईं तेरे दस्त ।
बाँध्यो चरन सनेह मन, दुलनदास रस मस्त ॥ ३ ॥
तुला रासि तीनिउँ सदा, जा को मन इक ठौर[1] ।
राम पियारे भक्त सोइ, दूलन के सिर मौर ॥ ४ ॥
दूलन एक गरीब के, हरि से हितू न ओर ।
ज्यौं जहाज के काग को, सूझै और न ठौर ॥ ५ ॥
त्रिभुवन करता रामजी, दास तुम्हार कहाइ ।
तुम्हैं छाड़ि दूलन कहौ, केहि काँ याँचन जाइ ॥ ६ ॥
राम नाम दीपक सिखा, दूलन दिल ठहराय ।
करम बिचारे सलभ[2] से, जरहिं उड़ाय उड़ाय ॥ ७ ॥

॥ उपदेश ॥

बंधन सकल छुड़ाइ करि, चित चरनन तें बाँधु ।
दुलनदास बिस्वास करि, साईं काँ औराधु ॥ १ ॥
ज्ञानी जानहि ज्ञान बिधि, मैं बालक अज्ञान ।
दूलन भजु बिस्वास मन, धुरपुर बाजु निसान ॥ २ ॥
दूलन चरनन लागि रहु, नाम को करत पुकार ।
भक्ति सुधारस पेट भरु, का दहुँ लिखा लिलार ॥ ३ ॥
जग रहु जग तें अलग रहु, जोग जुगति को रीति ।
दूलन हिरदे नाम तें, लाइ रहौ दृढ़ प्रीति ॥ ४ ॥

---

(१) जिस का मन एक ठौर अर्थात स्थिर है उस के तराज़ू की तीनों डोरियाँ सदा एक सम और नथी हैं, भाव, तिरगुन का बेग नहीं व्यापता । (२) पतंगा ।

॥ साधु महिमा ॥

दुलन साधु सब एक हैं, बाग फूल सम तूल[1] ।
कोई कुदरती सुबास है, और फूल के फूल ॥ १ ॥
जा दिन संत सताइया, ता छिन उलटि खलक्क[2] ।
छत्र खसै धरनी धसै, तीनिऊँ लोक गरक्क[3] ॥ २ ॥

॥ फुटकर ॥

भाग बड़े यहि जक्त भा, जेहि के मन बैराग ।
विषय भोग परिहरि दुलन, चरन कमल चित लाग ॥ १ ॥
दूलन पीतम जेहि चहैं, कही सुहागिल ताहि ।
आपन आपन भाग है, साझा काहु क नाहिं ॥ २ ॥
सती अगिन की आँच सहि, लोह आँच सहि सूर ।
दूलन सत आँचहि सहै, राम भक्त सो पूर ॥ ३ ॥
दूलन चोला चाम को, आयो पहिरि जहान ।
इहाँ कमाई बसि भयो, सहना औ सुलतान ॥ ४ ॥
दूलन छोटे वै बड़े, मुसलमान का हिन्दु ।
भूखे देवैं भीरियाँ, सेवैं गुरु गोबिन्दु ॥ ५ ॥
काल कर्म की गमि नहीं, नहि पहुँचै भ्रम बान ।
दूलन चरन सरन रहु, छेम कुसल अस्थान ॥ ६ ॥
दूलन यह तन जक्त भा, मन सेवै जगदीस ।
जब देखो तबही पर्यो, चरनन दीन्हे सीस ॥ ७ ॥
कतहुँ प्रगट नैनन निकट, कतहूँ दूरि छिपानि ।
दूलन दीनदयाल ज्यों, मालव मारू पानि[4] ॥ ८ ॥

—o:*:o—

(१) तुल्य=बराबर । (२) ख़लक़=सृष्टि । (३) डूब जाना । (४) संस्कृत में "मालव" मालवा देश को कहते हैं जहाँ पानी की बहुतायत है, और "मारू" माड़वार देश का नाम है जहाँ की भूमि बलुई (मरु) है और पानी का टोटा है ।

बुल्ला साहिब

जीवन-समय—सम्वत १७५० और १८२५ के दर्मियान। जन्म स्थान—ज़िला ग़ाज़ीपुर। सतसंग स्थान—भुरकुड़ा गाँव ज़िला ग़ाज़ीपुर। जाति—कुनबी। गुरू—यारी साहिब।

घरऊ नाम इनका बुलाकीराम था और पहिले गुलाल साहिब की सेवा में हरवाहे का काम करते थे। फिर गुलाल साहिब इनका चमत्कार देख कर इन के चेले हुए।

[देखो जीवन-चरित्र इन की बानी के आदि में]

॥ बेहद ॥

अछै रंग मैं रंगिया, दीन्ह्यो प्रान अकोल[1]।
उनमुनि मुद्रा भस्म धरि, बोलत अमृत बोल ॥ १ ॥
बोलत डोलत हँसि खेलत, आपुहि करत कलोल।
अरज करौं बिनु दामहौं, बुल्लहि लीजै मोल ॥ २ ॥
बिना नीर बिनु मालहौं, बिनु सौंचे रँग होय।
बिनु नैनन तहँ दरसनो, अस अचरज इक सोय ॥ ३ ॥
ना वह टूटै ना वह फूटै, ना कबहौं कुम्हिलाय।
सर्ब कला गुन आगरो[2], मोपै बरनि न जाय ॥ ४ ॥

॥ उपदेश ॥

आठ पहर चौंसठ घरी, जन बुल्ला धरु ध्यान।
नहिं जानो कौनी घरी, आइ मिलैं भगवान ॥ १ ॥
आठ पहर चौंसठ घरी, भरो पियाला प्रेम।
बुल्ला कहै बिचारि कै, इहै हमारो नेम ॥ २ ॥
जग आये जग जागिये, पगिये हरि के नाम।
बुल्ला कहै बिचारि कै, छोड़ि देहु तन धाम ॥ ३ ॥

---

(१) घूस, यहाँ न्योछावर का भाव है। (२) श्रेष्ठ।

केसोदास जी

जीवन-समय इन महात्मा का सम्वत १७५० और १८२५ के दर्मियान पाया जाता है। यह जाति के बनिया और यारी साहिब के चेले थे अर्थात उसी गुरु घराने के थे जिस में पलटू साहिब सरीखे संत प्रगट हुए।

सूरत समानी ब्रह्म में, दुबिधा रह्यो न कोय।
केसो संभलि खेत में, परै सो संभलि होय ॥ १ ॥
सात दीप नौ खंड के, ऊपर अगम अबास।
सबद गुरू केसो भजै, सो जन पावै बास ॥ २ ॥
आस लगैं बासा मिलै, जैसी जा की आस।
इक आसा जग बास है, इक आसा हरि पास ॥ ३ ॥
आसा मनसा सब थको, मन निज मनहिं मिलान।
ज्योँ सरिता समुँदर मिलो, मिटगो आवन जान ॥ ४ ॥
जेहि घर केसो नहिं भजन, जीवन प्रान अधार।
सो घर जम का गेह है, अंत भये ते छार ॥ ५ ॥
जगजीवन घट घट बसै, करम करावन सोय।
बिन सतगुरु केसो कहै, केहि बिधि दरसन होय ॥ ६ ॥
सतगुरु मिल्यो तो का भयो, घट नहिं प्रेम प्रतीत।
अंतर कोर न भीँजई, ज्यौँ पत्थल जल भीत ॥ ७ ॥
केसो दुबिधा डारि दे, निर्भय आतम सेव।
प्रान पुरुष घट घट बसै, सब महँ सबद अभेव ॥ ८ ॥
पंच तत्त गुन तीन के, पिंजर गढ़े अनंत।
मन पंछी सो एक है, पारब्रह्म को तंत ॥ ९ ॥
एसो संत कोइ जानिहै, सत्त सबद सुनि लेह।
केसो हरि सोँ मिलि रहो, न्योछावर करि देह ॥ १० ॥
भजन भलो भागवान को, और भजन सब धंध।
तन सरवर मन हंस है, केसो पूरन चंद ॥ ११ ॥

जब सूँ गुरु किरपा करी, दरसन दीन्हे मोहिं।
रोम रोम में वे रमे, चरनदास नहिं कोय ॥ ९ ॥
सतगुरु मेरा सूरमा, करै सबद की चोट।
मारै गोला प्रेम का, ढहै भरम का कोट ॥ १० ॥
मुख सेती बोलन थका, सुनै थका जो कान।
पावन सूँ फिरबा थका, सतगुर मारा बान ॥ ११ ॥
मैं मिरगा[1] गुरु पारधी[2], सबद लगायो बान।
चरनदास घायल गिरे, तन मन बींधे प्रान ॥ १२ ॥
सतगुर सबदी तेग[3] है, लागत दो करि देहि।
पीठ फेरि कायर भजै, सूरा सनमुख लेहि ॥ १३ ॥
सतगुरु सबदी लागिया, नावक[4] का सा तीर।
कसकत है निकसत नहीं, होत प्रेम की पीर ॥ १४ ॥
सतगुरु सबदी बान है, अँग अँग डारे तोड़।
प्रेम खेत घायल गिरे, टाँका लगै न जोड़ ॥ १५ ॥
सतगुरु के मारे मुए, बहुरि न उपजैं आय।
चौरासी बंधन छुटैं, हरिपद पहुचैं जाय ॥ १६ ॥
गुरु के आगे जाय करि, बोलै साचे बोल।
कछू कपट राखै नहीं, अरज करै मन खोल ॥ १७ ॥
यह आपा तुम कूँ दिया, जित चाहो तित राखि।
चरनदास द्वारे परो, भावै झिड़को लाखि ॥ १८ ॥
हरि सेवा कृत सो बरस, गुरु सेवा पल चार।
तो भी नहीं बराबरी, बेदन कियो बिचार ॥ १९ ॥
हरि रूठें कुछ डर नहीं, तू भी दे छुटकाय।
गुरु को राखो सीस पर, सब बिधि करैं सहाय ॥ २० ॥

---

(१) हिरन। (२) शिकारी। (३) तलवार। (४) गाँसी।

गुरू कहैं सो कीजिये, करैं सो कीजै नाहिं।
चरनदास की सीख सुन, यही राख मन माहिं॥२१॥

॥ सुमिरन॥

सकल सिरोमनि नाम है, सब धरमन के माहिं।
अनन्य भक्त वह जानिये, सुमिरन भूलै नाहिं॥ १ ॥

मन ही मन में जाप करु, दरपन उज्जल होय।
दरसन होवै राम का, तिमिर जाय सब खोय॥ २ ॥

करते अनहद ध्यान के, ब्रह्म रूप ह्वै जाय।
चरनदास यों कहत है, बाधा सब मिटि जाय॥ ३ ॥

गगन मध्य जो पदुम है, बाजत अनहद तूर।
दल हजार को कँवल है, पहुँचै गुरुमत सूर॥ ४ ॥

॥ अनहद ॥

जोग जुक्ति करि खोजि ले, सुरत निरत करि चीन्ह।
दस प्रकार अनहद बजै, होय जहाँ लयलीन॥

॥ लव॥

जग माहीं न्यारे रहौ, लगे रहौ हरि ध्यान।
पृथवी पर देही रहै, परमेसुर में प्रान॥

॥ बिरह और प्रेम॥

प्रेम बराबर जोग ना, प्रेम बराबर ज्ञान।
प्रेम भक्ति बिन साधिबो, सब ही थोथा ध्यान॥ १ ॥

हिरदै माहीं प्रेम जो, नैनौं झलकै आय।
सोई छका हरि रस पगा, वा पग परसो धाय॥ २ ॥

गद गद बानी कंठ में, आँसू टपकै नैन।
वह तो बिरहिन राम की, तलफत है दिन रैन॥ ३ ॥

हाय हाय हरि कब मिलैं, छाती फाटी जाय।
ऐसा दिन कब होयगा, दरसन करौं अघाय॥ ४ ॥

पिव बिना तो जीवना, जग में भारी जान ।
पिया मिलैं तो जीवना, नहीं तो छूटै प्रान ॥ ५ ॥
मुख पियरो सूखे अधर[1], आँखैं खरी उदास ।
आह जो निकसै दुख भरी, गहिरे लेत उसास[2] ॥ ६ ॥
वह बिरहिन बौरी भई, जानत ना कोइ भेद ।
अगिन बरै हियरा जरै, भये कलेजे छेद ॥ ७ ॥
वा तन को बिरहा लगो, ज्यौं घुन लागो दार[3] ।
दिन दिन पोरी होत है, पिया न बूझै सार ॥ ८ ॥
वै नहिं बूझैं सार हो, बिरहिन कौन हवाल ।
जब सुधि आवै लाल की, चुभत कलेजे भाल[4] ॥ ९ ॥
पीव चहौ कै मत चहौ, वह तौ पी की दास ।
पिय के रँग राती रहै, जग सूँ होय उदास ॥ १० ॥
पी पी करते दिन गया, रैनि गई पिय ध्यान ।
बिरहिन के सहजै सधै, भक्ति जोग अरु ज्ञान ॥ ११ ॥
जाप करै तो पीव का, ध्यान करै तो पीव ।
पिव बिरहिन का जीव है, जिव बिरहिन का पीव ॥ १२ ॥

॥ बिनय ॥

सतगुरु से माँगूँ यही, मोहिं गरीबी देहु ।
दूर बड़प्पन कीजिये, नान्हा हौं करि लेहु ॥ १ ॥
आदि पुरुष किरपा करौ, सब औगुन छुटि जाहिं ।
साध होन लच्छन मिलैं, चरन कमल की छाँहिं ॥ २ ॥
तुम्हरी सक्ति अपार है, लीला को नहिं अंत ।
चरनदास यौं कहत है, ऐसे तुम भगवंत ॥ ३ ॥

---

(१) होंठ । (२) साँस । (३) दारु = लकड़ी । (४) गाँसी ।

तुम्हरो कहा अस्तुति करूँ, मो पै कही न जाय।
इतनो सक्ति न जीभ को, महिमा कहै बनाय ॥ ४ ॥
किरपा करो अनाथ पर, तुम हो दीनानाथ।
हाथ जोड़ माँगूँ यही, मम सिर तुम्हरे हाथ ॥ ५ ॥
हिय हुलसौ आनँद भयो, रोम रोम भयो चैन।
भये पबित्तर कान ये, सुनि सुनि तुम्हरे बैन ॥ ६ ॥
गुरु ब्रह्मा गुरु बिस्नु, गुरू देवन के देवा।
सर्ब सिद्धि फल देव, गुरू तुम मुक्ति करेवा ॥ ७ ॥
गुरु केवट तुम होय, करौ भवसागर पारो।
जीव ब्रह्म करि देत, हरौ तुम ब्याधा सारो ॥ ८ ॥
आदि पुरुष परमात्मा, तुम्हैं नवाऊँ माथ।
चरनन पास निवास दे, कीजै मोहिं सनाथ ॥ ९ ॥
तुम्हरी भक्ति न छोड़हूँ, तन मन सिर क्यों न जाव।
तुम साहिब मैं दास हूँ, भलो बनो है दाव ॥ १० ॥

॥ सार गहनी ॥

दूध मध्य ज्यों घीव है, मिहँदी माहीं रंग।
जतन बिना निकसै नहीं, चरनदास सो ढंग ॥ १ ॥
जो जानै या भेद कूँ, और करै परवेस।
सो अबिनासी होत है, छूटै सकल कलेस ॥ २ ॥
जग माहीं ऐसे रहौ, ज्यों जिभ्या मुख माहिं।
घीव घना भच्छन करै, तौ भी चिकनी नाहिं ॥ ३ ॥
ऐसा हो जो साध हो, लिये रहै बैराग।
चरन कमल में चित धरै, जग में रहै न पाग ॥ ४ ॥

॥ पतिब्रता ॥

पतिबरता वहि जानिये, आज्ञा करै न भंग।

अज्ञाकारी पीव की, रहै पिया के संग।
तन मन सूँ सेवा करै, और न दूजो रंग ॥ २ ॥
रंग होय तौ पीव को, आन पुरुष बिषरूप।
छाँह बुरो पर घरन की, अपनो भलो जु धूप ॥ ३ ॥
अपने घर का दुख भला, पर घर का सुख छार[1]।
ऐसे जानै कुल बधू, सो सतवंतो[2] नार ॥ ४ ॥
पति की ओर निहारिये, औरन सूँ क्या काम।
सबै देवता छोड़ि कै, जपिये हरि का नाम ॥ ५ ॥
यह सिर नवै तो राम कूँ, नाहीं गिरियो टूट।
आन देव नहिं परसिये, यह तन जावो छूट ॥ ६ ॥
जब तू जानै पीव हीं, वह अपनो करि लेहि।
परम धाम में राखि करि, बाँह पकरि सुख देहि ॥ ७ ॥
सतबादी सत सूँ रहो, सत हीं मुख सूँ बोल।
एक ओर हरि नाम रख, एक ओर जग तोल ॥ ८ ॥

॥ उपदेश ॥

जग का कहा न मानिये, सतगुरु से ले बुद्धि।
ता कूँ हिये में राखिये, करो सिताबी सुद्धि ॥ १ ॥
अरसठ तीरथ तोहि बिषे, बाहर क्यों भटकाय।
चरनदास यों कहत है, उलटा हू घट आय ॥ २ ॥
भरमत भरमत आइया, पाई मानुष देह।
ऐसो औसर फिर कहाँ, नाम सिताबी[3] लेह ॥ ३ ॥
करै तपस्या नाम बिन, जोग जज्ञ अरु दान।
चरनदास यों कहत है, सब ही थोथे जान ॥ ४ ॥

---

(१) धूल, राख। (२) पतिब्रता। (३) जल्द।

जिन को मन निश्चल सदा, रहौ जहाँ चित होय ।
घर बाहर दोउ एक सा, डारो दुबिधा खोय ॥ ५ ॥
सतगुरु सरनै आय करि, कहा न मानै एक ।
ते नर बहु दुख पाइहैं, तिन कूँ सुख नहिं नेक ॥ ६ ॥
आपै भजन करैं नहीं, औरै मनै करैं ।
चरनदास वै दुष्ट नर, भ्रम भ्रम नरक परैं ॥ ७ ॥
औरन कूँ उपदेस करि, भजन करैं निष्काम ।
चरनदास वै साध जन, पहुँचैं हरि के धाम ॥ ८ ॥
भक्ति पदारथ उदय सूँ, होय सभी कल्यान ।
पढ़ै सुनै सेवन करै, पावै पद निर्बान ॥ ९ ॥
सत सूँ रखु निरबैरता, गहो दीनता ध्यान ।
अंत मुक्ति पद पाइहौ, जग में होय न हानि ॥ १० ॥

॥ बैरागी की रहनी ॥

जग माहीं ऐसे रहौ, ज्यों अम्बुज[1] सर[2] माहिं ।
रहै नीर के आसरे, पै जल छूवत नाहिं ॥ १ ॥
अब के चूके चूक है, फिर पछतावा होय ।
जो तुम जक्त न छोड़िहौ, जन्म जायगो खोय ॥ २ ॥

॥ साच ॥

मिटते सूँ मत प्रीति करि, रहते सूँ करि नेह ।
झूठे कूँ तजि दीजिये, साचे में करि गेह[3] ॥

॥ दया ॥

दुखो न काहू कूँ करै, दुख सुख निकट न जाय ।
सम दृष्टी धीरज सदा, गुन सात्विक कूँ पाय ॥ १ ॥
दया नम्रता दीनता, छिमा सील संतोष ।
इन कूँ लै सुमिरन करै, निस्चै पावै मोख[4] ॥ २ ॥

---

(१) कँवल । (२) तालाब । (३) घर । (४) मुक्ति ।

॥ काम ॥

तन मन जारै काम ही, चित करि डाँवाँडोल।
धरम सरम सब खोय के, रहै आप हिये खोल ॥ १ ॥
नर नारी सब चेतियो, दीन्हो प्रगट दिखाय।
पर तिरिया पर पुरुस दोउ, भोग नरक को जाय ॥ २ ॥

॥ क्रोध ॥

क्रोध महा चंडाल है, जानत है सब कोय।
जा के अँग बरनन करूँ, सुनियो सुरत समोय ॥ १ ॥
जेहि घट आवै धूम सूँ, करै बहुत ही ख्वार।
पत खोवै बुधि कूँ हनै, कहा पुरुस कहा नार ॥ २ ॥

॥ लोभ ॥

लोभ नीच बर्नन करूँ, महा पाप की खानि।
मंत्री जा का झूठ है, बहुत अधर्मी जानि ॥ १ ॥
तृस्ना जा की जोय[1] है, सो अंधा करि देय।
घटी बढ़ी सूझै नहीं, नहीं काल का भेय ॥ २ ॥

॥ मोह ॥

मोह बड़ा दुख रूप है, ता कूँ मारि निकास।
प्रीति जगत की छोड़ि दै, तब होवै निर्बास ॥ १ ॥
मोह बली सब सूँ अधिक, महिमा कही न जाय।
जा कूँ बाँध्यो जग सबै, छूटै ना बौराय ॥ २ ॥

॥ मान ॥

अभिमानी चढ़ करि गिरे, गये बासना माहिँ।
चौरासी भरमत भये, कबहीं निकसैं नाहिँ ॥ १ ॥
अभिमानी मौजे गये, लूटि लिये धन बाम[2]।
निरअभिमानी ह्वै चले, पहुँचे हरि के धाम ॥ २ ॥

---

(१) स्त्री। (२) स्त्री अर्थात माया।

चरनदास यों कहत है, सुनियो संत सुजान।
मुक्ति मूल आधीनता, नरक मूल अभिमान ॥ ३ ॥
मन में लाइ बिचार कूँ, दीजै गर्ब निकार।
नान्हापन तब आइहै, छूटै सकल बिकार ॥ ४ ॥
पाँचो उतरैं भूत जब, होइहो ब्रह्म स्वरूप।
आनँद पद को पाइहो, जित है मुक्ति सरूप ॥ ५ ॥

॥ निद्रा ॥

सोवन में नहिं खोइये, जन्म पदारथ पाय।
चरन दास है जागिये, आलस सकल गँवाय ॥ १ ॥
पहिले पहरे सब जगैं, दूजे भोगो मान।
तीजे पहरे चोर हो, चौथे जोगी जान ॥ २ ॥
जागै ना पिछले पहर, करै न गुरुमत जाप।
मुँह फारे सोवत रहै, ता कूँ लागै पाप ॥ ३ ॥
मरजादा की यह कहो, क्या बिरक्त परमान।
आठ पहर साठौं घरो, जागै हरि के ध्यान ॥ ४ ॥
जो कोइ बिरहो नाम के, तिन कूँ कैसो नींद।
सस्तर लागा नेह का, गया हिये को बींध ॥ ५ ॥
सोये हैं संसार सूँ, जागे हरि की ओर।
तिन कूँ इकरसहो सदा, नहीं साँझ नहिं भोर ॥ ६ ॥
उन कूँ नींद न आवई, राम मिलन की चीत।
सोवैं ना सुख सेज पै, तजि के हरि सा मीत ॥ ७ ॥

॥ आशा ॥

ज्यों किरपिन[1] बहू दाम हों, गाड़ि जिमों के नीच।
सदा वाहि तकतै रहै, सुरति रहै ता बीच ॥ १ ॥

---

(१) कंजूस।

तन छूटे हो सरप[1] हो, जा बैठे वा ठौर।
जहाँ आस तहँ बास है, कहूँ न भरमै और ॥ २ ॥

॥ अहार ॥

जो पावै सोई चरै, करै नहीं पहिचान।
पीठ लदै हरि ना जपै, ता कूँ खर ही जान ॥ १ ॥
बहुता किये अहार ही, मैलो रहो जो बुद्धि।
हरि के निर्मल नाम को, कैसे आवै सुद्धि ॥ २ ॥
सूच्छम भोजन खाइये, रहिये ना परि सोय।
ऐसो मानुख देह कूँ, भक्ति बिना मत खोय ॥ ३ ॥

बुल्लेशाह

जीवन समय—१७६० के लगभग से १८१० तक। जन्म स्थान—रूम। सतसंग स्थान—मौ० क़ुसूर, ज़ि० लाहौर। जाति और आश्रम—सैयद, भेष। गुरू—शाह इनायत।

यह एक नामी सूफ़ी और भक्त पंजाब में गुरू नानक के अनुमान डेढ़ सौ बरस पीछे प्रगट हुए। इन के जन्म का स्थान रूम था पर दस बरस की ही अवस्था में पंजाब आ गये थे। अनुमान पचास बरस की उमर में देहान्त इन का क़ुसूर के गाँव में जहाँ इनकी गद्दी और समाधि मौजूद है सन ११७१ हिजरी = सम्बत १८१० विक्रमी में हुआ। इन्होंने अपना ब्याह नहीं किया और सदा साधु के बाने में रहे। क़ुरान और शरअ का खुल्लम खुल्ला खंडन करने के कारन मुसलमान मौलवियों और मुल्लाओं के साथ इन का भारी झगड़ा रहा।

॥ सार गहनी ॥

बुल्ला होर[2] ने गलड़ियाँ[3], इक अल्ला अल्ला दी गल्ल[4]।
कुज रौला पाया आलमा, कुज कागजाँ पाया झल्ल[5] ॥ १ ॥

---

(१) साँप। (२) और। (३) बकवाद। (४) बात। (५) कुछ तो विद्वानों ने रौला मचाया है और कुछ किताबों ने झमेला डाल दिया है।

बुल्ला चल्ल सुनियार दे, जित्थे गहने घड़िये लाख।
सूरत आपो आपनी, तूँ इको रूप ये आख ॥ २ ॥[१]

बुल्ला साडा उत्थे वासा, जित्थे बहुते अन्नाँ[२] ।
ना कोइ साडी कदर पछाने, ना को सानूँ मन्नाँ ॥ ३ ॥

॥ बिरह ॥

बुल्ला हिजररा[३] बिच अलाह दे, मेरा नित है खास अराम[४] ।
नित नित मराँ ते नित जियाँ, मेरा नित नित कूच मुकाम ॥

॥ प्रेम ॥

बुल्ला आसिक हो यों रब्ब दा, मुलामत[५] होई लाख ।
लोग काफर काफर आखदे[६], तूँ आहो आहो[७] आख ॥

॥ तीर्थब्रत मूर्त्ति पूजा ॥

बुल्ला धर्मसाला बिच धाड़वी[८] रहंदे, ठाकुरद्वारे ठग्ग ।
मसीताँ विच कोस्ती[९] रहंदे, आसिक रहन अलग्ग ॥ १ ॥

बुल्ला धर्मसाला विच साला[१०] नहिं, जित्थे मोहनभोग जिवाय[११] ।
विच्च मसीताँ धक्के मिलदे, मुल्लाँ थोड़े पाय ॥ २ ॥

ना खुदा मसीते लभदा, ना खुदा खाना काबे ।
ना खुदा कुरान कितेबाँ, ना खुदा नमाजे ॥ ३ ॥

ना खुदा मैं तीरथ डिट्ठा, एवैं पैंडे भागे[१२] ।
बुल्ला शौह[१३] जद मुरशिद मिल गया, टूटे सब्ब तगादे[१४] ॥ ४ ॥

बुल्ला मक्के गयाँ गल्ल मुक्दी[१५] नहीं, जिचर दिलों न आप मुकाय[१६] ।
गंगा गयाँ पाप नहिं छुटदे, भावें सौ सौ गोते लाय ॥ ५ ॥

---

(१) सुनार के यहाँ चल जहाँ लाखों गहने गढ़े जाते हैं जो हर एक जुदा जुदा सूरत का होता है पर तू उन्हें एक ही मूल वस्तु (अर्थात सोना) कह। (२) अंधे। (३) बियोग। (४) सुख। (५) निन्दा। (६) कहें। (७) हाँ हाँ। (८) डाकू। (९) बदमाश। (१०) स्त्री का भाई अर्थात ससुराल। (११) खिलाया जाय। (१२) व्यर्थ रास्ता काटा। (१३) मालिक। (१४) कर्मों का तक़ाज़ा (१५) बात

गया गयाँ गल्ल मुकदी नहीं, भावें कितने पिंड भराय ।
बुल्ले शाह गल्ल ताँईं मुकदी, जब "मैं" नूँ खड़या लुटाय ॥ ६ ॥[1]

॥ उपदेश ॥

बुल्ला गैन ग़रूरत साड़ सुट, हौं मैं खूह पाय[2] ।
तन मन दी सुरत गँवाय दे, घर आप मिलेगा आय[3] ॥ १ ॥

बुल्ला हच्छे दिन ताँ पिच्छे गये, जब हरि किया न हेत ।
अब पछुतावा क्या करे, जब चिड़िया चुग लिया खेत ॥ २ ॥

बुल्ला दौलतमंदाँ ने बूहे[4], उत्ते चोबदार बहाये[5] ।
पकड़ दरवाजा रब सच्चेदा, जित्थे दुख दिल दा मिट जाये ॥ ३ ॥

बुल्ले नूँ लोक मत्तो[6] दें दे, तूँ जा बहु[7] विच्च मसीतो ।
विच्च मसीताँ को कुज होंदा, जेदिलों नमाज न लीती ॥ ४ ॥
बाहरों पाक कीते की होंदा, जो अंदरों न गई पलीती[8] ।
बिन मुरशिद कामिल बुल्ला तेरी, ऐवें[9] गई इबादत कीती ॥ ५ ॥

॥ मिश्रित ॥

भट्ठ[10] नमाज़ाँ ते[11] चिक्कड़[12] रोजे, मूँह कलमे ते[13] फिर गइ स्याही
बुल्लाशाह शौह[14] अंदरों मिल्या, भुल्ली फिरे लुकाई ॥ १ ॥
बुल्ला रंगमहलीं जा चढ़या, लोग पुच्छन आये खैर[15] ।
असाँ एह कुज दुनिया तो वहिया[16], मूँह काला नीले पैर ॥ २ ॥
बुल्ला मन अंजोला मुंज दा, किते गोसे बहि के कुट्ट[17] ।
एह खजाना तै नूँ अर्स[18] दा, तूँ समल[19] समल के लुट्ट ॥ ३ ॥

---

(१) बात जभी ख़तम होगी जब खड़े खड़े हौं मै को लुटा दो । (२) अंहकार को जला डाल और हँगता को कुए में डाल दो । (३) मालिक घर में आप आकर मिलेगा । (४) दरवाज़ा । (५) बैठाये । (६) समझौती । (७) बैठ । (८) गंदगी, मैल । (९) व्यर्थ । (१०) भाड़ में पड़े । (११) और । (१२) कीचड़ में मिले । (१३) पर । (१४) मालिक । (१५) कुशल । (१६) कमाया । (१७) मन मूँज के पूले समान है उसे कहीं एकान्त में बैठ कर कूट । (१८) नवाँ आसमान । (१९) सम्हल कर ।

बुल्ला वारे जाये उन्हाँ तोँ[1], जिहड़े गल्लो देन परचाय[2] ।
सुई सलाई दान करन, [illegible][3] लेन छपाय ॥ ४ ॥
बुल्ला वारे जाये उन्हाँ तोँ, जिहड़े मारन गप्प सड़प्प ।
कौड़ी लभे देनचा, बगुचा [illegible][4] ॥ ५ ॥
बुल्ला मुल्ला ते मसालची, दोहाँदा इक्को चित्त[5] ।
लोकाँ करदे चानना, आप हनेरे[6] विच्च ॥ ६ ॥

सहजोबाई

यह और दयाबाई सम्बत १८०० में वर्त्तमान थीं और महात्मा चरनदास जी की चेली और उन की सजाती अर्थात दूसर बनियाइन गृहस्थ आश्रम में थीं। दोनों मेवात (राजपूताना) की निवासी और आपस में संसारी और परमार्थी बहिन थीं।

॥ गुरुदेव ॥

हरि किरपा जो होय तो, नाहीं होय तो नाहिं ।
पै गुरु किरपा दया बिनु, सकल बुद्धि बहि जाहिं ॥ १ ॥
गुरु मग दृढ़ पग राखिये, डिगमिग डिगमिग छाँड ।
सहजो टेक टरै नहीं, सूर सती ज्यों माँड ॥ २ ॥
गुरु बिन मारग ना चलै, गुरु बिन लहै न ज्ञान ।
गुरु बिन सहजो धुंध है, गुरु बिन पूरी हान ॥ ३ ॥
सतगुरु बिन भटकत फिरै, परसत पाथर नीर ।
सहजो कैसे मिटत है, जम जालिम की पीर ॥ ४ ॥
सिष का माना सतगुरू, गुरु झिड़कै लख बार ।
सहजो द्वार न छोड़िये, यही धारना धार ॥ ५ ॥

---

(१) ऐसों की बलहारी जाऊ—यह व्यंग से कहा है। (२) जो बातों से परचाय लें। (३) निहाई अर्थात बड़ी चीज़। (४) अगर कौड़ी पावें तो देवें और गठरी हज़म कर जायँ। (५) दोनों का एक ही मत है। (६) अँधेरे।

गुरु दरसन कर सहजिया, गुरु का कीजै ध्यान।
गुरु की सेवा कीजिये, तजिये कुल अभिमान॥ ६ ॥
दीपक ले गुरु ज्ञान को, जगत अँधेरे माहिँ।
काम क्रोध मद मोह में, सहजो उरझै नाहिँ॥ ७ ॥
सहजो सतगुरु के मिले, भये और सूँ और।
काग पलट गति हंस है, पाई भूलो ठौर॥ ८ ॥
चिँउटी जहाँ न चढ़ि सकै, सरसोँ ना ठहराय।
सहजो कूँ वा देस में, सतगुरु दई बसाय॥ ९ ॥
सहजो गुरु रँगरेज सा, सबहीँ कूँ रँग देत।
जैसा तैसा बसन है, जो कोइ आवै सेत॥ १०॥

॥ झूठे गुरु ॥

सहजो गुरु बहुतक फिरैँ, ज्ञान ध्यान सुधि नाहिँ।
तार सकैँ नहिँ एक कूँ, गहैँ बहुत की बाँह॥

॥ नाम ॥

पारस नाम अमोल है, धनवन्ते घर होय।
परख नहीँ कंगाल कूँ, सहजो डारै खोय॥ १ ॥
सहजो जा घट नाम है, सो घट मंगल रूप।
नाम बिना धिरकार है, सुंदर धनवँत भूप॥ २ ॥
सहजो भवसागर बहै, तिमिर बरस घन घोर।
ता में नाम जहाज है, पार उतारै तोर॥ ३ ॥
मैँह सहै सहजो कहै, सहै सोत औ घाम।
पर्बत बैठो तप करै, तौभी अधिको नाम॥ ४ ॥
जागत में सुमिरन करै, सोवत में लौ लाय।
सहजो इकसर हीँ रहै, तार टूटि नहिँ जाय॥ ५ ॥

सील छिमा संतोष गहि, पाँचो इन्द्री जीत।
राम नाम ले सहजिया, मुक्ति होन की रीत॥ ६॥

॥ सुमिरन ॥

एक घड़ी का मोल ना, दिन का कहा बखान।
सहजो ताहि न खोइये, बिना भजन भगवान॥ १॥
सहजो सुमिरन कीजिये, हिरदे माहिँ दुराय[1]।
होठ होठ सूँ ना हिलै, सकै नहीं कोइ पाय॥ २॥
सहजो सुमिरन सब करैँ, सुमिरन माहिँ बिबेक।
सुमिरन कोई जानिहै, कोटीँ मद्धे एक॥ ३॥
बैठे लेटे चालते, खान पान ब्यौहार।
जहाँ तहाँ सुमिरन करै, सहजो हिये निहार॥ ४॥

॥ चितावनी ॥

सहजो भज हरि नाम कूँ, तजो जगत सूँ नेह।
अपना तो कोइ है नहीं, अपनी सगी न देह॥ १॥
यही कही गुरुदेवजू, यही पुकारैं संत।
सहजो तज या जगत कूँ, तोहि तजैगी अंत॥ २॥
जैसे सँड़सी लोह की, छिन पानी छिन आग।
ऐसे दुख सुख जगत के, सहजो तू मत पाग॥ ३॥
अचरज जीवन जगत मेँ, मरिबो साँचो जान।
सहजो अवसर जात है, हरि सूँ ना पहिचान॥ ४॥
जब लग चावल धान मेँ, तब लग उपजै आय।
जग छिलके कूँ तजि निकस, मुक्ति रूप ह्वै जाय॥ ५॥
दरद बटाय सकैँ नहीं, मुए न चालैँ साथ।
सहजो क्योंकर आपने, सब नाते बरबाद॥ ६॥

---

(१) छिपाकर, गुप्त।

सहजो जीवत सब सगे, मुए निकट नहिं जायँ ।
रोवैं स्वारथ आपने, सुपने देख डरायँ ॥ ७ ॥
सहजो धन माँगे कुटुँब, गाड़ा धरा बताय ।
जो कछु है सो दे हमैं, फिर पाछे मरिजाय ॥ ८ ॥
मुख देखैं ढाँपैं भजैं, तड़ दे तोड़ैं नेह ।
सहजो पति सुत निज हितू, जारि करैंगे खेह ॥ ९ ॥
काढ़ काढ़ बेगी कहैं, भीतर बाहर लोय ।
जीव छुटे सहजो कहै, तन का सगा न कोय ॥ १० ॥
सहजो फिर पछितायगी, स्वास निकसि जब जाय ।
जब लग रहै सरीर मैं, राम सुमिर गुन गाय ॥ ११ ॥
सहजो नौबत स्वास की, बाजत है दिन रैन ।
मूरख सोवत है महा, चेतन कूँ नहिं चैन ॥ १२ ॥
यह रस्ता बहता रहै, थमै नहीं छिन एक ।
बहु आवैं बहु जातु हैं, सहजो आँखन देख ॥ १३ ॥
जग देखत तुम जावगे, तुम देखत जग जाय ।
सहजो योंही रीति है, मत कर सोच उपाय ॥ १४ ॥
देह निकट तेरे पड़ी, जीव अमर है नित्त ।
दुइ में मूवा कौन सा, का सूँ तेरा हित्त ॥ १५ ॥
कलप रोय पछिताय थक, नेह तजौगे कूर ।
पहिले ही सूँ जो तजै, सहजो सो जन सूर ॥ १६ ॥
आगे मुए सो जा चुके, तू भी रहै न कोय ।
सहजो पर कूँ क्या झुरै, आपन ही कूँ रोय ॥ १७ ॥

॥ प्रेम ॥

प्रेम दिवाने जो भये, मन भयो चकनाचूर ।
छके रहैं घूमत रहैं, सहजो देखि हजूर ॥ १ ॥

प्रेम दिवाने जो भये, कहैं बहकते बैन ।
सहजो मुख हाँसी छुटै, कबहूँ टपकै नैन ॥ २ ॥
प्रेम दिवाने जो भये, जाति बरन गइ छूट ।
सहजो जग बौरा कहै, लोग गये सब फूट[1] ॥ ३ ॥
प्रेम दिवाने जो भये, नेम धरम गयो खोय ।
सहजो नर नारी हँसैं, वा मन आनँद होय ॥ ४ ॥
प्रेम दिवाने जो भये, सहजो डिगमिग देह ।
पाँव पड़ै कितकै किती, हरि सम्हाल तब लेह ॥ ५ ॥
कबहूँ इकधक हो रहैं, उठैं प्रेम हित गाय ।
सहजो आँख मुँदी रहै, कबहूँ सुधि हो जाय ॥ ६ ॥
मन में तो आनँद रहै, तन बौरा सब अंग ।
ना काहू के संग हैं, सहजो ना कोइ संग ॥ ७ ॥

॥ साध ॥

सहजो साधन के मिले, मन भयो हरि के रूप ।
चाह गई थिरता भई, रंक लख्यौ सोइ भूप ॥ १ ॥
साध मिले दुख सब गये, मंगल भये सरीर ।
बचन सुनत ही मिटि गई, जनम मरन की पीर ॥ २ ॥
जो आवै सतसंग में, जाति बरन कुल खोय ।
सहजो मैल कुचैल जल, मिलै सु गंगा होय ॥ ३ ॥
सहजो संगत साध की, काग हंस हो जाय ।
तजि के भच्छ अभच्छ कूँ, मोती चुगि चुगि खाय ॥ ४ ॥
सहजो संगत साध की, छूटै सकल बियाध ।
दुर्मति पाप रहै नहीं, लागै रंग अगाध ॥ ५ ॥

---

(१) बिरोध से अलग हो जाना ।

सहजो दरसन साध का, देखूँ वारूँ प्रान।
जिन को क्रिपा पाइये, निर्भय पद निर्बान ॥ ६ ॥

॥ काम ॥

काम क्रोध लोभ मोह मद, तजि भज हरि को नाम।
निस्चै सहजो मुक्ति हो, लहै अमरपुर धाम ॥ १ ॥
कामी मति भिष्टल[1] सदा, चलै चाल बिपरीत।
सील नहीं सहजो कहै, नैनन माहिँ अनीत ॥ २ ॥

॥ क्रोध ॥

सहजो क्रोधी अति बुरो, उलटी समझै बात।
सबही सूँ ऐंठो रहै, करै बचन की घात ॥ १ ॥
कूकर ज्योँ भूसत फिरै, तामस मिलवाँ बोल।
घर बाहर दुख रूप है, बुधि रहै डाँवाडोल ॥ २ ॥

॥ लोभ ॥

नीच लोभ जा घट बसै, झूठ कपट सूँ काम।
बौरायो चहुँ दिसि फिरै, सहजो कारन दाम ॥ १ ॥
द्रब्य हेत हरि कूँ भजै, धनही को परतीत।
स्वारथ ले सब सूँ मिलै, अन्तर की नहिँ प्रीत ॥ २ ॥

॥ मोह ॥

मन मैला तन छीन है, हरि सूँ लगै न नेह।
दुखी रहै सहजो कहै, मोह बसै जा देह ॥ १ ॥
मोह मिरग काया बसै, कैसे उबरै खेत।
जो बोवै सोई चरै, लगै न हरि सूँ हेत ॥ २ ॥

॥ मान ॥

अभिमानी मुख धूर है, चहै बड़ाई आप।
डिंभ लिये फूलो फिरै, करतो डरै न पाप ॥ १ ॥

---

(१) भ्रष्ट।

प्रभुताई कूँ चहत है, प्रभु को चहै न कोय।
अभिमानी घट नीच है, सहजो ऊँच न होय॥ २॥

॥ नन्हा महा उत्तम ॥

धन छोटापन सुख महा, धिरग बड़ाई ख़्वार[1]।
सहजो नन्हा हूजिये, गुरु के बचन सम्हार॥ १॥
सहजो तारे सब सुखी, गहै[2] चन्द और सूर।
साधू चाहै दीनता, चहै बड़ाई कूर[3]॥ २॥
अभिमानी नाहर बड़ो, भरमत फिरत उजाड़।
सहजो नन्ही बाकरी, प्यार करै संसार॥ ३॥
सीस कान मुख नासिका, ऊँचे ऊँचे नाँव।
सहजो नीचे कारने, सब कोउ पूजै पाँव॥ ४॥
नन्हो चौंटी भवन में, जहाँ तहाँ रस लेह।
सहजो कुंजर अति बड़ो, सिर में डारै खेह॥ ५॥
सहजो चंदा दूज का, दरस करै सब कोय।
नन्हे सूँ दिन दिन बढ़ै, अधिको चाँदन होय॥ ६॥
बड़ा भये आदर नहीं, सहजो आँखिन देख।
कला सभी घट जायगी, कछू न रहसी रेख॥ ७॥
सहजो नन्हा बालका, महल भूप के जाय।
नारी परदा ना करै, गोदहिं गोद खेलाय॥ ८॥
बड़ा न जाने पाइहै, साहिब के दरबार।
द्वारे ही सूँ लागिहै, सहजो मोटी मार॥ ९॥
बारे दीवे चाँदना, बड़ा भये अँधियार[4]।
सहजो तृन हलका तिरै, डूबै पत्थर भार॥ १०॥

(१) ख़राब। (२) ग्रहन लगता है। (३) दुष्ट। (४) दीवा या रोशनी "बढ़ा" देना मुहावरे में चिराग़ बुझा देने को कहते हैं—इस साखी का अर्थ यह है कि नन्हा सा दीवा जब बाला गया तो चाँदना करता है और जब "बढ़ाया" (बुझाया) गया तो अँधेरा हो जाता है।

भलो गरीबी नवनता, सकै नहीं कोइ मार।
सहजो रुई कपास की, काटै ना तरवार ॥ ११॥
चरनदास सतगुरु कही, सहजो कूँ यह चाल।
सकै तो छोटा हूजिये, छूटै सब जंजाल ॥ १२॥
साहन कूँ तो भय घना, सहजो निर्भय रंक।
कुंजर के पग बेड़ियाँ, चींटी फिरै निसंक ॥ १३॥
ऊँचे उज्जल भाग सूँ, आय मिले गुरुदेव।
प्रेम दिया नन्हा किया, पूरन पायो भेव ॥ १४॥
सहजो पूरन भाग सूँ, पाय लिये सुखदान।
नख सिख आई दीनता, भजे बड़ाई मान ॥ १५॥
औगुन थे सो सब गये, राज करैं उनतीस[1]।
प्रेम झिला प्रीतम मिला, सहजो वारा सीस ॥ १६॥

॥ अजपा जाप ॥

ऐसा सुमिरन कीजिये, सहज रहै लौ लाय।
बिनु जिभ्या बिनु तालुवै, अन्तर सुरति लगाय ॥ १ ॥
हंसा सोहं तार करि, सुरति मकरिया पोय।
उतर उतर फिरि फिरि चढ़ै, सहजो सुमिरन होय ॥ २ ॥
बरत[2] बाँध करि धरन मैं, कला गगन मैं खाय।
अर्ध उर्ध नट ज्योँ फिरै, सहजो राम रिझाय ॥ ३ ॥
लगै सुन्न मे ँ टकटकी, आसन पद्म लगाय।
नाभि नासिका माहिँ करि, सहजो रहै समाय ॥ ४ ॥

---

(१) मन और ३ गुण और २५ प्रकृतियाँ। (२) रस्सी।

सहज स्वास तीरथ बहै, सहजो जो कोइ न्हाय ।
पाप पुन्न दोनोँ छुटैँ, हरि पद पहुँचै जाय ॥ ५ ॥

इक्कारे[1] उठि नाम सूँ, सक्कारे होय लीन ।
सहजो अजपा जाप यह, [illegible] कहि दीन ॥ ६ ॥

सब घट [illegible] जाप है, हंसा सोहं पुर्ष ।
सुरत हिये ठहराय के, सहजो या बिधि निर्ख ॥ ७ ॥

सब घट ब्यापक राम है, देँहो[2] नाना भेष ।
राव रंक चंडाल घर, सहजो दीपक एक ॥ ८ ॥

॥ सत्त बैराग जगत मिथ्या ॥

आतम मेँ जागत नहीँ, सुपने सोवत लोग ।
सहजो सुपने होत हैँ, रोग भोग और जोग ॥ १ ॥

कोटि बरस इक छिन लगै, ज्ञान दृष्टि जो होय ।
बिसरि जगत औरै बनै, सहजो सुपने सोय ॥ २ ॥

ऐसे ही सब स्वप्न है, स्वर्ग मिर्तु पाताल ।
तीन लोक छल रूप है, सहजो इन्दरजाल ॥ ३ ॥

अज्ञानी जानत नहीँ, लिप्त भया करि भोग ।
ज्ञानी तौ दृष्टा भये, सहजो खुसो न सोग ॥ ४ ॥

मन माहीँ बैराग है, ब्रह्म माहि गलतान ।
सहजो जगत अनित्य है, आतम कूँ नित जान ॥ ५ ॥

---

(१) [illegible] । (२) शरीर ।

सहजो सुपने एक पल, बीतै बरस पचास।
आँख खुलै जब झूठ है, ऐसे ही घर बास ॥ ६ ॥
मृग तृस्ना जल साच है, जब लगि निकट न जाय।
सहजो तब लगि जग बन्यौ, सतगुरु दृष्टि न पाय ॥ ७ ॥
जैसे बालक जल बिषे, देखि देखि डरपाय।
समझ भई जब भर्म था, सहजो रहै खिसाय ॥ ८ ॥
ज्ञानी कूँ जग झूठ है, अज्ञानी कूँ साच।
कोटि लाल कागद लिखे, सहजो बैठा बाँच ॥ ९ ॥
जगत तरैयाँ भोर की, सहजो ठहरत नाहिं।
जैसे मोती ओस की, पानी अँजुली माहिं ॥ १० ॥
धूवाँ को सो गढ़ बन्यो, मन में राज सँजोय।
झाँईं माईं सहजिया, कबहूँ साच न होय ॥ ११ ॥
ऐसे ही जग झूठ है, आतम कूँ नित जान।
सहजो काल न खा सकै, ऐसो रूब पिछान ॥ १२ ॥

॥ सच्चिदानन्द ॥

नया पुराना होय ना, घुन नहिं लागै जासु।
सहजो मारा ना मरै, भय नहिं ब्यापै तासु ॥ १ ॥
किरै[1] घटै छीजै नहीं, ताहि न भिजवै नीर।
ना काहू के आसरे, ना काहू के सीर ॥ २ ॥
रूप बरन वा के नहीं, सहजो रंग न देह।
मीत इष्ट वा के नहीं, जाति पाँति नहिं गेह ॥ ३ ॥

---

(१) कीड़ा लगे।

सहजो उपजै ना मरै, सदबासी नाहिँ होय।
रात दिवस ता मेँ नहीँ, सीत उस्न नाहिँ होय॥ ४॥
आग जलाय सकै नहीँ, सस्तर सकै न काटि।
धूप सुखाय सकै नहीँ, पवन सकै नहिँ आटि[1] ॥ ५॥
मात पिता वा के नहीँ, नहीँ कुटुँब को साज।
सहजो वाहि न रंकता, ना काहू को राज॥ ६॥
आदि अंत ता के नहीँ, मध्य नहीँ तेहि माहिँ।
वार पार नहिँ सहजिया, लघू दीर्घ भी नाहिँ॥ ७॥
परलय मेँ आवै नहीँ, उतपति होय न फेर।
ब्रह्म अनादी सहजिया, घने हिराने हेर॥ ८॥
जा के किरिया करम ना, षट दर्सन को भेस।
गुन औगुन ना सहजिया, ऐसो पुरुष अलेस॥ ९॥
रूप नाम गुन सूँ रहित, पाँच तत्त सूँ दूर।
चरनदास गुरु ने कही, सहजो छिमा हजूर॥ १०॥
आपा खोये पाइये, और जतन नहिँ कोय।
नीर छीर निर्ताय के, सहजो सुरति समोय॥ ११॥

॥ नित्य अनित्य सांख्य मत॥

भिन्न भिन्न दोनोँ करै, वही सांख्य मत भेद।
जीवन और बिदेह सूँ, मुक्ति पाय तजि खेद॥ १॥
जाग्रत और सुषोपती, स्वप्न अवस्था तीन।
काया ही सूँ होत है, घटै बढ़ै ह्वै छीन॥ २॥

---

(१) उड़ाना, हटाना।

तुरिया इक रस आत्मा, इन तें परे निहार।
इन्द्री मन गहि ना सकै, सहजो तत्त अपार॥ ३॥
जिभ्या चाखि सकै नहीं, स्रवन सुनै नहिं ताहि।
नैन बिलोकि सकै नहीं, नासा तुचा न पाय॥ ४॥
अनुभव ही सूँ जानिये, चित्त बुधि थकि थकि जाहिं।
तीन भाँति हंकार की, सो भी पावै नाहिं॥ ५॥
जा के रस नहिं रूप नहिं, गंध नहीं वा ठौर।
सबद नहीं असपर्स नहिं, सहजो वह कछु और॥ ६॥
गुन तीनों सूँ है परे, ता में रूप न रेख।
बोध रूप हो सहजिया, ब्रह्म दृष्टि करि देख॥ ७॥

॥ निर्गुन सर्गुन संशय-निवारन भक्ति॥

निराकार आकार सब, निर्गुन और गुनवंत।
है नाहीं सूँ रहित है, सहजो यों भगवंत॥ १॥
नाम नहीं औ नाम सब, रूप नहीं सब रूप।
सहजो सब कछु ब्रह्म है, हरि परगट हरि गूप॥ २॥
कहा कहूँ कहा कहि सकूँ, अचरज अलख अभेव।
सुने अचंभो सो लगै, सहजो ब्रह्म अलेव[1]॥ ३॥
भक्ति हेत हरि आइया, पिरथी भार उतारि।
साधन की रच्छा करी, पापी डारे मारि॥ ४॥
निर्गुन सूँ सर्गुन भये, भक्त उधारनहार।
सहजो की दंडौत है, ता कूँ बारम्बार॥ ५॥

---

(१) बेदाग़, पवित्र।

ता के रूप अनन्त हैं, जा के नाम अनेक।
ता के कौतुक बहुत हैं, सहजो नाना भेष ॥ ६ ॥
गीता में स्रीकृस्न ने, बचन कहे सब खोल।
सब जीवन में मैं बसूँ, के चर कहा अडोल ॥ ७ ॥
मैं अखंड व्यापक सकल, सहज रहा भरपूर।
ज्ञानी पावै निकट हीं, मूरख जानै दूर ॥ ८ ॥
जोगी पावै जोग सूँ, ज्ञानी लहै बिचार।
सहजो पावै भक्ति सूँ, जाके प्रेम अधार ॥ ९ ॥

॥ कर्म अनुसार जोनी ॥

उपजि उपजि फिरि फिरि मरौ, जम दे दारुन दुक्ख।
लाज नहीं सहजो कहै, धिर्ग तुम्हारो मुक्ख ॥ १ ॥
सहजो रहै मन बासना, तैसी पावै ठौर।
जहाँ आस तहँ बास है, निस्चै करो कड़ोर ॥ २ ॥
देँह छुटै मन में रहै, सहजो जैसी आस।
देँह जन्म जैसा मिलै, जैसे ही घर बास ॥ ३ ॥
चौरासी के त्रास सुनि, जम किंकर की मार।
सहजो आई गुरु चरन, सुमिर्यो सिरजनहार ॥ ४ ॥
धन जोबन सुख सम्पदा, बादर की सी छाहिं।
सहजो आखिर धूप है, चौरासी के माहिं ॥ ५ ॥
चौरासी जोनी भुगत, पायो मनुष सरीर।
सहजो चूके भक्ति बिनु, फिर चौरासी पीर ॥ ६ ॥

दया बाई

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो सहजो बाई का संक्षिप्त जीवन-चरित्र पृष्ठ १५४]

॥ गुरुदेव ॥

जै जै परमानंद प्रभु, परम पुरुष अभिराम।
अंतरजामी कृपानिधि, "दया" करत परनाम ॥ १ ॥
ब्रह्म रूप सागर सुधा, गहिरो अति गम्भीर।
आनँद लहर सदा उठै, नहीँ धरत मन धीर ॥ २ ॥
जहाँ जाय मन मिटत है, ऐसो तत्त सरूप।
अचरज देखि "दया" करै, बंदन भाव अनूप ॥ ३ ॥
चरनदास गुरुदेवजू, ब्रह्म-रूप सुख-धाम।
ताप-हरन सब सुख-करन, "दया" करत परनाम ॥ ४ ॥
अंध कूप जग में पड़ी, "दया" करम बस आय।
बूड़त लई निकासि करि, गुरु गुन[1] ज्ञान गहाय ॥ ५ ॥
छके रहैं आनन्द में, आठ पहर गलतान।
अद्भुत छबि जिनकी बनी, "दया" धरत मन ध्यान ॥ ६ ॥
सतगुरु सम कोउ है नहिँ, या जग में दातार।
देत दान उपदेस सोँ, करैँ जीव भव पार ॥ ७ ॥
या जग में कोउ है नहीँ, गुरु सम दीन-दयाल।
सरनागत कूँ जानि कै, भले करैँ प्रतिपाल ॥ ८ ॥
मनसा बाचा करि "दया", गुरु चरनौँ चित लाव।
जग समुद्र के तरन कूँ, नाहिन आन उपाव ॥ ९ ॥
जे गुरु कूँ बंदन करैँ, "दया" प्रीति के भाय।
आनँद मगन सदा रहैँ, तिरबिधि ताप नसाय ॥ १० ॥

---

(१) डोरी।

चरन कमल गुरुदेव के, जे सेवत हित लाय।
"दया" अमरपुर जात हैं, जग सुपनो बिलाय ॥ ११ ॥
सतगुरु ब्रह्म सरूप हैं, मनुष भाव मत जान।
देह भाव मानैं "दया", ते हैं पसू समान ॥ १२ ॥
नित प्रति बंदन कीजिये, गुरु कूँ सीस नवाय।
"दया" सुखी करि देत हैं, हरि सरूप दरसाय ॥ १३ ॥

॥ सुमिरन ॥

हरि भजते लागै नहीं, काल-ब्याल दुख-झाल।
ता तैं राम सँभालिये, "दया" छोड़ि जग-जाल ॥ १ ॥
"दयादास" हरि नाम लै, या जग में यह सार।
हरि भजते हरि ही भये, पायो भेद अपार ॥ २ ॥
मनमोहन को ध्याइये, तन मन करिये प्रीति।
हरि तज जे जग में पगे, देखौ बड़ी अनीति ॥ ३ ॥
जे जन हरि सुमिरन बिमुख, तासूँ मुख हुँ न बोल।
राम रूप में जे पगे, तासूँ अंतर खोल ॥ ४ ॥
राम नाम के लेतही, पातक झरैं अनेक।
रे नर हरि के नाम की, राखो मन में टेक ॥ ५ ॥
सोवत जागत हरि भजो, हरि हिरदे न बिसार।
डोरी गहि हरि नाम की, "दया" न टूटै तार ॥ ६ ॥
"दया" जगत में यहि नफो[१], हरि सुमिरन कर लेहि।
छल-रूपी छिन-भंग है, पाँच तत्त की देँहि ॥ ७ ॥
"दया" देँह सूँ नेह तजि, हरि भजु आठौ जाम।
मन निर्मल ह्वै तनिक में, पावै निज बिस्राम ॥ ८ ॥
"दया" नाव हरि नाम की, सतगुरु खेवनहार।
साधू जन के संग मिलि, तिरत न लागै बार ॥ ९ ॥

(१) नफा।

॥ अजपा जाप ॥

पद्मासन सूँ बैठ करि, अंतर दृष्टि लगाव।
"दया" जाप अजपा जपो, सुरति स्वास मैं लाव ॥ १ ॥
अर्ध उर्ध मधि सुरति धरि, जपै जु अजपा जाप।
"दया" लहै निज धाम कूँ, छुटै सकल संताप ॥ २ ॥
स्वासउस्वास बिचार करि, राखै सुरति लगाय।
"दया" ध्यान त्रिकुटी धरै, परमातम दरसाय ॥ ३ ॥
बिन रसना बिन माल कर, अंतर सुमिरन होय।
"दया" दया गुरदेव की, बिरला जानै कोय ॥ ४ ॥
सतगुरु के परताप तैं, "दया" कियो निरधार।
अजपा सोहं जाप है, परम गम्य निज सार ॥ ५ ॥
प्रथम पैठि पाताल सूँ, धमकि चढ़ै आकास।
"दया" सुरति नटिनी भई, बाँधि बरत[1] निज स्वास ॥ ६ ॥
छिन छिन मैं उतरत चढ़त, कला गगन मैं लेत।
"दया" रीझि गुरदेवजू, दान अभय पद देत ॥ ७ ॥
चरनदास गुरु कृपा तैं, मनुवा भयो अपंग।
सुनत नाद अनहद "दया", आठो जाम अभंग ॥ ८ ॥
घंटा ताल मृदंग धुनि, सिंह गरज पुनि होय।
"दया" सुनत गुरु कृपा तैं, बिरला साधू कोय ॥ ९ ॥
गगन मध्य मुरली बजै, मैं जु सुनी निज कान।
"दया" दया गुरदेव की, परस्यो पद निर्बान ॥ १० ॥
जहाँ काल अरु ज्वाल नहिं, सीत उस्न नहि बीर।
"दया" परसि निज धाम कूँ, पायो भेद गँभीर ॥ ११ ॥

---

(१) रस्सो।

॥ मिश्रित ॥

"दया कुँवर" या जक्त में, नहीं आपनो कोय।
स्वारथ-बंधी जीव है, राम नाम चित जोय ॥ १ ॥

"दया" सुपन संसार में, ना पचि मरिये बीर[1]।
बहुतक दिन बीते बृथा, अब भजिये रघुबीर ॥ २ ॥

"दया कुँवर" या जक्त में, नहीं रह्यो थिर कोय।
जैसो बास सराँय को, तैसो यह जग होय ॥ ३ ॥

जैसो मोती ओस को, तैसो यह संसार।
बिनसि जाय छिन एक में, "दया" प्रभू उर धार ॥ ४ ॥

भाई बंधु कुटुम्ब सब, भये इकट्ठे आय।
दिना पाँच[2] को खेल है, "दया" काल ग्रसि जाय ॥ ५ ॥

तात मात तुम्हरे गये, तुम भी भये तयार।
आज काल्ह में तुम चलौ, "दया" होहु हुसियार ॥ ६ ॥

असु[3] गज अरु कंचन "दया", जोरे लाख करोर।
हाथ झाड़ रीते[4] गये, भयो काल को जोर ॥ ७ ॥

तीन लोक नौ खंड के, लिये जीव सब हेर।
"दया" काल परचंड है, मारै सब कूँ घेर ॥ ८ ॥

बड़ो पेट है काल को, नेक न कहूँ अघाय।
राजा राना छत्र-पति, सब कूँ लीले जाय ॥ ९ ॥

बहे जात हैं जीव सब, काल नदी के माहिँ।
"दया" भजन नौका[5] बिना, उपजि उपजि मरि जाहिँ ॥ १० ॥

---

(१) बहिन, भाई। (२) दो दिन जन्म और मरन के छोड़ने से सप्ताह या हफ़्ते

छिन छिन बिनस्यो जात है, ऐसो जग निरमूल ।
नाम रूप जो धूस[1] है, ताहि देखु मत भूल ॥ ११॥
बिनसत बादर बात[2] बसि, नभ में नाना भाँति ।
इमि नर दीसत काल बसि, तऊ न उपजै साँति ॥ १२॥
चरनदास सतगुरु मिले, समरथ परम कृपाल ।
दीन जानि कीन्ही दया, मो पर भये दयाल ॥ १३॥

॥ बिरह ॥

बिरह ज्वाल उपजी हिये, राम-सनेही आय ।
मन-मोहन सोहन सरस, तुम देखन दा[3] चाय ॥ १ ॥
बिरह बिथा सूँ हूँ बिकल, दरसन कारन पीव ।
"दया" दया की लहर कर, क्यों तलफावो जीव ॥ २ ॥
जनम जनम के बीछुरे, हरि अब रह्यो न जाय ।
क्यों मन कूँ दुख देत हो, बिरह तपाय तपाय ॥ ३ ॥
काग उड़ावत थके कर[4], नैन निहारत बाट ।
प्रेम सिन्ध में पस्यो मन, ना निकसन को घाट ॥ ४ ॥
बौरी ह्वै चितवत फिरूँ, हरि आवैं केहि ओर ।
छिन ऊठूँ छिन गिरि परूँ, राम-दुखी मन मोर ॥ ५ ॥
सोवत जागत एक पल, नाहिन बिसरूँ तोहिं ।
करुना-सागर दया-निधि, हर लीजै सुधि मोहिं ॥ ६ ॥

---

(१) मिट्टी का ऊँचा ढेर जो क़िले के चारो ओर पुश्ते की तरह बना देते हैं जिस में शत्रु की तोप के गोले घुस कर रह जायँ और गढ़ तक न पहुँच सकैं । (२) हवा । (३) का । (४) कौवों के बैठने और बोली से प्रीतम के आने का शगुन और असगुन बिचारते हैं ।

॥ प्रेम ॥

"दया" प्रेम-उनमत्त जे, तन की तनि[1] सुधि नाहिं।
झुके रहैं हरि रस छके, थके नेम ब्रत नाहिं ॥ १ ॥
"दया" प्रेम प्रगट्यौ तिन्हैं, तन की तनि[1] न सँभार।
हरि रस मैं माते फिरैं, गृह बन कौन बिचार ॥ २ ॥
प्रेम मगन जे साधवा, बिचरत रहत निसंक।
हरि रस के माते "दया", गिनैं राव न रंक ॥ ३ ॥
प्रेम मगन जे साध जन, तिन गति कही न जात।
रोय रोय गावत हँसत, "दया" अटपटी बात ॥ ४ ॥
हरि रस माते जे रहैं, तिन को मतो अगाध।
त्रिभुवन की संपति "दया", तृन सम जानत साध ॥ ५ ॥
प्रेम मगन गद्गद बचन, पुलकि रोम सब अंग।
पुलकि रह्यो मन रूप में, "दाया" न ह्वै चित भंग ॥ ६ ॥
कहूँ धरत पग परत कहुँ, डिगमिगात सब देँह।
दया मगन हरि रूप में, दिन दिन अधिक सनेह ॥ ७ ॥
चित चिंता हरि रूप बिन, मो मन कछु न सुहाय।
हरि हरखित हमकूँ "दया", कब रे मिलैंगे आय ॥ ८ ॥
प्रेम-पुंज प्रगटै जहाँ, तहाँ प्रगट हरि होयँ।
"दया" दया करि देत हैं, स्री हरि दर्सन सोय ॥ ९ ॥

॥ बिनय मालिका (संक्षिप्त) ॥

केहि बिधि रीझत हौ प्रभू, का कहि टेरूँ नाथ।
लहरि मिहरि जब हीं करो, तब हीं होउँ सनाथ ॥ १ ॥

---

(१) ज़रा भी।

भयमोचन अरु सर्बमय, व्यापक अचल अखंड।
दयासिंधु भगवान जू, ता कै सब ब्रह्मंड ॥ २ ॥
चौरासी चरखान[1] को, दुःख सहा नहिं जाय।
दयादास ता तैं लई, सरन तिहारी आय ॥ ३ ॥
कर्म फाँस छूटे नहीं, थकित भयो बल मोर।
अब की बेर उबारि लो, ठाकुर बंदी-छोर ॥ ४ ॥
भवजल नदी भयावनी, किस बिधि उतरूँ पार।
साहिब मेरी अरज है, सुनिये बारम्बार ॥ ५ ॥
पैरत थाको हे प्रभू, सूझत वार न पार।
मिहर मौज जब हौं करौ, तब पाऊँ दरबार ॥ ६ ॥
कर्म रूप दरियाव से, लीजे मोहिं बचाय।
चरन कमल तर राखिये, मिहर जहाज चढ़ाय ॥ ७ ॥
निरपच्छी के पच्छ तुम, निराधार के धार।
मेरे तुम हौं नाथ इक, जीवन प्रान अधार ॥ ८ ॥
काहू बल अप[2] देह को, काहू राजहि मान।
मोहिं भरोसो तेरही, दीनबंधु भगवान ॥ ९ ॥
हौं गरीब सुन गोबिंदा, तुही गरीब-निवाज।
दयादास आधीन के, सदा सुधारन काज ॥ १० ॥
हो अनाथ के नाथ तुम, नेक निहारो मोहिं।
दयादास तन हे प्रभू, लहर मिहर की होहि ॥ ११ ॥

(१) चार खान। (२) अपने।

नर देही दीन्ही जबै, कीन्हो कोटि करार।
भक्ति कबूली आदि में, जग में भयो लबार ॥१२॥
कछू दोष तुम्हरो नहीं, हमरी है तकसीर।
बीचहिं बीच बिबस भयो, पाँच पचीस के भीर ॥१३॥
एँचा खैंची करत हैं, अपनी अपनो ओर।
अब की बेर उबारि लो, त्रिभुवन बंदी-छोर ॥१४॥
तुम ठाकुर त्रैलोक-पति, ये ठग बस करि देहु।
दयादास आधीन की, यह बिनती सुनि लेहु ॥१५॥
हौं पाँवर[1] तुम हौ प्रभू, अधम-उधारन ईस।
दयादास पर दया हो, दयासिंधु जगदीस ॥१६॥
ठग पापी कपटी कुटिल, ये लच्छन मोहिं माहिं।
जैसो तैसो तेर ही, अरु काहू को नाहिं ॥१७॥
जेते करम हैं पाप के, मोसे बचे न एक।
मेरी ओर लखो कहा, बिर्द बानो तन देख[2] ॥१८॥
अधम-उधारन बिरद[3] सुन, निडर रह्यो मन माहिं।
बिर्द बानो की हार देव, की तारो गहि बाँह ॥१९॥
असंख जीव तरि तरि गये, लै लै तुम्हरो नाम।
अब की बेरी बाप जी, परो मुगध[4] से काम ॥२०॥
जो जा की ताकै सरन, ता को ताहि खभार[5]।
तुम सब जानत नाथ जू, कहा कहौं बिस्तार ॥२१॥

---

(१) नीच। (२) बिरद अर्थात नीच के उद्धार करने का जो बाना आप ने धरा है उस की ओर देखिये। (३) यहाँ बिरद का अर्थ यश है। (४) मूढ़। (५) फ़िकर, भार।

पूजा अरचन बंदगी, नहिं सुमिरन नहिं ध्यान।
प्रभुजी अब राखे बनै, बिर्द बाने की कान[१] ॥२२॥
नहिं संजम नहिं साधना, नहिं तीरथ ब्रत दान।
मात भरोसे रहत है, ज्यौं बालक नादान ॥२३॥
लाख चूक सुत से परै, सो कछु तजि नहिं देह।
पोष चुचुक[२] ले गोद में, दिन दिन दूनौं नेह ॥२४॥
दुख तजि सुख की चाह नहिं, नहिं बैकुंठ बिवान।
चरन कमल चित चहत हौं, मोहिं तुम्हारी आन[३] ॥२५॥
तन मद धन मद राज मद, अंत काल मिटि जाय।
जिन के मद तेरो प्रभू, तेहि जम काल डेराय ॥२६॥
धूप हरै छाया करै, भोजन को फल देत।
सरनाये[४] की करत है, सब काहू पर हेत ॥२७॥
कलप बृच्छ के निकट हौं, सकल कल्पना जाय।
दयादास ता तें लई, सरन तिहारी आय ॥२८॥
देह धरौं संसार में, तेरो कहि सब कोय।
हाँसी होय तो तेरिही, मेरो कछू न होय ॥२९॥
जो नहिं अधम उधारनो, तौ नहिं गहते फेंट।
बिर्द की पैज[५] सम्हारि लो, सकल चूक को मेट ॥३०॥
जो मेरे करमन लखो, तौ नहिं होत उबार।
दयादास पर दया करि, दीजै चूक बिसार ॥३१॥

---

(१) लाज। (२) चुमकार के। (३) टेक, सौगंद। (४) सरन आये। (५) प्रन।

हौँ अनाथ तोहिँ बिनय करि, भय सोँ करूँ पुकार।
दयादास तन हेर प्रभु, अब के पार उतार ॥ ३२॥
मलयागिर के निकटहीं, सब चंदन है जात।
छूटै करम कुबासना, महा सुगँध महकात ॥ ३३॥
लोहा पारस के निकट, कंचन ही सो होय।
जितना चाहै ले करै, लोहा कहै न कोय ॥ ३४॥
जैसे सूरज के उदय, सकल तिमिर नसि जाय।
मिहर तुम्हारी हे प्रभू, क्योँ अज्ञान रहाय ॥ ३५॥
अनँत भानु तुम्हरी मिहर, कृपा करो जब होय।
दयादास सूझै अगम, दिब्य दृष्टि तन होय ॥ ३६॥
तीन लोक में हे प्रभू, तुम हीँ करो सो होय।
सुर नर मुनि गंधर्ब जे, मेटि सकैँ नहिँ कोय ॥ ३७॥
बेर बेर चूकत गयोँ, दीजै गुसा[1] बिसार।
मिहरबान होइ रावरे[2], मेरी ओर निहार ॥ ३८॥
दया दीन पर करत हौ, सो किमि लेखी जाहि।
बेद बिरद बोलत फिरै, तीन लोक के माहिँ ॥ ३९॥
बज्रै तिनका करत हौ, तिनकै बज्र बनाय।
मिहर तुम्हारी हे प्रभू, सागर गिरि[3] उतराय ॥ ४०॥
बड़े बड़े पापी अधम, तारत लगी न बार।
पूँजी लगै कछु नंद की, हे प्रभु हमरी बार[4] ॥ ४१॥

---

(१) अप्रसन्नता। (२) हुज़ूर। (३) पहाड़। (४) नन्दजी श्रीकृष्ण के पिता का नाम है—दयादास को बिन्ती है कि हे प्रभु आप ने बड़े बड़े पापियों को तार दिया अब

सोस नवै तौ तुमहिं कूँ, तुमहिं सुँ भाखूँ दीन।
जो झगरूँ तौ तुमहिं सूँ, तुम चरनन आधीन ॥ ४२॥
और नजर आवै नहीं, रंग राव का साह।
चिरहटा[1] के पंख ज्यौं, थोथो काम दिखाह ॥ ४३॥
तेरी दिसि आसा लगी, भ्रमत फिरूँ सब दीप।
स्वाँती मिलै सनाथ हो, जैसे चातृक सीप ॥ ४४॥
चित चातृक रटना लगी, स्वाँति बूँद की आस।
दया-सिंध भगवानजू, पुजवौ अब की आस ॥ ४५॥
कब को टेरत दीन भो[2], सुनौ न नाथ पुकार।
की स्रवन ऊँचौ सुनो, की बिर्द दियो बिसार ॥ ४६॥
सुनत दीनता दास की, बिलम कहूँ नहिं कीन्ह।
दयादास मन-कामना, मनभाई कर दीन्ह ॥ ४७॥

॥ साधु ॥

जगत-सनेही जीव है, राम-सनेही साध।
तन मन धन तजि हरि भजैं, जिन का मता अगाध ॥ १ ॥
दया दान अरु दीनता, दीना-नाथ दयाल।
हिरदै सीतल दृष्टि सम, निरखत करैं निहाल ॥ २ ॥
काम क्रोध मद लोभ नहिं, खट बिकार करि हीन।
पंथ कुपंथ न जानहीं, ब्रह्म भाव रस लीन ॥ ३ ॥
साध संग संसार में, दुरलभ मनुष सरीर।
सतसंगति सूँ मिटत है, त्रिबिध ताप की पीर ॥ ४ ॥

---

(१) जिस तरह चिड़िया का बच्चा डैना फड़फड़ाता है पर उड़ नहीं सकता ऐसो ही मेरी दशा है। (२) हो कर।

साधू सिंह समान है, गरजत अनुभव ज्ञान।
करम भरम सब भजि गये, "दया" दुख्यो[1] अज्ञान ॥ ५ ॥
साध रूप हरि आप हैं, पावन परम पुरान।
मेटैं दुबिधा जीव की, सब का करैं कल्यान ॥ ६ ॥
साध संग छिन एक को, पुन्न न बरन्यो जाय।
रति[2] उपजै हरि नाम सूँ, सबही पाप बिलाय ॥ ७ ॥
कोटि जग्य ब्रत नेम तिथि, साध संग में होय।
बिषय ब्याधि सब मिटत हैं, सांति रूप सुख जोय ॥ ८ ॥
साधन के संसा नहीं, "दया" सर्ब सुख जान।
मन की दुबिधा मेटि करि, कियो राम-रस पान ॥ ९ ॥
साधू बिरला जक्त में, हर्ष सोक करि हीन।
कहन सुनन कूँ बहुत हैं, जन जन आगे दीन ॥ १० ॥
कलि केवल संसार में, और न कोउ उपाय।
साध संग हरि नाम बिन, मन की तपन न जाय ॥ ११ ॥
साध संग जग में बड़ो, जो करि जानै कोय।
आधो छिन सतसंग को, कलमख डारै खोय ॥ १२ ॥

॥ सूरमा ॥

जग तजि हरि भजि दया गहि, कूर कपट सब छाड़ि।
हरि सन्मुख गुरु-ज्ञान गहि, मनहीं सूँ रन माँड़ि[3] ॥ १ ॥
सूरा वही सराहिये, बिन सिर लड़त कवंद[4]।
लोक लाज कुल कान कँ, तोड़ि होत निर्बंद ॥ २ ॥

---

(१) दूर हुआ। (२) लौ, प्रेम। (३) लड़ाई ठानो। (४) एक राक्षस का नाम जिस का सिर गदा की चोट लगने से धड़ के भीतर घुस गया था लेकिन फिर भी वह बराबर लड़ता था।

सुनत सबद नीसान[1] कूँ, मन मेँ उठत उमंग।
ज्ञान गुरज[2] हथियार गहि, करत जुद्ध अरि[3] संग ॥ ३ ॥
जो पग धरत सो दृढ़ धरत, पग पाछे नहिँ देत।
अहंकार कूँ मार करि, राम रूप जस लेत ॥ ४ ॥
आप मरन भय दूर करि, मारत रिपु[3] को जाय।
महा मोह दल दलन करि, रहै सरूप समाय ॥ ५ ॥
सूरा सन्मुख समर[4] मेँ, घायल होत निसंक।
योँ साधू संसार मेँ, जग के सहै कलंक ॥ ६ ॥
कायर कंपै देख करि, साधू को संग्राम।
सीस उतारै भुइँ धरै, जब पावै निज ठाम ॥ ७ ॥

॥ परिचय ॥

पिय को रूप अनूप लखि, कोटि भान उँजियार।
"दया" सकल दुख मिटि गयो, प्रघट भयो सुख सार ॥ १ ॥
अनँत भान उँजियार तहँ, प्रगटी अद्भुत जोत।
चकचौँधी सी लगत है, मनसा सीतल होत ॥ २ ॥
सेत सिंहासन पीव के, महा तेजमय धाम।
पुरुषोत्तम राजत तहाँ, "दया" करत परनाम ॥ ३ ॥
बिन दामिनि उँजियार अति, बिन घन परत फुहार।
मगन भयो मनुवाँ तहाँ, दया निहार निहार ॥ ४ ॥
वही एक ब्यापक सकल, ज्योँ मनिका[5] मेँ डोर।
थिर चर कीट पतंग मेँ, "दया" न दूजो और ॥ ५ ॥

---

(१) डंका। (२) गदा, सोँटा। (३) दुश्मन। (४) लड़ाई। (५) माला।

ग़रीबदासजी

जीवन-समय—१७७४ से १८३५ तक। जन्म और सतसंग स्थान—मौज़ा छुड़ानी ज़िला रुहतक (पंजाब)। जाति और आश्रम—जाट, गृहस्थ। गुरू—कबीर साहिब।

बाईस बरस की अवस्था में इन महात्मा ने अपनी सत्रह हज़ार साखी और चौपाई के ग्रंथ की रचना आरंभ की जिस में कबीर साहिब की सात हज़ार साखी शामिल हैं। उसी ग्रंथ के चुने हुए अंग और कड़ियाँ बिचित्र टिप्पनी और जीवन-चरित्र के साथ बेलवेडियर प्रेस इलाहाबाद में छपी हैं।

॥ गुरुदेव ॥

पुर पट्टन पर लोक है, अदली सतगुरु सार।
भगति हेत से ऊतरे, पाया हम दीदार ॥ १ ॥
ऐसा सतगुरु हम मिला, अललपच्छ[1] की जात।
काया माया ना उहाँ, नहीं पिंड नहिं नात ॥ २ ॥
ऐसा सतगुरु हम मिला, उजल हिरंबर आद।
भलका ज्ञान कमान का, घालत है सर साध ॥ ३ ॥
ऐसा सतगुरु हम मिला, सुन्न बिदेसी आप।
रोम रोम परकास है, देही अजपा जाप ॥ ४ ॥
ऐसा सतगुरु हम मिला, मगन किये मुस्ताक।
प्याला प्रेम पिलाइया, गगन मँडल गरगाप[2] ॥ ५ ॥
ऐसा सतगुरु हम मिला, गलताना[2] गुलजार।
वार पार की मति नहीं, नहिं हलका नहिं भार ॥ ६ ॥
ऐसा सतगुरु हम मिला, बेपरवाह अबंध।
परम हंस पूरन पुरुष, रोम रोम रवि चंद ॥ ७ ॥

---

(१) एक आकाशी चिड़िया जो आकाश ही में अंडा देती है और अंडे से पृथ्वी पर पहुँचने के पहिले बच्चा निकल कर ऊपर को उड़ जाता है। (२) मतवाला।

ऐसा सतगुरु हम मिला, तेज पुंज का अंग।
झिलमिल नूर जहूर है, रूप रेख नहिं रंग ॥ ८ ॥
ऐसा सतगुरु हम मिला, तेज पुंज की लोय[1]।
तन मन अरपौं सीस हू, होनी होय सो होय ॥ ९ ॥
ऐसा सतगुरु हम मिला, खोले बज्र कपाट।
अगम भूमि में गम करी, उतरे औघट घाट ॥ १० ॥
ऐसा सतगुरु हम मिला, मारी गाँसी सैन।
रोम रोम में सालती, पलक नहीं है चैन ॥ ११ ॥
माया का रस पीय कर, फूटि गये दोउ नैन।
ऐसा सतगुर हम मिला, बास दिया सुख चैन ॥ १२ ॥
सतगुरु के लच्छन कहूँ, अचल बिहंगम चाल।
हम अमरापुर ले गया, ज्ञान सबद के नाल ॥ १३ ॥
जिंदा जोगी जगत-गुरु, मालिक मुरसिद पीव।
काल करम लागै नहीं, नहिं संका नहिं सीव[2] ॥ १४ ॥
सतगुरु मारा बान कस, कैबर गाँसी खैंच।
भरम करम सब जरि गये, लई कुबुधि सब ऐंच ॥ १५ ॥
सतगुरु आये दया करि, ऐसे दीन-दयाल।
बंदि छुड़ाई बिरद सुनि, जठर अगिन प्रतिपाल ॥ १६ ॥
जोनी संकट मेटिहैं, अधो मुखी नहिं आय।
ऐसा सतगुरु सेइये, जम से लेत छुड़ाय ॥ १७ ॥
ऐसा सतगुरु हम मिला, भवसागर के माँहि।
नौका नाम चढ़ाय करि, ले राखे निज ठाँहि ॥ १८ ॥

(१) लौ। (२) सीमा, हद।

ऐसा सतगुरु हम मिला, भवसागर के बीच।
खेवट सब कूँ खेवता, क्या उत्तम क्या नीच ॥१९॥
साचा सतगुरु जो मिलै, हंसा पावै थीर।
झकझोलै जूनी मिटै, मुरसिद गहिर गँभीर ॥२०॥
साहिब से सतगुरु भये, सतगुरु से भये साध।
ये तीनोँ अँग एक हैं, गति कछु अगम अगाध ॥२१॥
सतगुरु के सदके करूँ, तन मन धन कुरबान।
दिल के अंदर देहरा, तहाँ मिले भगवान ॥२२॥
दरस परस देवल घुला, फरकै दिन राती।
जोत अखंडित जगमगै, दीपक बिन बाती ॥२३॥
ऐसा सतगुरु सेइये, सबद समाना होय।
भवसागर में डूबते, पार लगावै सोय ॥२४॥
सतगुरु पूरन ब्रह्म है, सतगुरु आप अलेख।
सतगुरु रमता राम है, या में मीन न मेख ॥२५॥
सतगुरु आदि अनादि है, सतगुरु मध अरु मूल।
सतगुरु कूँ सिजदा करूँ, एक पलक नहिँ भूल ॥२६॥
पुर पट्टन को पैँठ मैं, सतगुरु ले गया मोय।
सिर साँटे सौदा हुआ, अगली पिछली खोय ॥२७॥
सतगुरु पारस रूप है, हमरी लोहा जात।
पलक बीच कंचन करै, पलटै पिंडा गात ॥२८॥
पुर पट्टन की पैँठ में, सतगुरु ले गया साथ।
जहँ हीरे मानिक बिकैँ, पारस लागा हाथ ॥२९॥
पुर पट्टन की पैँठ में, प्रेम पियाले खूब।
जहँ हम सतगुरु लेगया, मतवाला महबूब ॥३०॥

हम पसुआ-जन[१] जीव हैं, सतगुरु जाति भिरंग ।
मुरदे से जिन्दा करैं, पलट धरत हैं अंग[२] ॥ ३१ ॥

॥ नाम ॥

पारस तुम्हरा नाम है, लोहा हमरी जात ।
जड़ सेती जड़ पलटिये, तुम कूँ केतिक बात ॥ १ ॥

ऐसा अविगत नाम है, आदि अंत नहिं कोय ।
वार पार कीमत नहीं, अचल निरंतर सोय ॥ २ ॥

ऐसा अविगत नाम है, अगम अगोचर नूर ।
सुन्न सनेही आदि है, सकल लोक भरपूर ॥ ३ ॥

दुहूँ दीन मध ऐब है, अलह अलख पहिचान ।
नाम निरंतर लीजिये, भगत हेत उतपान ॥ ४ ॥

सकल बियापी सुरत में, मन पवना गहि राख ।
रोम रोम धुनि होत है, सतगुरु बोले साख ॥ ५ ॥

अचल अभंगी नाम है, गलताना दम लीन[३] ।
सुरत निरत के अंतरे, बाजै अनहद बीन ॥ ६ ॥

अगम अनाहद भूमि है, जहाँ नाम का दीप ।
एक पलक बिछुरै नहीं, रहता नैनों बीच ॥ ७ ॥

ऐसा निरमल नाम है, निरमल करै सरीर ।
और ज्ञान मँडलीक[४] है, चकवै[५] ज्ञान कबीर ॥ ८ ॥

नामै निःचल निरमला, अनँत लोक में गाज ।
निरगुन सरगुन क्या कहै, प्रगटा संतों काज ॥ ९ ॥

---

(१) नरपशु । (२) जैसे भृंगी (लखोहरी) झींगुर वग़ैरह को मार कर अपने खोंते में उस पर बैठ कर अपने चींकार शब्द से जिला कर उसको अपना ऐसा रूप वाला बना लेती है । (३) महव, रत । (४) छोटे छोटे मंडल के राजा । (५) चक्रवर्ती राजा ।

अविनासी के नाम में, कौन नाम निज मूल ।
सुरत निरत से खोजि ले, बास बड़ी अक[1] फूल ॥१०॥
फूल सही सरगुन कहा, निरगुन गंध सुगंध ।
मन माली के बाग में, भँवर रहा कहँ बंध ॥११॥
नाम बिना सूना नगर, पड़ा सकल में सोर ।
लूट न लूटी बंदगी, हो गया हंसा भोर ॥१२॥
नाम रसायन पीजिये, यहि औसर यहि दाव ।
फिर पीछे पछतायगा, चला चली हो जाव ॥१३॥
राम नाम निज सार है, मूल मंत्र मन माहिं ।
पिंड ब्रह्मंड से रहित है, जननी जाया नाहिं ॥१४॥
नाम रटत नहिं ढील कर, हर दम नाम उचार ।
अमी महा रस पीजिये, बहुतक बारंबार ॥१५॥
गगन मँडल में रहत है, अबिनासी आलेख ।
जुगन जुगन सतसंग है, धरि धरि खेलै भेख ॥१६॥
काया माया खंड है, खंड राज अरु पाट ।
अमर नाम निज बंदगी, सतगुरु से भइ साँट ॥१७॥
अमर अनाहद नाम है, निरभय अपरंपार ।
रहता रमता राम है, सतगुरु चरन जुहार ॥१८॥
बिन रसना है बंदगी, बिना चसमौं दीदार ।
बिन सरवन बानी सुनै, निर्मल तत्त निहार ॥१९॥
मैं सौदागर नाम का, टाँडे[2] पड़ा बहीर[3] ।
लदते लदते लादिये, बहुर न फेरा[4] बीर ॥२०॥
नाम बिना क्या होता है, जप तप संजम ध्यान ।
बाहर भरमै मानवी, अभि अंतर में जान ॥२१॥

---

(१) या । (२) बंजारों का झुंड । (३) माल, जिन्स । (४) आवागमन ।

नाम बिना निपजै नहीं, जप तप करिहैं कोटि ।
लख चौरासी त्यार है, मूड़ मुड़ाया घोंटि ॥२२॥
नाम सरोवर सार है, सोहं सुरत लगाय ।
ज्ञान गलीचे बैठ करि, सुन्न सरोवर न्हाय ॥२३॥
मान सरोवर न्हाइये, परमहंस का मेल ।
बिना चुंच मोती चुँगे, अगम अगोचर खेल ॥२४॥
ऐसा नाम अगाध है, अविनासी गंभीर ।
हद जीवोँ से दूर है, बेहदियोँ के तीर ॥२५॥
ऐसा नाम अगाध है, बेकीमत करतार ।
सेस सहस फन रटत है, अजहुँ न पाया पार ॥२६॥

॥ सुमिरन ॥

नाम जपा तो क्या हुआ, उर में नहीं यकीन ।
चोर मुसै घर लूटहीं, पाँच पचीसो तीन ॥ १ ॥
कोटि गऊ जे दान दे, कोटि जज्ञ जेवनार ।
कोटि कूप तीरथ खनै[1], मिटै नहीं जम मार ॥ २ ॥
कोटिन तीरथ ब्रत करै, कोटिन गज करि दान ।
कोटि अस्व बिप्रौं दिये, मिटै न खैंचा तान ॥ ३ ॥
सुमिरन तब ही जानिये, जब रोम रोम धुनि होय ।
कुंज कमल में बैठ करि, माला फेरै सोय ॥ ४ ॥

॥ अनहद ॥

गगन गरज घन बरषहीं, बाजै अनहद तूर ।
लै लागी तब जानिये, सन्मुख सदा हजूर ॥ १ ॥

---

(१) खोदै ।

गगन गरज घन बरषहीं, बाजै दीरघ नाद ।
अमरापुर आसन करै, जिन के मते अगाध ॥ २ ॥

॥ भक्ति ॥

बिना भगति क्या होत है, कासी करवत[1] लेह ।
मिटै नहीं मन बासना, बहु बिधि भरम सँदेह ॥ १ ॥
भगति बिना क्या होत है, भरम रहा संसार ।
रत्ती कंचन पाय नहि, रावन चलती बार[2] ॥ २ ॥
सुरत लगै अरु मन लगै, लगै निरत धुन ध्यान ।
चार जुगन की बंदगी, एक पलक परमान ॥ ३ ॥
सुरत लगै अरु मन लगै, लगै निरत तिस माहिं ।
एक पलक तहँ संचरै, कोटि पाप अघ जाहिं ॥ ४ ॥
अविगत की अविगत कथा, अविगत है सब ख्याल ।
अविगत सों अविगत मिलै, कर जोरै तब काल ॥ ५ ॥
नाम रसायन पीजिये, चोखा फूल चुवाय ।
सुन्न सरोवर हंस मन, पीया प्रेम अघाय ॥ ६ ॥
अधम-उधारन भगति है, अधम-उधारन नावँ ।
अधम-उधारन संत हैं, जिनके मैं बलि जावँ ॥ ७ ॥
कहता दास गरीब है, बाँदी-जाद[3] गुलाम ।
तुम हो तैसी कीजिये, भगति हिरंबर नाम ॥ ८ ॥
जैसे माता गर्भ को, राखै जतन बनाय ।
ठेस लगै तो छीन है, ऐसे भगति दुराय[4] ॥ ९ ॥

---

(१) काशी में काशी करवत एक स्थान है जहाँ एक कुए में आरे लगे थे। और लोग उस पर मुक्ति के हेतु कट मरते थे। (२) कहते हैं कि लंका सोने की बनी थी लेकिन रावन जो राम-द्रोही था मरते समय ख़ाली हाथ गया। (३) ख़ाना-ज़ाद। (४) छिपाय।

॥ लव ॥

लै लागी तब जानिये, जग सूँ रहै उदास।
नाम रटै निरदुंद है, अनहद पुर में बास ॥ १ ॥
लै लागी तब जानिये, हर दम नाम उचार।
एकै मन एकै दसा, साईं के दरबार ॥ २ ॥
ये पुरपट्टन ये गली, बहुरि न देखै आय।
सतगुरु सूँ सौदा हुआ, भर ले माल अघाय ॥ ३ ॥
ज्ञान जोग अरु भगति ले, सील सँतोष बिबेक।
लै लागी तब जानिये, जब दिल आवै एक ॥ ४ ॥
गगन गरजि भाठी चुए, हीरा घंठिक सार।
लै लागी तब जानिये, उतरै नहीं खुमार ॥ ५ ॥

॥ चितावनी ॥

पानी की इक बूँद सूँ, साज बनाया जीव।
अंदर बहुत अँदेस था, बाहर बिसरा पीव[1] ॥ १ ॥
धरनीधर जाना नहीं, कीन्हा कोटि जतन्न।
जल से साज बनाय करि, मानुष किया रतन्न ॥ २ ॥
अधोमुखी जब रहे थे, तल सिर ऊपर पाँव।
राखनहारा राखिया, जठर अगिन की लाव[2] ॥ ३ ॥
तुही तुही तुतकार थी, जपता अजपा जाप।
बाहर आकर भरमिया, बहुत उठाये पाप ॥ ४ ॥
जठर अगिन से राखिया, ना साईं गुन भूल।
वह साहिब दरहाल है, क्यों बोवत है सूल ॥ ५ ॥

---

(१) पुराणों में कथा है कि जब प्राणी गर्भ में आता है तब उसे ईश्वर का निरंतर दर्शन होता है और ईश्वर से प्रार्थना किया करता है कि इस मलाशय से मुझे बाहर कीजिये मैं प्रतिदिन आप का ध्यान किया करूँगा, परन्तु बाहर आते ही संसार की माया से अज्ञानी होकर उस को भूल जाता है। (२) लवर।

आध घड़ी की अध घड़ी, अध घड़ी की आध ।
साधू सेती गोस्टी[1], जो कीजै सो लाभ ॥ ६ ॥
पाव घड़ी तो याद कर, नीमाना सन[2] खोय ।
सतगुरु हेला देत है, बिषै सूल नहिं बोय ॥ ७ ॥
अलिफ अलह कूँ याद कर, कादिर कूँ कुरबान ।
साईं सेती तोड़ कर, राखा अधम जहान ॥ ८ ॥
अलिफ अलह कूँ याद कर, जिन्ह कीन्हा यह साज ।
उस साहिब कूँ याद कर, पाला[3] बिन जल नाज ॥ ९ ॥
संसारी में आन करि, कहा किया रे मूढ़ ।
सूआ सेमर सेइया, लागे डोंड़े टूट ॥ १० ॥
आदि समय चेता नहीं, अंत समय अँधियार ।
मद्धु समय माया रते, पाकड़ लिये गँवार ॥ ११ ॥
अंत समय बीतै घनी, तन मन धरै न धीर ।
उस साहिब कूँ याद कर, जिन्ह यह धरा सरीर ॥ १२ ॥
यह माटी का महल है, ता से कैसा नेह ।
जो साईं मिलि जात है, तौ पारायन देंह ॥ १३ ॥
यह माटी का महल है, छार मिलै छिन माहिं ।
चार सकस[4] काँधे धरे, मरघट कूँ ले जाहि ॥ १४ ॥
जार बार तन फूँकिया, होगा हाहाकार ।
चेत सकै तो चेतिये, सतगुरु कहैं पुकार ॥ १५ ॥
जार बार तन फूँकिये, मरघट मंडन माँड ।
या तन की होरी बनी, मिटी न जन की डाँड ॥ १६ ॥
माया हुई तो क्या हुआ, भूल रहा नर भूत ।
पिता कहैगा कौन कूँ, तू बेस्वा का पूत ॥ १७ ॥

---

(१) बात चीत । (२) पूरा बरस । (३) पालन किया । (४) आदमी ।

लख चौरासी बंध तेँ, सतगुरु लेत छुड़ाय।
जे उर अंतर नाम है, जोनी बहुरि न जाय ॥ १८॥

इस माटी के महल में, मन बाँधो विष पोट।
अहरन[1] पर हीरा धरा, ताहि सहै घन चोट ॥ १९॥

काचा हीरा किरच है, नहीं सहै घन मार।
ऐसा मन यह है रहा, लेखा ले करतार ॥ २०॥

हीरा घन की चोट सहि, साचे कूँ नहि आँच।
वह दरगह[2] में क्या कहै, जाके सँग हैं पाँच[3] ॥ २१॥

संतौं सेतीं ओलने[4], संसारी से नेह।
सो दरगह में मारिये, सिर में देकर खेह ॥ २२॥

मात पिता सुत बंधवा, देखैं कुल के लोग।
रे नर देखत फूँकिये, करते हैं सब सोग ॥ २३॥

महल मँडेरी नीम सब, चलै कौन के साथ।
कागा रौला हो रहा, कछू न लागा हाथ ॥ २४॥

पंछी उड़ै अकास कूँ, कित कूँ कीन्हा गौन।
यह मन ऐसे जात है, जैसे बुदबुद[5] पौन ॥ २५॥

धन संचै तो सील का, दूजा परम सँतोख।
ज्ञान रतन भाजन[6] भरो, असल खजाना रोक ॥ २६॥

दया धर्म दो मुकट हैं, बुद्धि बिबेक बिचार।
हर दम हाजिर हूजिये, सौदा त्यारंत्यार ॥ २७॥

नाम अभय पद निरमला, अटल अनूपम एक।
यह सौदा सत कीजिये, बनिजी बनिज अलेख ॥ २८॥

---

(१) निहाई। (२) दरबार। (३) पाँच दूत। (४) शिकायत। (५) बुलबुला। (६) बरतन।

गगन मँडल में रमि रहा, तेरा संगी सोय ।
बाहर भरमे हानि है, अंतर दीपक जोय ॥२९॥
चित के अंदर चाँदना, कोटि सूर ससि भान ।
दिल के अंदर देहरा, काहे पूजि पषान ॥३०॥
रतन रसायन नाम है, मुक्ता महल मसीत[1] ।
अंधे कूँ सूझै नहीं, आगे जलै अँगीठ ॥३१॥
रतन खजाना नाम है, माल अजोख अपार ।
यह सौदा सत कीजिये, दुगुने तिगुने चार ॥३२॥
मन माया की डुगडुगी, बाजत है निरदंग ।
चेत सकै तो चेतिये, जाना तुझे निहंग[2] ॥३३॥
फूँक फाँक फारिग किया, कहीं न पाया खोज ।
चेत सकै तो चेतिये, ये माया के चोज[3] ॥३४॥
ज्यों कुंजर सिर धुनत है, अगला[4] जनम सुझंत ।
अब की हेले[5] नर करै, तो सेऊँ पूरे संत ॥३५॥

॥ विश्वास ॥

सील संतोष बिबेक बुधि, दया धर्म इक तार ।
बिन निहचै पावै नहीं, साहिब का दीदार ॥ १ ॥
कासी मरै सो जाय मुक्ति कूँ, मगहर गदहा होई ।
पुरुष कबीर चले मगहर कूँ, ऐसा निहचा जोई[6] ॥ २ ॥

---

(१) मसजिद । (२) नंगा । (३) बिलास । (४) पुरबला । (५) बार ।
(६) कबीर साहिब काशी से जाकर मगहर में रहे थे और वहीं शरीर त्याग किया मगहर को मगहर देश बोलते हैं और लोगों का विश्वास है कि वहाँ मरने से गधे की जोनि मिलती है क्योंकि गुरुद्रोही राजा त्रिशंकु का शरीर जो अधर में लटक रहा है उस की छाया उस भूमि पर पड़ने से वह अपवित्र हो गई है ।

॥ दुबिधा ॥

हरष सोग है स्वान गति, संसा सरप सरीर ।
राग द्वेष बड़ रोग है, जम के परे जँजीर ॥ १ ॥
करम भरम भारी लगे, संसा सूल बबूल ।
डाली पातों डोलते, परसत नाहीं मूल ॥ २ ॥

॥ समरथ ॥

समरथ का सरना लिया, ताहि न चाँपै काल ।
पारब्रह्म का ध्यान धर, होत न बाँका बाल ॥ १ ॥
चरन कमल के ध्यान से, कोटि बिघन टल जाहिं ।
राजा होवै लोक का, जहाँ परै हुम[1] छाँहिं ॥ २ ॥

॥ बेहद ॥

गगन मँडल में रमि रहा, गलताना महबूब ।
वार पार नहि छेव[2] है, अबिचल मूरत खूब ॥ १ ॥
अजब महल बारीक है, अजब सुरत बारीक ।
अजब निरत बारीक है, महल धसे बिन बीक[3] ॥ २ ॥
पारब्रह्म बिन परख है, कीमत मोल न तोल ।
बिना वजन अरु राग है, बहुरंगी अनबोल ॥ ३ ॥
सजन सलोना राम है, अब मत अंतहिं जाय ।
बाहर भीतर एक है, सब घट रहा समाय ॥ ४ ॥
सजन सलोना राम है, अचल अभंगी एक ।
आदि अंत जा के नहीं, ज्यों का त्योंहीं देख ॥ ५ ॥
तुमहीं सोहं सुरत हौ, तुमहीं मन अरु पौन ।
इस में दूसर कौन है, आवै जाय सो कौन ॥ ६ ॥

---

(१) हुमा चिड़िया जिस की निस्बत कहते हैं कि उस का साया पड़ने से आदमी बादशाह हो जाता है। (२) आकार, खंड । (३) डर।

इस में दूसर कर्म है, बँधो अबिद्या गाँठ ।
पाँच पचीसो ले गये, अपने अपने बाट ॥ ७ ॥

॥ बिनय ॥

साहिब मेरी बीनती, सुनो गरीब-निवाज ।
जल की बूँद महल रचा, भला बनाया साज ॥ १ ॥
साहिब मेरी बीनती, सुनिये अर्स[1] अवाज ।
मादर पिदर करीम तू, पुत्र पिता को लाज ॥ २ ॥
साहिब मेरी बीनती, कर जोरूँ करतार ।
तन मन धन कुरबान है, दीजै मोहिं दीदार ॥ ३ ॥
सील सँतोष बिबेक बुध, दया धर्म इकतार ।
अकल यकीन इमान रख, गहो बस्तु निज सार ॥ ४ ॥
साहिब तेरी साहिबी, कैसे जानी जाय ।
त्रिसरेनू[2] से झीन है, नैनों रहा समाय ॥ ५ ॥
अनँत कोटि ब्रह्मंड का, रचनहार जगदीस ।
ऐसा सूच्छम रूप धरि, आन बिराजा सीस ॥ ६ ॥
साहिब पुरुष करीम तूँ, अविगत अपरंपार ।
पल पल माहें बंदगी, निरधारों आधार ॥ ७ ॥
दरदमंद दरवेस तूँ, दिल-दाना महबूब ।
अचल बिसंभर बसि रहा, सूरत मूरत खूब ॥ ८ ॥
सुरत निरत से झीन है, जगन्नाथ जगदीस ।
त्रिकुटी छाजे पुर रहै, है ईसन का ईस ॥ ९ ॥
साहिब तेरी साहिबी, कहा कहूँ करतार ।
पलक पलक की दीठ में, पूरन ब्रह्म हमार ॥ १० ॥

---

(१) सातवाँ आसमान। (२) तीन परमाणु का एक त्रिसरेणु होता है।

एते करता कहाँ हैं, वह तो साहिब एक ।
जैसे फूटी आरसी, टूक टूक में देख ॥११॥
करैं बीनती बंदगी, साहिब पुरुष सुभान ।
संख असंखी बरन है, कैसे रचा जहान ॥१२॥
साहिब तेरी साहिबी, समझ परै नहि मोहि ।
एता रूप जहान जग, कैसे सिरजा तोहि ॥१३॥
एक बीज इक बिंदु है, एक महल इक द्वार ।
चरन कमल कुरबान जाँ, सिरजे रूप अपार ॥१४॥
मौला जल से थल करै, थल से जल कर देत ।
साहिब तेरी साहिबी, स्याम कहूँ की सेत ॥१५॥
साहिब मेरा मिहरबाँ, सुनिये अर्स अवाज ।
पंजा राखो सीस पर, जमहीं होत तिरास ॥१६॥
मादर पिदर परान तूँ, साहिब समरथ आप ।
रोम रोम धुनि होत है, सबद सिंधु परकास ॥१७॥
तन मन धन जगदीस का, रती सुमेर समान ।
मिहर दया कर मुझ दिया, तन मन वारौं प्रान ॥१८॥
यह माया जगदीस की, अपनी कहैं गँवार ।
जमपुर धक्के खायँगे, नाहक करैं बिगार ॥१९॥
मैं समरथ के आसरे, दमक दमक करतार ।
गफलत मेरी दूर कर, खड़ा रहूँ दरबार ॥२०॥
सुनो पुरुष मेरी बीनती, साहिब दीन-दयाल ।
पतित-उधारन साइयाँ, तुम हो नजर निहाल ॥२१॥
नागदमन[1] निरगुन जड़ी, ऐसा तुम्हरा नाम ।
तच्छक तीछा डरत है, हर दम जप ले नाम ॥२२॥

---

(१) नाम साँप की जड़ी का ।

आतम इंद्री कारने, मत भटकावै मोहि ।
जगन्नाथ जगदीस गुरु, सरना आया तोहिं ॥ २३ ॥
हुमा छाँह जा पर परै, पिरथी-नाथ कहाय ।
पसु पंछी आदम सबै, सनमुख परखै ताय ॥ २४ ॥
दिव्य-दृष्टि देवा दयाल, सतगुरु संत सुजान ।
तिरलोकी के जीव कूँ, परख लेत परवान ॥ २५ ॥
अगले पिछले जन्म कूँ, जानत है जगदीस ।
मुंडमाल सिव के गले, पहिर रहे ज्यौं ईस[1] ॥ २६ ॥
दम सूँ दम कूँ समझि ले, उठत बैठ आराध ।
रंचक ध्यान समान सुध, पूरन सकल मुराद ॥ २७ ॥
अनंत कोठि ब्रह्मंड में, बठक[2] बीज बिस्तार ।
सुरत सरूपी पुरुष है, तन मन धन सब वार ॥ २८ ॥
रतन अमोली फूल है, सो साहिब के सीस ।
जो रँग नाहीं स्रिष्टि में, देखा बिस्वे बीस ॥ २९ ॥
सतगुरु के सदके करूँ, अनँत कोठि ब्रह्मंड ।
निरगुन नाम निरंजना, मेठत है जम दंड ॥ ३० ॥
दिल के अंदर देहरा, जा देवल में देव ।
हर दम साखी-भूत है, करो तासु की सेव ॥ ३१ ॥
जल का महल बनाइया, धन समरथ साईं ।
कारीगर कुरबान जाँ, कुछ कीमत नाईं ॥ ३२ ॥

---

(१) एक समय पारबतीजी ने शिवजी से पूछा कि यह मुंडमाल जो आप पहिने हुए हैं उसमें किन किन के सिर हैं। शिवजी बोले कि तुम हमको इतनी प्रिय हो कि जितने जन्म तुमने धरे हैं तुम्हारे हर एक शरीर का मुंड मैं ने अपने गले में डाल रक्खा है। (२) बड़ का पेड़

कोटि जतन करि राखिया, जठरा के माइँ।
गर्भ बास की बीनती, सुनि पुरुष गुसाइँ ॥ ३३॥
अष्ट कमल दल आरती, हर दम हरि होई।
नाभि कमल में प्रान-नाथ, राखे निरमोई ॥ ३४॥
माया की बुरकी[1] पड़ी, मारग नहि पावै।
दस इंद्री लारे लगी, अब कौन छुटावै ॥ ३५॥
बड़वा नल का द्वार है, नाभी के नीचे।
जो सतगुर भेदी मिलै, तहँ अमृत सींचे ॥ ३६॥
मन माया मौजूद है, काया गढ़ माहीं।
बीच पुरंजन[2] बसत है, सो पावै नाहीं ॥ ३७॥
पाँच भार[3] जो आदि है, जा के सँग डोलै।
तीन लोक कूँ खा गई, मुख से नहिं बोलै ॥ ३८॥
बड़ी कुसंगन सुपचनी, सुध बुध बिसरावै।
चिंता चेरी चूहरी[4], नित नाद बजावै ॥ ३९॥
बीच पुरंजन बैठ कर, बहु नाच नचावै।
लोक परगने बाँट कर, बड़दच्छा[5] ध्यावै ॥ ४०॥
मनसा मालिन आनकर, नित सेज बिछावै।
तहाँ पुरंजन बैठ कर, नित भोग करावै ॥ ४१॥
तीन लोक की मेदनी[6], सब हाजिर होई।
मन रंगी के रंग में, रंगा सब कोई ॥ ४२॥
आसन असथल उठ गये, कुछ पिंड न प्राना।
फेर पुरंजन आनकर, घाला घमसाना ॥ ४३॥

---

(१) परदा। (२) निरंजन, त्रिलोकीनाथ। (३) बोझ अर्थात तत्व। (४) भंगन। (५) बरिच्छा। (६) पृथ्वी।

दुरमति दूती और है, इक दारुन माया।
जैसे काँजी[1] दूध में, घृत खंड कराया ॥४४॥
द्वादस कोटि कटक चढ़ै, कुछ गिनती नाहीं।
लालच नीचन की बहै, जिन फौजाँ माहीं ॥४५॥
संसा सोच सराय में, सूतक दिन राती।
जीवतही जूती परै, जम तोरै छाती ॥४६॥
रहजन[2] कोटि अनंत हैं, काया गढ़ माहीं।
ममता माया बिस्तरी, तिर्गुन तन माहीं ॥४७॥
बाँकी फौज पुरंजना, कुछ पार न पावै।
मन राजा के राज में, क्या भगति करावै ॥४८॥
मन के मारे मुनि बहे, नारद से ज्ञानी।
सिंगी रिषि पारासरा, कीन्हे रजधानी ॥४९॥
डरै पुरंजन एक से, जो जाना जाई।
निज मन का आरंभ करि, सुरती लै लाई ॥५०॥
सील सँतोष बिबेक से, जा के दरबाना।
काम क्रोध भागे जबै, गढ़ देखा सामाँ ॥५१॥
लोभ मोह मारे परे, सेना सब भागी।
सतगुरु के परताप से, जब आतम जागी ॥५२॥
पुरुष पुरंजन पाकड़ा, गढ़ घेरा जाई।
निज मन की फौजाँ धसीं, काया गढ़ माहीं ॥५३॥
अकल यकीन इमान औ, मनसा भइ धीरं।
अजपा तारी धुन लगी, जम काटे जँजीरं ॥५४॥

---

(१) सिरका। (२) बटमार, ठग।

थाक्या मन पिंगल चढ़ा, सरवान परेवा[1] ।
कोटि पदम की दामिनी, भरजात बहु भेवा ॥ ५५ ॥
प्रान अपान[2] समान कर, सुरती लौ लाई ।
दुहुबर कोट [illegible], अरु तहँ बड़ खाँई ॥ ५६ ॥
भरम बुरज भाने सबै, सोलह सुर घाई ।
सत्रह सुरती हंसिनी, सब खबरैं लाई ॥ ५७ ॥

॥ साध ॥

धन जननी धन भूमि धन, धन नगरी धन देस ।
धन करनी धन सुकुल धन, जहाँ साध परबेस ॥ १ ॥
साईं सरिखे संत हैं, या में मीन न मेख ।
परदा अंग अनादि है, बाहर भीतर एक ॥ २ ॥
साईं सरिखे देख ले, बरतावै जे कोय ।
सप्त कोस जल चढ़ गया, जहाँ साध मुख धोय[3] ॥ ३ ॥
बृच्छ नदी औ साध जन, तीनों एक सुभाव ।
जल न्हावै फल बृच्छ दे, साध लखावै नाँव ॥ ४ ॥
ऐसे साधू संत जन, पारब्रह्म की जात ।
सदा रते हरि नाम सूँ, अंतर नाहीं घात ॥ ५ ॥
साध समुंदर कमल गति, माहैं साईं गंध ।
जिन में दूजी भिन्न क्या, सो साधू निरबंध ॥ ६ ॥
नौ नेजे जो जल चढ़ै, कमल न भींजै गात ।
माहैं ज्ञान सुगंध सर[4], आदि अंत का साथ ॥ ७ ॥

---

(१) कबूतर के समान। (२) नीचे की वायु। (३) गिरनार पहाड़ जहाँ अच्छे साध रहते हैं वहाँ से सात कोस नीचे हनुमानधारा गिरती है। (४) तालाब।

संत सरोवर हंस हैं, भच्छन करैं बिचार।
पुहुप बासना ज्यूँ रहैं, राई रंच न भार[1] ॥ ८ ॥
साध कमल मध बासना, ऐसा हलका अंग।
मैल मनोरथ ना रहै, निरमल धारा गंग ॥ ९ ॥
साध सँगत हरि भक्ति बिनु, कोई न पावै पार।
निरमल आदि अनादि हैं, गंदा सब संसार ॥ १० ॥
ज्यूँ जल में पाषान है, भींजत नाहीं अंग।
चकमक लागे अगिन है, कहा करै सतसंग ॥ ११ ॥
साध संत के अैन[2] में, बसैं हजूर अमान।
जा घर निंदा साध की, सो घर डूबै जान ॥ १२ ॥
संत सकल के मुकट हैं, साईं साध समान।
बड़ भागी वे हंस हैं, जिन संतो नाल पिछान ॥ १३ ॥
साध सगे हैं जगत में, संत सगाई साच।
साधू ढूँढ़त नीकलूँ, बहु बिधि काछूँ काछ ॥ १४ ॥
साइ सरिखे साध हैं, इन सम तुल नहिं और।
संत करैं सोइ होत है, साहिब अपनी ठौर ॥ १५ ॥
संतौं कारन सब रचा, सकल जमीं असमान।
चंद सूर पानी पवन, जग तीरथ औ दान ॥ १६ ॥
ज्यूँ बच्छा गउ की नजर में, यूँ साईं औ संत।
हरि जन के पीछे फिरैं, भक्त बछल भगवंत ॥ १७ ॥
पंडित कोटि अनंत हैं, ज्ञानी कोटि अनंत।
स्रोता कोटि अनंत हैं, बिरले साधू संत ॥ १८ ॥

---

(१) जैसे फूल मे सुगंध जिस का रत्ती भर बोझ नहीं होता। (२) आँख, घर।

जिन्ह मिलते सुख ऊपजै, मेटैं कोटि उपाध ।
भुवन चतुरदस ढूँढ़िये, परम सनेही साध ॥ १९ ॥
राम सरीखे साध हैं, साध सरीखे राम ।
सतगुरु को सिजदा करूँ, जिन्ह दीन्हा निज नाम ॥ २० ॥

॥ बैराग ॥

बैराग नाम है त्याग का, पाँच [illegible] माँहि ।
जब लग संसा सरप है, तब लग त्यागी नाहिं ॥ १ ॥
बैराग नाम है त्याग का, पाँच पचिसै संग ।
ऊपर की कँचल तजी, अंतर बिषय भुवंग ॥ २ ॥
असन बसन सब तज गये, तज गये गाँव गिरेह ।
माहैँ संसा सूल है, दुरलभ तजना येह ॥ ३ ॥
बाज कुही[1] गत ज्ञान की, गगन गरज गरजंत ।
लूटै सुन्न अकास तैं, संसा सरप भछंत ॥ ४ ॥
नित हो जामै नित मरै, संसय माँहि सरीर ।
जिन का संसा मिट गया, सो पीरन सिर पीर ॥ ५ ॥
ज्ञान ध्यान दो सार है, तीजे तत्त अनूप ।
चौथे मन लागा रहै, सो भूपन सिर भूप ॥ ६ ॥
मन की झीनी ना तजी, दिल ही माँहि दलाल ।
हर दम सौदा करत है, करम कुसंगति काल ॥ ७ ॥
मन सेती खोटो गढ़ै, तन सूँ सुमिरन कीन्ह ।
माला फेरे क्या हुआ, दुर कुह्न बेदीन ॥ ८ ॥
तन मन एक वजूद कर, सुरत निरत लौ लाय ।
बेड़ा पार समुद्र होइ, एक पलक ठहराय ॥ ९ ॥

---

(१) शिकरी ।

चार पदारथ एक कर, सुरत निरत मन पौन।
असल फकीरी जोग यह, गगन मँडल कूँ गौन ॥ १० ॥

॥ सतसंग सज्जन को ॥

संगत कीजै साध की, संसारी भटकंत।
पिंजर सूआ बसत है, किस कूँ बूझै पंथ ॥ १ ॥
साधोँ की संगत करै, बड़ भागी बड देव।
आपन तो संसा नहीँ, और उतारै खेव ॥ २ ॥
संगत सुर को कीजिये, असुरन सूँ क्या हेत।
डार मूल पावै नहीँ, ज्यौँ मूली का खेत ॥ ३ ॥
दम सुमार आधार रख, पलकौँ मद्धे घियान।
संतौँ की संगति करै, समझि बूझि गुरु ज्ञान ॥ ४ ॥
नाम रते निरगुन कला, मानस नहीँ मुरार[1]।
ज्यौँ पारस लोहा लगे, कटि हैँ करम लगार ॥ ५ ॥

॥ सतसंग दुर्जन को ॥

बगुला हंसा एक सर, एकै रूप रसाल।
वह सरवर मोती चुँगै, वह मच्छी का काल ॥ १ ॥
तन तो बाँबी हो गया, मन की गई न बान।
स्वर्ग पहुँच दोजख गये, सतगुरु लगे न कान ॥ २ ॥
सतगुरदतदाता[2] कहै, बानी बड़ी बलंद।
मुख बोले क्या होत है, अंतर हेत न अंध ॥ ३ ॥
कमरी के रंग ना चढ़ै, कोइला नहीँ सपेद।
सतगुरु बिन सूझै नहीँ, कहा पढ़त है बेद ॥ ४ ॥

---

(१) मन में जिन के कोई कामना नहीँ रही है। (२) तोता के पढ़ने की बोली।

कस्तूरी की [illegible], मिरगा लेत सुबास ।
निरख परख आवै नहीं, बहुरि ढँढोरै घास ॥ ५ ॥

॥ कुसंग ॥

कमल फूल मन भँवर है, काँठा करम कुसंग ।
पाँच विषय सूँ बँधि रहा, कैसे लागै रंग ॥ १ ॥
भूमि पड़ै जैसा फलै, सुर की संगत कीन्ह ।
नोचन मुख नाहिँ [illegible], ना कोइ मिलै कुलीन ॥ २ ॥
सीप पियत है स्वाँति कूँ, बिच है खारी नीर ।
माहिँ मोती नीपजै, करनी-बंध सरीर[1] ॥ ३ ॥
संसारी सूँ साख क्या, ऊसर बरषा देख ।
बोवै बीज न खेत हित, तौ क्या काटै मेख ॥ ४ ॥

॥ उपदेश ॥

कोटि जग्य असुमेध कर, एक पलक धर ध्यान ।
षटदल के री बंदगी, नहीं जग्य उनमान ॥ १ ॥
अठसठ तीरथ भरमता, भटक मुआ संसार ।
बारहबानी[2] ब्रह्म है, जा का करो बिचार ॥ २ ॥
काया अपनी है नहीं, माया कहँ से होय ।
चरन कमल में ध्यान रख, इन दोनौं को खोय ॥ ३ ॥
इस दुनियाँ में आय कर, इन चारौं कूँ बंध ।
काम क्रोध छोह चूहरा[3], लोभ लपटिया अंध ॥ ४ ॥

॥ घट मठ ॥

स्वर्ग सात असमान पर, भटकत है मन मूढ़ ।
खालिक[4] तो खोया नहीं, इसी महल[5] में ढूँढ़ ॥

---

(१) यह उपमा इस बात की है कि सच्ची लगन वाले पर कुसंग भी बुरा असर नहीं पैदा करता । (२) खरा सोना । (३) भंगी । (४) कर्ता । (५) शरीर ।

॥ साच ॥

साचा सतगुरु जो मिलै, हंसा पावै धीर ।
[illegible] जूनी मिटै, मुरसिद गहिर गँभीर ॥ १ ॥
साचे कूँ परनाम है, झूठे के सिर दंड ।
ठौर नहीं तिहुँ लोक में, भरमत है नौ खंड ॥ २ ॥
साचे का सुमिरन करो, झूठे द्यो [illegible] ।
साचा साहिब आप है, झूठ कपट सब काल ॥ ३ ॥
साचे कूँ स्वर्गापुरी, झूठा दोजख माहिं ।
चंद सूर की आयु[1] लग, दोजख निकसै नाहिं ॥ ४ ॥
साचे का सेवन करै, झूठे कूँ ले लूट ।
झूठ सबद सूँ यूँ डरै, ज्यों स्याने की मूठ[2] ॥ ५ ॥
साचे कूँ सब सौंप दे, भगति बंदगी नाम ।
झूठा कपटी मारिये, हमरे कौने काम ॥ ६ ॥
साचे सदा मसंद[3] पर, उस चंगे दरबार ।
झूठों के जूती पड़ै, जम किंकर की मार ॥ ७ ॥
साहिब जिन के उर बसै, झूठ कपट नहिं अंग ।
तिन का दरसन न्हान है, कहँ परबी फिर गंग ॥ ८ ॥
साचे सूरे संत हैं, मरदाने जूझार[4] ।
लाख दोस ब्यापै नहीं, एक नाम की लार ॥ ९ ॥
सत्त सुकृत अरु बंदगी, जा उर ज्ञान बिबेक ।
साध रूप साईं मिले, पूरन ब्रह्म अलेख ॥ १० ॥

---

(१) उमर, स्थिति । (२) गुनी के जादू का बान । (३) तकिया मसनद ।
(४) जोधा ।

सत्त सुकृत संतोष सर, आधीनी [illegible] ।
दया धरम जा उर बसै, सो साईं दीदार ॥ ११॥
साचे कूँ संका नहीं, झूठे भय घर माहिं ।
कोट किले क्या चुनत है, झूठा छूटै नाहि ॥ १२॥

॥ जरना[1] ॥

ऐसी जरना[1] चाहिये, ज्यों पृथ्वी तत धीर ।
खोदे से कसकै नहीं, ऐसा बज्र सरीर ॥ १ ॥
ऐसी जरना चाहिये, ज्यों अप[2] तेज अनूप ।
न्हावै धोवै थूक दे, तामस नहीं सरूप ॥ २ ॥
ऐसी जरना चाहिये, पवन तत्त परमान ।
कुटिल बचन कोई कहै, मानै नहीं अमान ॥ ३ ॥
ऐसी जरना चाहिये, ज्यों अगिन तत्त में होय ।
जो कुछ परै सो सब जरै, बुरा न बाचै कोय ॥ ४ ॥
ऐसी जरना चाहिये, ज्यों तरवर[3] के तीर ।
काटै चीरै काठ को, तौ भी मन है धीर ॥ ५ ॥
ऐसी जरना चाहिये, ज्यों घनहर[4] जल मेह ।
सबही ऊपर बरसता, ना दिल दोष सनेह ॥ ६ ॥
दीठी अनदीठी करैं, जिन की लूँ मैं दाद ।
सँग से कभी न बिछुरूँ, परम सनेही साध ॥ ७ ॥
दीठी अनदीठी करैं, सब अपने सिर लेहिं ।
सँग से कभी न बिछुरूँ, जो मुझ सरबर देहिं ॥ ८ ॥

---

(१) सहन, छिमा, पचाना, गुप्त रखना। (२) जल। (३) पेड़। (४) गहरा। बादल।

दीठी अनदीठी करौं, जिन के हूँ मैं संग।
भक्ति [illegible] देत हैं, चढ़त नवेला रंग॥ ९॥
दीठी अनदीठी करौं, सो साधू सिर-पोस।
जो बीतै सो सिर धरौं, देहिं न काहू दोस॥ १०॥
दीठी अनदीठी करौं, जिन की लूँ मैं दाद।
सँग से कभी न बीछरूँ, खेलूँ आद अनाद॥ ११॥
ऐसी जरना चाहिये, ज्यौं अललपच्छ[1] के अंग।
अंडा छुटै आकास तें, बहुर मिलै सतसंग॥ १२॥
ऐसी जरना चाहिये, ज्यौं चंदन के अंग।
मुख से कछू न कहत है, तन कूँ खात भुवंग॥ १३॥
ऐसी जरना चाहिये, ज्यौं पारस के होय।
लोहे से सोना करै, कह न सुनावै कोय॥ १४॥
परदा कभी न पाड़िये[2], जे सिर जलै अँगीठ।
चाबुक तोड़ौ चौपटे, गुनहगार की पीठ॥ १५॥
कथनी में कुछ है नहीं, करनी में रँग लाग।
करनी करि जरना जरै, सो जोगी बड़ भाग॥ १६॥
काँछ बाँछ को कसि रहे, सतबादी नर एक।
साईं के दरबार में, रहै जिन्हौं की टेक॥ १७॥

---

(१) एक चिड़िया जिसको निस्बत कहा जाता है कि वह इतने ऊँचे आकाश में रहती है कि वहीं जब अंडा देती है तो रास्ते में बायु मंडल की रगड़ से अंडा सेय जाता है और बच्चा पैदा होकर पृथ्वी पर पहुँचने के पहिले उसके पंख जम आते हैं और रास्ते ही से अपने माता पिता की संगत में लौट जाता है। (२) उघारिये।

॥ दीनता ॥

सुरग नरक बांछै नहीं, मोच्छ बंध से दूर।
बड़ी गरीबी जगत में, संत चरन रज धूर॥

॥ बिचार ॥

ज्ञान बिचार बिबेक बिन, क्यों दम तोरै स्वास।
कहा होत हरि नाम सूँ, जो दिल ना बिस्वास॥ १ ॥
समझ बिचारे बोलना, समझ बिचारे चाल।
समझ बिचारे जागना, समझ बिचारे ख्याल॥ २ ॥
करै बिचारे समझ करि, खोज बूझ का खेल।
बिना मथे निकसै नहीं, है तिल अंदर तेल॥ ३ ॥
जैसे तिल में तेल है, यूँ काया मध राम।
कोल्हू में डारे बिना, तत्त नहीं सहकाम॥ ४ ॥
बिचार नाम है समझ का, समझ न परी परक्ख।
अकलमंद एकै घना, बिना अकल क्या लक्ख॥ ५ ॥
पुर पट्टन नगरी बसै, निरधारं आधार।
लख चौरासी पोषता, ऐसी जरना सार॥ ६ ॥
चौरासी भाँडे गढ़ै, खेलै खेल अपार।
खान पान सब देत है, ऐसा समरथ सार॥ ७ ॥

॥ काम ॥

चौरासी की चाल क्या, मो सेती सुन लेह॥
चोरी जारी करत है, जाके मुखड़े खेह।

॥ क्रोध ॥

काम क्रोध मद लोभ लट, छुटी रहै बिकराल।
क्रोध कसाई उर बसै, कुसब्द छुरा घर घाल॥

॥ तृष्णा ॥

आसा तृसना नदी में, डूबे तीनूँ लोक।
मनसा माया बिस्तरी, आतम आतम दोष॥

॥ मन ॥

जीवत मुकता सो कहो, आसा तृस्ना खंड।
मन के जीते जीत है, क्यूँ भरमे ब्रह्मंड॥

॥ निन्दा ॥

निंदा बिंदा छाड़ि दे, संतौं सूँ कर प्रीत।
भौसागर तिर जात है, जीवत मुक्त अतीत॥ १॥
एक सत्रु इक मित्र है, भूल परो रे प्रान।
जम की नगरी जाहिगा, सबद हमारा मान॥ २॥

॥ मिश्रित ॥

सूआ सतगुर कहत है, पिंजरे परे परान।
खिरकी खुलते उड़ गया, मंतर लगा न कान॥ १॥
सुअटा पढ़ै सुभान गत, अंतर नहीं उचार।
कुंज[1] कुरल[2] अँड पोखहीं, कोसन सहस हजार॥ २॥
ऐसी संगत जो मिले, तो साईं सूँ भेट।
ऊपरली बरबाद है, जम मारैगा फेट॥ ३॥
सती पुकारै सर[3] चढ़ी, मुख बोलत है राम।
कौतुक[4] देखन सो गये, जिन के मन सहकाम॥ ४॥
सती बहुर उपजै नहीं, घर जाने की प्रीत।
सती रटत है राम कूँ, कौतुक गावै गीत॥ ५॥
तपी तपै तन कूँ दहै, पाँचो इन्द्री साधि।
नहिं इच्छा दीदार की, भूले आदि अनादि॥ ६॥

---

(१) कुंजबन चिड़िया। (२) कोक चिड़िया। (३) सरा, चिता। (४) तमाशाई।

लाख बज्र कूँ झेल कर, सूरे जूझैं खेत।
बादी जोगी हठ करैं, छिलकी बरखै रेत ॥ ७ ॥
पुर पट्टन नगरी बसै, भेद न काहू देत।
कीड़ी कुंजर पोषता[1], अपना नाम न लेत ॥ ८ ॥

गुलाल साहिब

जीवन-समय—अट्ठारहवें शतक के पिछले भाग से उन्नीसवें शतक के अगले हिस्से तक। जन्म स्थान--तअल्लुका बसहरि ज़िला ग़ाज़ीपुर। सतसंग स्थान—मौज़ा भुरकुड़ा ज़िला ग़ाज़ीपुर। जाति और आश्रम—क्षत्री, गृहस्थ। गुरू—बुल्ला साहिब।

यह बसहरि के ज़मींदार थे वहीं पैदा हुए और वहीं चोला छोड़ा। भुरकुड़ा। इसी तअल्लुके का एक गाँव है। [पूरा जीवन-चरित्र इन की बानी के आदि में छपा है]

सत्त सबद गुन गायेऊ, संतन गुरु-अधार।
अगम अगोचर दूरि है, कोऊ न पावत पार ॥ १ ॥
उठ तरंग दसहूँ दिसा, भाँति भाँति के राग।
बिन पग नाच नचायेऊ, बिन रसना गुन गाय ॥ २ ॥
ज्ञान ध्यान तहवाँ नहीं, सहज सरूप अपार।
जन गुलाल दिल सोँ मिलो, सोई कंत हमार ॥ ३ ॥
बिन जल कँवला बिगसेऊ, बिना भँवर गुंजार।
नाभि कँवल जोती बरै, तिरबेनी उँजियार ॥ ४ ॥
सुखमन सेज बिछायेऊ, पैाँढ़हिं प्रभू हमार।
सुरति निरति लेजायेऊ, दसो दिसा के द्वार ॥ ५ ॥
पुलकि पुलकि मन लायेऊ, आवा गवन निवार।
जन गुलाल तहँ भायेऊ, जम का करहि हमार ॥ ६ ॥

(१) चींटी से हाथी तक का पालन करता है

मन पवनहिं जीतो जबै, महसुन[1] माँहि समाध ।
सुखमन जोति सँवारेऊ, बरि बरि होत प्रकास ॥ ७ ॥
सोहंकार सुनाइलो, जोति सरूपी नाम ।
सेत सोहावन जगमगर, जीव मिलल सतनाम ॥ ८ ॥
जिन यह ब्रह्म बिचारल, सोई गुरू हमार ।
जन गुलाल सत बोलही, झूठ फिरहि संसार ॥ ९ ॥
दृष्टि पदारथ फरल सोइ, सहज कै परलि धमार ।
अति अद्भुत तहँ देखल, पुलकि पुलकि बलिहार ॥ १० ॥
बरनत बरनि न आवई, कोठि चंद छबि वार ।
दसौ दिसा पूरित सोई, संत सदा रखवार ॥ ११ ॥
जिन पावल तिन गावल, और सकल भ्रम डार ।
कहै गुलाल मनोरवा[2], पूरन आस हमार ॥ १२ ॥
प्रेम कै परल हिंडोलवा, मानिक बरल लिलार ।
कहैं गुलाल मनोरवा, पुजवल आस हमार ॥ १३ ॥
अनुभौ फाग मनोरवा, दहुँ दिसि परलि धमार[2] ।
काया नगर में रँग रच्यो, प्रान-नाथ बलिहार ॥ १४ ॥
बिनु बाजे धुनि गाजई, अधरहिं अगम अपार ।
प्रान तबहिं उठि गवनेऊ, बहुरि नाँहि औतार ॥ १५ ॥
प्रेम पगल मन रातल, आनँद मंगलचार ।
तीन लोक के ऊपरे, मिललँहि कंत हमार ॥ १६ ॥
जोग जग्य जप तप नहीं, दुख सुख नाहिं संताप ।
घठत बढ़त नहिं छीजई, तहवाँ पुन्न न पाप ॥ १७ ॥

(१) महासून्य । (२) एक राग का नाम ।

संत सभा में बैठि के, आनँद उजल प्रकास।
जन गुलाल पिय [illegible], पूजलि मन कै आस ॥ १८॥
बंकनाल चढ़ि के गयो, आयो प्रभु दरबार।
[illegible] जोति जगन लगी, कोटि चंद छबि वार ॥ १९॥
मुक्ता झरि बरखन लगो, दसो दिसा झनकार।
जन गुलाल तन मन दियो, पूरी खेप हमार ॥ २०॥
मानिक भवन उदित[1] तहाँ, भाँवर दै दै गाय।
जन गुलाल [illegible] भयो, कौतुक कह्यो न जाय ॥ २१॥

—:०:—

भीखा साहिब

जीवन-समय—अठ्ठारहवें शतक के अंत से उन्नीसवें शतक के मध्य तक। जन्म स्थान—मौज़ा ख़ानपुर-बोहना ज़िला आज़मगढ़। सतसंग स्थान—मौज़ा भुरकुड़ा ज़िला ग़ाज़ीपुर। जाति और आश्रम—चौबे, गृहस्थ। गुरू—गुलाल साहिब।

उपदेश लेने के पीछे भीखा साहिब भुरकुड़ा से जहाँ उन के गुरू का स्थान था नहीं हटे और उन के चोला छोड़ने पर उन की गद्दी पर बैठे। अनुमान पचास बरस की अवस्था में चोला छोड़ा। [पूरा जीवन-चरित्र इन की बानी के आदि में बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग में छपा है]

॥ गुरुदेव ॥

संत चरन में जाइ के, सीस चढ़ायो रेनु[2]।
भीखा रेनु के लागते, गगन बजायो बेनु ॥ १ ॥
बेनु बजायो मगन ह्वै, छुटी खलक की आस।
भीखा गुरु परताप तें, लियो चरन में बास ॥ २ ॥

॥ सुमिरन ॥

जोग जुक्ति अभ्यास करि, सोहं सबद समाय।
भीखा गुरु परताप तें, निज आतम दरसाय ॥ १ ॥

---

(१) ऊँचा, उदय। (२) चरन की रज या धूल।

जाप जपै जो प्रीत सों, बहु बिधि रुचि उपजाय ।
साँझ समय औ प्रात लगि, तत्त पदारथ पाय ॥ २ ॥
राम को नाम अनंत है, अंत न पावै कोय ।
भीखा जस लघु बुद्धि है, नाम तवन[1] सुख होय ॥ ३ ॥
एकै धागा नाम का, सब घट मनिया माल ।
फेरत कोई संत जन, सतगुरु नाम गुलाल ॥ ४ ॥

॥ भेष की रहनी ॥

काया कुंड बनाइ के, घूमि घोटना[2] देइ ।
बिजया[3] जीव मिलाय के, निर्मल घैाँटा[4] लेइ ॥ १ ॥
साफो[5] सहज सुभाव की, छानो सुरति लगाय ।
नाम पियाला छकि रहै, अमल उतरि नहि जाय ॥ २ ॥
जोग जुक्ति सुमिरन बनो, हर दम मनिया[6] नाम ।
करम खंड कंठी गुहो, गर बाँधो प्रानायाम ॥ ३ ॥
अगम ज्ञान गूदर लियो, ढाँको सकल सरीर ।
ब्रह्म जनेऊ मेखला, पहिरहिं मस्त फकीर ॥ ४ ॥
सेल्ही संसय नासि करि, डारो हृदय लगाय ।
तिलक उनमुनी ध्यान धरि, निज सरूप दरसाय ॥ ५ ॥
ताखी[7] तत्त जो माल[8] है, राखो सीस चढ़ाय ।
चरन कमल निरखत रहो, मौजै मौज समाय ॥ ६ ॥
तूमा[9] तन मन रूप है, चेतनि आब[10] भराय ।
पीवत कोई संत जन, अमृत आपु छिपाय ॥ ७ ॥

---

(१) तैसा (२) घुमाय के घोटे । (३) भाँग । (४) घूँट । (५) छन्ना । (६) माला का दाना । (७) साधुओं की टोपी । (८) माला । (९) तंबा । (१०) पानी ।

कुबरी[1] पानी[2] अंग भी, पवन दंड बरजोर।
लागी डोरी प्रेम की, तम मेटो भयो भोर ॥ ८ ॥
पौवा[3] अधर अधार को, चलत सो पाँव पिराय।
जो जावै सो गुरु कृपा, कोउ कोउ सीस गँवाय ॥ ९ ॥
मुरछल मन उनमान का, छाया ज्ञान अकार।
उस्न[4] ताप निसि दिन सहै, केवल नाम अधार ॥ १० ॥
अधं उर्ध के बीच में, कमर-बस्त[5] ठहराय।
इँगला पिँगला एक है, सुखमन के घर जाय ॥ ११ ॥
झोरी मौज अनयास[6] की, बटुआ आनँद[7] लेय।
मृगछाला त्रिकुटी भई, बैठि सबद चित देय ॥ १२ ॥
सकल संत के रेनु[8] लै, गोला गोल बनाय।
प्रेम प्रीत घसि ताहि को, अंग बिभूति लगाय ॥ १३ ॥
भिच्छा अनुभव अन्न लै, आतम भोग बिचार।
रहै सो रहनि अकासवत, बरजित जानि अहार ॥ १४ ॥
जटा बढ़ावै भाव की, जब हरि कृपा अमान।
मुद्रा नावै नाम की, गुरु सबद सुनावै कान ॥ १५ ॥
आड़बंद[9] हर हाल की, अलफी[10] रहनि अडोल।
बाघम्बर[11] है सुन्न का, अविगत करत कलोल ॥ १६ ॥
पाँच पचीस धुईं लगी, धीरज कुंड भराय।
ज्ञान अगिन ता में दियो, बिषय इन्हन[12] जरि जाय ॥ १७ ॥
फाहुलि[13] अगम अचित की, चीपी[14] ध्यान लगाय।
नूर जहूर झलकत रहै, ता में मन अरुझाय ॥ १८ ॥

---

(१) छड़ी, बैरागिनि। (२) हाथ। (३) खड़ाऊँ। (४) गरमी। (५) कमरबंद। (६) आसा से रहित। (७) सुख। (८) चरन रज। (९) लँगोट। (१०) बिना बँहोली का कुरता। (११) शेर के चमड़े का बस्त्र। (१२) ईंधन। (१३) फरुही। (१४) नाप का कटोरा।

भेख अलेख अपार है, कहत न ज्ञान समाय।
सुन्न निरंतर अलोक है, खोज करै कोउ जाय ॥ १९॥
साहिब सब घट रमि रह्यो, पूरन आपै आप।
भीखा जो नहिं जानही, सहै करम संताप ॥ २०॥

॥ मिश्रित ॥

एक संप्रदा[1] सबद घट, एक द्वार सुख संच[2]।
इक आतम सब भेष[3] मोँ, दूजो जग परपंच ॥ १ ॥
भीखा भयो दिगम्बर[4], तजि कै जक्त बलाय।
कसत[5] कस्यो निज रूप को, जहँ को तहाँ समाय ॥ २ ॥
भीखा केवल एक है, किरतिम भयो अनंत।
एकै आतम सकल घट, यह गति जानहिं संत ॥ ३ ॥
आरति हरि गुरु चरन की, कोइ जानै संत सुजान।
भीखा मन बच करमना, ताहि मिलै भगवान ॥ ४ ॥

पलटू साहिब

जीवन समय—उन्नीसवाँ शतक। जन्म स्थान—मौज़ा नगपुर-जलालपुर ज़िला फ़ैज़ाबाद। सतसंग स्थान—अयोध्या। जाति और आश्रम—काँदू बनिया, गृहस्थ। गुरू—गोबिन्दजी।

यह गहिरे भक्त अवध के नवाब शुजाउद्दौला और हिन्दुस्तान के बादशाह शाह आलम के समय में वर्त्तमान थे। इन के वंश के लोग अब तक इन के जन्म स्थान के गाँव में मौजूद हैं।

[पूरा जीवन-चरित्र इन की कुंडलिया के आदि में दिया है जो बेलवेडियर प्रेस, याग में छपी है]

॥ गुरुदेव ॥

संत संत सब बड़े हैं, पलटू कोऊ न छोट।
आतम-दरसी मिहीं[6] है, और चाउर सब मोट ॥ १ ॥

---

(१) मत। (२) समूह। (३) रूप। (४) साधू जो नंगे रहते हैं। (५) इरादा। (६) बारीक।

पलटू जो कोउ संत हैं, सब हमरे सिरताज ।
सर्बंगी कोउ एक है, राखै सब की लाज ॥ २ ॥
पलटू ऐना[1] संत हैं, सब देखै तेहि माहिं ।
टेढ़ सोझ मुँह आपना, ऐना टेढ़ा नाहिं ॥ ३ ॥
वहि देवा को पूजिये, सब देवन के देव ।
पलटू चाहै भक्ति जो, सतगुरु अपना सेव ॥ ४ ॥

॥ नाम ॥

जप तप तीरथ बर्त है, जोगी जोग अचार ।
पलटू नाम भजे बिना, कोउ न उतरै पार ॥ १ ॥
पलटू जप तप के किहे, सरै न एकौ काज ।
भवसागर के तरन को, सतगुरु नाम जहाज ॥ २ ॥
जरि बूटी के खोजते, गई सुच्चाई[2] खोय ।
पलटू पारस नाम का, मनै रसायन होय ॥ ३ ॥

॥ चितावनी ॥

पलटू यहि संसार में, कोऊ नाहीं हीत ।
सोऊ बैरी होत है, जा को दीजै प्रीत ॥ १ ॥
पलटू नर तन पाइ कै, मूरख भजै न राम ।
कोऊ ना सँग जायगा, सुत दारा धन धाम ॥ २ ॥
बैद धनंतर मरि गया, पलटू अमर न कोय ।
सुर नर मुनि जोगी जती, सबै काल बस होय ॥ ३ ॥
पलटू नर तन पाइ कै, भजै नहीं करतार ।
जमपुर बाँधे जाहुगे, कहौं पुकार पुकार ॥ ४ ॥
पलटू नर तन जातु है, सुंदर सुभग सरीर ।
सेवा कीजै साध की, भजि लीजै रघुबीर ॥ ५ ॥

---

(१) दर्पन। (२) शुद्धता।

पलटू सिष्य जो कीजिये, लीजै बूझ बिचार।
बिन बूझे सिष करौगे, परिहै तुम पर भार ॥ ६ ॥
दिना चारि का जीवना, का तुम करौ गुमान।
पलटू मिलिहै खाक में, घोड़ा बाज[1] निसान ॥ ७ ॥
पलटू हरि जस गाइ ले, यही तुम्हारे साथ।
बहता पानी जातु है, धोउ सिताबी[2] हाथ ॥ ८ ॥

॥ प्रेम ॥

राम नाम जेहि मुखन तें, पलटू होय प्रकास।
तिन के पद बंदन करौं, वो साहिब मैं दास ॥ १ ॥
तन मन धन जेहि राम पर, कै दीन्हों बकसीस[3]।
पलटू तिनके चरन पर, मैं अरपत हौं सीस ॥ २ ॥
राम नाम जेहि उच्चरै, तेहि मुख देहुँ कपूर।
पलटू तिनके नफर[4] की, पनहीं का मैं धूर ॥ ३ ॥
पलटू ऐसी प्रीति करु, ज्यों मजीठ को रंग।
टूक टूक कपड़ा उड़ै, रंग न छोड़ै संग ॥ ४ ॥
आठ पहर जो छकि रहै, मस्त अपाने हाल।
पलटू उनसे सब डरै, वो साहिब के लाल ॥ ५ ॥
करम जनेऊ तोड़ि के, भरम किया छयकार[5]।
जेहि गोबिंद[6] गोबिंद[7] मिले, थूक दिया संसार ॥ ६ ॥
पलटू सीताराम सों, हम ते किहेहैं प्रीति।
देखि देखि सब जरत है, कौन जक्त की रीति ॥ ७ ॥
पलटू बाजी लाइहौं, दोऊ बिधि से राम।
जो मैं हारौं राम को, जो जीतौं तौ राम[8] ॥ ८ ॥

---

(१) बाजा। (२) जल्द। (३) यहाँ "भेंट" का अर्थ है। (४) सेवक। (५) नाश। (६) पलटू साहिब के गुरू का नाम (७) ईश्वर। (८) जो हारूँ तो मैं राम का हुआ और जो जीतूँ तो राम मेरे हुए।

पलटू हम से राम से, ऐसो भा ब्यौहार ।
कोउ कितनै चुगली करै, सुनै न बात हमार ॥ ९ ॥

पलटू जस मैं राम का, वैसे राम हमार ।
जा की जैसी भावना, ता सोँ तस ब्यौहार ॥ १० ॥

॥ बिश्वास ॥

मनसा बाचा कर्मना, जिनको है बिसवास ।
पलटू हरि पर रहत हैँ, तिन्ह के पलटू दास ॥ १ ॥

पलटू संसय छूटि गे, मिलिया पूरा यार ।
मगन आपने ख्याल में, भाड़ पड़ै संसार ॥ २ ॥

ज्योँ ज्योँ रूठै जगत सब, मोर होय कल्यान ।
पलटू बार न बाँकिहै, जो सिर पर भगवान ॥ ३ ॥

संत बचन जुग जुग अचल, जो आवै बिस्वास ।
बिस्वास भये पर ना मिलै, तौ भूठा पलटूदास ॥ ४ ॥

पलटू संत के बचन को, ख्याल करै ना कोइ ।
टुक मन में निस्चै करै, होई होई पै होइ ॥ ५ ॥

॥ सूरमा ॥

धुजा फरक्कै सुन्य में, अनहद गड़ा निसान ।
पलटू जूझा खेत पर, लगा जिकर का बान ॥ १ ॥

लगा जिकर का बान है, फिकर भई छयकार ।
पुरजे पुरजे उड़ि गया, पलटू जीति हमार ॥ २ ॥

नौबत बाजै ज्ञान की, सुन्य धुजा फहराय ।
गगन निसाना मारि कै, पलटू जीतै जाय ॥ ३ ॥

बखतर पहिरे प्रेम का, घोड़ा है गुरुज्ञान ।
पलटू सुरति कमान लै, जीति चले मैदान ॥ ४ ॥

दसो दिसा मुरचा किहा, बाती दिहा लगाय।
काया गढ़ में पैसि कै, पलटू लिहा छुड़ाय ॥ ५ ॥
पलटू कफनी बाँधि कै, खींचौ सुरति कमान।
संत चढ़े मैदान पर, तरकस बाँधे ज्ञान ॥ ६ ॥

॥ बिनय ॥

तुम तजि दीना-नाथ जी, करै कौन की आस।
पलटू जो दूसर करै, तो होइ दास की हाँस ॥ १ ॥
ना मैं किया न करि सकौं, साहिब करता मोर।
करत करावत आपु है, पलटू पलटू सोर ॥ २ ॥
पलटू तेरी साहिबी, जीव न पावै दुक्ख।
अदल होय बैकुंठ में, सब कोइ पावै सुक्ख ॥ ३ ॥

॥ भक्ति जन ॥

जैसे काठ में अगिन है, फूल में पलटू ज्यों बास।
हरि जन में हरि रहत है, ऐसे पलटूदास ॥ १ ॥
मिंहदी में लाली रहै, दूध माहिं घिव होय।
पलटू तैसे संत हैं, हरि बिन रहैं न कोय ॥ २ ॥
छोड़ै जग की आस को, काम क्रोध मिटि जाय।
पलटू ऐसे दास को, देखत लोग डेराय ॥ ३ ॥
अस्तुति निन्दा कोउ करै, लगै न तेहि के साथ।
पलटू ऐसे दास के, सब कोइ नावै माथ ॥ ४ ॥
आठ पहर लागी रहै, भजन तेल की धार।
पलटू ऐसे दास को, कोउ न पावै पार ॥ ५ ॥
सरबरि[1] कबहुँ न कीजिये, सब से रहिये हार।
पलटू ऐसे दास को, डेरिये बारम्बार ॥ ६ ॥

---

(१) बराबरी।

की तौ हरि चरचा महैं, की तौ रहै इकंत ।
ऐसी रहनी जो रहै, पलटू सोई संत ॥ ९ ॥

॥ पाखंडी ॥

पलटू निकसे त्यागि कै, फिरि माया को ठाट ।
धोबी का गदहा भयो, ना घर को ना घाट ॥ १ ॥
पलटू मन मूआ नहीं, चले जगत को त्याग ।
ऊपर धोये का भया, जो भीतर रहिगा दाग ॥ २ ॥
घर छोड़ै बैराग मैं, फिर घर छावै जाय ।
पलटू आइ के सरन मैं, तनिकौ नाहिं लजाय ॥ ३ ॥
भेष बनावै भक्त का, नाहिं राम से नेह ।
पलटू पर-धन हरन को, बिस्वा[1] बेचै देह ॥ ४ ॥
पलटू जटा रखाय सिर, तन मैं लाये राख ।
कहत फिरैं हम जोगी, लरिका दाबे काँख ॥ ५ ॥
मन मुरीद होवै नहीं, आपु कहावै पीर ।
हवा हिर्स पलटू लगी, नाहक भये फकीर ॥ ६ ॥

॥ सतसंग ॥

संगति ऐसी कीजिये, जहवाँ उपजै ज्ञान ।
पलटू तहाँ न बैठिये, घर की होय जियान[2] ॥ १ ॥
सतसंगति मैं जाइ कै, मन को कीजै सुद्ध ।
पलटू उहाँ न जाइये, जहवाँ उपजि कुबुद्ध ॥ २ ॥

॥ उपदेश ॥

पलटू गुनना छोड़ि दे, चहै जो आतम सुक्ख ।
संसय सोइ संसार है, जरा मरन को दुक्ख ॥ १ ॥

---

(१) वेश्या, पतुरिया । (२) हानि ।

पलटू [illegible] से, लगी रहै वह रट्ट ।
तनिक न पलक बिसारिये, चित्त परै की पट्ट ॥ २ ॥

पलटू पलटू क्या करै, मन को डारै धोय ।
काम क्रोध को मारि कै, सोई पलटू होय ॥ ३ ॥

सुनि लो पलटू भेद यह, हँसि बोले भगवान ।
दुख के भीतर मुक्ति है, सुख में नरक निदान ॥ ४ ॥

पलटू जननी से कहै, यही हमारी सीख ।
सकठा पुत्र न राखिये, जनमत दीजै बीख[1] ॥ ५ ॥

पलटू संत जो कहि गये, सोई बात है ठीक ।
बचन संत के नहिं टरै, ज्यों गाड़ी की लीक ॥ ६ ॥

मन से माया त्यागि दे, चरनन लागी आय ।
पलटू चेरी संत की, अंत कहाँ को जाय ॥ ७ ॥

पंडित ज्ञानी चातुरा, इन से खेलौ दूरि ।
एक साच हिरदे बसै, पलटू मिलै जरूर ॥ ८ ॥

मरते मरते सब मरे, मरै न जाना कोय ।
पलटू जो जियतै मरै, सहज परायन[2] होय ॥ ९ ॥

सब से नीचा होइ रहु, तजि बिबाद को तीर ।
पलटू ऐसे दास का, कोऊ न दामन-गीर[3] ॥ १० ॥

पलटू का घर अगम है, कोऊ न पावै पार ।
जेकरे बड़ी पियास है, सिर को धरै उतार ॥ ११ ॥

बिन खोजे से ना मिलै, लाख करै जो कोय ।
पलटू दूध से दही भा, मथिबे से घिव होय ॥ १२ ॥

---

(१) विष, ज़हर । (२) पार । (३) पल्ला पकड़ने वाला ।

पलटू पलक न भूलिये, इतना काम जरूर।
खामिंद कब गोहरावही, चाकर रहै हजूर ॥१३॥
आठ पहर चौंसठ घरी, पलटू परै न भोर[1]।
का जानी केहि औसरै, साहिब ताकै मोर ॥१४॥
पलटू सीताराम से, साची करिये प्रीति।
अपनी ओर निबाहिये, हारि परै की जीति ॥१५॥
गारी आई एक से, पलटे भई अनेक।
जो पलटू पलटै नहीं, रहै एक की एक ॥१६॥
जल पषान के पूजते, सरा न एकौ काम।
पलटू तन करु देहरा, मन करु सालिगराम ॥१७॥
पलटू नेरे साच के, झूठे से है दूर।
दिल में आवै साच जो, साहिब हाल हजूर ॥१८॥
पलटू यह साची कहै, अपने मन को फेर।
तुझे पराई क्या परी, अपनी ओर निबेर ॥१९॥
पलटू चिन्ता लागि है, जनम गँवाये रोय।
जौं लगि छूटै फिकिर ना, गई फकीरी खोय ॥२०॥
राम मिताई ना चलै, और मित्र जो होइ।
पलटू सरबस दीजिये, मित्र न कीजै कोइ ॥२१॥
पलटू आगे मरि रहौ, आखिर मरना मूल।
राम किस्न परसराम ने, मरना किया कबूल ॥२२॥
ज्ञान देय मूरख कहै, पलटू करै बिबाद।
बाँदर को आदी दिया, कछु ना कहै सवाद ॥२३॥

---

(१) भूल।

सीस नवावै संत को, सीस [illegible] सोइ।
पलटू जो सिर ना नवै, [illegible] कद्दू होइ॥२४॥

॥ मान ॥

बड़े बड़ाई में भुले, छोटे हैं सरदार।
पलटू मीठो कूप जल, समुँद पड़ा है खार॥ १ ॥
सब से बड़ा समुद्र है, पानी हैगा खारि।
पलटू खारी जानि कै, लीन्होँ रतन निकारि॥ २ ॥
पलटू यह मन अधम है, चोरौ से बड़ चोर।
गुन तजि ऐगुन गहतु है, तातेँ बड़ा कठोर॥ ३ ॥
कहत कहत हम मरि गये, पलटू बारम्बार।
जग मूरख मानै नहीं, पड़ै आप से भाड़॥ ४ ॥

॥ कपट ॥

पलटू मैं रोवन लगा, जरी जगत की रीति।
जहँ देखो तहँ कपट है, का सोँ कीजै प्रीति॥ १ ॥
मुँह मीठा भीतर कपट, तहाँ न मेरा बास।
काहू से दिल ना मिलै, तो पलटू फिरै उदास॥ २ ॥
पलटू पाँव न दीजिये, खोटा यह संसार।
हीताई करि मिलत है, पेट महैं तरवार॥ ३ ॥
पलटू भेद न दीजिये, यह जग बुरी बलाय।
लिहे कतरनी काँख में, करै मित्रता धाय॥ ४ ॥
साहिब के दरबार में, क्या झूठे का काम।
पलटू दोनोँ ना मिलैं, कामी और अकाम॥ ५ ॥
हिरदे में तो कुटिल है, बोलै बचन रसाल।
पलटू वह केहि काम का, ज्योँ नारुन फल लाल॥ ६ ॥

पलटू छूरी कपट की, बोलै मीठी बोल।
की टूटै की फाटही, कहिये परदा खोल ॥ ७ ॥

॥ कामिनी ॥

मुए सिंह की खाल को, हस्ती देखि डराय।
असिउ[1] बरस की बूढ़ि को, पलटू ना पतियाय ॥ १ ॥
असिउ बरस की नारि को, पलटू ना पतियाय।
जियत निचोवै[2] तत्तु को, मुए नरक लै जाय ॥ २ ॥
खरबूजा संसार है, नारी छूरी बैन।
पलटू पंजा सेर का, यों नारी का नैन ॥ ३ ॥
माया ठगिनी जग ठगा, इकहैं[3] ठगा न कोय।
पलटू इकहैं से ठगै, (जो) साचा भक्त होय ॥ ४ ॥

॥ ब्राह्मन ॥

सकठा बाम्हन मछखवा, ताहि न दीजै दान।
इक कुल खोवै आपनो, (दूजे) संग लिये जजमान ॥ १ ॥
सकठा बाम्हन ना तरै, भक्ता तरै चमार।
राम भक्ति आवै नहीं, पलटू गये खुवार ॥ २ ॥

॥ महंत ॥

पलटू कीन्हा दंडवत, वै बोले कछु नाहिं।
भगत जो बनै महंथ से, नरक परै को जाहि ॥ १ ॥
पलटू माया पाइ कै, फूलि के भये महंथ।
मान बड़ाई में मुए, भूलि गये सत पंथ ॥ २ ॥
गोड़ धरावैं संत से, माया के महमंत।
पलटू बिना बिबेक के, नरकै गये महंत ॥ ३ ॥

॥ मिश्रित ॥

हिन्दू पूजै देवखरा, मुसलमान महजीद।
पलटू पूजै बोलता, जो खाय दीद बरदीद ॥ १ ॥

---

(१) अस्सीह। (२) निचोड़ ले। (३) उसको।

पलटू अपने भेद से, कारन पैदा होय।
जरि कै बन ह्वैगे भसम, आगि न लावै कोय ॥ २ ॥
चारि बरन को मेटि कै, भक्ति चलाया मूल।
गुरु गोबिंद के बाग में, पलटू फूला फूल ॥ ३ ॥
हद अनहद दोऊ गये, निरभय पद है गाढ़।
निरभय पद के बीच में, पलटू देखा ठाढ़ ॥ ४ ॥
सुख में सेवा गुरू की, करते हैं सब कोय।
पलटू सेवै बिपति में, गुरु-भगता है सोय ॥ ५ ॥
पलटू मैं रोवन लगा, देखि जगत की रीति।
नजर छिपावै संत से, बिस्वा से है प्रीति ॥ ६ ॥
कमर बाँधि खोजन चले, पलटू फिरेऊ देस।
षट दरसन सब पचि मुए, कोऊ न कहा सँदेस ॥ ७ ॥
पलटू तेरे हाथ की, कर्रो परो कमान।
जो खींचै सो गिरि परै, जोधा भीम समान ॥ ८ ॥
सिष्य सिष्य सबही कहै, सिष्य भया ना कोय।
पलटू गुरु की बस्तु को, सीखै सिष तब होय ॥ ९ ॥
ज्ञान ध्यान जानै नहीं, करते सिष्य बुलाय।
पलटू सिष्य चमार सम, गुरुवा मेस्तर[1] आय ॥ १० ॥
पलटू हरि के कारने, हम तो भये फकीर।
हरि सोँ पंजा लाय फिर, तीनोँ लोक जगीर ॥ ११ ॥
पलटू लेखे जक्त के, जोगिया गया खराब।
जोगिया जानै जग गया, दोनोँ देत जवाब ॥ १२ ॥
इन्द्रि जीति कारज करै, जगत सराहै भोग।
जैसे बर्षा सिखर पर, नहीँ भीँजवे जोग ॥ १३ ॥

(१) भंगी।

पलटू सब की एक मति, को अब करै बिचार।
सूधे मारग मैं चलौं, हँसै सकल संसार ॥१४॥
पोथी कहते पंडिता, सबद कहत है भाट।
पलटू रहनी जो रहै, ता का पूरा ठाट ॥१५॥
पलटू सोई पीर है, जो जानै पर पीर।
जो पर पीर न जानई, सो काफिर बेपीर ॥१६॥
चलते चलते पग थका, एकौ लगा न हाथ।
पलटू खोजै पूरुबैं, घर मे है जगनाथ[1] ॥१७॥
पलटू नाहक भूँकता, जोगी देखे स्वान।
जक्त भक्त सोँ बैर है, चारो जुग परमान ॥१८॥
राम नाम के लिहे से, पलटू परा गँभीर।
हाथ जोरि आगे मिलै, लै लै भेँट अमीर ॥१९॥
लोक लाज छूटै नहीं, पलटू चाहै राम।
खोजत हीरा को फिरै, नहीं पोत का दाम ॥२०॥
पलटू सतगुरु सबद का, तनिक न करै बिचार।
नाव मिली खेवट नहीं, कैसे उतरै पार ॥२१॥
पलटू भजै न राम को, मूरख नर तन पाय।
देखो जिय की खोय[2] को, फिरि फिरि गोता खाय ॥२२॥
पलटू संपति सूम की, खरचै ना इक बुन्द।
सब कोउ पीवै कूप जल, खारी पड़ा समुन्द ॥२३॥
पलटू मो को देखि कै, लोगन को भा रोग।
मैं अपने रँग बावरी, जरि जरि मरते लोग ॥२४॥
सतगुरु बपुरा क्या करै, चेला करै न होस।
पलटू भीँजै मोम नहिं, जल को दीजै दोस ॥२५॥

(१) जगन्नाथ, त्रिलोकी-नाथ। (२) आदत, बान।

जानि बूझि कूआँ परै, पलटू चलै न देख।
मन माया में मिलि गया, मारा गया बिबेक ॥ २६॥
पलटू उन्हें सराहिये, जिन की निरमल बुद्ध।
जोरी जारी एक नहिं, बानी कहते सुद्ध ॥ २७॥
पलटू पावे खसम जो, रहै संत की खेढ़[१]।
नाचन को ढँग नाहि है, कहती आगन टेढ़ ॥ २८॥

तुलसी साहिब

जीवन समय—१८२० से १९०० तक। जन्म स्थान—पूना (बंबई प्रांत)। सतसंग स्थान—जोगिया गाँव (शहर हाथरस)। जाति और आश्रम—दक्खिणी ब्राह्मण, भेष।

वह राजा पूना के युवराज थे जो राज-गद्दी पर बिठलाये जाने के डर से देश छोड़ कर भाग गये। इन का पता न चलने पर राजा इन के छोटे भाई बाजीराव को गद्दी देकर आप अलग हो गये। तुलसी साहिब बहुत काल तक देशाटन करते और जीवों को चिताते हुए हाथरस में आन बिराजे और वहीं अंत समय तक रह कर चोला त्याग किया। इनके जीवन-चरित्र में एक अनूठी बात इनकी आप लिखी हुई यह है कि पूर्ब जन्म में गुसाईं तुलसीदास के चोले में आप ही थे और तब ही घट-रामायण को रचा परंतु चारो ओर से पंडितों भेषों और सर्ब मत वालों का भारी बिरोध देख कर उस ग्रंथ को गुप्त कर दिया, दूसरी सगुण रामायण उस की जगह समयानुसार बना दी, और घट-रामायण को साढ़े तीनसौ बरस पीछे दूसरा चोला धारण करने पर प्रगट किया। इन के अनुपम ग्रन्थ घट रामायण के सिवाय रत्न-सागर, शब्दावली और पद्म सागर का अधूरा ग्रन्थ हैं जो सब बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग में पूरे जीवन-चरित्र सहित छपे हैं।

॥ गुरुदेव ॥

तन मन से साचा रहै, गहै जो सतगुरु बाँह।
काल कधी रोकै नहीं, देवै राह बताइ ॥ १ ॥

---

(१) समूह।

संतन की महिमा सभी, कहते माहिँ लजाय।
चरन आस सब कोइ करै, भागन से मिलि जाय ॥ २ ॥
यह अथाह के हाथ को, कोइन करै उपाव।
सतसँग बिन जानै नहीँ, दया दीन परभाव ॥ ३ ॥
मरत जीव जो चरन से, सहज चलत के माहिँ।
जो खुँदाय कुँचि के मरै, छूवत नर तन पाय ॥ ४ ॥
संत चरन परताप से, खानि राह रुकि जाय।
नर तन मेँ सतगुरु मिलैँ, मेटैँ सकल सुभाय ॥ ५ ॥
अंदर की आँखी नहीँ, बाहर की गइ फूटि।
बिन सतगुरु औघट बहै, कभी न बंधन छूटि ॥ ६ ॥
अबिनासी आतम कह्यो, रह्यो करम के बंद।
उलटि न चीन्हा आदि को, बिन सतगुरु की संध ॥ ७ ॥
सतगुरु संत दयाल बिन, सब जिव काल चबाय।
बाँधि करम के बस रखै, सकै न सूरति पाय ॥ ८ ॥
नर तन दुरलभ ना मिलै, खिलै कँवल रस माहिँ।
खाय अमर फल अगम के, जो सतगुरु सरनाय ॥ ९ ॥
बड़े बड़ाई पाय कर, रोम रोम हंकार।
सतगुरु के परचे बिना, चारो बरन चमार ॥ १० ॥
सतगुरु संत दयाल से, करम रेख मिटि जाय।
मन तन सूरति साच से, ज्योँ का त्योँ रहि जाय ॥ ११ ॥

॥ सुरत-शब्द योग ॥

सुरति-सबद के भेद बिन, होय न पूरन काम।
चमर चाम की दृष्टि मेँ, तन तत तिमिर[1] समान ॥ १ ॥

---

(१) अंधकार।

करतब तौ सब ने किया, जस जस जिन को भेद ।
कर्म खेद छूटी नहीं, सूरति-शब्द उमेद ॥ २ ॥
जो उपाय छल से करै, मिलै न उनका भेद ।
फेर जुगन जुग में सहै, उन गति अगम अभेद ॥ ३ ॥

॥ चितावनी ॥

अरब खरब लौं दरब है, उदय अस्त लौं राज ।
तुलसी जो निज मरन है, तौ आवे केहि काज ॥ १ ॥
दिना चार का खेल है, झूँठा जक्त पसार ।
जिन बिचार पति ना लखा, बूड़े भौजल धार ॥ २ ॥
ज्यौं माखी पर पाँव से, सहद माहिं लिपटाय ।
ऐसे ही जग-जीव जड़, झारि बिषै रस खाय ॥ ३ ॥

॥ बिरह ॥

आठ पहर रोवत रहौ, भरि भरि अँखियाँ नीर ।
पीर पिया परदेस की, जा से भँवर अधीर ॥ १ ॥
चार पाँच परपंज में, कस कस रहन हमार ।
चार चुगल चुगली करैं, रहुँ बिचैन मन मार ॥ २ ॥

॥ प्रेम ॥

तुलसी ऐसी प्रीत कर, जैसे चन्द चकोर ।
चोँच झुकी गरदन लगी, चितवत वाही ओर ॥ १ ॥
उत्तम औ चंडाल घर, जहँ दीपक उजियार ।
तुलसी मते पतंग के, सभी जोत इकसार ॥ २ ॥
तुलसी कँवलन जल बसै, रबि ससि बसै अकास ।
जो जा के मन में बसै, सो ताही के पास ॥ ३ ॥
मकरी उतरै तार से, पुनि गहि चढ़त जो तार ।
जा का जा से मन रम्यो, पहुँचत लगै न बार ॥ ४ ॥

अज्ञाकारी पीव की, रहै पिया के संग।
तन मन से सेवा करै, और न दूजा रंग ॥ ५ ॥
पति की ओर निहारिये, औरन से क्या काम।
सभी देवता छोड़ कर, जपिये गुरु का नाम ॥ ६ ॥
बाक[1] ज्ञान में निपुन है, अंदर का नहिं भेद।
उग्र[2] ज्ञान बिन भक्ति के, जुग जुग पावै खेद ॥ ७ ॥
भक्ति भाव बूझे बिना, ज्ञान उदै नहिं होय।
बिना ज्ञान अज्ञान को, काढ़ सकै नहिं कोय ॥ ८ ॥

॥ संत और साध ॥

सिंधु अथाह न थाह कहिं, मिलै न वा का अंत।
भटक भटक भव पच मरै, को गति पावै संत ॥ १ ॥
संतन से माँगै नहीं, घट घट जाननहार।
जीव दया हिरदे बसै, नाहक करत बिचार ॥ २ ॥
पारबती या भूमि का, क्या कहुँ बरनन भाग।
दस हजार के बाद यहँ, संत रहै यहि जाग[3] ॥ ३ ॥
सुनु हिरदे[4] कहुँ संत की, महिमा अगम अपार।
कर प्रनाम वहि भूमि को, संकर बारम्बार ॥ ४ ॥
संत चरन अति बहुत बड़, जानत चतुर सुजान।
जो संतन हित ना करै, सो नर पसू समान ॥ ५ ॥
संत चरन कारज सरै, हरै सकल बिष ब्याधि।
साध सुरति चरनन रहै, टारै सकल उपाधि ॥ ६ ॥

(१) बाच या ज़बानी। (२) तीव्र, प्रचंड। (३) जगह। (४) नाम एक मुख्य शिष्य का।

जो सनमुख रहै संत के, अंत कहूँ नहिँ जाय।
सूरति डोरी लौ लगै, जहँ को तहाँ समाय ॥ ७ ॥
संत सरन जो जिव रहै, गहै जो उनकी बाँह।
थाह बतावैं समुँद की, बल्ली भवजल माहिं ॥ ८ ॥
संत मता दुरलभ कहैं, [illegible] में गोहराय।
बड़े बड़े हारे सभी, संतन की गति गाय ॥ ९ ॥
उपदेसी वहि देस के, भेष भवन के पार।
सार समझ सुलटी कहैं, जग करि उलटि बिचार ॥ १० ॥

॥ भक्तजन ॥

सूरज बसै अकास में, किरन भूमि पर बास।
जो अकास उलटे चढ़ै, सो सतगुरु का दास ॥ १ ॥
अललपच्छ[1] का अंड ज्यों, उलटि चलै असमान।
त्यों सूरति सत सजन की, आठ पहर गुरु ध्यान ॥ २ ॥
कोई तो तन मन दुखी, कोई चित्त उदास।
एक एक दुख सभन को, सुखी संत का दास ॥ ३ ॥

॥ सतसंग महिमा ॥

संतन की साखी सभी, देत जुगन जुग ज्ञान।
सतसँग करके बूझ ले, करत सभी परमान ॥ १ ॥
जल मिसरी कोइ ना कहै, सर्बत नाम कहाय।
यों घुल के सतसँग करै, काहे भरम समाय ॥ २ ॥
विष रँग के सँग में पगे, किया न मन को तंग।
संग मिलै मधुमालती, जब निकसै कुछ रंग ॥ ३ ॥

---

(१) अललपच्छ या सारदूल जो आकाश में इतने ऊँचे पर अंडा देता है कि पृथ्वी पर पहुँचने के पहिले अंडा फूट कर बच्चा उड़ जाता है।

॥ परिचय ॥

जगमग अंदर में हिया, दिया न बाती तेल ।
परम प्रकासिक पुरुष का, कहा बताऊँ खेल ॥ १ ॥
घट अकास के मद्ध में, पंछी परम प्रकास ।
समुँद सिखर सूरत चढ़ी, पावै तुलसीदास ॥ २ ॥
लख प्रकास पद तेज को, सेज गवन गति गाय ।
पाइ पदम सूरत चली, पिया भवन के माँय ॥ ३ ॥
अली अकास सुरत चली, गली गगन के माँय ।
धाय धमक ऊपर चढ़ी, खड़ी महल सुखदाय ॥ ४ ॥
आतम तेज अकास में, बास भवन दस माँय ।
मन मारग सूरत चली, अंदर ऐन समाय ॥ ५ ॥
पदम पार पद लखि पड़ा, जानत संत सुजान ।
तुलसीदास गति अगम की, सुरत लगी असमान ॥ ६ ॥
सुरत सिखर अंदर खड़ी, चढ़ी जो दीपक बार ।
आतम रूप अकास का, देखै बिमल बहार ॥ ७ ॥

॥ उपदेश ॥

तुलसी या संसार में, पाँच रतन हैं सार ।
साध संग सतगुरु सरन, दया दीन उपकार ॥ १ ॥
जैसो तैसो पातकी, आवै गुरु की ओट ।
गाँठी बाँधै संत से, ना परखैं खर खोट ॥ २ ॥
सोना काई नहिं लगै, लोहा घुन नहिं खाय ।
बुरा भला जो गुर-भगत, कबहूँ नरक न जाय ॥ ३ ॥
दर दरबारी साध हैं, उन से सब कुछ होय ।
तुरत मिलावैं नाम से, उन्हैं मिलै जो कोय ॥ ४ ॥

काम क्रोध मद लोभ की, जब लग मन में खान।
तुलसी पंडित मूरखा, दोनों एक समान ॥ ५ ॥
पानी बाढ़ो नाव में, घर में बाढ़ो दाम।
दोनों हाथ उलीचिये, यही सयानो काम ॥ ६ ॥
चार[1] अठारह[1] नौ पढ़े, षट[1] पढ़ि खोया मूल।
सुरत सबद चीन्हे बिना, ज्यों पंछी चंडूल ॥ ७ ॥
तुलसी मैं तू जो तजै, भजै दीन-गति होय।
गुरू नवै जो सिष्य को, साध कहावै सोय ॥ ८ ॥
गुरू बतावैं पुरब को, चेला पच्छिम जाय।
अंदर ठाठी कपट की, मिलै जो क्योंकर आय ॥ ९ ॥
सुरत डोरि सतगुरु गहै, रहै चरन के माहिं।
सुन्न सुरत मिल सबदही, डोरिहि डोरि समाय ॥१०॥
सहज भाव से जो कछू, आवै अमृत भाव।
यह सुभाव भीतर बसै, जब कुछ चलै न दाँव ॥११॥
खाय पियै उतना रखै, बाकी रखै न पास।
और आस ब्यापै नहीं, सतगुरु का बिस्वास ॥१२॥
गृहस्थी है हिरदे दया, भूखे कछू खिलाय।
बाक सनातन यों कहै, सभो सभी गोहराय ॥१३॥
रस इंद्री गुन स्वाद से, बंधन भया अजान।
जान भुलानो आदि को, बादे जनम सिरान[2] ॥१४॥
स्वर्ग छाड़ि सब देव यह, नर तन माँगत झार।
यहि बिचार मन में करै, तब पावै निरधार ॥१५॥

(१) चार वेद, अठारह पुरान और छः शास्त्र। (२) बीता।

॥ भेद ॥

छर छतीसे भवन में, अच्छर ब्रह्म समान।
स्रवन नैन मुख नासिका, इंद्री पाँच प्रमान ॥ १ ॥
छर अच्छर से भिन्न है, निःअच्छर निःनाम।
धाम लोक चौथे बसै, जानत संत सुजान ॥ २ ॥
सुन्न अकास के भास में, स्वासा निकसत पौन।
बंकनाल के बीच में, इँगल पिंगल पर जौन ॥ ३ ॥
सुई अग्र वह द्वार है, सुखमनि घाट कहाय।
धाइ धाइ स्वासा चढ़ै, जो जो जोग लखाय ॥ ४ ॥
संत समुँद घर अगम को, ज्ञान जोग नहिं ध्यान।
ये तीनौं पहुँचैं नहीं, जा की करत बखान ॥ ५ ॥
ज्ञान ब्रह्म आतम कहै, मन जड़ चेतन गाँठ।
तन इंद्री सुख बंध में, बहुत गुनन की बाट ॥ ६ ॥
आतम अगम अकास में, नैन निरखि मन बास।
फाँस फँसानी गुनन में, या को कहत अकास ॥ ७ ॥
ध्यान धरत जोगी मुए, प्रानायाम अधार।
सत सिखर के पार की, भाखत अगम अपार ॥ ८ ॥
परथम नर तत पाँच में, पिंडज में तत चार।
तीन तत्त अंडज रहै, उष्मज दो बिस्तार ॥ ९ ॥

॥ करनी और पिछले कर्म ॥

उजला आया वतन[1] से, जतन किया करि काल।
चाल भुलानी आपनी, यौं भये बंधन जाल ॥ १ ॥

(१) घर।

लाख बात करके कहै, नहिं मानै गुरु बैन।
बैन कहो कहँ से मिलै, समझै न सतसँग कहन ॥ २ ॥
इन्द्री सुख रस रीति में, बिलसत जनम सिराय।
कहा कहूँ अज्ञान को, नेक न मन सरमाय ॥ ३ ॥
अब समझे से का भयो, चिड़िया चुग गई खेत।
चेत किया नहिं आप में, रहे कुटुम्ब के हेत ॥ ४ ॥
नर देही तत हीन से, पिंडज माहिं पसार।
सार भुलानो आपनो, खानइ खानि खुवार[१] ॥ ५ ॥
ज्ञान ध्यान जोगी जती, नहिं कोइ पावै भेद।
खेद कर्म सुभ असुभ के, फल करनी कहे बेद ॥ ६ ॥
की अपनी करनी करै, की गुरु सरन उबार।
दोनोँ में कोइ एक नहिं, नाहक फिरत लबार ॥ ७ ॥
कर्म करै बरियार से, तत्त छीन होइ जाय।
तत्त घटे घटि खानि में, दुख सुख माहिं बिलाय ॥ ८ ॥
नर तन तो पावै नहीं, पसु पंछिन में जाय।
असथावर उष्मज रहै, नर तन बाद गँवाय ॥ ९ ॥
हिरदे[२] करम कराय के, देत पलीता बारि।
अंदर आगि लगाय ज्योँ, दगन करे तन झारि ॥ १० ॥
जुगन जुगन बंधन पड़ै, कर्म काल के द्वार।
नर्क स्वर्ग की सुधि नहीं, दुख सुख बारम्बार ॥ ११ ॥
कर्म सारनी[३] बुधि बसी, सूरत रही अधीन।
आसा के बस में पड़ी, बासा बिपति मलीन ॥ १२ ॥

---

(१) ख़राब। (२) नाम शिष्य का। (३) कुठनी।

कर्म आस की बास मेँ, जोनी जोनि समाय ।
जो जैसी करनी करै, सो तैसे फल खाय ॥ १३ ॥

॥ मन ॥

मन तरंग तन मेँ चलै, आठो पहर उपाव ।
थाह कधी पावै नहीँ, छिन छिन छल परभाव ॥ १ ॥
घटी बढ़ी कुछ नजर मेँ, आय न ज्ञान बिचार ।
जब तरंग उसकी उठै, ज्योँ सलिता[1] घघकार ॥ २ ॥
पाँच पचीसो तीन मिलि, इच्छा कीन्ह प्रचंड ।
मार मार सब कोउ करै, ज्योँ दुखिया पर डंड ॥ ३ ॥
बान बिचारै जुद्ध को, मन मनसा रनभुम्म ।
सबद सिरोही[2] गुरुन की, ले फोड़ै घट कुंभ ॥ ४ ॥
जल ओला गोला भयो, फिर घुलि पानी होय ।
संत चरन गुरु ध्यान से, मन घुल जावै सोय ॥ ५ ॥

॥ मान ॥

नीच नीच सब तरि गये, संत चरन लौलीन ।
जातहिँ के अभिमान से, डूबे बहुत कुलीन ॥ १ ॥
पोथी पढ़ने मेँ लगे, चढ़ा ज्ञान का मान ।
सभा माहिँ मोटे भये, गुन के संग गुमान ॥ २ ॥

॥ दुष्ट ॥

मोती सज्जन को कहैँ, संख असज्जन जान ।
ज्योँ कनिष्ट[3] सीपी भई, ऐसे परख पिछान ॥ १ ॥
कुटिल बचन बोलै सदा, कधी न मानै हार ।
धार बह्यो बहु फिरत है, कर्म कुमति अनुसार ॥ २ ॥

---

(१) नदी। (२) तलवार। (३) छोटी, दीन।

कूड़ कुमति में गरक[1] है, फरक न मानै एक ।
जो कोइ [illegible] की कहै, उरझै उलटि परेत ॥ ३ ॥
अपकीरति जग में बढ़ी, सब सिर डारै धूर ।
लाज कधी आवै नहीं, साची कहै न मूर[2] ॥ ४ ॥

॥ जीव की अज्ञानता ॥

यह अज्ञानी जीव की, क्योंकर करूँ बखान ।
अपनी बुद्धि बिकार की, करै न मन पहिचान ॥ १ ॥
यह जग जीव अनादि से, भटकत फिरै निकाम ।
काम बाम[3] मन में बसै, जुग जुग से भरमान ॥ २ ॥
वे दयाल जुग जुग कहैं, बहिरा सुनै न कान ।
ज्यों मतवाले मद पिये, छके नसे के माँह ॥ ३ ॥
हाय हाय कर पच मरे, कुटुँब काज अज्ञान ।
मान बड़ाई जक्त की, डूबे करि अभिमान ॥ ४ ॥
जुलमो की जाली पड़े, बड़े बड़े उमराव ।
दाँव कधी लागै नहीं, भागन कवन उपाव ॥ ५ ॥

॥ कलियुग महिमा ॥

कलजुग सम नहिं आन जुग, संत धरैं औतार ।
जीव सरन होइ संत के, भवजल उतरै पार ॥ १ ॥
संत चरन बिस्वास से, कलजुग में निरधार ।
सतजुग तो बंधन करै, कहि सब संत पुकार ॥ २ ॥

॥ मिश्रित ॥

मन राखत बैराग में, घर में राखत राँड़ ।
तुलसी किड़वा नीम का, चाखन चाहत खाँड़ ॥ १ ॥

---

(१) डूबा हुआ । (२) असल बात । (३) जो ।

पढ़ पढ़ के सब जग मुआ, पंडित भया न कोय ।
ढाई अच्छर प्रेम का, पढ़ै सो पंडित होय ॥ २ ॥
लिख लिख के सब जग लिख्यो, पढ़ पढ़ के कहा कीन्ह ।
बढ़ बढ़ के घट घट गये, तुलसी संत न चीन्ह ॥ ३ ॥
तुलसी सम्पति के सखा, पड़त बिपति में चीन्ह ।
सज्जन कंचन कसन को, बिपति कसौटी कीन्ह ॥ ४ ॥
मन थिर करि जानैं नहीं, ब्रह्म कहैं गोहराय ।
चौरासी के फंद में, फेरि पड़ैंगे आय ॥ ५ ॥
एक अलख की पलक में, खलक रचा सब सोय ।
जानु निरंजन काल को, जाल जगत सब कोय ॥ ६ ॥
सुरत सैल असमान की, लख पावै कोइ संत ।
तुलसी जग जानै नहीं, अति उतंग पिया पंथ ॥ ७ ॥
सूप ज्ञान सज्जन गहै, फूफर,[1] देत निकार ।
सार हिये अंदर धरै, पल पल करत बिचार ॥ ८ ॥
जो तिरलोको नाथ की, माया है बलवान ।
सो सिद्धो सिध सब कहैं, आप रूप भगवान ॥ ९ ॥
आँखो में जाले पड़े, काढ़ै कौन निकारि ।
जब सथिया[2] नस्तर भरै, सुरत सलाई डारि ॥ १० ॥
सुंदर सुरत सुधारि के, गुरु चरनन कर ध्यान ।
भान उदय नितही लखै, संत बचन परमान ॥ ११ ॥
कलू काल को कहा कहूँ, नर नारी मतिहीन ।
दीन भाव दरसै नहीं, मैलो बुद्धि मलीन ॥ १२ ॥

---

(१) चोकर। (२) जर्राह।

काल जबर जुलमी बड़ा, खड़ा रहै मैदान ।
कर कमान खैंचे फिरै, मारै गोसा[1] तान ॥१३॥
करता ने काया रची, जुग जुग जग बिस्तार ।
सार दियो बिस्वास के, घर घर करत पुकार ॥१४॥
बड़े भक्त जग में बजैं, मँजै[2] न मन का मैल ।
खेल खिलाड़ी काल के, फँसे गुमर[3] की गैल ॥१५॥
घड़ी घड़ी स्वासा घटै, आसा अंग बिलाय ।
चाह चमारी चूहड़ी[4], घर घर सब को खाय ॥१६॥
जैसे को तैसा मिलै, वैसी कहै बनाय ।
दोउन की बिधि यों मिलै, एक ठिकाने जाय ॥१७॥
जोंक रुधिर को पियत है, जो कोइ जल में जाय ।
कँवल रवी[5] देखत खिलै, ऐसे अंग सुभाय ॥१८॥
नर देही दुर्लभ कहैं, मिलै न बारम्बार ।
घार बड़ो भवसिंध को, क्योंकर उतरै पार ॥१९॥
स्वर्ग भोग पुन[6] के उदय, भोग करै भुगताय ।
पुन्य भोग जब करि चुकै, फिर चौरासी जाय ॥२०॥
सूरज ब्रह्म अकास में, भास भूमि परकास ।
किरन जीव यहि आतमा, सब घट कीन्हो बास ॥२१॥
माया भगवत की बड़ी, को पावै परभाव ।
को लीला उनकी लखै, छल बल बहुर उपाव ॥२२॥

---

(१) तीर की गाँसी या भाला । (२) माँजै । (३) गुमराही । (४) भंगिन ।
(५) सूरज । (६) पुन्य ।

गुसाँई तुलसी दासजी की चुनी हुई साखियाँ जो छपने से रह गई थीं

(देखो पृष्ट ७१-७५)

॥ नाम ॥

राम नाम आधी रती, पाप के कोटि पहार ।
तुलसी जस रंजक अगिन, जारि करै तेहिं छार ॥ १ ॥
तुलसी रसना[१] राम कहु, पाप केतिक अनुमान ।
जिमि पनिहारी जेवरो[२], खींचैं कठत पषान[३] ॥ २ ॥
तुलसी जा के मुखन तें, धोखेहु निकरहि राम ।
ता के पग को पैंतरी[४], मेरे तन को चाम ॥ ३ ॥
निरगुन तें इहि भाँति बड़, नाम प्रभाव अपार ।
कहऊँ नाम बड़ राम तें, निज बिचार अनुसार ॥ ४ ॥
बारि[५] मथे बरु होय घृत, सिकता[६] तें बरु तेल ।
बिनु हरि भजन न भव तरिय, यह सिद्धांत अपेल[७] ॥ ५ ॥
मिटहिं पाप परिपंच सब, अखिल अमंगल भार ।
लोक सुजस परलोक सुख, सुमिरत नाम तुम्हार ॥ ६ ॥

॥ प्रेम ॥

चतुराई चूल्हे परै, जम गहि ज्ञानहिं खाय ।
तुलसी प्रेम न राम पद, सब जर मूल नसाय ॥ १ ॥
तुलसी हम सों राम सों, भलो मिलो है सूत ।
छाड़े बनै न सँग रहे, ज्यों घर माहिं कपूत ॥ २ ॥
रटत रटत रसना लटी, तृषा सूखिगो अंग ।
तुलसी चातक के हिये, नित नूतनहिं तरंग ॥ ३ ॥
गंगा जमुना सरसुती, सात सिंधु भरिपूर ।
तुलसी चातक के मते, बिन स्वाँती सब धूर ॥ ४ ॥

---

(१) जीभ । (२) रस्सी । (३) पत्थर । (४) जूती । (५) पानी । (६) बालू । (७) अमिट, निश्चय ।

ब्याधा बधो पपीहरा, परो गंग जल जाय।
चोंच मूँदि पीवै नहीं, धिग पिये मो प्रन जाय ॥ ५ ॥
चातक सुतहिं सिखाव नित, आन नीर जनि लेहु।
ये हमरे कुल को धरम, एक स्वाँति सों नेहु ॥ ६ ॥
तुलसी केवल राम पद, लागै सरल सनेह।
तौ घर घठ बन बाट महँ, कतहुँ रहै किन[1] देह ॥ ७ ॥
जिमि मनि बिन ब्याकुल भुजंग, जल बिन ब्याकुल मीन।
तिमि देखे रघुनाथ बिन, तलफत हौं मैं दीन ॥ ८ ॥
निंदा अस्तुति उभय[2] सम, ममता मम पद कंज।
ते सज्जन मम प्रान प्रिय, गुन मंदिर सुख पुंज ॥ ९ ॥

॥ बिश्वास ॥

एक भरोसा एक बल, एक आस बिस्वास।
स्वाँति सलिल[3] गुरु चरन हैं, चात्रिक तुलसी दास ॥ १ ॥
भाग छोट अभिलाष बड़, करहुँ एक बिस्वास।
पैहहिं सुख सुनि सुजन जन, खल करिहैं उपहास[4] ॥ २ ॥
कोठि बिघन संकट बिकट, कोठि सत्रु जो साथ।
तुलसी बल नहिं करि सकैं, जो सुदृष्ट रघुनाथ ॥ ३ ॥
लगन महूरत जोग बल, तुलसी गनत न काहि।
राम भये जेहिं दाहिने, सबै दाहिने ताहि ॥ ४ ॥
प्रभु प्रभुता जा कहँ दई, बोल सहित गहि बाँह।
तुलसी ते गाजत फिरहिं, राम छत्र की छाँह ॥ ५ ॥
ऊँची जाति पपीहरा, नीचो पियत न नीर।
कै याचै घनस्याम सों, कै दुख सहै सरीर ॥ ६ ॥

---

(१) क्यों न। (२) दोनों। (३) पानी। (४) हंसी, मसख़री।

मसकहिं करहिं बिरंच प्रभु, अजहिं मसक तें हीन।[१]
अस बिचारि तजि संसय, रामहिं भजहिं प्रबीन ॥ ७ ॥

॥ विनय ॥

नाथ एक बर माँगहूँ, मोहिं कृपा करि देहु।
जन्म जन्म प्रभु पद कमल, कबहुँ घटै जनि नेहु ॥ १ ॥
बिनती करि अरु नाइ सिर, कहुँ कर जोरि बहोरि।
चरन सरोरुह[२] नाथ जनि, कबहुँ तजै मति मोरि ॥ २ ॥
बार बार बर माँगहूँ, हरषि देहु स्रीरंग।
पद सरोज[२] अनपायिनी[३], भक्ति सदा सतसंग ॥ ३ ॥
प्रनत-पाल[४] रघुबंस-मनि, करुना-सिंधु खरारि[५]।
गये सरन प्रभु राखिहैं, सब अपराध बिसारि ॥ ४ ॥
स्रवन सुजस सुनि आयहूँ, प्रभु भंजन भय भीर।
त्राहि त्राहि आरत-हरन[६], सरन-सुखद रघुबीर ॥ ५ ॥
एक मंद मैं मोह बस, कुटिल-हृदय अज्ञान।
पुनि प्रभु मोहिं बिसारेऊ, दीन-बंधु भगवान ॥ ६ ॥
नहिं बिद्या नहिं बाँहु बल, नहिं खरचन को दाम।
मो सम पतित पतंग की, तुम पत राखो राम ॥ ७ ॥
सुनहु राम स्वामी सुभग, चलन चातुरी मोरि।
प्रभु अजहूँ मैं पातकी, अंत काल गति तोरि ॥ ८ ॥
यद्यपि जन्म कुमातु तें, मैं सठ सदा सदोस।
आपन जानि न त्यागिहैं, मोहिं रघुबीर भरोस ॥ ९ ॥
कृपा भलाई आपनी, नाथ कीन्ह भल मोर।
दूषन भे भूषन सरिस, सुजस चारु[७] चहुँ ओर ॥ १० ॥

---

(१) ईश्वर मच्छड़ को ब्रह्मा और ब्रह्मा को मच्छड़ से भी तुच्छ बना देता है। (२) कमल। (३) अमर और अडिग। (४) प्रण के पालने वाले। (५) खर राक्षस के मारने वाले। (६) कष्ट हरने वाले। (७) सुंदर।

कामी नारि पियारि जिमि, लोभी के प्रिय दाम ।
तिमि रघुनाथ निरंतर, प्रिय लागहु मोहिं राम ॥ ११ ॥
भक्त कल्प-तरु प्रनत-हित[1], कृपा सिंधु सुख-धाम ।
सोइ निज भक्ती मोहि प्रभु, देहु दया करि राम ॥ १२ ॥
अर्थ न धर्म न काम रुचि, गति न चहौं निरबान ।
जन्म जन्म रति राम पद, यहि बरदान न आन ॥ १३ ॥
संत सरल चित जगत-हित, जानि स्वभाव सनेहु ।
बाल बिनय सुनि करि कृपा, राम चरन रति देहु ॥ १४ ॥
दीनानाथ दयाल प्रभु, तुम लगि मेरी दौर ।
जैसे काग जहाज को, सूझत और न ठौर ॥ १५ ॥

॥ सतसंग ॥

तात स्वर्ग अपबर्ग[2] सुख, धरिय तुला इक अंग ।
तुलै न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सतसंग ॥

॥ उपदेश ॥

मात पिता गुरु स्वामि सिख[3], सिर धर करिय सुभाय ।
लहेउ लाभ तिन्ह जन्म कर, नतरु[4] जन्म जग जाय ॥ १ ॥
तात तीन अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि विज्ञान निधान मन, करहि निमिष महँ छोभ[5] ॥ २ ॥
लोभ के इच्छा दंभ[6] बल, काम के केवल नारि ।
क्रोध के पुरुष बचन बल, मुनिवर कहहि बिचारि ॥ ३ ॥
तब लगि कुसल न जीव कहँ, सपनेहु मन बिसराम ।
जब लगि भजन न राम कहँ, सोक धाम तजि काम ॥ ४ ॥

---

(१) प्रणत के पालने वाले । (२) अंतिम पद, मोक्ष-पद । (३) सीख, शिक्षा ।
(४) नहीं तो । (५) चलायमान, उद्विग्न । (६) पाखंड ।

जदपि प्रथम दुख पावै, रोवै बाल अधीर ।
ब्याधि नास हित जननी, गनै न सो सिसु पीर[1] ॥ ५ ॥

त्यों रघुपति निज दास कर, हरहिं मान हित लागि ।
तुलसिदास ऐसे प्रभुहिं, कस न भजहु भ्रम त्यागि ॥ ६ ॥

तुलसी बुरा न मानिये, जो गँवार कहि जाय ।
जैसे घर के नरदहा[2], बुरा भला बहि जाय ॥ ७ ॥

तुलसी बिलम न कीजिये, भजि लीजै रघुबीर ।
तन तरकस से जात हैं, साँस सरीखे तीर ॥ ८ ॥

जो चेतन कहँ जड़ करै, जड़हि करै चैतन्य ।
अस समर्थ रघुनायकहिं, भजहिं जीव सो धन्य ॥ ९ ॥

हरि माया-कृत दोष गुन, बिनु हरि-भजन न जाहिं ।
भजिय राम सब काम तजि, अस बिचारि मन माहिं ॥ १० ॥

तुलसी सब छल छाड़ि कै, कीजै राम सनेह ।
अंतर[3] पति सों है कहा, जिन देखी सब देह ॥ ११ ॥

सब ही को परखे लखे, बहुत कहे का होय ।
तुलसी तेरो राम तजि, हित जग और न कोय ॥ १२ ॥

राम राम रटिबो भलो, तुलसी खता न खाय ।
लरिकाईं तें पैरिबो, धोखे बूड़ि न जाय ॥ १३ ॥

तुलसी मीठे बचन तें, सुख उपजत चहुँ ओर ।
बसीकरन इक मंत्र है, तजि दे बचन कठोर ॥ १४ ॥

सन्मुख ह्वै रघुनाथ के, देहु सकल जग पीठि ।
तजे कैंचुरी उरग[4] कहँ, होत अधिक अति दीठि ॥ १५ ॥

---

(१) बालक का रोग दूर करने को माता कठोर बन कर उसका फोड़ा चिरवाती है और उस के रोने की परवाह नही करती। (२) नाबदान। (३) परदा। (४) साँप।

काह भयो बन बन फिरे, जो बनि आयो नाहिँ ।
बनते बनते बनि गयो, तुलसी घर ही माँहि ॥ १६॥
बातहिँ बातहिँ बनि परै, बातहिँ बात नसाय ।
बातहिँ आदिहिँ दीप भव, बातहिँ अंत बुताय ॥ १७॥
बात बिना अतिसय बिकल, बातहिँ तेँ हरखात ।
बनत बात बर बात तेँ, करत बात बर घात ॥ १८॥
तुलसी जाने बात बिन, बिगरत हरइक बात ।
अनजाने दुख बात के, जानि परत कुसलात ॥ १९॥
प्रेम बैर अरु पुन्य अघ, जस अपजस जय हान ।
बात बीज इन सबन को, तुलसी कहहिँ सुजान ॥ २०॥
तब लगि जोगी जगत-गुरु, जब लगि रहै निरास ।
जब आसा मन मेँ जगी, जगत गुरू वह दास ॥ २१॥
तुलसी सन्तत[1] तेँ सुनै, सन्तत इहै बिचार ।
तन धन चंचल अबल जग, जुग जुग परउपकार ॥ २२॥
मित्र के अवगुन मित्र को, पर महँ भाषत नाहिँ ।
कूप छाँह जिमि आपनी, राखत आपहि माहिँ ॥ २३॥
तुलसी साथी बिपति के, बिद्या बिनय बिबेक ।
साहस सुकृत रु सत्त ब्रत, राम भरोसो एक ॥ २४॥
तुलसी असमय के सखा, साहस धरम बिचार ।
सुकृत सील सुभाव ऋजु[2], राम सरन आधार ॥ २५॥
बिद्या बिनय बिबेक रति, रीति जासु उर होय ।
राम परायन[3] सो सदा, आपद ताहि न कोय ॥ २६॥
तुलसी झगरा बड़न के, बीच परहु जनि धाय ।
लड़े लोह पाहन दोऊ, बीच रुई जरि जाय ॥ २७॥

---

(१) सदा । (२) सच्चा, खरा । (३) उपासक ।

तुलसी निज कीरति चहहिँ, पर कीरति कहँ खोय ।
तिन के मुहँ मसि लागि है, मिटहि न मरिहैँ धोय ॥ २८॥
नीच चंग[1] सम जानिबो, सुनि लखि तुलसीदास ।
ढील देत महिँ गिरि परत, खैँचत चढ़त अकास ॥ २९॥
तुलसी देवल राम के, लागे लाख करोर ।
काक अभागे हगि भरे, महिमा भयेउ न थोर ॥ ३०॥
जो मधु दीन्हेँ तेँ मरै, माहुर देउ न ताउ ।
जग जिति हारे परसुधर[2], हारि जिते रघुराउ ॥ ३१॥
क्रोध न रसना खोलिये, बरु खोलब तरवारि ।
सुनत मधुर परिनाम हित, बोलय बचन बिचारि ॥ ३२॥
दंभ सहित कलि धरम सब, छल समेत छुछहार ।
स्वरथ सहित सनेह सब, रुचि अनुहरत अचार ॥ ३३॥
का भाषा का संसकृत, बिभव चाहिये साच ।
काम तो आवै कामरी, का ले करिय कमाच[3] ॥ ३४॥
तुलसी सो समरथ सुमति, सुकृति साधु सुजान ।
जो बिचारि ब्यवहरत जग, खरच लाभ अनुमान ॥ ३५॥
बड़े रतहिँ लघु के गुनहिँ, तुलसी लघुहिँ न हेत ।
गुंजा[4] तेँ मुकता अरुन[5], गुंजा होत न स्वेत ॥ ३६॥
ज्योँ बरदा बनिजार के, फिरत घनेरे देस ।
खाँड़ भरे भुस खात है, बिन गुरु के उपदेस ॥ ३७॥

॥ दुर्जन ॥

दुरजन दरपन सम सदा, करि देखो हिय दौर ।
सनमुख की गति और है, बिमुख भये कछु और ॥

॥ मान ॥

स्वामी होनो सहज है, दुरलभ होनो दास ।
गाडर[6] लाये ऊन को, लागी चरै कपास ॥

॥ मिश्रित ॥

भले भलाई पै लहहिं, लहहिं निचाई नीच।
सुधा सराहिय अमरता, गरल[1] सराहिय मीच[2] ॥ १ ॥
नाम पाहरू[3] दिवस निसि, ध्यान तुम्हार कपाट[4]।
लोचन निज पद जंत्रिका[5], प्रान जाहिं केहि बाट ॥ २ ॥
ब्यापि रहेउ संसार महँ, माया कपट प्रचंड।
सेना-पति कामादि भट, दंभ कपट पाखंड ॥ ३ ॥
संत कहहिं अस नीति प्रभु, स्रुति पुरान जो गाव।
होइ न बिमल बिबेक उर, गुरु सन किये दुराव ॥ ४ ॥
राका ससि षोड़स उगैं, तारा गन समुदाय।
सभै गिरिन दौं लाइये, बिनु रबि राति न जाय ॥ ५ ॥[6]
सुपने होय भिखारि नृप, रंक नाक-पति होय।
जागे लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपंच जिय जोय ॥ ६ ॥[7]
जाहि न चाहिय कबहुँ कछु, तुम सन सहज सनेह।
बसहु निरन्तर तासु उर, सो राउर निज गेह ॥ ७ ॥
जाहि जीव पर तव कृपा, संतत रहत हुलास।
तिन की महिमा को कहै, जे अनन्य[8] प्रिय दास ॥ ८ ॥
खेलत बालक ब्याल सँग, पावक मेलत हाथ।
तुलसी सिसु पितु मातु इव, राखत सिय रघुनाथ ॥ ९ ॥
घर कीन्हें घर होत है, घर छाड़े घर जाय।
तुलसी घर बन बीचही, रहो प्रेमपुर छाय ॥ १० ॥

---

(१) विष। (२) मृत्यु। (३) पहरेदार। (४) किवाड़। (५) सिकरी, ज़ंजीर। (६) चाहे पूरनमासी का चाँद सोलहो कला से उगै और समस्त तारे इकट्ठे हो जाँय और सब पहाड़ों पर आग बाली जाय तौभी बिना सूरज के उदय हुए रात का अंधकार नहीं जा सकता। (७) जैसे कोई राजा सपने में भिखमँगा हो जाय और भिखारी राजा इन्द्र बन जाय ऐसे ही यह सब संसार का प्रपंच झूठा है। (८) इकलौते, असदृश।

असन बसन सुत नारि सुख, पापिहु के घर होइ ।
संत समागम राम धन, तुलसी दुर्लभ दोइ ॥ ११॥
काम क्रोध मद लोभ की, जब लगि मन में खान ।
का पंडित का मूरखा, दोनौं एक समान ॥ १२॥
माँगि मधुकरी खात जे, सोवत पाँव पसारि ।
पाप प्रतिष्ठा बढ़ि परी, तुलसी बाढ़ी रारि ॥ १३॥
मिथ्या माहुर सजन कहँ, छलहिं गरल सम साच ।
तुलसी परसि परात जिमि, पारद पावक आँच[1] ॥ १४॥

चरनदासजी के छूटी हुई साखियाँ

(देखो पृष्ठ १४२-१५१)

सतगुरु के ढिंग जाय के, सनमुख खावै चोट ।
चकमक लगि पथरी झड़ै, सकल जलावै खोट ॥ १ ॥
बिन दरसन कल ना पड़ै, मनुवाँ धरत न धीर ।
चरनदास गुरु चरन बिनु, कौन मिटावै पीर ॥ २ ॥
ज्यौं सेमर का सूवना, ज्यौं लोभी का धर्म ।
अन्न बिना भुस कूटना, नाम बिना यौं कर्म ॥ ३ ॥
हाथी घोड़े धन घना, चन्द्रमुखी बहु नार ।
नाम बिना जम-लोक में, पावत दुक्ख अपार ॥ ४ ॥
अज्ञाकारी पीव की, रहै पिया के संग ।
तन मन से सेवा करै, और न दूजा रंग ॥ ५ ॥
पति की ओर निहारिये, औरन से क्या काम ।
सभी देवता छोड़ करि, जपिये गुरु का नाम ॥ ६ ॥
इंद्रिन के बस मन रहै, मन के बस रहै बुद्धि ।
कहो ध्यान कैसे लगै, ऐसा जहाँ बिरुद्ध ॥ ७ ॥

---

(१) जैसे आग के छूते ही पारा उड़ जाता है ।

फुटकर साखियाँ और भक्तों की

कर छटकारे जातु हौ, दूबल जानि कै मोहिं।
हिरदे से जब जाइहौ, तब बली बखानौं तोहिं ॥ १ ॥

प्रीतम हम तुम एक हैं, कहन सुनन को दोय।
मन से मन को तौलिये, दो मन कभी न होय ॥ २ ॥

प्रीतम प्रीति लगाइ कै, दूर देस मत जाव।
बसो हमारी नागरी, हम माँगैं तुम खाव ॥ ३ ॥

तू तू करता तू भया, मुझ में रही न हूँ।
वारी तेरे नाम पर, जित देखूँ तित तू ॥ ४ ॥

प्रेम पावरी पहिर करि, धीरज काजर देहि।
सील सिँदूर भराय करि, यौँ पिय का सुख लेहि ॥ ५ ॥

जो जन जाकी सरन है, सरन गहे की लाज।
मीन धार सन्मुख चलै, बहे जात गजराज ॥ ६ ॥

जब यह ध्याता ध्यान में, ध्येय रूप ह्वै जाय।
पूरा जानौ ध्यान तब, या में संसय नाहिं ॥ ७ ॥

ध्येय रूप होना यही, भिन्न ज्ञान नहिं होय।
छीर नीर जब मिलत हैं, सूझत नाहीं दोय ॥ ८ ॥

गहिरी नदी कुठौर है, पर्यौं भँवर बिच आय।
दीनबंधु इक तोहि बिनु, अब को करै सहाय ॥ ९ ॥

हम बासी वा देस के, जहँ जाति बरन कुल नाहिं।
सबद मिलावा होत है, देह मिलावा नाहिं ॥ १० ॥

आप छके नैना छके, और छके सब गात।
जा तन चितवत नैन भरि, रोम रोम छकि जात ॥ ११ ॥

॥ इति ॥

बेलवेडियर प्रेस, कटरा, प्रयाग की पुस्तकें

संतबानी पुस्तकमाला

[हर महात्मा का जीवन-चरित्र उनकी बानी के आदि में दिया है]

कबीर साहिब का अनुराग सागर	...	...	१)
कबीर साहिब का बीजक	...	...	॥।)
कबीर साहिब का साखी-संग्रह	...	.	१=)
कबीर साहिब की शब्दावली, पहला भाग	...	...	॥।)
कबीर साहिब की शब्दावली, दूसरा भाग	...	...	॥।)
कबीर साहिब की शब्दावली, तीसरा भाग	...	...	।=)
कबीर साहिब की शब्दावली, चौथा भाग	...	..	=)
कबीर साहिब की ज्ञान-गुदड़ी, रेख़ते और झूलने	...	...	।=)
कबीर साहिब की अखरावती	...	...	=)
धनी धरमदास जी की शब्दावली	...	...	॥-)
तुलसी साहिब (हाथरस वाले) की शब्दावली भाग १	...	...	१=)
तुलसी साहिब दूसरा भाग पद्मसागर ग्रंथ सहित	...	...	१=)
तुलसी साहिब का रत्नसागर	...	...	१।-)
तुलसी साहिब का घट रामायण पहला भाग	...	...	१॥)
तुलसी साहिब का घट रामायण दूसरा भाग	...	...	१॥)
गुरु नानक की प्राण-संगली दूसरा भाग	...	...	१॥)
दादू दयाल की बानी भाग १ "साखी"	...	...	१॥)
दादू दयाल की बानी भाग २ "शब्द"	...	...	१।)
सुन्दर बिलास	...	...	१-)
पलटू साहिब भाग १—कुंडलिया	...	...	॥।)
पलटू साहिब भाग २—रेख़ते, झूलने, अरिल, कवित्त, सवैया		...	॥।)
पलटू साहिब भाग ३—भजन और साखियाँ	...	...	॥।)
जग जीवन साहिब की बानी पहला भाग	...	...	॥।-)
जग जीवन साहिब की बानी दूसरा भाग	...	...	॥।-)
दूलन दास जी की बानी,	...	...	।)॥

चरनदास जी की बानी, पहला भाग	...	...	।।।-)
चरनदास जी की बानी, दूसरा भाग	...	...	।।।-)
गरीबदास जी की बानी	...	...	१।-)
रैदास जी की बानी	...	...	॥)
दरिया साहिब (बिहार) का दरिया सागर	...	...	।≡)॥
दरिया साहिब के चुने पद और साखी	...	...	।-)
दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) की बानी	...	...	।≡)
भीखा साहिब की शब्दावली	...	...	॥=)॥
गुलाल साहिब की बानी	...	...	।।।=)
बाबा मलूकदास जी की बानी	...	...	।)॥
गुसाईं तुलसीदास जी की बारहमासी	...	...	-)
यारी साहिब की रत्नावली	...	...	=)
बुल्ला साहिब का शब्दसार	...	...	।)
केशवदास जी की अमींघूंट	...	...	-)॥
धरनीदास जी की बानी	...	...	।=)
मीराबाई की शब्दावली	...	...	॥=)
सहजो बाई का सहज-प्रकाश	...	...	।≡)॥
दया बाई की बानी	...	...	।)
संतबानी संग्रह, भाग १ (साखी) [प्रत्येक महात्माओं के संक्षिप्त जीवन चरित्र सहित]	...	...	१॥)
संतबानी संग्रह, भाग २ (शब्द) [ऐसे महात्माओं के संक्षिप्त जीवन चरित्र सहित जो भाग १ में नहीं हैं]	...	...	१॥)
		कुल	३३॥=)
अहिल्या बाई	...	...	≡)

दाम में डाक महसूल व पैकिङ्ग शामिल नहीं है वह इसके ऊपर लिया जायगा—

मिलने का पता—

मैनेजर, बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग।

बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग की हिन्दी-पुस्तकमाला

नवकुसुम भाग १ नवकुसुम भाग २	इन दोनों भागों में छोटी छोटी रोचक शिक्षाप्रद कहानियाँ संग्रहित हैं। मूल्य पहला भाग ॥) दूसरा भाग ॥)

सचित्र विनय पत्रिका—बड़े बड़े हर्फ़ों में मूल और सविस्तार टीका है। सुन्दर जिल्द तथा गुसाईं जी के तीन चित्र भिन्न भिन्न अवस्था के हैं मूल्य २॥) और सजिल्द ३)

करुणा देवी—यह सामयिक उपन्यास बड़ा मनमोहक और शिक्षाप्रद है। स्त्रियों को अवश्य पढ़ना चाहिये। मूल्य ॥=)

हिन्दी-कविताबली—छोटी छोटी सरल बालोपयोगी कविताओं का संग्रह है। मूल्य -)

सचित्र हिन्दी महाभारत—कई रंगीन मनमोहक चित्र तथा सरल हिन्दी में महाभारत की सम्पूर्ण कथा है। सजिल्द दाम ३)

गीता—(पाकेट एडिशन) श्लोक और उनका सरल हिन्दी में अनुवाद है। अन्त में गूढ़ शब्दों का कोश भी है। सुन्दर जिल्द मूल्य ।॥=)

उत्तर ध्रुव की भयानक यात्रा—इस उपन्यास को पढ़ कर देखिये। कैसी अच्छी सैर है। बार बार पढ़ने का ही जी चाहेगा। मूल्य ॥)

सिद्धि—यथा नाम तथा गुणः। अपने अनमोल जीवन को सुधारिये। मूल्य ॥)

महारानी शशिप्रभा देवी—एक विचित्र जासूसी शिक्षाप्रद उपन्यास मूल्य १।)

सचित्र द्रोपदी—इसमें देवी द्रोपदी के जीवन चरित्र का सचित्र वर्णन है। मूल्य ।॥)

कर्मफल—यह सामाजिक उपन्यास बड़ा शिक्षाप्रद और रोचक है। मूल्य ।॥)

दुःख का मीठा फल—इस पुस्तक के नाम ही से समझ लीजिये। मूल्य ।॥=)

लोक संग्रह अथवा संतति विज्ञान—इसे कोक शास्त्रों का दादा जानिये। मूल्य ।॥=)

हिन्दी साहित्य प्रदीप—कक्षा ५ व ६ के लिये उपयोगी है (सचित्र) मूल्य ॥=)

काव्य निर्णय—दास कवि का बनाया हुआ टीका-टिप्पणी सहित मूल्य १।)

सुमनोऽञ्जलि भाग १—हिन्दू धर्म सम्बन्धी अपूर्व और अत्यन्त लाभदायक पुस्तक है। इसके लेखक मिश्रबन्धु महोदय हैं। सजिल्द मूल्य ।=)

सुमनोऽञ्जलि भाग २—काव्यालोचना सजिल्द ।=)

सुमनोऽञ्जलि भाग ३—उपदेश कुसुमावली मूल्य ।=)

(उपरोक्त तीनों भाग इकट्ठे सुन्दर सुनहरी जिल्द बँधी है) मूल्य २)

सचित्र रामचरितमानस—यह असली रामायण बड़े हरफ़ों में टीका सहित है। भाषा बड़ी सरल और लालित्य पूर्ण है। इस रामायण में २० सुन्दर चित्र, मानस-पिंगल और गोसाईं जी की वृस्तृत जीवनी है। पृष्ठ संख्या १२००, चिकना कागज़ मूल्य (De Lux Edition) केवल ६॥)। इसी असली रामायण का एक सस्ता

संस्करण ११ बहुरंगा और ९ रंगीन यानी कुल २० सुन्दर चित्र और सुनहरी जिल्द सहित १२०० पृष्ठों का मूल्य ४॥) । प्रत्येक कांड अलग अलग भी मिल सकते हैं और इनके काग़ज़ चिकने हैं ।

प्रेम-तपस्या—एक सामाजिक उपन्यास (प्रेम का सच्चा उदाहरण) मूल्य ।।)

लोक परलोक हितकारी—इसमें कुल महात्माओं के उत्तम उपदेशों का संग्रह किया गया है । पढ़िये और अनमोल जीवन को सुधारिये । मूल्य ॥॥=)

विनय कोश—विनय पत्रिका के सम्पूर्ण शब्दों का अकारादि क्रम से संग्रह करके विस्तार से अर्थ है । यह मानस-कोश का भी काम देगा । मूल्य २)

हनुमान बाहुक—प्रति दिन पाठ करने के योग्य, मोटे अक्षरों में शुद्ध छपी है । मूल्य –)॥

तुलसी ग्रन्थावली—रामायण के अतिरिक्त तुलसीदास जी के अन्य ग्यारहों ग्रन्थ शुद्धता पूर्वक मोटे मोटे बड़े अक्षरों में छपे हैं और पाद टिप्पणी में कठिन शब्दों के अर्थ दिये हैं । सचित्र व सजिल्द मूल्य ४)

कवित्त रामायण—पं० रामगुलाम जी द्विवेदी कृत पाद टिप्पणी में कठिन शब्दों के अर्थ सहित छपी है । मूल्य ।=)

नरेन्द्र-भूषण—एक सचित्र सजिल्द उत्तम मौलिक जासूसी उपन्यास है । मूल्य १)

संदेह—यह एक मौलिक क्रांतिकारी नया उपन्यास है । मूल्य ॥।) सजिल्द १)

चित्रमाला भाग १—सुन्दर मनोहर १२ रंगीन चित्रों का संग्रह तथा परिचय है । मूल्य ॥।)

चित्रमाला भाग २—सुन्दर मनोहर १२ रंगीन चित्रों का संग्रह है । मूल्य ॥।)

चित्रमाला भाग ३—सुन्दर मनोहर १२ रंगीन चित्रों का संग्रह है मूल्य १)

चित्रमाला भाग ४—१२ रंगीन सुंदर चित्र तथा चित्र-परिचय है मूल्य १)

गुटका रामायण—यह असली तुलसीकृत रामायण अत्यन्त शुद्धता पूर्वक छोटे रूप में है । पृष्ठ संख्या लगभग ४५० के है । इसमें अति सुन्दर ८ बहुरंगे और ५ रंगीन चित्र हैं । तेरहो चित्र अत्यन्त भावपूर्ण और मनमोहक हैं । रामायण प्रेमियों के लिये यह रामायण अपूर्व और लाभदायक है । जिल्द बहुत सुन्दर और मज़बूत तथा सुनहरी है । मूल्य केवल १॥)

घोंघा गुरू की कथा—इस देश में घोंघा गुरू की हास्यपूर्ण कहानियाँ बड़ी ही प्रचलित है । उन्हीं का यह संग्रह है । शिक्षा लीजिये और ख़ूब हँसिए । ।)

गल्प पुष्पाञ्जलि—इसमें बड़ी उमदा उमदा गल्पों का संग्रह है । पुस्तक सचित्र और दिलचस्प है । दाम ॥–)

हिन्दी साहित्य सुमन— दाम ॥)

सावित्री और गायत्री—यह उपन्यास सब प्रकार की घरेलू शिक्षा देगा और रोज़ाना व्योहार में आने वाली बातें बतावेगा । अवश्य पढ़िये । जी खूब लगेगा । दाम ॥)

फ्राँस की राज्य क्रांति का इतिहास मूल्य ।=)

हिन्दी साहित्य सरोज—तीसरी और चौथी कक्षा के लिए। मूल्य ॥-)॥

हिन्दी साहित्य रत्न—(७ वीं कक्षा के लिए) मूल्य ॥=)

बाल शिक्षा भाग १—बालकों के लिए बड़े बड़े हर्फ़ों में सचित्र रंगीन चित्र सहित है। इसमें शिक्षा भरी पड़ी है। मूल्य ।)

बाल शिक्षा भाग २—उसी का दूसरा भाग है। पुस्तक सरल सचित्र और सुन्दर है।-)

बाल शिक्षा भाग ३—यह तीसरा भाग तो पहले दोनों भागों से सुन्दर है और फिर सचित्र छपा भी है। लड़के लोट पोट हो जायँगे। मूलम ॥)

भारत की सती स्त्रियाँ—हमारी सती स्त्रियों की संसार में बड़ी महिमा है। इसमें २६ सती स्त्रियों का जीवन चरित्र है। और कई रंग बिरंगे चित्र हैं। पुस्तक सचित्र साफ़ सुथरी है। मूल्य १)

सचित्र बाल बहार—लड़कों के लायक़ सचित्र पद्यों में छपी है दाम =)

दो वीर बालक—यह सचित्र पुस्तक वीर बालक इलावंत और बभ्रुवाहन के जीवन का वृत्तांत है। यह पुस्तक बड़ी सुन्दर शिक्षा-दायक और सरल है। दाम ।≡)

नल-दमयन्ती (सचित्र) दाम ॥-)

प्रेम परिणाम—प्रेम सम्बन्धी अनूठा उपन्यास दाम ॥।)

योरप की लड़ाई—गत यूरोपीय महायुद्ध का रोमांचकारी वृत्तांत दाम ।-)

समाज-चित्र (सचित्र नाटक)—आज कल के समाज के कुप्रथाओं का जीता-जागता उदाहरण है। सचित्र दाम ॥।)

पृथ्वीराज चौहान (ऐतिहासिक नाटक) ६ रंगीन और २ बहुरंगे कुल ८ चित्र हैं। नाटक रंग मंच पर खेलने योग्य है। पढ़ने में जो ख़ूब लगने के अलावा अपूर्व वीरता की शिक्षा भी मिलती है। १।)

सती सीता—सीता जी के अपूर्व चरित्रों का सरल हिन्दी में वृत्तांत। ॥=)

भारत के वीर पुरुष—प्रत्येक भारतीय वीर पुरुषों की जीवनी बड़े रोचक ढंग से लिखी है। पुस्तक पढ़ कर प्रत्येक भारतीय वीर बन सकता है। १।)

भक्त प्रहलाद (नाटक) ।=)

स्कन्द गुप्त (नाटक) १।)

बाल रामायण—सरल हिन्दी में रामायण की पूरी कथा बच्चों के लिए ॥)

पता:—मैनेजर, बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग।

UNIVERSITY LIBRARY
20 JAN. 1937
ALLAHABAD.

संतबानी-संग्रह

दूसरा भाग

(शब्द)

सूचीपत्र

नाम				शब्द संख्या	पृष्ठ
१ कबीर साहिब	...	...	...	६१	१—२८
२ पीपाजी	...	...	...	१	२८
३ नामदेवजी	...	..	...	८	२८—३२
४ रैदासजी	...	...	...	६	३२—३५
५ सदनाजी	...	...	...	१	३६
६ धनी धर्म्मदासजी	...	...	..	२२	३७—४५
७ गुरु नानक	...	...	...	२८	४६—५४
८ सूरदासजी	...	...	...	३०	५५—६७
९ स्वामी हरिदास	...	...	...	२	६७—६८
१० मीरा बाई	...	...	...	२२	६८—७७
११ नरसी मेहताजी	...	...	...	२	७८
१२ गुसाईं तुलसीदास जी	...	...	...	२३	७९—९०
१३ दादू दयाल	...	...	...	३०	९०—१०१
१४ बाबा मलूकदास	...	...	...	१०	१०२—१०६
१५ नाभाजी	...	...	...	१	१०६
१६ सुंदरदासजी	...	...	...	५५	१०७—१२५
१७ धरनीदासजी	...	...	...	९	१२५—१२
१८ जगजीवन साहिब	...	...	...	३९	१३०—१
१९ यारी साहिब	...	...	...	१०	१४५—१
२० दरिया साहिब (बिहार वाले)		...	...	९	१४८—१
२१ दरिया साहिब (मारवाड़ वाले)		...	...	६	१५३—
२२ दूलनदासजी	...	...	...	३५	१५७—
२३ बुल्ला साहिब	...	...	...	१७	१७०—
२४ केशवदास जी	...	...	...	५	१७६—
२५ चरनदासजी	...	...	...	१५	१७९—

नाम				शब्द संख्या	पृष्ठ
२६ बुल्लेशाह	...	...	...	७	१८७—१९१
२७ सहजो बाई	...	...	...	८	१९१—१९४
२८ दया बाई	...	...	...	१	१९४—१९५
२९ गरीबदासजी	...	...	...	११	१९५—२०१
३० गुलाल साहिब	...	...	...	१५	२०१—२०७
३१ भीखा साहिब	...	...	...	१७	२०७—२१६
३२ पलटू साहिब	...	...	...	५५	२१६—२३८
३३ तुलसी साहिब	...	...	...	२५	२३९—२५२
३४ काष्ठजिह्वा स्वामी	...	...	...	६	२५२—२५४
फुटकर	...	...	...	८	२५४—२५६
				६०३	

संतबानी संग्रह

भाग २

(शब्द)

जिस में

२४ संतो, साधों और परम भक्तों के चुने हुए शब्द मय टिप्पनी और संक्षिप्त जीवन-चरित्र उन महात्माओं के जिन की साखी भाग १ में नहीं दी है छापे गये हैं

"न भूतो न भविष्यति"--सुधाकर

——:*:——

[कोई साहिब बिना इजाज़त के इस पुस्तक को नहीं छाप सकते]

इलाहाबाद

बेलवेडियर प्रिंटिंग वर्क्स में प्रकाशित हुआ।

सन् १९२२ ई०

द्वितीय संस्करण]

[दाम १॥)

[illegible]

संतबानी [illegible] के छापने का अभिप्राय [illegible] महात्माओं की बानी और उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उन में से विशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और जो छपी थीं सो प्रायः ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या क्षेपक और त्रुटि से भरी हुई कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ या फुटकल शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये। भर सक तो पूरे ग्रंथ छापे गये हैं और फुटकल शब्दों की हालत में सर्व-साधारन के उपकारक पद चुन लिये हैं, प्रायः कोई पुस्तक बिना दो लिपिओं का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है और कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत फुट-नोट में दे दिये हैं। जिन महात्मा की बानी है उन का जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा गया है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उन के वृत्तांत और कौतुक संक्षेप से फुट-नोट में लिख दिये गये हैं।

दो अंतिम पुस्तकें इस पुस्तक-माला की अर्थात् "संतबानी संग्रह" भाग १ [साखी] और भाग २ [शब्द] छप चुकीं जिन का नमूना देख कर महामहोपाध्याय श्री पंडित सुधाकर द्विवेदी बैकुंठ-बासी ने गद्गद होकर कहा था—"न भूतो न भविष्यति"।

एक अनूठी और अद्वितीय पुस्तक महात्माओं और बुद्धिमानों के बचनों की "लोक परलोक हितकारी" नाम की गद्य में सन् १९१९ में छपी है जिसके विषय में श्रीमान महाराजा काशी नरेश ने लिखा है—"वह उपकारी शिक्षाओं का अचरजी संग्रह है जो सोने के तोल सस्ता है"।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तक-माला के जो दोष उन की दृष्टि में आवें उन्हें हम को कृपा करके लिख भेजें जिस से वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें।

हिन्दी में और भी अनूठी पुस्तकें छपी हैं जिन में प्रेम कहानियों के द्वारा शिक्षा बतलाई गई है—उनके नाम और दाम इस पुस्तक के अन्त वाले पृष्ठों में देखिये।

मनेजर, बेलवेडियर छापाख़ाना,
इलाहाबाद।

मई सन् १९२२ ई०

संतबानी संग्रह

की

सूचना

यह संग्रह प्राचीन संतों और महात्माओं की बानी का जिन में से बहुतों के पंथ भारतवर्ष में प्रचलित हैं हमारे बैकुंठवासी मित्र, संतबानी के रसिक, ज्योतिष विद्या के सूर्य्य महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी के आग्रह से छः बरस हुए आरंभ किया गया था और थोड़े से महात्माओं की साखियाँ और पद जो उनके जीवन समय में चुने जा चुके थे उन को दिखलाये गये जिन को पढ़ कर वह गद्गद् होकर बोले "न भूतो न भविष्यति"। इस पर महंत गुरुप्रसाद जी जो पास बैठे थे बोले कि पंडित जी आपने इस नमूने के विषय में जो "न भूतो" कहा वह तो ठीक है पर "न भविष्यति" कैसे कहा, क्या आगे इस से बढ़कर संग्रह संतबानी का नहीं रचा जा सकता? पंडित जी ने जवाब दिया कि हाँ यदि इन संतों से बढ़कर महात्मा औतार धरैं या यही संत फिर देह धर कर इस से उत्तम बानी कथैं तो हो सकता है क्योंकि इन महात्माओं की बानी का हीर संग्रहकर्त्ता ने काढ़ कर धर दिया है।

पंडित जी के चोला छोड़ने पर इस संग्रह के पूरा करने का उत्साह भी सम्पादक का ढीला हो गया परन्तु अब कि संतबानी पुस्तक-माला के जितने ग्रंथ छापने को थे छप चुके अपने मित्र की इच्छानुसार इस ग्रन्थ के पूरा करने की ओर ध्यान गया और यथा शक्ति ठीक करके वह अब छापा जाता है।

इस ग्रन्थ के दो भाग रक्खे गये हैं—पहिला साखी-संग्रह और दूसरा शब्द-संग्रह. पहिले भाग में कुल ऐसे महात्मा जिनकी साखियाँ हम को मिलीं छापी गई हैं और उनका संक्षिप्त जीवन-चरित्र हर एक की बानी के सिरे पर दे दिया गया है। ऐसे महात्मा जिन के केवल पद मिले उनका संक्षिप्त जीवन-वृत्तान्त दूसरे भाग में इसी प्रकार से दिया गया है। सब मिला कर ३९ महात्माओं की चुनी हुई बानी इस ग्रन्थ के दोनों भागों में छपी हैं जिन में से २२ महात्मा वह हैं जिन के ग्रन्थ सन्तबानी पुस्तक-माला में छप चुके हैं—उन में ऐसी सैकड़ों साखियाँ और पद बढ़ा दिये गये हैं जो पीछे से मिले।

संतबानी [illegible] के छापने का [illegible] महात्माओं की बानी और उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उन में से विशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और जो छपी थीं सो प्रायः ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या क्षेपक और त्रुटि से भरी हुई कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ या फुटकल शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये। भर सक तो पूरे ग्रंथ छापे गये हैं और फुटकल शब्दों की हालत में सर्व साधारन के उपकारक पद चुन लिये हैं, प्रायः कोई पुस्तक बिना दो लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है और कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत फुट-नोट में दे दिये हैं। जिन महात्मा की बानी है उन का जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा गया है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उन के वृत्तांत और कौतुक संक्षेप से फुट-नोट में लिख दिये गये हैं।

दो अंतिम पुस्तकें इस पुस्तक-माला की अर्थात् "संतबानी संग्रह" भाग १ [साखी] और भाग २ [शब्द] छप चुकीं जिन का नमूना देख कर महामहोपाध्याय श्री पंडित सुधाकर द्विवेदी बैकुंठ बासी ने गद्गद होकर कहा था-- "न भूतो न भविष्यति"।

एक अनूठी और अद्वितीय पुस्तक महात्माओं और बुद्धिमानों के बचनों की "लोक परलोक हितकारी" नाम की गद्य में सन् १९१९ में छपी है जिसके विषय में श्रीमान महाराजा काशी नरेश ने लिखा है—"वह उपकारी शिक्षाओं का अचरजी संग्रह है जो सोने के तोल सस्ता है"।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तक माला के जो दोष उन की दृष्टि में आवें उन्हें हम को कृपा करके लिख भेजें जिस से वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें।

हिन्दी में और भी अनूठी पुस्तकें छपी हैं जिन में प्रेम कहानियों के द्वारा शिक्षा बतलाई गई है उनके नाम और दाम इस पुस्तक के अन्त वाले पृष्ठों में देखिये।

मैनेजर, बेलवेडियर छापाख़ाना,

मई सन् १९२२ ई०

इलाहाबाद।

[illegible]

की

सूचना

यह संग्रह प्राचीन संतों और महात्माओं की बानी का जिन में से बहुतों के पंथ भारतवर्ष में प्रचलित हैं हमारे [illegible] मित्र, संतबानी के रसिक, ज्योतिष विद्या के सूर्य [illegible] पंडित सुधाकर द्विवेदी के आग्रह से छः बरस हुए आरंभ किया गया था और थोड़े से महात्माओं की साखियाँ और पद जो उनके जीवन [illegible] थे उन को दिखलाये गये जिन को पढ़ कर वह गद्गद होकर बोले "न भूतो न भविष्यति"। इस पर महंत गुरुप्रसाद जी जो पास बैठे थे बोले कि पंडित जी आपने इस नमूने के विषय में जो "न भूतो" कहा वह तो ठीक है पर "न भविष्यति" कैसे कहा, क्या आगे इस से बढ़कर संग्रह संतबानी का नहीं रचा जा सकता ? पंडित जी ने जवाब दिया कि हाँ यदि इन संतों से बढ़कर महात्मा औतार धरैं या यही संत फिर देह धर कर इस से उत्तम बानी कथैं तो हो सकता है क्योंकि इन महात्माओं की बानी का हीर संग्रहकर्ता ने काढ़ कर धर दिया है।

पंडित जी के चोला छोड़ने पर इस संग्रह के पूरा करने का उत्साह भी सम्पादक का ढीला हो गया परन्तु अब कि संतबानी पुस्तक-माला के जितने ग्रंथ छापने को थे छप चुके अपने मित्र की इच्छानुसार इस ग्रन्थ के पूरा करने की ओर ध्यान गया और यथा शक्ति ठीक करके वह अब छापा जाता है।

इस ग्रन्थ के दो भाग रक्खे गये हैं- पहिला साखी-संग्रह और दूसरा शब्द-संग्रह। पहिले भाग में कुल ऐसे महात्मा जिनकी साखियाँ हम को मिलीं छापी गई हैं और उनका संक्षिप्त जीवन-चरित्र हर एक की बानी के सिरे पर दे दिया गया है। ऐसे महात्मा जिन के केवल पद मिले उनका संक्षिप्त जीवन-वृत्तान्त दूसरे भाग में इसी प्रकार से दिया गया है। सब मिला कर ३४ महात्माओं की चुनी हुई बानी इस ग्रन्थ के दोनों भागों में छपी हैं जिन में से [illegible] महात्मा वह हैं जिन के ग्रन्थ संतबानी पुस्तक-माला में छप चुके हैं— उन में ऐसी रोचक साखियाँ और पद बढ़ा दिये गये हैं जो पीछे से मिले।

अब सब लिपियाँ संतबानी की जो [illegible] ने अनुमान बीस बरस के उद्योग से इकट्ठा करके यथा शक्ति उन की त्रुटियों को ठीक किया था छप चुकीं सिवाय पलटू साहिब की थोड़ी सी मनोहर साखियों और बहुत से उत्तम पदों के जो उन महात्मा की बानी छापने के पीछे हम को मिले। यह पुराने पदों के साथ तीन भागों में इस क्रम से रक्खे गये हैं कि पहिले भाग में केवल [illegible] दूसरे भाग में रेख़ते, झूलने, अरिल, छंद और कबित और तीसरे भाग में रागों के पद वा भजन और साखियाँ और कवित अनेक त्रुटियाँ भी जो पुराने छापे में रह गई थीं नई लिपि से मिलान करके सुधार दी गई हैं और नई टिप्पनियाँ फुट-नोट में रख दी गई हैं॥

इलाहाबाद,
मई सन् १९१५.

अधम,
संतबानी पुस्तक-माला सम्पादक।

दूसरे छापे की सूचना।

यह हर्ष का विषय है कि संतबानी के प्रेमी जनों ने संतबानी पुस्तकमाला को अपना कर मुझे पूरी सहायता दी। उसी का फलस्वरूप संतबानी-संग्रह भाग २ का द्वितीय संस्करण उनकी सेवा में उपस्थित करता हूँ। गुरु नानक साहिब के पद सुन्दरदास जी और पलटू साहिब की साखियां भी छप कर तैयार हैं।

इलाहाबाद
जून सन् १९२२

प्रकाशक

पानी पवन की गम नहीं, वोहि लोक मँझारा।
ताही बिच इक रूप है, वोहि ध्यान [illegible] ॥३॥
जिमीं [illegible] उहाँ नहीं, वो अजर कहावै।
कहै कबीर सोइ साध जन, वा लोक [illegible] ॥४॥

(२)

हंसा करो नाम नौकरी ॥ टेक ॥
[illegible] निसि [illegible], नहिं भूलै छिन घरी ॥१॥
नाम बिदेही जो जन पावै, कबहुँ न सुरति बिसरी ॥२॥
ऐसो सब्द [illegible] से पावै, आवा गवन हरी ॥३॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, पावै अमर नगरी ॥४॥

(३)

जो जन लेहिं खसम का नाउँ, तिन के सद [illegible]
जो गुरु के निर्मल गुन गावै, सो भाई मेरे मन भावै ॥२॥
जेहि घट नाम रह्यो भरपूर, [illegible] हम धूर ॥३
जाति [illegible] मति का धीर, सहज सहज गुन रमे कबीर ॥४

॥ [illegible] ॥

(१)

मन फूला फूला फिरै, जक्त में कैसा नाता रे [illegible]
माता कहै यह पुत्र हमारा, [illegible] कहै बिर[1] मेरा।
भाई कहै यह भुजा हमारी, नारि कहै नर मेरा ॥१॥
पेट पकरि के माता रोवै, बाँहि पकरि के भाई।
[illegible] के तिरिया रोवै, हंस अकेला जाई ॥२॥

(१) बीर = भाई।

जब लगि जीवै माता रोवै, बहिन रोवै दस मासा ।
तेरह दिन तक तिरिया रोवै, फेर करै घर बासा ॥३॥
चार गजी चरगजी मँगाया, चढ़ा काठ की घोड़ी ।
चारो कोने आग लगाया, फूँक दियो जस होरी ।४।
हाड़ जरै जस लाह कड़ी को, केस जरै जस घासा ।
सोना ऐसी काया जरि गइ, कोई न आयो पासा ॥५॥
घर की तिरिया ढूँढ़न लागी, ढूँढ़ि फिरी चहुँ देसा ।
कहै कबीर सुनो भइ साधो, छाड़ो जग की आसा ॥६॥

(२)

सुअना पिंजरवा छोरि करि भागा ॥ टेक ॥
इस पिंजरे में दस दरवाजा,
दसो दरवाजे किवाड़ा लागा ॥१॥
नैनन सेती नीर बहन लग्यो,
अब कस नाहिं तू बोलत अभागा ॥२॥
कहत कबीर सुनो भइ साधो,
उड़ि गे हंस टूटि गयो तागा ॥३॥

(३)

कौनो ठगवा नगरिया लूटल हो ॥ टेक ॥
चंदन काठ कै बनल खटोलना, ता पर दुलहिन सूतल हो ॥१॥
उठो री सखी मोरी माँग सँवारो, दुलहा मोसे रूसल हो ॥२॥
आये जमराज पलँग चढ़ि बैठे, नैनन आँसू टूटल हो ॥३॥
चारि जने मिलि खाट उठाइन, चहुँ दिसि धूँ धूँ ऊठल हो ॥४॥
कहत कबीर सुनो भइ साधो, जग से नाता छूटल हो ॥४॥

(४)

बीती बहुत रही थोरी सी ॥ टेक ॥

खाट पड़े नर झींखन लागे, निकसि प्रान गयो चोरी सी ॥१॥
भाई बंद कुटुँब सब जुरि के, फूँक दियो मानो होरी सी ॥२॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, सिर पर देत हैं भौंरी सी ॥३॥

(५)

तोरी गठरी में लागे चोर, बटोहिया का रे सोवै ॥ टेक ॥

पाँच पचीस तीन हैं चुरवा, यह सब कीन्हा सोर—
बटोहिया का रे सोवै ॥ १ ॥

जागु सवेरा बाट अनेड़ा, फिर नहिं लागै जोर—
बटोहिया का रे सोवै ॥ २ ॥

भवसागर इक नदी बहतु है, बिन उतरे जाव बोर[१]—
बटोहिया का रे सोवै ॥ ३ ॥

कहै कबीर सुनो भइ साधो, जागत कीजे भोर—
बटोहिया का रे सोवै ॥ ४ ॥

(६)

करम गति टारे नाहिं टरी ॥ टेक ॥

मुनि बसिष्ठ से पंडित ज्ञानी, सोधि के लगन धरी ।
सीता हरन मरन दसरथ को, बन में बिपति परी[२] ॥१॥
कहँ वह फंद कहाँ वह पारधि[३] कहँ वह मिरग चरी[२] ।
सीता को हरि ले गयो रावन, सोने की लंक जरी[२] ॥२॥

---

(१) बूड़, डूब (२) रामचन्द्र जी का बनवास, दसरथ का उनके बियोग में प्रान तजना, मारीच को मृगा बना कर रावन का सीता जी को चुरा ले जाना, और फिर रामचन्द्र का रावन को मारना और लंका को जलाना यह कथा प्रायः सब लोग जानते हैं। (३) शिकारी।

नीच हाथ हरिचन्द[१] बिकाने, बलि[२] पाताल धरी।
कोटि गाय नित पुन्न करत नृग, गिरगिट जोनि परी[३]॥३॥
पाँडव जिन के आपु सारथी, तिन पर बिपति परी।
दुर्जोधन को गर्ब घटायो, जदु कुल नास करी[४]॥४॥
राहु केतु औ भानु चन्द्रमा, बिधि संजोग परी।
कहत कबीर सुनो भइ साधो, होनी हो के रही॥५॥

(१) राजा हरिश्चन्द्र भारी दानी और सत्यवादी थे जिन्हों ने विश्वामित्रजी को अपना सब राज पाट यज्ञ की दक्षिणा में दे दिया इस पर मुनिजी ने तीन भार सोना दान प्रतिष्ठा का अपना और निकाला। राजा हरिश्चन्द्र ने उसके लिये काशी में जाकर अपने को एक डोमड़े के हाथ और अपनी स्त्री और पुत्र को एक ब्राह्मण के हाथ बेच कर मुनि जी को संतुष्ट किया।

(२) राजा बलि बड़े प्रतापी और दानी थे जिन के द्वारे पर भगवान बावना का भेष धर कर तीन परग पृथ्वी माँगने गये। जब राजा बलि ने संकल्प कर दिया तब भगवान ने बैराट रूप धारन करके एक परग में [illegible] और एक में सारी पृथ्वी नाप ली और कहा कि अब बाकी तीसरा परग देव। राजा ने अपना शरीर भेंट किया जिसे तीसरे परग से नाप कर भगवान ने उन्हें अमर करके पाताल को भेज दिया।

(३) राजा नृग रोज़ एक लाख गऊ दान दिया करते थे। एक दिन एक गऊ जो पहिले दिन दान हो चुकी थी नई गउओं में आ मिली और राजा ने उसे अनजान में दूसरे ब्राह्मण को संकल्प कर दिया। इस पर पहिले और दूसरे दिन के दान पानेवाले ब्राह्मणों में झगड़ा हुआ और दोनों राजा के पास न्याव को गये। दोनों वही गऊ लेने पर हठ करते थे इस लिये राजा की बुद्धि चकराई और सोच में पड़ कर दोनों की दलील पर सिर हिलाते रहे। इस पर उन ब्राह्मणों ने सराप दिया कि तुम गिरगिट की तरह सिर हिलाते हो वही बन जावगे। इस लिये राजा नृग मरने पर गिरगिट की जोनी पाकर एक अंधे कूप में पड़े हुए थे जब कृष्णावतार हुआ तब श्रीकृष्ण ने उनको तारा।

(४) पांडवों के ऊपर श्रीकृष्ण महाभारत की लड़ाई में आप सारथी बने और दुरजोधन का घमंड तोड़ा और कौरवों के कुल का और (परम धाम सिधारने के पहिले) अपने जदु कुल का नाश किया। पांडवों पर यह बिपति पड़ी थी कि अपना सब राज पाट अपनी स्त्री द्रोपदी सहित कौरवों के हाथ जुए में हार गये और मुद्दत तक बनोबास में कष्ट उठाया।

(७)

और मुए का सोग करीजै, तौ कीजै जो आपन जीजै ॥१॥
मैं नाहिं मरौं मरै संसारा. अब मोहिं मिला [illegible] २
या देही परिमल [illegible], ता सुख बिसरे पर[illegible] ॥३॥
कुअटा[1] एक पंच पनिहारी, टूटी लेजु[2] भरै मतिहारी[3] ॥४॥
कह कबीर इक बुद्धि [illegible], नावह कु[illegible] [illegible]निहारी ॥५

(८)

टुक जिंदगी बँदगी कर लेना, क्या माया मद मस्ताना ॥ टेक
रथ घोड़े सुखपाल पालकी, हाथी औ बाहन नाना।
तेरा ठाठ काठ की टाटी, यह चढ़ चलना समसाना[4] ॥१॥
रूम पाट[5] पाटम्बर अम्बर, जरी बफ़ का बाना।
तेरे काज गजी गज चारिक[6], भरा रहै [illegible] ॥२॥
खर्चे की तदबीर करो तुम, मंजिल लंबी जाना।
पहिचाने का गाँव न मग में, चौकी न हाट दुकाना ॥३॥
जीते जी ले जीति जनम को, यही गाय यहि [illegible]।
कहै कबीर सुनो भइ साधो, नाहिं काल तरन [illegible] ॥४

(९)

काया बौरी चलत प्रान काहे रोई ॥ टेक ॥
काया पाय बहुत सुख [illegible], नित उठि मलि मलि धोई।
सो तन छिया छार ह्वै जैहै, नाम न लैहै कोई ॥१॥
कहत प्रान सुनु काया बौरी, मोर तोर संग न होई।
तोहि अस मित्र बहुत हम [illegible], संग न लीन्हा कोई ॥२॥

---

(१) छोटा कुआँ। (२) रस्सी। (३) मतिहीन, अज्ञान। (४) [illegible] = मुरदा जलाने का घाट। (५) ऊनी कपड़ा। (६) चार एक।

ऊसर खेत कै कुसा मँगावै, [illegible] चवर[1] कै पानी।
जीवत ब्रह्म को कोई न पूजै, मुरदा कै मिहमानी ॥३॥
सिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, सेस सहस मुख होई।
जो जो जन्म लियो बसुधा[2] मैं, थिर न रह्यो है कोई ॥४॥
पाप पुन्य हैं जन्म सँघाती, समुझि देख नर लोई।
कहत कबीर अभि अंतर की गति, जानत बिरला कोई ॥५॥

(१०)

उपजै निपजै निपजि समाई, नैनन देखि चल्यो जग जाई ॥१
लाज न मरो कहो घर मेरा, अंत की बार नहीं कछु तेरा ॥२॥
अनेक जतन करि काया पाली, मरती बेर अगिन मैं जाली ३
जोवा चंदन मरदन अंगा, सो तन जरै काठ के संगा ।४॥
कहत कबीर सुनो रे गुनिया, बिनसै रूप देखैगी दुनियाँ ॥५॥

(११)

यही घड़ी यह बेला साधो ॥ टेक ॥
लाख खरच फिर हाथ न आवै, मानुष जनम सुहेला ॥१॥
ना कोइ संगी ना कोइ साथी, जाता हंस अकेला ॥२॥
क्यौं सोया उठि जागु सवेरे, काल अहेरी सेला[3] ॥३॥
कहत कबीर गुरू गुन गावो, झूठा है सब मेला ॥४॥

(१)

हटरी छोड़ि चला बनिजारा ॥ टेक ॥
इस हटरी बिच मानिक मोती, कोइ बिरला परखनहारा ॥१
इस हटरी के नौ दरवाजे, दसवाँ [illegible] ॥२॥
निकसि गइ थंभो ढहि परा मन्दिर, [illegible] बिछुड़ [illegible] ३
कहत कबीर सुनो भई साधो, झूठा जगत पसारा ॥४॥

(१) परती जमीन को छिछला तलैया। (२) पृथ्वी। (३) तलवार।

(१३)

होली

आई गवनवाँ की सारी, उमिरि अबहीं मोरी बारी ॥टेक॥
साज समाज पिया लै आये, और कहरिया चारी।
बम्हना बेदर्दी अचरा पकरि कै, जोरत गँठिया हमारी।
सखी सब पारत गारी ॥ १ ॥
विधि[1] गति बाम कछु समझ परत ना, बैरी भई महतारी।
रोय रोय अँखियाँ मोर पोंछत, घरवाँ से देत निकारी।
भई सब को हम भारी ॥ २ ॥
गवन कराय पिया लै चाले, इत उत बाट निहारी।
छूटत गाँव नगर से नाता, छूटै महल अटारी।
करम गति टरै न टारी ॥ ३ ॥
नदिया किनारे बलम मोर रसिया, दीन्ह घुँघट पट टारी।
थरथराय तन काँपन लागे, काहू न देख हमारी।
पिया लै आये गोहारी ॥ ४ ॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, यह पद लेहु बिचारी।
अब के गौना बहुरि नहिँ औना, करिले भेंट अँकवारी।
एक बेर मिलि ले प्यारी ॥ ५ ॥

॥ लव ॥

जो कोइ या विधि मन को लगावै, मन के लगाये प्रभु पावै१
जैसे नटवा चढ़त बाँस पर, ढोलिया ढोल बजावै।
अपना बोझ धरै सिर ऊपर, सुरति बरत[2] पर लावै ॥२॥
जैसे भुवंगम[3] चरत बनहिँ में, ओस चाटने आवै।
कभी चाटै कभो मनि तन चितवै, मनि तजि प्रान गँवावै ॥३

(१) ब्रह्मा। (२) डोरी। (३) साँप।

जैसे कामिनि भरे कूप जल, कर छोड़ै बतरावै[1]।
अपना रँग सखियन सँग राचै, सुरति गगर पर लावै॥४॥
जैसे सती चढ़ी सत[2] ऊपर, अपनी काया जरावै।
मातु पिता सब कुटुँब तियागै, सुरति पिया पर लावै॥५॥
धूप दीप नैवेद अरगजा, ज्ञान की आरत लावै।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, फेर जनम नहिं पावै॥६॥

॥ बिरह ॥

(१)

वाल्हा आव हमारे गेह रे, तुम बिन दुखिया देह रे॥टेक॥
सब कोइ कहै तुम्हारी नारी, मोको यह संदेह रे।
एकमेक ह्वै सेज न सोवै, तब लगि कैसा सनेह रे॥१॥
अन्न न भावै नींद न आवै, गृह बन धरै न धीर रे।
ज्यौं कामी को कामिनि प्यारी, ज्यौं प्यासे को नीर रे॥२॥
है कोइ ऐसा पर उपकारी, पिय से कहै सुनाय रे।
अब तो बेहाल कबीर भयो है, बिन देखे जिव जाय रे॥३॥

(२)

प्रीति लगी तुम नाम की, पल बिसरै नाहीं।
नजर करो अब मिहर की, मोहिं मिलो गुसाईं॥१॥
बिरह सतावै मोहिं को, जिव तड़पै मेरा।
तुम देखन की चाव है, प्रभु मिलो सवेरा॥२॥
नैना तरसै दरस को, पल पलक न लागै।
दर्दबंद दीदार का, निसि बासर जागै॥३॥
जो अब के प्रीतम मिलैं, करूँ निमिख[3] न न्यारा।
अब कबीर गुरु पाइया, मिला प्रान पियारा॥४॥

(१) [illegible] करती है। (२) आग, चिता। (३) [illegible] भर।

(३)

मिलना कठिन है, कैसे मिलौंगी पिय जाय ॥टेक॥
समुझि सोचि पग धरौं जतन से, बार बार डिग जाय ।
ऊँची गैल राह रपटीली, पाँव नहीं ठहराय ॥१॥
लोक लाज कुल की मरजादा, देखत मन सकुचाय ।
नैहर बास बसौं पीहर में, लाज तजी नहिं जाय ॥२॥
अधर भूमि जहँ महल पिया का, हम पै चढ़ा न जाय ।
धन भइ बारी पुरुष भये भोला, सुरत झकोला खाय ॥३॥
दूती सतगुरु मिले बीच में, दीन्हों भेद बताय ।
दास कबीर पिया से भेंटे, सीतल कंठ लगाय ॥४॥

(४)

कौन मिलावै मोहिं जोगिया हो, जोगिया बिन रह्यो न जाय ॥टेक॥
हौं[1] हिरनी पिय पारधी[2] हो, मारे सबद के बान ।
जाहि लगी सो जानई हो, और दरद नहिं जान ॥१॥
मैं प्यासी हौं पीव की हो, रटत सदा पिव पीव ।
पिया मिलै तो जीव है, ना तो सहजै त्यागौं जीव ॥२॥
पिय कारन पियरी भई हो, लोग कहैं तन रोग ।
छः छः लंघन मैं करौं हो, पिया मिलन के जोग ॥३॥
कहै कबीर सुन जोगिनी हो, तन में मनहिं मिलाय ।
तुम्हरी प्रीति के कारने हो, बहुरि मिलौंगी आय ॥४॥

(५)
होली

[illegible] अँखियाँ [illegible] हो, पिय सेज चलो ॥ टेक ॥
खंभ पकरि पतंग अस डोलै, बोलै मधुरी बानी ॥१॥
फूलन सेज बिछाय जो राखौं, पिया बिना कुम्हिलानी ॥२॥

---

(१) मैं । (२) शिकारी ।

धीरे पाँव धरो पलँगा पर, जागत ननद जिठानी ॥३॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, लोक लाज बिलछानी[१] ॥४॥

(६)

होली

नैहरवा हम को नहिं भावे ॥ टेक ॥
साईं की नगरी परम अति सुन्दर, जहँ कोइ जाय न आवे ।
चाँद सुरज जहँ पवन न पानी, को संदेस पहुँचावे,
दरद यह साईं को सुनावे ॥ १ ॥
आगे चलौं पंथ नहिं सूझै, पीछे दोष लगावे ।
केहि बिधि ससुरे जावँ मोरी सजनी, बिरहा जोर जनावे,
बिषै रस नाच नचावे ॥ २ ॥
बिन सतगुरु अपनो नहिं कोई, जो यह राह बतावे ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, सुपने न प्रीतम पावे,
तपन यह जिय की बुझावे ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

बहुत दिनन में प्रीतम आये, भाग भले घर बैठे पाये ॥१॥
मंगलचार माहिं मन राखौ, राम रसायन रसना चाखौ ॥२॥
मंदिर माहिं भया उजियारा, लै सूती अपने पिय प्यारा ॥३॥
मैं निरास जो नौ निधि पाई, कहा करौं पिय तुम्हरि बड़ाई ॥४॥
कहत कबीर मैं कछु नहिं कीन्हा, सहज सुहाग पिया मोहि दीन्हा ॥५॥

(२)

घूँघट का पट खोल रे, तोको पीव मिलैंगे ॥ टेक ॥
घट घट मैं वो साईं रमता, कटुक बचन मत बोल रे (तो० को०) ॥१॥
धन जोबन का गर्ब न कीजै, झूठा पँचरँग चोल रे (तो० को०) ॥२॥

(१) छूटी । (२) जीव ।

सुन्न महल में दियना बारि ले, आसा से मत डोल रे (तो को०) ३
जोग जुगत सों रंग महल में, पिय पाई अनमोल रे (तो को०) ॥४॥
कहै कबीर आनंद भयो है, बाजत अनहद ढोल रे (तो को०) ॥५॥

(३)

मैं तो वा दिन फग मचैहौं, जा दिन पिया मोरे द्वारे ऐहैं ॥टेक॥
रंग वही रँगरेजवा वाही, सुरँग चुनरिया रँगैहौं ॥१॥
जोगिन होइ के बन बन ढूँढ़ौं, वाही नगर मैं रहिहौं ॥२॥
बालपना गल सेल्हि बनैहौं, अंग भभूत लगैहौं ॥३॥
कह कबीर पिय द्वारे ऐहैं, केसर माथ रँगैहौं ॥४॥

(४)

पिया मेरा जागै मैं कैसे सोई री ॥ टेक ॥
पाँच सखी मेरे सँग की सहेली,
उन रँग रँगी, पिया रँग न मिली री ॥ १ ॥
सास सयानी ननद बौरानी,
उन डर डरी पिय सार न जानी री ॥ २ ॥
द्वादस ऊपर सेज बिछानी,
चढ़ न सकौं मारी लाज लजानी री ॥ ३ ॥
रात दिवस मोहिं कूका मारै,
मैं न सुना रचि रहि सँग जार री ॥ ४ ॥
कह कबीर सुनु सखी सयानी,
बिन सतगुरु पिय मिले न मिलानी री ॥ ५ ॥

(५)

मोरे लगि गये बान सुरंगी हो ॥ टेक ॥
धन सतगुरु उपदेस दियो है, होइ गयो चित्त भिरंगी हो ॥१॥
ध्यान पुरुष की बनी है तिरिया, घायल पाँचो संगी हो ॥२॥

[illegible] गति [illegible] जानै, क्या जानै जाति पतंगी हो ॥३॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, निसि दिन प्रेम उमंगी हो ॥४॥

(६)

हमन है इश्क मस्ताना, हमन को [illegible] क्या ।
रहैं [illegible] या जग से, हमन दुनिया से यारी क्या ॥१॥
जो [illegible] हैं [illegible] से, [illegible] दर दर फिरते ।
[illegible] यार है हम में, हमन को [illegible] क्या ॥२॥
[illegible] अपने को, बहुत कर सिर पटकता है ।
हमन गुरु नाम साचा है, हमन दुनिया से यारी क्या ॥३॥
न पलक [illegible] से, न हम [illegible] में ।
[illegible] से नेह लागी है, हमन को [illegible] क्या ॥४॥
[illegible] इश्क का माता, दुई को दूर कर दिल से ।
जो [illegible] है, हमन सिर बोझ भारी क्या ॥५॥

(७)

[illegible] मेरा यार [illegible] में ॥ टेक ॥
[illegible] नाम भजन में, सो सुख नाहिं अमीरी में ॥१॥
[illegible] सब को [illegible], कर [illegible] गरीबी में ॥२॥
प्रेम नगर में रहनि हमारी, भलि बनि आई सबूरी में ॥३॥
हाथ में [illegible] में सोटा, चारो दिसि [illegible] में ॥४॥
आखिर यह तन [illegible], कहा फिरत [illegible] में ॥५॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, [illegible] मिलै सबूरी में ॥६॥

(८)

साधो सहज समाधि भली ।
गुरु प्रताप [illegible] दिन से [illegible], दिन दिन अधिक चली ॥१॥
जहँ जहँ डोलौं सो परिकरमा, जो कछु करौं सो सेवा ।
जब सोवौं तब करौं दंडवत, पूजौं और न देवा ॥२॥

कहौं सो नाम सुनौं सो सुमिरन, खावँ पियौं सो पूजा।
गिरह उजाड़ एक सम लेखौं, भाव मिटावौं दूजा॥३॥
आँख न मूँदौं कान न रूँधौं, तनिक कष्ट नहिं धारौं।
खुले नैन पहिचानौं हँसि हँसि, सुंदर रूप निहारौं॥४॥
सबद निरन्तर से मन लागा, मलिन बासना त्यागी।
ऊठत बैठत कबहुँ न छूटै, ऐसी तारी लागी॥५॥
कह कबीर यह उनमुनि रहनी, सो परगट करि गाई।
दुख सुख से कोइ परे परम पद, तेहि पद रहा समाई॥६॥

(९)

गुरु ने मोहिं दीन्ही अजब जड़ी॥ टेक॥
सोइ जड़ी मोहिं प्यारी लगतु है, अमृत रसन भरी॥१॥
काया नगर अजब इक बँगला, ता मैं गुप्त धरी॥२॥
पाँचो नाग पचीसो नागिन, सूँघत तुरत मरी॥३॥
या कारे ने सब जग खायो, सतगुरु देख डरी॥४॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, लै परिवार तरी॥५॥

(१०)

होली

ऋतु फागुन नियरानी, कोइ पिया से मिलावै सयानी॥
सोइ सुंदर जाको पिया को ध्यान है, सोइ पिया की मानी।
खेलत फाग अंग नहिं मोड़ै, सतगुरु से लिपटानी॥१॥
इक इक सखियाँ खेल घर पहुँचीं, इक इक कुल अरुझानी।
इक इक नाम बिना बहकानी, हो रहि ऐंचा तानी॥२॥
पिय को रूप कहाँ लग बरनौं, रूपहि माहिं समानी।
जो रँग रँगे सकल छवि छाके, तन मन सभी भुलानी॥३॥
यों मत जाने यहि रे फाग है, यह कछु अकथ कहानी।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, यह गति विरलै जानी॥४॥

(१)

॥ विनय ॥

(चौपाई)

दरसन दीजे नाम सनेही। तुम बिन दुख पावै मेरी देही॥

(छंद)

दुखित तुम बिन रटत निसि दिन, प्रगट दरसन दीजिये।
बिनती सुन प्रिय स्वामियाँ, बलि जाऊँ बिलँब न कीजिये॥१॥

(चौपाई)

अन्न न भावै नींद न आवै। बार बार मोहिं बिरह सतावै॥

(छंद)

बिबिध बिधि हम भईं ब्याकुल, बिन देखे जिव ना रहै।
तपत तन जिव उठत झारा, कठिन दुख अब को सहै॥२॥

(चौपाई)

[illegible]॥

(छंद)

गुन औगुन अपराध [illegible], [illegible] कछु न [illegible]।
पतित पावन राखु [illegible], अपना पन न[illegible]॥३॥

(चौपाई)

गृह आँगन मोहिं [illegible], बज्र [illegible] जाई॥

(छंद)

नैन भरि भरि रहे निरखत, निमिष नेह न तुड़ाइये।
बाँह दीजे बंदी छोड़, अब के बंद छुड़ाइये॥४॥

(चौपाई)

मीन मरै जैसे बिन नीरा। ऐसे तुम बिन दुखित सरीरा॥

(छंद)

दास कबीर यह करत बिनती, महा पुरुष अब मानिये।
दया कीजे दरस दीजे, अपना करि मोहिं जानिये॥५॥

(१) [illegible]

(४)

[illegible] ठाढ़े [illegible] ॥ टेक ॥
तुम बिन सुरत करै को मेरी, [illegible] खोलि किंवार ॥१॥
तुम हौ धनी उदार दयालू, [illegible] ॥२
माँगौं कौन रंक सब देखौं, तुमहीं तें मेरो निस्तार ॥३॥
जैदेव नामा बिप्र सुदामा[१], तिन पर [illegible] भई [illegible] ॥४॥
कह कबीर तुम समरथ दाता, चार पदारथ देत न बार ॥५॥

॥ साधु ॥

नारद साध से अंतर नाहीं ।
जो कोइ साध से अंतर राखै, सो नर नरकै जाहीं ॥१॥
जागै साध तो मैं हूँ जागूँ, सोवै साध तो सोऊँ ।
जो कोइ मेरे साध दुखावै, जरा मूल से खोऊँ ॥२॥
जहाँ साध मेरो जस गावै, तहाँ करूँ मैं बासा ।
साध चलै आगे उठ धाऊँ, मोहिं साध की आसा ॥३॥
माया मेरी [illegible], औ [illegible] की दासी ।
[illegible] तीरथ साध के [illegible], कोटि गया औ कासी ॥४॥
अंतर ध्यान नाम निज केरा, जिन [illegible] तिन पाई ।
कहत कबीर साध की महिमा, हरि अपने मुख गाई ॥५॥

॥ राग गहनी ॥

मन मस्त हुआ तब क्यौं बोलै ॥ टेक ॥
हीरा पायो गाँठ [illegible], बार बार वा को क्यौं खोलै ॥१
हलकी थी जब चढ़ी तराजू, पूरी भई तब क्यौं तोलै ॥२॥
सुरत कलारी भइ मतवारी, मदवा पी गइ बिन तोलै ॥३॥
हंसा पाये [illegible], ताल [illegible] क्यौं डोलै ॥४॥

(१) जैदेव और नामदेव परम भक्त और सुदामा श्रीकृष्ण के [illegible] महा दरिद्र थे जिन की गाढ़ में [illegible] ।

तेरा साहिब है घट माहीं, बाहर नैना क्यौं खोले ॥५॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिल गये तिल ओले[1] ॥६॥

॥ सतसंग ॥

मैं तो आन पड़ी चोरन के नगर, [illegible] ॥१॥
इस सतसँग में लाभ बहुत है, तुरत मिलावै गुरु से ॥२॥
मूरख जन कोइ सार न जानै, [illegible] में अमृत बरसे ॥३॥
सबद सा हीरा पटकि [illegible] से, मुट्ठी भरी कंकर से ॥४॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, सुरत करो [illegible] घर से ॥५॥

॥ भेद बानी ॥

(१)

सार सबद गहि [illegible], मानौ [illegible] ॥१॥
सत्त पुरुष अच्छै [illegible], [illegible] डारा ॥२॥
तीन देव साखा भये, पाती संसारा ॥३॥
ब्रह्मा बेद सही [illegible], सिव जोग पसारा ॥४॥
बिस्नु माया परगट [illegible], [illegible] ब्योहारा ॥५॥
तिरदेवा ब्याधा[4] भये, [illegible] विष का चारा ॥६॥
कर्म की बंसी डारि के, [illegible] संसारा ॥७॥
जोति सरूपी [illegible], [illegible] पसारा ॥८॥
तीन लोक दसहूँ [illegible], [illegible] रोके द्वारा ॥९॥
अमल मिटावौं ताहि का, [illegible] भव पारा ॥१०॥
कह कबीर अम्मर करौं, जो होय हमारा ॥११॥

(२)

महरम होय सो जानै साधो, ऐसा [illegible] हमारा ॥टेक॥
बेद कतेब पार नाहिं [illegible], [illegible] सुनन से न्यारा ।
जाति बरन कुल किरिया नाहीं, [illegible] नेम अचारा ॥५॥

---

(१) ओट । (२) बचोगे । (३) इश्वर का अर्थात पिंड देश का । (४) चिड़ीमार

बिन जल बूँद परत जहँ भारी, नहिं मीठा नहिं खारा।
सुन्न महल में नौबत बाजै, किंगरी बीन सितारा ॥२॥
बिन बादर जहँ बिजुरी चमकै, बिन सूरज उँजियारा।
बिना सीप जहँ मोती उपजै, बिन सुर सबद उचारा ॥३॥
जोति लजाय ब्रह्म जहँ दरसै, आगे अगम अपारा।
कह कबीर वहँ रहनि हमारी, बूझै गुरुमुख प्यारा ॥४॥

(३)

रेख़ता

गंग औ जमुन के घाट को खोजि ले,
भँवर गुंजार तहँ करत भाई।
सरसुती नीर तहँ देखु निर्मल बहै,
तासु के नीर पिये प्यास जाई ॥१॥
पाँच की प्यास तहँ देखि पूरी भई,
तीन की ताप तहँ लगै नाहीं।
कहै कब्बीर यह अगम का खेल है,
गैब का चाँदना देख माहीं ॥२॥

(४)

रेख़ता

करत कल्लोल दरियाव के बीच में,
ब्रह्म की छौल में हंस झूलै।
अर्ध औ उर्ध की पैंग बाढ़ी तहाँ,
पलटि मन पवन को कँवल फूलै ॥१॥
गगन गरजै तहाँ सदा पावस झरै,
होत झनकार नित बजत तूरा।
बेद कत्तेब की गम्म नाहीं तहाँ,
कहै कब्बीर कोइ रमै सूरा ॥२॥

॥ उपदेश ॥

(१)

छाड़ि दे मन बौरा डगमग ॥ टेक ॥
अब तो जरे मरे बनि आवै, लीन्हो हाथ सिंधोरा ।
प्रीत प्रतीत करो दृढ़ गुरु की, सुनो सबद घनघोरा ॥१॥
होइ निसंक मगन ह्वै नाचै, लोभ मोह भ्रम छाड़ै ।
सूरा कहा मरन से डरपै, सती न संचय भाँड़े[1] ॥२॥
लोक लाज कुल की मरजादा, यही गले मैं फाँसी ।
आगे ह्वै पग पाछे धरिहो, होय जक्त मैं हाँसी ॥३॥
अगिन जरे ना सती कहावै, रन जूझै नहिं सूरा ।
बिरह अगिन अंतर मैं जारै, तब पावै पद पूरा ॥४॥
यह संसार सकल जग मैला, नाम गहे तेहि सूँचा ।
कहै कबीर भक्ति मत छाड़ो, गिरत परत चढ़ु ऊँचा ॥५॥

(२)

अवधू भूले को घर लावै, सो जन हम को भावै ॥टेक॥
घर मैं जोग भोग घर ही मैं, घर तजि बन नहिं जावै ।
बन के गये कलपना उपजै, तब धौं कहाँ समावै ॥१॥
घर मैं जुक्ति मुक्ति घर ही मैं, जो गुरु अलख लखावै ।
सहज सुन्न मैं रहै समाना, सहज समाधि लगावै ॥२॥
उनमुनि रहै ब्रह्म को चीन्है, परम तत्त को ध्यावै ।
सुरत निरत से मेला करिके, अनहद नाद बजावै ॥३॥
घर मैं बसत बस्तु भी घर है, घर ही बस्तु मिलावै ।
कहै कबीर सुनो हो अवधू, ज्यौं का त्यौं ठहरावै ॥४॥

(३)

भजि ले सिरजनहार, सुघर तन पाय के ॥ टेक ॥
काहे रहो अचेत, कहाँ यह औसर पैहो ।
फिर नहिं ऐसी देह, बहुरि पाछे पछितैहो ॥

लख चौरासी जोनि मैं, मानुष जन्म अनूप ।
ताहि पाय नर चेतत नाहीं, कहा रंक कहा भूप ॥१॥
गर्भ बास मैं रह्यो, कह्यो मैं भजिहौं तोहीं ।
निस दिन सुमिरौं नाम, कष्ट से काढ़ौ मोहीं ॥
चरनन ध्यान लगाइ के, रहौं नाम लौ लाय ।
तनिक न तोहि बिसारिहौं, यह तन रहै कि जाय ॥२॥
इतना कियो करार, काढ़ि गुरु बाहर कीन्हा ।
भूलि गयौ वह बात, भयौ माया आधीना ॥
भूली बातैं उद्र की, आन पड़ी सुधि एत ।
बारह बरस बीति गे या बिधि, खेलत फिरत अचेत ॥३॥
बिषया बान समान, दँह जोबन मद माती ।
चलत निहारत छाँह, तमक के बोलत बाती ॥
चोवा चंदन लाइ के, पहिरे बसन रँगाय ।
गलियाँ गलियाँ झाँकी मारै, पर तिरिया लख मुसकाय ॥४॥
तरुनापन गइ बीत, बुढ़ापा आनि तुलाने ।
काँपन लागे सीस, चलत दोउ चरन पिराने ॥
नैन नासिका चूवन लागे, मुख तैं आवत बास ।
कफ पित कंठै घेर लियो है, छुटि गइ घर की आस ॥५॥
मातु पिता सुत नारि, कहौ का के सँग जाई ।
तन धन घर औ काम धाम, सबही छुटि जाई ॥
आखिर काल घसीटिहै, पड़िहौ जम के फन्द ।
बिन सतगुरु नहिं बाचिहौ, समुझ देख मति मन्द ॥६॥
सुफल होत यह दँह, नेह सतगुरु से कीजै ।
मुक्ती मारग जानि, चरन सतगुरु चित दीजै ॥

नाम गहौ निरभय रहौ, [illegible] आगै पीर ।
यह लीला है मुक्ति की [illegible] कहत कबीर ॥७॥

(४)

करो जतन सखि साईं मिलन की ॥टेक॥
गुड़िया गुड़वा सूप सुपलिया ।
तजि दे बुधि लरिकैयाँ खेलन की ॥१॥
देवता पित्तर भुइयाँ भवानी ।
यह मारग चौरासी चलन की ॥२॥
ऊँचा महल अजब रँग बँगला ।
साईं की सेज जहाँ लगी फूलन की ॥३॥
तन मन धन सब अर्पन करि वहाँ ।
सुरत सम्हार पर पइयाँ सजन की ॥४॥
कहै कबीर निर्भय होय हंसा ।
कुंजी बता दौं ताला खुलन की ॥५॥

(५)

जाग पियारी अब का सोवै ।
रैन गई दिन काहे को खोवै ॥१॥
जिन जागा तिन मानिक पाया ।
तैं बौरी सब सोय गँवाया ॥२॥
पिय तेरे चतुर तू मूरख नारी ।
कबहुँ न पिय की सेज सँवारी ॥३॥
तैं बौरी बौरापन, कीन्हो ।
भर जोबन पिय अपन न चीन्हो ॥४॥
जाग देख पिय सेज न तेरे ।
तोहि छाड़ि उठि गये सबेरे ॥५॥

कहै कबीर सोई मन जागै ।
सबद बान उर अन्तर लागै ॥६॥

(६)

अँधियरवा मैं ठाढ़ि गोरी का करलू ॥ टेक ॥
जब लगि तेल दिया मैं बाती, [illegible] बिछाय चलतू ।
मन का पलँग सँतोष बिछौना, ज्ञान कै [illegible] लगाय रखतू
जरि गया तेल बुझाय गई बाती, सुरत मैं सुरत समाय रखतू
कहै कबीर सुनो भाई [illegible] रखतू

(७)

उठे सोहंगम नारि, प्रीति पिव से करो ।
यह उरले सोहंग, दूर कुबानि धरो ॥१॥
पाँच चोर बड़ जोर, संगि एते घने ।
इन ठगियन के [illegible], मुसे घर निसु दिने ॥२॥
सोवत जागत चोर, करै चोरी घनी ।
आपु भये [illegible], भली बिधि लूटहीं ॥३॥
द्वादस नगर मँझार, सुरत इक देखिये ।
सोभा अगम अपार, सुरति छवि पेखिये ॥४॥
होत सबद घनघोर, संख धुनि अति घनी ।
तंतन की झनकार, बाजत झीनी झिनी ॥५॥
है कोइ महरम साध, भले पहिचानिये ।
सतगुरु कहै कबीर, संत की बानि ये ॥६॥

(८)

[illegible]

सुरत मकरिया गाड़हु हे सजनी-अहे सजनी ।
दूनौं रे नयनवाँ [illegible] ॥१॥

मन धरु मन धरु मन धरु हे सजनी—अहे सजनी।
अइसन समइया फिरि नहि पावहु रे की ॥२॥
दिन दस रजनी सुख करु हे सजनी—अहे सजनी।
इक दिन चाँद उपाइल रे की ॥३॥
सँगहिं अछत पिया भरम भुलइली हे सजनी—अहे सजनी।
मोरे लेखे पिया परदेसहिं रे की ॥४॥
नव दस नदिया अगम बहे सोतिया हे सजनी—अहे सजनी।
बिचहि पुरइनि दह[1] लागल रे की ॥५॥
फुल इक फुलले अनुप फुल सजनी—अहे सजनी।
तेहि फुल भँवरा लुभाइल रे की ॥६॥
सब सखि हिलि मिलि निज घर जाइब हे सजनी—अहे सजनी।
समुँद लहरिया समाइब रे की ॥७॥
दास कबीर यह गवलैं लगनियाँ हे सजनी—अहे सजनी।
अब तो पिया घर जाइब रे की ॥८॥

(९)

रेखता

सुख सिंध की सैर का स्वाद तब पाइहै,
चाह का चौतरा भूलि जावै।
बीज के माहिं ज्यों वृच्छ बिस्तार,
यों चाह के माहिं सब रोग आवै ॥१॥
दृढ़ बैराग में होय आरूढ़ मन,
चाह के चौतरे आग दीजै।
कहै कब्बीर यों होय निरबासना,
तत्त से रत्त ह्वै काज कीजै ॥२॥

(१) काई का तलाव।

॥ मिश्रित ॥

तन मन धन बाजी लागी हो ॥ टेक ॥
चौपड खेलूँ पीव से रे तन मन बाजी लगाय ।
हारी तो पिय की भई रे, जीती तो पिय मोर हो ॥१॥
चौसरिया के खेल मैं रे, जुग्ग मिलन की आस ।
नद अकेली रहि गई रे, नहिं जीवन की आस हो ॥२॥
चार बरन घर एक है रे, भाँति भाँति के लोग ।
मनसा बाचा कर्मना, कोइ प्रीति निबाहै ओर हो ॥३॥
लख चौरासी भरमत भरमत, पौ पै अटकी आय ।
जो अब के पौ ना पडी रे, फिर चौरासी जाय हो ॥४॥
कह कबीर धर्मदास से रे, जीती बाजी मत हार ।
अब के सुरत चढाइ दे रे, सोई सुहागिन नारि हो ॥५॥

(२)

या जग अंधा मैं केहि समुझावौं ॥ टेक ॥
इक दुइ होयँ उन्हैं समझावौं ।
सबहि भुलाना पेट के धन्धा, मैं केहि० ॥१॥
पानी कै घोडा पवन असवरवा ।
ढरकि परै जस ओस के बुन्दा, मैं केहि० ॥२॥
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा ।
खेवनहारा पडिगा फन्दा, मैं केहि० ॥३॥
घर की बस्तु निकट नहि आवत ।
दियना बारि के ढूँढत अंधा, मैं केहि० ॥४॥
लागी आग सकल बन जरिगा ।
बिन गुरुज्ञान भटकिगा बन्दा, मैं केहि० ॥५।
कहै कबीर सुनो भाइ साधो ।
इक दिन जाय लँगोटी झार बन्दा, मैं केहि० ॥६॥

(३)

पिया मिलन की आस, रहौं कब लौं खड़ी।
ऊँचे चढ़ि नहिं जाय, मनैं लज्जा भरी ॥१॥
पाँव नहीं ठहराय, चढ़ूँ गिरि गिरि पड़ूँ।
फिरि फिरि चढ़हुँ सम्हारि, तो पग आगे धरूँ ॥२॥
अंग अंग थहराय, तो बहु बिधि डरि रहूँ।
कर्म कपट मग घेरि, तो भ्रम मैं भुलि रहूँ ॥३॥
लिपट अनारी बारि, तो झीनी गैल है।
अटपट चाल तुम्हारि, मिलन कस होइ है ॥४॥
तेजो[1] कुमति बिकार, सुमति गहि लीजिये।
सतगुरु सबद सम्हारि, चरन चित दीजिये ॥५॥
अंतर पट दे खोलि, सबद उर लाव री।
दिल बिच दास कबीर, मिलैं तोहि बावरी ॥६॥

(४)

ऐसो है रे भाई हरि रस ऐसो है रे भाई, जा के पिये अमर ह्वे जाई ॥१॥
ध्रुव पीया प्रहलादहु पीया, पीया मीराबाई।
बलख बुखारे के मीयाँ पीया, छोड़ो है बादसाही ॥२॥
हरि रस महगा मोल का रे, पीयै बिरला कोय।
हरि रस महँगा सो पिये, जा के धर पै सीस न होय ॥३॥
आगे आगे दौं जलै रे, पीछे हरिया होय।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, हरि भज निर्मल होय ॥४॥

(५)

जहँ सतगुरु खेलत ऋतु बसंत। परम जोत जहँ साध संत ॥१
तीन लोक से भिन्न राज। जहँ अनहद बाजा बजै बाज ॥२
चहुँ दिसि जोति की बहै धारा। बिरला जन कोइ उतरै पार ॥३

(१) तजो।

कोटि कृस्न जहँ जोरैं हाथ। कोटि बिस्नु जहँ नवैं माथ ॥४॥
कोटिन ब्रह्मा पढ़ैं पुरान। कोटि महेस जहँ धरैं ध्यान ॥५॥
कोटि सरस्वति धारैं राग। कोटि इन्द्र जहँ गगन लाग ॥६॥
सुर गन्धर्ब मुनि गने न जायँ। जहँ साहिब प्रगटे आप आय ७
चोवा चदन औ अबीर। पुहुप बास रस रह्यो गँभीर ॥८॥
सिरजत हिये निवास लीन्ह। सो यहि लोक से रहत भिन्न ॥९
जब बसत गहि राग लीन्ह। सतगुरु सबद उचार कीन्ह ॥१०
कह कबीर मन हृदय लाय। नरक उबारन नाम आहि ॥११

(६)

रेखता

सूर संग्राम को देखि भागै नहीं,
देखि भागै सोई सूर नाहीं।
काम औ क्रोध मद लोभ से जूझना,
मँडा घमसान तहँ खेत माहीं ॥
सील औ साच संतोष साही भये,
नाम समसेर तहँ खूब बाजै।
कहै कब्बीर कोइ जूझिहै सूरमा,
कायराँ भीड़ तहँ तुरत भाजै ॥

(७)

रेखता

बिना बैराग कहु ज्ञान केहि काम का,
पुरुष बिनु नारि नहिं सोभ पावै।
स्वाँग तो साहु का काम है चोर का,
कपट को झपट मैं बहुत धावै ॥
बात बहुते कहै झूठ छूटै नहीं,
मुख के कहे कहा खाँड़ खावै।

कहै कबीर जब काल गढ घेरिहै,
बात बहु बकै सब भूलि जावै ॥

पीपाजी

जीवन समय—पन्द्रहवाँ शतक। जनम स्थान—गागरानगढ। आश्रम—भेष। गुरू—स्वामी रामानन्द।

यह गागरानगढ के राजा और आदि में दुर्गा उपासक थे फिर स्वामी रामानन्द के चेले हुए और राजपाट छोड़ कर साधु भेष में अपनी छोटी रानी सीता सहित गुरू के साथ द्वारिका गये। भक्तमाल की कथा के अनुसार श्रीकृष्ण का साक्षात दर्शन पाने की अभिलाषा में पीपाजी समुद्र में कूद पड़े और सात दिन तक भगवत चरणों में रहकर बाहर निकले और वहां से जो छाप लाये थे वह यह कह कर पुजारियों के सपुर्द की कि जो इस छाप को लगावेगा उसे भगवान मिलेंगे। द्वारिका से लौटते हुए रास्ते में पठानों ने पीपाजी की स्त्री को सुंदर देख कर छीन लेना चाहा परन्तु भगवान ने आप रक्षा की।

॥ घर मठ ॥

काया देवा काया देवल, काया जंगम जाती।
काया धूप दीप नैबेदा, काया पूजों पाती ॥१॥
काया बहु खंड खोजते, नव निद्धी पाई।
ना कछु आइबो ना कछु जाइबो, राम की दुहाई ॥२॥
जो ब्रह्मंडे सोई पिंडे, जो खोजै सो पावै।
पीपा प्रनवै परम तत्त्व ही, सतगुरु होय लखावै ॥३॥

नामदेवजी

जीवन समय—पन्द्रहवें शतक का दूसरा हिस्सा। कविता काल—१४८०। जन्म और सतसंग स्थान—पांडरपुर। जाति और आश्रम—छीपी, गृहस्थ। गुरु—ज्ञानदेवजी।

भक्तमाल में इन का जन्म एक बाल विधवा के गर्भ से बिना पुरुष प्रसंग के ईश्वरेच्छा से होना लिखा है जैसा कि हजरत ईसा का क्वारी कन्या के उदर से हुआ था। इन का प्रचंड भक्ति और बाल अवस्था ही से दृढ़ बिश्वास की

बहुत सी कथाओं में तीन दिन उपास करके ठाकुर जी को दूध पिलाने की कथा प्रसिद्ध है।

॥ नाम महिमा ॥

तत्त गहन को नाम है, भजि लीजै सोइ।
लीला सिंध अगाध है, गति लखै न कोई ॥१॥
कंचन मेरु सुमेरु, हय गज[1] दीजै दाना।
कोटि गऊ जो दान दे, नहिं नाम समाना ॥२॥
जोग जग्य तें कहा सरै, तीरथ व्रत दाना।
ओसै प्यास न भागिहै, भजिये भगवाना ॥३॥
पूजा करि साधू जनहिं, हरि को प्रन धारी।
उन तैं गोबिंद पाइये वे परउपकारी ॥४॥
एकै मन एकै दसा एकै व्रत धरिये।
नामदेव नाम जहाज है, भवसागर तरिये ॥५॥

॥ समरथ ॥

बदौ क्यों ना होड[2] माधो मो सों।
ठाकुर तें जन जन तें ठाकुर, खेल पर्यो है तो सौं ॥१॥
आपन देव देहरा आपन, आप लगावै पूजा।
जल तें तरंग तरंग तें है जल, कहन सुनन को दूजा ॥२॥
आपहि गावै आपहिं नाचै, आप बजावै तूरा।
कहत नामदेव तूं मेरो ठाकुर, जन ऊरा[3] तू पूरा ॥३॥

॥ लव ॥

अस मन लाव राम रसना। तेरो बहुरि न होइ जरा मरना ॥१
जैसे मृगा नाद लय लावै। बान लगे वहि ध्यान लगावै ॥२॥
जैसे कीट भृंग मन दीन्ह। आपु सरीखे वा को कीन्ह ॥३॥
नामदेव भन[4] दासनदास। अब न तजौं हरि चरन निवास॥४॥

---

(१) घोड़ा और हाथी। ( ) शर्त। (३) अधूरा। (४) कहता है।

॥ बिरह ॥

आरती

मोर पिया बिलम्यो परदेस, हारी मैं का सों खेलौं ।
घरी पहर मोहिं कल न परतु है, कहत न कोउ उपदेस ॥१॥
झर्यो पात बन फूलन लाग्यो, मधुकर करत गुंजार ।
हाहा करौं कंथ घर नाहीं, को मोरि सुनै पुकार ॥२॥
जा दिन तें पिय गवन कियो है, सिंदुरा न पहिरौं मंग[१] ।
पान फुलेल सबै सुख त्याग्यो, तेल न लाओं अंग ॥३॥
निसु बासर मोहिं नींद न आवै, नैन रहे भरपूर ।
अति दारुन मोहिं सवति सतावै, पिय मारग बड़ि दूर ॥४॥
दामिनि दमकि घटा घहरानी, बिरह उठै घनघोर ।
चित चातक ह्वै दादुर बोलै, वहि बन बोलत मोर ॥५॥
प्रीतम को पतियाँ लिखि भेजौं, प्रेम प्रीति मसि[२] लाय ।
बेगि मिलो जन नामदेव को, जनम अकारथ जाय ॥६॥

॥ प्रेम ॥

भाई रे इन नैनन हरि पेखो ।
हरि की भक्ति साधु की संगति, सोई यह दिल लेखो ॥१॥
चरन सोई जो नचत प्रेम से, कर सोई जो पूजा ।
सीस सोई जो नवै साधु के, रसना और न दूजा ॥२॥
यह संसार हाट को लेखा, सब कोउ बनिजहिं आया ।
जिन जस लादा तिन तस पाया, मूरख मूल गँवाया ॥३॥
आतम राम देह धरि आयो, ता में हरि को देखो ।
कहत नामदेव चलि जागि जैहौं, हरि भजि और न लेखो ॥४॥

(१) माँग में (२) सियाही ।

॥ भेद ॥

एक अनेक बियापक पूरक, जित देखौं तित सोई ।
माया चित्र बिचित्र बिमोहित, बिरला बूझै कोई ॥१॥
सब गोबिंद है सब गोबिंद है, गोबिंद बिन नहिं कोई ।
सूत एक मनि सत्तसहस जस, ओत पोत प्रभु सोई ॥२॥
जल तरंग अरु फेन बुदबुदा, जल तें भिन्न न होई ।
यह प्रपंच परब्रह्म की लीला, बिचरत आन न होई ॥३॥
मिथ्या भ्रम अरु स्वपन मनोरथ, सत्य पदारथ जाना ।
सुकिरत मनसा गुरु उपदेसी, जागत ही मन माना ॥४॥
कहत नामदेव हरि की रचना, देखो हृदय बिचारी ।
घट घट अंतर सर्ब निरंतर, केवल एक मुरारी ॥५॥

॥ उपदेश ॥

(१)

परधन परदारा परिहरी[1] । ता के निकट बसहि नरहरी[2] १
जो न भजते नारायना । तिन का मैं न करौं दर्सना ॥२॥
जिन के भीतर है अन्तरा । जैसे पसु तैसे वह नरा ॥३॥
प्रनवत नामदेव ना कहिं बिना । ना सोहै बत्तीस लच्छना[3]॥४

(२)

काहे मन बिषया बन जाय । भूलो रे ठगमूरी[4] खाय ॥१
जैसे मीन पानी में रहै । काल जाल की सुधि नहिं लहै ॥२
जिभ्या स्वादी लीलत लोह । ऐसे कनिक कामिनी मोह ॥३॥
ज्यों मधुमाखी संचि अपार । मधु[5] लीन्हो मुख दीन्हो छार ४
गऊ बाछ को सचै छीर । गला बाँधि दुहि लेहि अहीर ॥५॥

(१) त्याग करे । (२) नरसिंह अर्थात ईश्वर । (३) आभरन भूषन । (४) ठगाई धोका । (५) मधुआ चिड़िया जो मधुमक्खी के बटोरे हुए शहद को खा जाती है ।

(८)

रामा हो जग जीवन मोरा ।
तूँ न बिसारी मैं जन तोरा ॥ टेक ॥
सकट सोच पोच दिन राती ।
करम कठिन मोरि जाति कुजाती ॥१॥
हरहु बिपति भावै करहु सो भाव ।
चरन न छाडौं जाव सो जाव ॥२॥
कह रैदास कछु देहु अलबन ।
बेगि मिलौ जनि करौ बिलबन ॥३॥

॥ प्रेम ॥

(१)

देहु कलाली एक पियाला, ऐसा अवधू है मतवाला ॥टेक
हे रे कलाली तैं क्या किया, सिरका सा तैं प्याला दिया ॥१॥
कहै कलाली प्याला देऊँ, पीवनहारे का सिर लेऊँ ॥२॥
चंद सूर दोउ सनमुख होई, पीवै प्याला मरै न कोई ॥३॥
सहज सुन्न मैं भाठी सरवै, पीवै रैदास गुरुमुख दरवै ॥४॥

(२)

जो तुम तोरौ राम मैं नहिं तोरूँ ।
तुम सोँ तोरि कवन सोँ जोरूँ ॥ टेक ॥
तीरथ बरत न करूँ अँदेसा ।
तुम्हरे चरन कमल क भरोसा ॥१॥
जहँ जहँ जाऊँ तुम्हरी पूजा ।
तुम सा देव और नहिं दूजा ॥२॥
मैं अपनो मन हरि सोँ जोर्यौं ।
हरि सोँ जोरि सबन से तोर्यौं ॥३॥
सबही पहर तुम्हारी आसा ।
[illegible]

(३)

अब कैसे छूटै नाम रट लागी ॥ टेक ॥
प्रभु जी तुम चंदन हम पानी ।
जा की अँग अँग बास समानी ॥१॥
प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा ।
जैसे चितवत चंद चकोरा ॥२॥
प्रभु जी तुम दीपक हम बाती ।
जा की जोति बरै दिन राती ॥३॥
प्रभु जी तुम मोती हम धागा ।
जैसे सोनहिं मिलत सुहागा ॥४॥
प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा ।
ऐसी भक्ति करै रैदासा ॥५॥

(४)

साची प्रीति हम तुम सँग जोड़ी। तुम सँग जोड़ि अवर सँग तोड़ी १
जो तुम बादर तो हम मोरा। जो तुम चंद हम भये चकोरा ॥२॥
जो तुम दीवा तो हम बाती। जो तुम तीरथ तो हम जात्री ३
जहँ जाउँ तहँ तुम्हरी सेवा। तुम सा ठाकुर और न देवा ४
तुम्हरे भजन कटै भय फाँसा। भक्ति हेतु गावै रैदासा ॥५॥

॥ साधु ॥

आज दिवस[1] लेऊँ बलिहारा ।
मेरे गृह आया राम का प्यारा ॥ टेक ॥
आँगन बँगला भवन भयो पावन ।
हरिजन बैठे हरिजस गावन ॥१॥
करूँ डंडवत चरन पखारूँ ।
तन मन धन उन ऊपरि वारूँ ॥२॥

---

(१) दिन ।

कथा कहैं अरु अर्थ बिचारैं ।
आप तरैं औरन को तारैं ॥३॥
कह रैदास मिलैं निज दास ।
जनम जनम कै काटैं पास[1] ॥४॥

॥ उपदेश ॥

परिचै राम रमै जो कोई । या रस परसे दुबिधि न होई ॥टेक
जे दीसे ते सकल बिनास । अनदीठे नाही बिसवास ॥१॥
बरन कहत कहैं जे राम । सो भगता केवल नि काम ॥२॥
फल कारन फूलै बनराई । उपजै फल तब पुहुप बिलाई ॥३
ज्ञानहिं कारन करम कराई । उपजै ज्ञान तो करम नसाई ॥४
बट क बीज जैसा आकार । पसर्यो तीन लोक पासार ॥५
जहाँ क उपजा तहाँ बिलाइ । सहज सुन्नि मैं रह्यो लुकाइ ६
जे मन बिंदै सोई बिंद । अमा[2] समय ज्यों दीसै चंद ॥७॥
जल मैं जैसे तूँबा तिरै । परिचै[3] पिंड जीव नहिं मरै ॥८॥
सो मन कौन जो मन को खाइ । बिन द्वारे तिरलोक समाइ ९
मन की महिमा सब कोइ कहै । पंडित सो जो अनतै रहै १०
कह रैदास यह परम बैराग । रामनाम किन[4] जपहु सभाग ११
घृत कारन दधि मथैं सयान । जीवन मुक्ति सदा निरबान ॥१२

(१) फाँसा। (२) अमावस। (३) परिचय हो जाने से पिंड का भेद जान ले तो जीवन मुक्ति हो जाय। (४) क्या न।

सदनाजी

जीवन समय—पन्द्रहवें शतक का पिछला हिस्सा।

जाति और आश्रम—कसाई भेष।

यह यद्यपि जाति के कसाई थे। परंतु जीवहिंसा नहीं करते थे माँस इकट्ठा मोल लेकर फुटकल बेचते थे बटखरे की जगह शालग्राम की एक बटिया थी उसी से तौला करते थे चाहे कोइ पावभर ले चाहे पाँच सेर। एक दिन एक वैष्णव ने उस बटिया में शालग्राम के पूरे आकार देखकर उन से माँगा उन्हों ने तुर्त दे दिया। वैष्णव ने उसे घर पर लाकर और पंचामृत से स्नान करा कर सिंहासन पर बिराजमान किया और उत्तम भोग आगे धरे पर रात को उसे स्वप्न हुआ कि हमें तू हमारे उसी परम भक्त के घर पहुँचा दे जहाँ तराजू पर बैठ कर हम को पालना झूलने का आनंद आता है। वैष्णव ने सदनाजी को सब हाल आ सुनाया और बटिया लौटा दी। सदनाजी ने उसी दिन से बैराग ले लिया और उस बटिया को सिर पर धर कर जगन्नाथपुरी को चले गये। रास्ते में एक स्त्री के मोहित होने और इन के साथ भाग निकलने के अभिप्राय से अपने पति का सिर काट डालने और फिर सदनाजी के इनकार पर हाकिम के सामने उन पर अपने पति के घात का झूठा दोष लगाने और सदनाजी के उस दोष को स्वीकार कर लेने पर उनके दोनों हाथों के काटे जाने और जगन्नाथजी के सन्मुख होते ही हाथ ज्यों के त्यों निकल आने की कथा भक्तमाल में लिखी है।

॥ बिनय ॥

नृप कन्या के कारने, एक भयो भेष धारी।
कामारथी सुवारथी, वा की पैज[1] सवारी ॥१॥
तव गुन कहा जगत गुरा, जो कर्म न नासै।
सिंह सरन कत जाइये, जो जंबुक[2] ग्रासै ॥२॥
एक बूँद जल कारने, चातक दुख पावै।
प्रान गये सागर मिलै, पुनि काम न आवै ॥३॥
प्रान जो थाके थिर नहीं, कैसे बिरमावो।
बूडि मुए नौका मिलै, कहु काहि चढावो ॥४॥
मैं नाहीं कछु हौं नहीं, कछु आहि न मोरा।
औसर लज्जा राख लेहु, सदना जन तोरा ॥५॥

---

(१) प्रण। (२) स्यार।

धनी धर्मदास

--- ४० ---

जीवन समय—पन्द्रहवें शतक के आखिर हिस्से और सोरहवें शतक के दर्मियान। जन्म स्थान—बाँधोगढ़। सतसंग स्थान—काशी। जाति और आश्रम—कसौंधन बनिया गृहस्थ। गुरू—कबीर साहिब।

यह बड़े साहूकार थे पर कबीर साहिब की शरण में आने के पीछे यह काशी ही में उन के चरनों में रहे और उन के गुप्त होने पर उन की गद्दी पर बैठे। यह और इन के बड़े बेटे चूड़ामणि जी दोनों प्रचंड भक्त हुए और पूरी संत गति को प्राप्त हुए।

॥ गुरुदेव ॥

(१)

बाजा बाजा रहित[१] का, पड़ा नगर में सोर।
(मेरे) सतगुरु संत कबीर हैं, नजर न आवै और ॥१॥
भूमी पर पग धरत हौ, सुनौ संत मतधीर।
माथ नाय बिनती करौं, दरसन देव कबीर ॥२॥
घाट घाट औघट महीं, मोहिं कबीर की आस।
धर्मनि सुमिरै नाम गुरु, कभी न होय बिनास ॥३॥

(२)

गुरु मिल अगम के बासी ॥ टेक ॥
उनके चरन कमल चित दीजे, सतगुरु मिले अबिनासी ॥१॥
उनकी सीत प्रसादी लीजे, छूटि जाय चौरासी ॥२॥
अमृत बुंद झरै घट भीतर, साध संत जन लासी[२] ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सार सबद मन बासी ॥४॥

॥ नाम महिमा ॥

हम सत्त नाम के बैपारी ॥ टेक ॥
कोइ कोइ लादै काँसा पीतल, कोइ कोइ लौंग सुपारी।
हम तो लाद्यो नाम धनी को, पूरन खेप हमारी ॥१॥

---

(१) मुक्ति, उद्धार। (२) चाशनी।

पूजी न टूटै नफा चौगुना, बनिज किया हम भारी ।
हाट जगाती रोक न सकिहै, निर्भय गैल हमारी ॥२॥
मोति बुद् घट ही में उपजै, सुकिरत भरल कोठारी[1] ।
नाम पदारथ लाद चला है, धर्मदास बैपारी ॥३॥

॥ चितावनी ॥

(१)

सोहर

कहँवाँ से जिव आइल, कहवाँ समाइल हो ।
कहँवाँ कइल मुकाम, कहाँ लपटाइल हो ॥१॥
निरगुन से जिव आइल, सगुन समाइल हो ।
काया गढ कइल मुकाम, माया लपटाइल हो ॥२॥
एक बुद् से काया महल, उठावल हो ।
बुद परे गलि जाय, पाछे पछितावल हो ॥३॥
हस कहै भाई सरवर, हम उडि जाइब हो ।
मोर तोर इतन दिदार, बहुरि नहि पाइब हो ॥४॥

(२)

कहो केते दिन जियबो हो, का करत गुमान ॥ टेक ॥
कच्चे बासन का पिंजरा हो, जा में पवन समान ।
पछी का कौन भरोसा हो, छिन में उडि जान ॥१॥
कच्ची माटी के घडुवा हो, रस बूँदन सान ।
पानी बीच बतासा हो, छिन में गलि जान ॥२॥
कागद की नइया बनी, डोरी साहिब हाथ ।
जौने नाच नचैहैं हो, नाचब वोहि नाच ॥३॥
धरमदास इक बनिया हो, करै झूठो बजार ।
साहिब कबीर बनिजारा हो, करैं सत बैपार ॥४॥

---

(१) भंडार

॥ विरह ॥

(१)

सतगुरु आवो हमरे देस, निहारौं बाट खडी ॥ टेक ॥
वाहि देस की बतियाँ रे, लावैं सत सुजान ।
उन संतन के चरन पखारौं, तन मन करौं कुरबान ॥१॥
वाहि देस की बतियाँ हम से, सतगुरु आन कही ।
आठ पहर के निरखत हमरे, नैन की नींद गई ॥२॥
भूलि गइ तन मन धन सारा, व्याकुल भया सरीर ।
बिरह पुकारै बिरहनी, ढरकत नैनन नीर ॥३॥
धरमदास के दाता सतगुरु, पल में कियो निहाल ।
आवागवन की डोरी कटि गई, मिटे भरम जजाल ॥४॥

(२)

कहौं बुझाय दरद पिय तो से ॥ टेक ॥
दरद मिटै तरवार तीर से ।
किधौं मिटै जब मिलहु पीव से ॥१॥
तन तलफै हिय कछु न सुहाय ।
तोहि बिन पिय मो से रहल न जाय ॥२॥
धरमदास की अरज गुसाईं ।
साहिब कबीर रहौं तुम छाँही ॥३॥

॥ प्रेम ॥

(१)

नैन दरस बिन मरत पियासा ॥ टेक ॥
तुमही छाडि भजूँ नहिं औरै, नाहिं दूसरी आसा ॥१॥
आठो पहर रहूँ कर जोरी, करि लेहु आपन दासा ॥२॥
निसु बासर रहूँ लव लीना, बिनु देखे नहिं बिस्वासा ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, द्यो निज लोक निवासा ॥४॥

(२)

साहिब चितवो हमरी ओर ॥ टेक ॥
हम चितवैं तुम चितवो नाहीं, तुम्हरो हृदय कठोर ॥१॥
औरन को तो और भरोसो हमैं भरोसो तोर ॥२॥
सुखमनि सेज बिछावौं गगन मैं, नित उठि करौं निहोर ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरो, साहिब कबीर बंदी छोर ॥४॥

(३)

हमरे का करै हाँसी लोग ॥ टेक ॥
मोरा मन लागा सतगुरु से, भला होय के खोर[1] ।
जब से सतगुरु ज्ञान भयो है, चलै न केहु कै जोर ॥१॥
मात रिसाई पिता रिसाई, रिसाय बटोहिया लोग ।
ज्ञान खडग तिरगुन को मारौं, पाँच पचीसो चोर ॥२॥
अब तो मोहिं ऐसी बनि आवै, सतगुरु रचा सँजोग ।
आवत साध बहुत सुख लागै, जात बियापै रोग ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सुनु हो बंदी छोर ।
जा के पद तिरलोक से न्यारा, सो साहिब कस[2] होय ॥४॥

(४)

बधावा

सतगुरु आये घर, मन मैं बजत बधाइया ॥ टेक ॥
सतगुरु साहिब दीन दयाला, द्वारे मोरे आइया ।
जुगन जुगन के करम मिटत भे, सतगुरु दरस दिखाइया ॥१
प्रेम सुरत की करी रसोई, ब्यंजन[3] आसन लाइया ।
जेँवन बैठे सतगुरु साहिब, अधर से चौँर डोलाइया ॥२॥
दया भाव के पलँग बिछाये, प्रेम दुलीचा लाइया ।
ता पर सोये सतगुरु साहिब, सुरति कै तेल लगाइया ॥३

(१) बुरा । (२) कैसा । (३) भोजन ।

धरमदास बिनवै कर जोरी, सुनिये समरथ साँइयाँ ।
साहिब कबीर प्रभु मिले बिदेहा, झीना दरस दिखाइया ॥४॥

(५)

होली

हमरी उमिरिया होरी खेलन की ।
पिय मो सों मिलि के बिछुरि गयो हो ॥१॥
पिय हमारे हम पिय की पियारी ।
पिय बिच अन्तर पारि गयो हो ॥२॥
पिया मिलैं तब जियें मोरी सजनी ।
पिय बिन जियरा निकरि गयो हो ॥३॥
इत गोकुल उत मथुरा नगरी ।
बीच डगर पिय मिलि गयो हो ॥४॥
धरमदास बिरहिन पिव पाये ।
चरन कँवल चित गहि रहो हो ॥५॥

॥ कपट भक्ति ॥

साहिब यहि बिधि ना मिलै चित चंचल भाई ॥ टेक ॥
माला तिलक बनाइ कै, नाचै अरु गावै ।
अपना मरम जानै नहीं, औरन समुझावै ॥१॥
देखै को बक ऊजला, मन मैला भाई ।
आँखि मूँदि मौनी भया, मछरी धरि खाई ॥२॥
कपट कतरनी पेट में, मुख बचन उचारी ।
अन्तर गति साहिब लखै, उन कहा छिपाई ॥३॥
आदि अंत की बारता, सतगुरु से पावो ।
कहै कबीर धमदास सों, मूरख समझावो ॥४॥

॥ भेद ॥

झरि लागै महलिया, गगन घहराय ॥ टेक ॥

खन गरजै खन बिजुली चमकै ।
　　लहर उठै सोभा बरनि न जाय ॥१॥

सुन्न महल से अमृत बरसै ।
　　प्रेम अनंद ह्वै साधु नहाय ॥२॥

खुली किवरिया मिटी अँधियारा ।
　　धन सतगुरु जिन दिया है लखाय ॥३॥

धरमदास बिनवै कर जोरी ।
　　सतगुरु चरन में रहत समाय ॥४॥

॥ विनय ॥

( )

गुरु पैयाँ लागौं नाम लखा दीजो रे ॥ टेक ॥
जनम जनम का सोया मनुआँ, सबदन मार जगा दीजो रे ॥१
घट अँधियार नैन नहिं सूझै, ज्ञान का दीप जगा दीजो रे २
बिष की लहर उठत घट अंतर, अमृत बूँद चुआ दीजो रे ॥३
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा, खेय के पार लगा दीजो रे ४
धरमदास की अरज गोसाईं, अबकी खेप निभा दीजो रे ॥५॥

(२)

भक्ति दान गुरु दीजिये, देवन के देवा हो ।
चरन कवल बिसरौं नहीं, करिहौं पद सेवा हो ॥१॥
तीरथ ब्रत मैं ना करौं, ना देवल पूजा हो ।
तुमहिं ओर निरखत रहौं, मेरे और न दूजा हो ॥२॥
आठ सिद्धि नौ निद्धि है, बैकुंठ निवासा हो ।
सो मैं ना कछु माँगहूँ, मेरे समरथ दाता हो ॥३॥
सुख सम्पति परिवार धन, सुन्दर बर नारी हो ।
सपनेहु इच्छा ना उठै, गुरु आन तुम्हारी हो ॥४॥

धरमदास की बीनती, साहिब सुनि लीजै हो।
दरस देह पट खोलि कै अपना करि लीजै हो ॥५॥

( )

साहिब बूड़त नाव अब मोरी ॥ टेक ॥
काम क्रोध की लहर उठत है मोह पवन झकझोरी।
लोभ मोरे हिरदे घुमरत है, सागर वार न पारी ॥१॥
कपट को भँवर परत है बहुतै, जा मेँ बेड़ा अटको।
फाँसी डाल लिये हैं द्वार, आया सरन तुम्हारी ॥२॥
धरमदास पर दाया कीन्हा, काटि फंद जिव तारो।
कहै कबीर सुनो हो धर्मन, सतगुरु सरन उबारी ॥३॥

(२)

चरन छाँडि प्रभु जाव कहाँ, मोरे और न कोई।
जग मैं आपन कोइ नहीं, देखा सब टोई ॥१॥
मात पिता हित बंधु तुम, का से दुख रोई।
सब कछु तुम्हरे हाथ है, तुम्हरे मुख जोही ॥२॥
गुन तो मोर है नहीं, औगुन बहुतेरे।
ओट लइ तुम नाम को, राखो पत सोई ॥३॥
सतगुरु तुम चीन्हे बिना, मति बुधि सब खोइ।
सब जीवन के एक तुम, दूजा नहिं कोइ ॥४॥
मैं गरजी अरजी करौँ, मरजी जस होइ।
अरज बिपति लिखौँ आपनी, राखौँ नहिं गोइ[१] ॥५॥
धरमदास सत साहिबी, घट घटहि समोई।
साहिब कबीर सतगुरु मिले, आवागवन न होई ॥६॥

---

(१) छिपा।

॥ मिश्रित ॥

(१)

मिलऊ मड़ैया सूनी करि गैलो ॥ टेक ॥
अपन बलम परदेस निकरि गैलो ।
  हमरा के कछुवो न गुन दै गैलो ॥१॥
जोगिन होइ के मैं बन बन ढूँढ़ौं ।
  हमरा के बिरह बैराग दै गैलो ॥२॥
संग की सखी सब पार उतरि गैली ।
  हम धन ठाढ़ी अकेली रहि गैलो ॥३॥
धरमदास यह अरज करतु है ।
  सार सबद सुमिरन दै गैलो ॥४॥

(२)

मोरा पिया बसै कौन देस हो ॥ टेक ॥
अपने पिया के ढूँढ़न हम निकसी,
  कोइ न कहत सँदेस हो ॥१॥
पिय कारन हम भइ हैं बावरी,
  धरो जोगिनिया के भेस हो ॥२॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस न जाने,
  का जाने सारद सेस हो ॥३॥
धनि जो अगम अगोचर पइलन,
  हम सब कहत कलेस हो ॥४॥
उहाँ के हाल कबीर गुरु जानैं,
  आवत जात हमेस हो ॥५॥

(३)

नाँव परी पिय बोलै न हम से ॥ टेक ॥
माल मुलुक कछु संग न जैहै ।
  [illegible]

जो मैं जानितिउ पिया रिसियें है ।
नाहक प्रीति लगाती न जग में ॥२॥
निस बासर पिय संग में सूतिउँ ।
नैन अलसानी निकरि गये घर से ॥३॥
जस पनिहारि धरे सिर गागर ।
सुरति न टरे बतरावनि[१] सब से ॥४॥
धरमदास बिनवै कर जोरी ।
साहिब कबीर को पावै मगन से ॥५॥

(२)

कैसे आरत करौं तिहारी । महा मलिन गति देह हमारी ॥
मैं नर्क तें उपज्यो संसारा । मैं कैसे गुन गावौं तुम्हारा ॥
झरना झरै दसो दिसि द्वारे । कस ढिग आवौं साहिब तुम्हारे ॥[२]
जो प्रभु देहु अगर की देही । तब होवौं मैं सबद सनेही ॥
मलयागिरि मैं बसत भुवंगा । बिष अमृत रहै एकै संगा ॥
तिनुका तोड़ दिया परवाना । तब हम पायौ पद निर्बाना ॥
धरमदास कबीर बल गाजै । गुरु परताप आरती साजै ॥

(१) [illegible] । (२) [illegible] ।

गुरु नानक

[सचित्र जीवनचरित्र [illegible] भाग]

( )

राम सुमिर राम सुमिर एही तेरो काज है ॥ टेक ॥
माया को संग त्याग हरि जू की सरन लाग ।
जगत सुख मान मिथ्या, झूठो सब साज है ॥१॥
सुपने ज्यों धन पिछान, काहे पर करत मान ।
बारू की भीत जैसे, बसुधा को राज है ॥२॥
नानक जन कहत बात, बिनसि जैहै तेरो गात ।
छिन छिन करि गयो काल्ह, तैसे जात आज है ॥३॥

(२)

इस दम दा मैनू की वे भरोसा,
आया आया न आया न आया ॥१॥
सोच विचार करै मत मन में,
जिस ने ढूँढा उसने पाया ॥२॥
या संसार रैन दा सुपना,
कहिं दीखा कहिं नाहि दिखाया ॥३॥
नानक भक्तन के पद परसे,
निस दिन राम चरन चित लाया ॥४॥

(३)

सब कछु जीवत को ब्योहार ।
मात पिता भाई सुत बांधव, अरु पुनि गृह की नार ॥१॥
तन ते प्रान होत जब न्यारे, टेरत प्रेत पुकार ।
आध घरी कोउ नहि राखै, घर ते देत निकार ॥२॥

मृग तृस्ना ज्यों जग रचना यह, देखो हृदै बिचार ।
कहु नानक भजु राम नाम नित, जा तें होत उधार ॥३॥

(४)

साधो यह तन मिथ्या जानो ।
या भीतर जो राम बसत है, साचो ताहि पिछानो ॥१॥
यह जग है संपति सुपने की, देख कहा ऐंडानो ।
संग तिहारे कछू न चालै, ताहि कहा लपटानो ॥२॥
अस्तुति निंदा दोऊ परिहरि, हरि कीरति उर आनो ।
जन नानक सब ही में पूरन, एक पुरुष भगवानो ॥३॥

(५)

चेतना है तो चेत ले, निसि दिन में प्रानी ।
छिन छिन अवधि बिहात है, फूटे घट ज्यों पानी ॥१॥
हरि गुन काहे न गावही, मूरख अज्ञाना ।
झूठे लालच लागि के, नहिं मर्म पिछाना ॥२॥
अजहूँ कछु बिगर्‌यो नहीं, जो प्रभु गुन गावै ।
कहु नानक तेहि भजन तें निरभय पद पावै ॥३॥

॥ प्रेम ॥

( )

हौं कुरबाने जाउँ पियारे, हौं कुरबाने जाउँ ॥टेक॥
हौं कुरबाने जाउँ तिन्हाँ दे, लैन जो तेरा नाउँ ।
लैन जो तेरा नाउँ तिन्हाँ दे, हौं सद कुरबाने जाउँ ॥१॥
काया रंगन जे थिये प्यारे, पाइये नाउँ मजीठ[1] ।
रंगन वाला जे रंगे साहिब, ऐसा रंग न डीठ ॥२॥
जिन के चोले रत्तड़े[2] प्यारे, कंत तिन्हाँ के पास ।
धूड़[3] तिन्हाँ की जे मिलै जी, नानक की अरदास ॥३॥

---

(१) काया तन रंगा जाय, साच नाम रूपी लाल रंग (मजीठ के रंग का) मिले । (२) रंगे हुए । (३) धूल ।

( )

बिसरत नाहि मन ते हरी ।

अब यह प्रीति महा प्रबल भई आन बिषय जरी ॥१॥

बूँद कहा तियागि चात्रिक मीन रहत न घरी ।

गुन गोपाल उचारत रसना, टेव एह परी ॥२॥

महा नाद कुरंग मोह्यो, बेध तीखन सरी ।

प्रभु चरन कमल रसाल नानक, गाँठ बाँधि परी ॥३॥

(२)

गोबिंद जी तू मेरे प्रान अधार ।

साजन मीत सहाई तुमही, तू मेरो परिवार ॥१॥

कर बिसाल धारचो मेरे माथे, साधु संग गुन गाये ।

तुम्हरी कृपा तेँ सब फल पाये रसिक नाम धियाये ॥२॥

अबिचल नीव धराई सतगुरु, कबहू डोलत नाहीं ।

गुर नानक जब भये दयाला, सर्ब सुखा निधि पाहीं ॥३॥

(३)

प्रभु जी तू मेरे प्रान अधारे ।

नमस्कार डंडौत बंदना, अनिक बार जाऊ बलिहारे ॥१॥

ऊठत बैठत सोवत जागत, इहु मन तुझे चितारे ।

सूख दूख इस मन की बिरथा, तुझ ही आगे सारे ॥२॥

तू मेरी ओट बल बुधि धन तुमही, तुमहि मेरे परिवारे ।

जो तुम करो सोई भल हमरै, पेख नानक सुख चरना रे ॥३॥

॥ घर सठ ॥

(१)

मुरसिद मेरा महरमी, जिन मरम बताया ।

दिल अंदर दीदार है, खोजा तिन पाया ॥१॥

(१) आनंद ।

तसबी एक अजूब है, जा मैं हर दम दाना।
कुज किनारे बैठि के, फेरा तिन्ह जाना ॥२॥
क्या बकरी क्या गाय है क्या अपनो जाया।
सब को लोहू एक है, साहिब फरमाया ॥३॥
पीर पैगंबर औलिया, सब मरने आया।
नाहक जीव न मारिये, पोषन को काया ॥४॥
हिरिस हिये हैवान है, बसि करिले भाइ।
दाद[1] इलाही नानका, जिसे देवे खुदाई ॥५॥

( )

काहे रे बन खोजन जाई।
सर्ब निवासी सदा अलेपा, तोही संग समाई ॥१॥
पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है, मुकर माहिं जस छाई।
तैसेही हरि बसे निरंतर, घट ही खोजो भाई ॥२॥
बाहर भीतर एकै जानो, यह गुरु ज्ञान बताई।
जन नानक बिन आपा चीन्हे, मिटै न भ्रम की काई ॥३॥

॥ विनय ॥

(१)

प्रब[2] मेरे प्रीतम प्रान पियारे।
प्रेम भक्ति निज नाम दीजिये, द्याल अनुग्रह धारे ॥१॥
सुमिरौं चरन तिहारे प्रीतम, रिदे तिहारी आसा।
संत जनाँ पै करौं बेनती, मन दरसन को प्यासा ॥२॥
बिछुरत मरन जीवन हरि मिलते, जन को दरसन दीजै।
नाम अधार जीवन धन नानक, प्रब मेरे किरपा कीजै ॥३॥

(२)

माइ मैं केहि बिधि लखौं गुसाईं।
महा मोह अज्ञान तिमिर मैं, मन रहियो उरझाई ॥१॥

सकल जनम भ्रम ही भ्रम खोयो, नहिं इस्थिर मति पाई ।
बिषयासक्त रह्यो निसि बासर, नहिं छूटी अधमाई ॥२॥
साधु संग कबहूँ नहिं कीन्हा, नहिं कीरति प्रभ[1] गाई ।
जन नानक मैं नाही कोउ गुन, राखि लेहु सरनाई ॥३॥

(३)

प्रभ जी यही मनोरथ मेरा ।
कृपा निधान दयाल मोहि दीजै, करि संतन का चेरा ॥१॥
प्रात काल लागों जन चरनी, निसि बासर दरसन पावों ।
तन मन अरप करों जन सेवा, रसना हरि गुन गावों ॥२॥
साँस साँस सुमिरों प्रभु अपना, संत संग नित रहिये ।
एक अधार नाम धन मेरा, आनँद नानक यह लहिये ॥३॥

(४)

अब हम चली ठाकुर पहिं हार ।
जब हम सरन प्रभू की आई, राख प्रभु भावे मार ॥१॥
लोगन की चतुराई उपमा, ते बैसंदर[2] जार ।
कोई भला कहु भावे बुरा कहु, हम तन दियो है ढार ॥२॥
जो आवत सरन ठाकुर प्रभु तुम्हरी, तिस राखो किरपाधार ।
जन नानक सरन तुम्हारी हरिजी, राखो लाज मुरार ॥३॥

(५)

अब मैं कौन उपाय करूँ ॥ टेक ॥
जेहि बिधि मन को संसय छूटै, भव निधि[3] पार परूँ ॥१॥
जनम पाय कछु भलो न कीन्हो, ता तें अधिक डरूँ ॥२॥
गुरु मत सुन कछु ज्ञान न उपज्यो, पसुवत उदर भरूँ ॥३॥
कहु नानक प्रभु बिरद पिछानो, तब हौं पतित तरूँ ॥४॥

---

(१) प्रभु । (२) आग । (३) भवसागर ।

( )

हरि जू राख लेहु पत मेरो ॥ टेक ॥
काल को त्रास भयो उर अंतर, सरन गह्यो प्रब तेरो ।
भय मरने को बिसरत नाहीं, तेहिं चिंता तन जारो ॥१॥
किये उपाय मुक्ति के कारन, दह दिसि को उठि धाया ।
घट ही भीतर बसै [illegible] ता को मर्म न पाया ॥२॥
नाही गुन नाही [illegible] जप तप, कौन करम अब कीजै ।
नानक हार पर्यों सरनागत, अभय दान प्रब दीजै ॥३॥

(७)

या जग मीत न देख्यो कोई ।
सकल जगत अपने सुख लाग्यो, दुख में संग न होई ॥१॥
दारा मीत पूत संबंधी, सगरे धन सों लागे ।
जबहीं निरधन देख्यो नर को, संग छाडि सब भागे ॥२॥
कहा कहूं या मन बौरे को, इन सों नेह लगाया ।
दीनानाथ सकल भय भंजन, जस[१] ता को बिसराया ॥३॥
स्वान पूँछ ज्यों भयो न सूधो, बहुत जतन मैं कीन्हो ।
नानक लाज बिरद की राखो, नाम तिहारो लीन्हो ॥४॥

(८)

जीव जंतु सब ता के हाथ, दीनदयाल अनाथ को नाथ ॥१॥
जिस राखै तिस कोइ न मारै, सो मूआ जिस मनों बिसारै २
तिस तजि अवर कहाँ को जाय, सब सिर एक निरंजनराय ३
जिय की जुगत जा के सब हाथ, अंतर बाहर जानो साथ ॥४
गुन निधान बेअंत अपार, नानक दास सदा बलिहार ॥५॥

---

(१) इहसान ।

॥ साध महिमा ॥

जो नर दुख में दुख नहिं मानै ।
सुख सनेह अरु भय नहिं जा के, कंचन माटी जानै ॥१॥
नहिं निन्दा नहिं अस्तुति जा के, लोभ मोह अभिमाना।
हर्ष सोक तें रहै नियारो, नाहि मान अपमाना ॥२॥
आसा मनसा सकल त्यागि के, जग तें रहै निरासा।
काम क्रोध जेहिं परसै नाहिन, तेहिं घट ब्रह्म निवासा ॥३॥
गुरु किरपा जेहिं नर पै कीन्ही, तिन यह जुगति पिछानी।
नानक लीन भयो गोबिंद सो, ज्यों पानी सँग पानी ॥४॥

॥ उपदेश ॥

(१)

जा में भजन राम को नाहीं ।
तेहि नर जनम अकारथ खोयो, यह राखो मन माहीं ॥१॥
तीरथ करै ब्रत पुनि राखै, नहिं मनुआँ बस जा को।
निफल धर्म ताहि तुम मानो, साच कहत मैं या को ॥२॥
जैसे पाहन जल में राख्यो, भेदै नहि तेहि पानी।
तैसेही तुम ताहि पिछानो, भगतिहीन जो प्रानी ॥३॥
कलि में मुक्ति नाम तें पावत, गुरु यह भेद बतावै।
कहु नानक सोई नर गरुवा, जो प्रभु के गुन गावै ॥४॥

(२)

साधो मन का मान तियागो ।
काम क्रोध संगत दुर्जन की, ता तें अहि निसि भागो ॥१॥
सुख दुख दोनों सम कर जानै, और मान अपमाना।
हर्ष सोक तें रहै अतीता तिन जग तत्व पिछाना ॥२॥
अस्तुति निंदा दोऊ त्यागै, खोजै पद निरबाना।
जन नानक यह खेल कठिन है, किनहूँ गुरमुख जाना ॥३॥

(३)

यह मन नेक न कह्यो करे ।
सीख सिखाय रह्यो अपनी सी, दुरमति तें न टरै ॥१॥
मद माया बस भयो बावरो, हरिजस नहिं उचरै ।
करि परपंच जगत के डहकै, अपनो उदर भरै ॥२॥
स्वान पूंछ ज्यों होय न सूधो, कह्यो न कान धरै ।
कहु नानक भजु राम नाम नित, जा तें काज सरै ॥३॥

(४)

माई मैं मन को मान न त्यागो ।
माया के मद जनम सिरायो, राम भजन नहिं लाग्यो ॥१॥
जम को दंड पर्यो सिर ऊपर तब सोवत तें जाग्यो ।
कहा होत अब के पछिताये, छूटत नाहिन भाग्यो ॥२॥
यह चिंता उपजी घट में जब, गुरु चरनन अनुराग्यो ।
सुफल जनम नानक तब हूआ, जो प्रभु जस में पाग्यो ॥३॥

(५)

मन की मनही माहिं रही ।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे, चोटी काल गही ॥१॥
दारा मीत पूत रथ संपति, धन जन पूर्न मही ।
और सकल मिथ्या यह जानो, भजन राम सही ॥२॥
फिरत फिरत बहुते जुग हार्यो, मानस देह लही ।
नानक कहत मिलन की बिरिया, सुमिरत कहा[१] नहीं ॥३॥

(६)

मन मूरख काहे बिल्लावे, पूब लिखे का लेखा पावै ॥१॥
दुक्ख सुक्ख प्रभ देवनहार, अवर त्यागि तूं तिसै चितार ॥२॥
जो कछु करै सोई सुख मान, भूला काहे फिरै अयान ॥३॥

---

(१) क्यों ।

कौन बस्तु आई तेरे संग, लपट रह्यो रस लोभि पतंग ॥४॥
राम नाम जप हिरदे माहीं, नानक पत सेती घर जाहीं ॥५॥

(७)

रे मन कौन गति होइ है तेरी ॥ टेक ॥
एहि जग मेँ राम नाम, सो तो नहिँ सुन्यो कान ।
बिषयन सोँ अति लुभान, मति नाहिन फेरी ॥१॥
मानस को जनम लीन्ह, सिमरन नहि निमिष कीन्ह ।
दारा सुत भयो दीन, पगहुँ परी बेरी ॥२॥
नानक जन कह पुकार, सुपने ज्योँ जग पसार ।
सिमरत नहिँ क्योँ मुरार, माया जा की चेरी ॥३॥

(८)

साधो रचना राम बनाई ।
इक बिनसै इक इस्थिर मानै, अचरज लख्यौ न जाई ॥१॥
काम क्रोध मोह बस प्रानी, हरि मूरति बिसराई ।
झूठा तन साचा करि मान्यो, ज्यौँ सुपना रैनाई ॥२॥
जो दीसै सो सकल बिनासै, ज्योँ बादर की छाँई ।
जन नानक जग जानौ मिथ्या, रहौ राम सरनाई ॥३॥

सूरदासजी

जीवन समय—अनुमान १५४० से १६२० तक। जन्म स्थान—सीही गाँव दिल्ली के पास। जाति और आश्रम—सारस्वत ब्राह्मण भेष। गुरू—बल्लभाचार्य्य महाप्रभु।

यह एक गहरे कृष्णभक्त और साधु शिरोमणि १६ वें शतक में हुए जो ३१ बरस तक गु० तुलसीदासजी के समकालीन थे। इन को उद्धवजी का अवतार कहते हैं और यह बाल साधु थे। आठ बरस की अवस्था में अपने माता पिता के साथ मथुरा को गये और फिर वहीं एक साधू के पास रह गये। मथुरा से वह गऊघाट आये जो आगरा और मथुरा के बीच में है यहाँ बल्लभाचार्य्य महाप्रभु के शिष्य हुए और उन के साथ श्रीनाथद्वारा को गये और वहाँ रह कर अस्सी बरस की अवस्था में शरीर त्याग किया। बीच २ में और स्थानों की भी यात्रा करते रहे और एक समय में गु० तुलसीदासजी से मेला हुआ और कुछ दिनों तक दोनों का संग रहा। कितने लोग इन को जन्म का अंधा बतलाते हैं परन्तु इन की कबिता की अनेक उपमाओं और बर्णनों से जान पड़ता है कि पीछे से उन की आँखें गईं। कहते हैं कि एक बार एक सुंदरी स्त्री को देख कर वह मोह गये जिस पर उन्हें ऐसी ग्लानि आई कि अपनी आँखों का दोष समझकर उन को फोड़ डाला। सूरदास जी ने तीन ग्रंथ रचे—सूरसागर, सूरावली और साहित्य लहरी (दृष्टकूट)। कृष्णभक्तों का विश्वास है कि इन्हों ने प्रण किया था कि सवालाख पद लिखेंगे परन्तु केवल ७५००० तक बनाये थे कि चोला छूट गया फिर इन के पीछे श्रीकृष्ण ने आप अपने भक्त के बचन का पालन करने को शेष ५०००० बनाकर सवालाख की संख्या पूरी करदी। इन पदों में सूरश्याम की छाप है। शरीर त्यागते समय आप ने प्रेम में गदगद हो कर यह पद कहा था—

"खंजन नैन रूप रस माते।
अतिसै चारु चपल अनियारे, पल पिंजरा न समाते।
चलि चलि जात निकट स्रवनन के, उलटि उलटि ताटंक[1] फँदाते॥
सूरदास अंजन गुन अटके, नातरु अब उड़ि जाते॥"

---

(१) तटंक=नदी का किनारा, तटाक=तालाब।

॥ चितावनी ॥

(१)

रे मन जन्म पदारथ जात ।
बिछुरे मिलन बहुरि कब ह्वै है, ज्यों तरवर के पात ॥१॥
सन्नपात कफ कंठ बिरोधी, रसना टूटी बात ।
प्रान लिये जम जात मूढ मति, देखत जननी तात ॥२॥
छिन इक माहिं कोटि जुग बीतत, पीछे नर्क की बात ।
यह जग प्रीति सुआ सेमर की, चाखत ही उड़ि जात ॥३॥
जम के फंद नहीं पडु बौरे, चरनन चित्त लगात ।
कहत सूर बिरथा यह देही, अंतर क्यों इतरात ॥४॥

(२)

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैं ।
ता दिन तेरे तन तरुवर के, सबै पात झरि जैहैं ॥१॥
घर के कहैं बेग ही काढ़ो, भूत भये कोउ खैहैं ।
जा प्रीतम से प्रीति घनेरी, सोऊ देखि डरैहैं ॥२॥
कहँ वह ताल कहाँ वह सोभा, देखत धूर उड़ैहैं ।
भाई बंधु कुटुम्ब कबीला, सुमिरि सुमिरि पछितैहैं ॥३॥
बिना गुपाल कोऊ नहिं अपना, जस कीरति रहि जैहैं ।
सो तो सूर दुर्लभ देवन को, सतसंगति में पैहैं ॥४॥

(३)

रे मन मूरख जनम गवाँयो ॥ टेक ॥
कर अभिमान बिषय सों राच्यो, नाम सरन नहिं आयो ॥१
यह संसार फूल सेमर को, सुंदर देखि लुभायो ।
चाखन लाग्यो रूई उड़ि गइ, हाथ कछू नहिं आयो ॥२
कहा भयो अब के मन सोचे, पहिले नाहिं कमायो ।
सूरदास सतनाम भजन बिन, सिर धुनि धुनि पछितायो ॥३

॥ विरह ॥

(१)

अँखियाँ हरि दरसन की प्यासी ।
[illegible]ो चाहत कमल नैन को, निसि दिन रहत उदासी ॥१॥
[illegible]र तिलक मोतिन की माला, वृन्दाबन के बासी ।
लगाय त्यागि गये तृन सम, डारि गये गल फाँसी ॥२॥
[illegible] के मन की को जानत, लोगन के मन हाँसी ।
[illegible]दास प्रभु तुम्हरे दरस बिन, लेहौं करवत कासी ॥३॥

(२)

बिन गोपाल बैरन भई कुंजैं ॥ टेक ॥
तब ये लता लगत अति सीतल,
अब भइ बिषम ज्वाल की पुंजैं[1] ॥१॥
बृथा बहत जमुना खग बोलत,
बृथा कमल फूलत अलि[2] गुंजैं ॥२॥
सूरदास प्रभु को मग जोवत,
अँखियाँ भईं अरुन[3] ज्यौं गुंजैं[4] ॥३॥

(३)

निसि दिन बरसत नैन हमारे ।
[illegible]ा रहत पावस ऋतु हम पर, जब से स्याम सिधारे ॥१॥
[illegible]जन थिर न रहत अँखियन में, कर कपोल भये कारे ।
[illegible]ुकि[5] पट सूखत नहि कबहू, उर बिच बहत पनारे ॥२॥
[illegible]ँसू सलिल[6] भये पग थाके, बहे जात सित[7] तारे ।
[illegible]दास अब डूबत है ब्रज, काहे न लेत उबारे ॥३॥

[illegible] समूह । (२) भँवरा । (३) लाल । (४) घुँघची । (५) चोली । (६) नदी ।
[illegible]) बँधे या जड़े हुए ।

जा दिन गमन कियो मथुरा मैं, गोपिन सुधि बिसरी री।
हम कों जोग भोग कुबजा को, का तकसीर है मोरी,
कहा कछु कीन्हीं चोरी ॥५॥
सूरदास प्रभु सों जा कहियो, आवै अवधि रही थोरी।
प्रान दान दीजे नँद नन्दन, गावत कीरति तोरी।
प्रीति अब कीजै बहोरी ॥६॥

(८)

कुबजा ने जादू डारा, जिन मोह्यो स्याम हमारा री ॥टेक
निसि दिन चलत रहत नहिं राखे, इन नैनन जलधारा री ॥१
अब यह प्रान कैसे हम राखैं, बिछुरे प्रान अधारा री ॥२॥
ऊधो तब तैं कल न परत है, जब तैं स्याम सिधारा री ॥३॥
अब तो मधुबन जाय ले आवो, सुन्दर नन्द दुलारा री ॥४॥
सूरदास प्रभु आन मिलावो, तन मन धन सब वारा री ॥५॥

॥ प्रेम ॥

(१)

नाहिंन रह्यो मन मैं ठौर।
नन्द नन्दन अछत[1] कैसे, आनिये उर और ॥१॥
चलत चितवत दिवस जागत, स्वप्न सोवत रात।
हृदय तैं वह स्याम मूरत, छिन न इत उत जात ॥२॥
कहत कथा अनेक ऊधो, लोक लाज दिखाव।
कहा करौं तन प्रेम पूरन, घट न सिंधु समात ॥३॥
स्याम गात सरोज आनन[2], ललित गति मृदु हाँस।
सूर ऐसे रूप कारन, मरत लोचन प्यास ॥४।

(२)

या ऋतु रूस रहन की नाहीं।
[illegible] ॥१॥

जे बेली ग्रीषम ऋतु जरहीं, ते तरवर लपटाहीं ।
उमड़ी नदी प्रेम रस माती, सिंधु मिलन को जाहीं ॥२॥
यह संपदा दिवस चारक की, सोच समझ मन माहीं ।
सूर सुनत उठि चली राधिका, दै दूती गल बाहीं ॥३॥

(३)

भीजत कुंजन से दोउ आवत ।
ज्यों ज्यों बूँद परत चूनर पर, त्यों त्यों हरि उर लावत ॥१
अधिक झकोर होत मेघन की, द्रुम तर छिन बिलमावत ।
वे हँसि ओट करत पीतांबर, वे चूनरहि उढ़ावत ॥२॥
तैसेहि मोर कोकिला बोलत, पवन बीच घन धावत ।
ले मुरली कर मन्द घोर स्वर, राग मलार बजावत ॥३॥
भीजे राग रागिनी दोऊ, भीजे तन छबि पावत ।
सूरदास हरि मिलत परस्पर, प्रीति अधिक उपजावत ॥४॥

(४)

आज हौं एक को ले कै टरि हौं ।
मोहिं कहा डरपावत हो प्रभु, अपने पूरे[1] परि लरिहौं ॥१॥
हौं तो पतित सात पीढ़ी को, जो जिय ऐसी धरिहौं ।
हौं तो फिरि वैसो ही ह्वै हौं, तुमहिं बिरद बिनु करिहौं ॥२
अब तो तुम परतीत नसाई, क्यों मानै मम हियरा ।
सूरदास साचो तब थपिहौं, जब हँसि दै हो बीरा ॥३॥

(५)

अब तो प्रगट भई जग जानी ।
वा मोहन सों प्रीति निरंतर, क्यों निबहैगी छानी[2] ॥१॥
कहा करौं सुंदर मूरति इन, नैनन माँझि समानी ।
निकसत नाहिं बहुत पचि हारी, रोम रोम अरुझानी ॥२॥

अब कैसे निर्वारि[1] जात है मिल दुग्ध ज्यौं पानी ।
सूरदास प्रभु अन्तरजामी, उर अंतर का जानो ॥३॥

( )

नेक नहीं मन घर सों लागत ।
पिता मात गुरुजन परमोधत[2],
नीके बचन बान सम लागत ॥१॥
तिन को धृग धृग कहति मनहि मन,
इन कों बनै भले ही त्यागत ।
स्याम बिमुख नर नारि बृथा सब,
कैसे मन इन सों अनुरागत ॥२॥
इन को बदन[3] प्रात दरसो जिनि,
बार बार बिधि[4] सों यह माँगत ।
यह तन सूर स्याम को अर्प्यो,
नेक टरत नहि सोवत जागत ॥३॥

॥ विनय ॥

(१)

तुम मेरी राखो लाज हरी ।
तुम जानत सब अन्तरजामी, करनी कछु न करी ॥१॥
औगुन मोसे बिसरत नाहीं, पल छिन घरी घरी ।
सब प्रपंच की पोट बाँध करि, अपने सीस धरी ॥२॥
दारा सुत धन मोह लिये हौं, सुधि बुधि सब बिसरी ।
सूर पतित को बेग उधारो, अब मेरो नाव भरी ॥३॥

(१)

हमारे प्रभु औगुन चित न धरो ।
सम दरसी है नाम तिहारो, अब मोहि पार करो ॥१॥

इक नदिया इक नार[1] कहावत, मैलो नीर भरो ।
जब दोनों मिलि एक बरन भये, सुरसरि नाम परो ॥२॥
इक लोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परो ।
पारस गुन अवगुन नहिं चितवै, कंचन करत खरो ॥३॥
यह माया भ्रम जाल निवारो, सूरदास सगरो ।
अबकी बेर मोहिं पार उतारो, नहिं प्रन जात टरो ॥४॥

( )

हरि हौं बड़ी बेर को ठाढ़ो ।
जैसे और पतित तुम तारे, तिनहीं में लिखि काढ़ो ॥१॥
जुग जुग बिरद यही चलि आयो, टेर कहत हौं ता तें ।
मारयत लाज पंच पतितन में, हौं घट कहो कहाँ तें ॥२॥
कै अब हार मान करि बैठो, कै करु बिरद सही ।
सूर पतित जो झूठ कहत है, देखो खोलि बही ॥३॥

(८)

अबकी राखि लेहु भगवान ।
हम अनाथ बैठी द्रुम डरियाँ, पारधि[2] साध्यो बान ॥१॥
ता के डर निकसन चाहत हौं, ऊपर रह्यो सचान[3] ।
दोऊ भाँति दुख भयो क्रिपानिधि, कौन उबारै प्रान ॥२॥
सुमिरत ही अहि डस्यो पारधी, लाग्यो तीर सचान[3] ।
सूरदास गुन कहँ लग बरनौं, जै जै कृपानिधान ॥३॥

(५)

जो जन ऊधो मोहिं न बिसारै,
तेहि न बिसारौं छिन एक घरी ॥टेक॥
जो मोहिं भजै भजौं मैं वा को, फल न परत मोहिं एक घरी
काटौं जनम जनम के फंदा, राखौं सुख आनन्द करी ॥१॥

चतुर सुजान सभा में बैठे, दु सासन अनरीति करी ।
सुमिरन कियो द्रोपदी जबही, खैंचत चीर उबारि धरी ॥२॥
ध्रुव प्रहलाद रैनि दिन ध्यावै, प्रगट भये बैकुंठ पुरी ।
भारत में भरुही के अंडा, ता पर गज को घंट ढुरी ॥३॥
अंबरीष गृह आये दुर्बासा, चक्र सुदर्सन छाँहि करी[1] ।
सूर के स्वामी गजराज उबारे, कृपा करो जगजीस हरी ॥४॥

(६)

दीनानाथ अब बार तुम्हारी ।
पतित उधारन बिरद[2] जानि के, बिगरी लेहु सँवारी ॥१॥
बालापन खेलत ही खोयो, जुवा बिषय रस माते ।
बृद्ध भये सुधि प्रगटी मो को, दुखित पुकारत ताते ॥२॥
सुतन तज्यो त्रिय भ्रात तज्यो सब, तन तें तुचा भइ न्यारी ।
स्रवन न सुनत चरन गति थाकी, नैन बहे जल धारी ॥३॥
पलित[3] केस कफ कन्ठ अब रूँध्यो[4], कल न परै दिन राती ।
माया मोह न छाँड़ै तृस्ना, यह दोऊ दुखदाती ॥४॥
अब यह ब्यथा दूर करिबे को, और न समरथ कोई ।
सूरदास प्रभु करुना सागर, तुम तें होय सो होई ॥५॥

(७)

नाथ मोहिं अबकी बेर उबारो ॥ टेक ॥
तुम नाथन के नाथ सुवामी, दाता नाम तिहारो ।
करमहीन जनम को अंधो, मो तें कौन नकारो ॥१॥

---

(१) कथा है कि परम भक्त राजा अंबरीख को बिना अपराध दुर्बासा ऋषि ने स्राप देना चाहा जिस पर बिष्णु के सुदर्शन चक्र ने दुर्बासा को खदेरा । मुनि जी भागते २ बिष्णु की शरण में पहुँचे पर उन्हों ने अपने भक्त के अपराधी की रक्षा करने में अपनी असमर्त्थता प्रगट की और अंत को राजा अंबरीख के शरणागत होने पर वह बचे । (२) प्रण । (३) पके । (४) घरघराना ।

तीन लोक के तुम प्रति पालक, मैं तो दास तिहारो ।
तारी जाति कुजाति प्रभू जी, मो पर किरपा धारो ॥२॥
पतितन में इक नायक कहिये, नीचन में सरदारो ।
कोटि पापी इक पासँग मेरे, अजामिल कौन बिचारो ॥३॥
नाठो धरम नाम सुनि मेरा, नरक कियो हठ तारो ।[1]
मो को ठौर नही अब कोऊ, अपनो बिरद सम्हारो ॥४॥
छुद्र पतित तुम तारे रमापति, अब न करो जिय गारो ।
सूरदास साचो तब माने, जो है मम निस्तारो ॥५॥

(८)

चूक परी मो तें मैं जानी, मिलैं स्याम बकसाऊँ री ।
हा हा करि दसनन तृन धरि धरि, लोचन जलनि ढराऊँ री[2] ॥१॥
चरन गहौं गाढे करि कर सौं, पुनि पुनि सीस छुआऊँ री ।
मुख चितऊँ फिरि धरनि निहारौं, ऐसे रुचि उपजाऊँ री ॥२॥
मिलौं धाय अकुलाय भुजनि भरि, उर की तपनि जनाऊँ री ।
सूरस्याम अपराध छमहु अब, यह कहि कहि जु सुनाऊँ री ॥३॥

(९)

माधो जू जो जन तें बिगरै ।
सुन कृपालु करुनामय कबहूं, प्रभु नहिं चित्त धरै ॥१॥
ज्यौं सिसु[3] जननि[4] जठर[5] अंतरगत, सत अपराध करै ।
तऊ तनय[6] तनु तोष पोष चित, बिहँसत अंक भरै ॥२॥
जदपि बिटप[7] जर हतन[8] हेत करि, कर कुठार पकरै ।
तदपि सुभाव सुसील सुसीतल, रिपु तनु ताप हरै ॥३॥

---

(१) धर्मराय ने मेरा नाम सुनकर मुझे ग्रहण करने से इनकार किया और नरक बोला कि हमारे यहाँ रहने के यह योग्य नहा है इस को तार कर हटाओ । (२) दाँतों के नीचे तिनका धर कर (जोकि निशान आधीनता का है) आँखों से जल धारा बहाता हूं । (३) बालक । (४) माता (५) पेट । (६) पुत्र । (७) पेड़ ।

कारन करन अनन्त अजित कहँ, केहि बिधि चरन परै ।
यह कलिकाल चलत नहिं मो पै, सूर सरन उबरै ॥४॥

(१०)

अब हौं नाच्यो बहुत गोपाल ॥टेक ॥
काम क्रोध को पहिरि चोलना, कंठ बिषय की माल ।
महा मोह के नूपुर बाजत, निन्दा सब्द रसाल ॥१॥
तृस्ना नाद करत घट भीतर, नाना बिधि की ताल ।
माया को कटि[1] फेटा बाँध्यो, लोभ तिलक दियो भाल[2] ॥२॥
कोटिक कला नाच दिखराई, जल थल सुधि नहिं काल ।
सूरदास की सभी अबिद्या, दूर करो नँदलाल ॥३॥

(११)

मो सम कौन कुटिल खल कामी ।
जिन तनु दियो ताहि बिसरायो, ऐसो निमक हरामी ॥१॥
भरि भरि उदर बिषय को धावौं, जैसे सूकर ग्रामी[3] ।
हरि जन छाड़ हरी बिमुखन की, निसिदिन करत गुलामी ॥२
पापी कौन बड़ो है मो तैं, सब पतितन मैं नामी ।
सूर पतित को ठौर कहाँ है, सुनिये श्रीपति[4] स्वामी ॥३॥

॥ उपदेश ॥

(१)

छाड़ु मन हरि बिमुखन को संग ।
कहा भयो पय पान कराये, बिष नहिं तजत भुवंग ॥१॥
जा के संग कुबुद्धी उपजै, परत भजन में भंग ।
काम क्रोध मद लोभ मोह मैं, निस दिन रहत उमंग ॥२॥
कागहि कहा कपूर खवाये, स्वान न्हवाये गंग ।
खर को कहा अरगजा लेपन, मरकट भूषन अंग ॥३॥

(१) कमर । (२) सिर । (३) गाँव का सुअर । (४) लक्ष्मी के पति अर्थात विष्णु ।

पाहन पतित बान नहिं बेधत, रीतो[1] करत निषंग[2] ।
सूरदास खल कारी कामरि चढ़त न दूजो रंग ॥४॥

(५)

सब दिन होत न एक समान ॥ टेक ॥
इक दिन राजा हरीचंद गृह, संपति मेरु समान ।
इक दिन जाय स्वपच गृह सेवत, अंबर हरत मसान ॥१॥
इक दिन दूलह बनत बराती, चहुँ दिसि गडत निसान ।
इक दिन डेरा होत जंगल में, कर सूधे पग तान ॥२॥
इक दिन सीता रुदन करत है, महा बिषम उद्यान[3] ।
इक दिन रामचन्द्र मिलि दोऊ, बिचरत पुष्प बिमान ॥३॥
इक दिन राजा राज जुधिष्ठिर, अनुचर श्रीभगवान ।
इक दिन द्रोपदि नग्न होत है, चीर दुसासन तान ॥४॥
प्रगटत है पूरब की करनी, तजु मन सोच अजान ।
सूरदास गुन कहँ लग बरनौं, बिधि के अंक[4] प्रमान ॥५॥

— o —

स्वामी हरिदास

यह एक भारी कृष्ण भक्त हुए जो सोलहवें शतक के पिछले हिस्से से सत्रहवें शतक के अगले हिस्से तक विराजमान थे। ललिता सखी के अवतार समझे जाते हैं। गान विद्या में यह बड़े निपुन प्रसिद्ध तानसेन के गुरू थे। अकबर बादशाह जो इन का समकालीन था एक बार तानसेन के साथ इन के दर्शन को आया था। इन के कई एक ग्रंथ हैं जिन में से भरथरी वैराग्य और रस के पद प्रसिद्ध हैं। भरथरी वैराग्य संवत १६ ७ में और पद १ १७ में बनाये गये।

(१)

गायो न गोपाल मन लाइ के निवारि लाज ।
पायो न प्रसाद साधु मन्डली में जाइ के ॥१॥

---

(१) [illegible] । (२) [illegible] । (३) [illegible] में । (४) [illegible] ।

धायो न धमक वृन्दाविपिन की कुंजन में ।
रह्यो न सरन जाइ बिट्ठलेसराइ के ॥२॥
नाथ जू न देखि छक्यो छिनहूँ छबीली छाँव ।
सिंह पौरि पर्यो नाहिं सीसहूँ नवाइ के ॥३॥
कहै हरिदास तोहि लाज हू न आवै नेक ।
जनम गँवाये ना कमायो कछु आइ के ॥४॥

(२)

गहौ मन, सब रस को रस सार ॥टेक ॥
लोक बेद कुल करमै तजिये, भजिये नित्य बिहार ॥१॥
गृह कामिनि कंचन धन त्यागौ, सुमिरौ स्याम उदार ॥२॥
गहि हरिदास रीति सन्तन की, गादी को अधिकार ॥३॥

मीरा बाई

जीवन समय—१५७३ से १६०३ तक। जन्म स्थान—गाँव कुड़की (मेरता, मारवाड़)। जाति और आश्रम—राठौर गृहस्थ। गुरु—रैदासजी।

इन की अनूठी भक्ति जक्त प्रसिद्ध है। यह जोधपुर के राठौर राव रत्नसिंह की एकलौती बेटी थीं और उदयपुर के युवराज कुँवर भोजराज से ब्याही गईं जो राजगद्दी पर बैठने के पहिले ही मर गये। पति के देहान्त होने पर मीरा बाई के देवर ने जो गद्दी पर बैठे इन को निरन्तर भक्ति और साधु सेवा करने के कारन बहुत सताया यहाँ तक कि बाई जी को घर से भाग जाना पड़ा। कहते हैं कि मीरा बाई अंत समय द्वारका में रनछोर जी की मूर्त्ति में समा कर अलोप होगईं।

॥ चितावनी ॥

(१)

मनखा[1] जनम पदारथ पायो, ऐसो बहुर न आती ॥टेक॥
अब के मोसर[2] ज्ञान बिचारो, राम राम मुख गाती।
सतगुरु मिलिया सुंज[3] पिछानी, ऐसा ब्रह्म मैं पाती ॥१॥

---

(१) मनुष्य का। (२) अवसर। (३) सुझ।

धान[1] न भावै नींअमृत पीवे, निगुरा प्यासा जासी।
घायल सी घूमत मन सुख मैं, गोविंद का गुन गासी ॥२॥
दिवस तो खायआदि अनादी, नातर[1] भव मैं जासी।
प्राण गमाये, आस आप की, आरॉ[2] सूँ सकुचासी ।३॥
जो मै ऐग

(२)

नगर हँ‍ (न कँवल अविनासी ॥ टेक ॥
पथ निर) धरनि गगन बिच, तेताइ सब उठि जासी।
मीरा के (तीरथ ब्रत कीन्हे, कहा लिये करवन कासी ॥१
इस देही का गरब न करना, माटी मैं मिल जासी।
यो ससार चहर[3] की बाजी, साँझ पड्या उठि जासी ॥२॥
कहा भयो है भगवा पहर्याँ, घर तज भये सन्यासी।
जोगी होय जुगति नहि जानी, उलटि जनम फिर आसी ॥३
अरज करौं अबला कर जोरे, स्याम तुम्हारी दासी।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, काटो जम की फाँसी ॥४॥

॥ विरह ॥

(१)

हे री मैं तो प्रेम दिवानी, मेरा दरद न जाने कोय ॥टेक॥
सूली ऊपर सेज हमारी, किस बिध सोना होय।
गगन मँडल पै सेज पिया की, किस बिध मिलना होय ॥१॥
घायल की गति घायल जानै, को जिन लाई होय।
जौहरी की गत जौहरी जानै, की जिन जौहर होय ॥२।
दरद की मारी बन बन डोलूँ, वैद मिल्या नहिं कोय।
मीरा की प्रभु पीर मिटैगी, जब बैद सवलिया होय ॥३॥

(१) नहीं तो। (२) दूसरों। (३) चिड़ियों का सा तमाशा जो साँझ होते ही बसेरे को उड़ जाती हैं।

नींदलड़ी नहिं आवे सारी रा सूरा जान मैं ।
चमक[2] उठी सुपने सुध भूला, न भया मेर के ॥२॥
तलफ तलफ जिव जाय हमारो, ढ पाया ली छाँव ।
भइ हूँ दिवानी तन सुध भूली, कोई कहै हूआइ के ॥३॥
ेक ।
मीरा कहै बीती सोइ जानै, मरन सन च के ॥४॥

(३)

नैना म्हारे बान पडी, साईं मोहि दरसन दीजै
चित्त चढ़ी मेरे माधुरि मूरत, उर बिच [illegible] ।
कैसे प्रान पिया बिनु राखूँ, जीवन मूर जड़ी[2] ॥२॥
कब की ठाढ़ी पथ निहारू, अपने भवन खडी ॥३॥
मीरा प्रभु के हाथ बिकानी, लोक कहे बिगडी ॥४॥

(४)

माई म्हाँरी हरि न बूझी बात ।
पिड मैं से प्राण पापी, निकस क्यू नहि जात ॥१॥
रैन अँधेरी बिरह घेरी, तारा गिणत निस जात ।
ले कटारी कठ चीरू, करूँगी अपघात ॥२॥
पाट[4] न खोल्या मुखाँ न बोल्या, साँझ लग परभात ।
अबोलना मैं अवध बीती, काहे की कसलात ॥३॥
सुपन मैं हरि दरस दीन्हों, मैं न जाण्यो हरि जात ।
नैन म्हाँरा उघड[5] आया, रही मन पछतात ॥४॥
आवन आवन होय रह्यो रे, नहिं आवन की बात ।
मीरा व्याकुल बिरहनी रे, बाल ज्यों बिललात ॥५॥

(५)

घडी एक नहिं आवडे[6], तुम दरसन बिन मोय ।
तुम ही मेरे प्राण जी, का सूँ जीवन होय ॥१॥

धान[1] न भावै नींद न आवै बिरह सतावै मोय ।
घायल सी घूमत फिरूँ रे, मेरा दरद न जाने कोय ॥२॥
दिवस तो खाय गमाइयो रे, रैन गमाई सोय ।
प्राण गमायो झूरतॉं[2] रे, नैन गमाई रोय ॥३॥
जो मैं ऐसा जानती रे, प्रीत किये दुख होय ।
नगर ढँढोरा फेरती रे, प्रीत करो मत कोय ॥४॥
पंथ निहारूँ डगर बुहारूँ, ऊभी[3] मारग जोय ।
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे, तुम मिलियॉं सुख होय ॥५॥

(६)

इ
? अपने सैयॉं सँग साची ।
ब काहे की लाज सजनी, प्रगट ह्वै नाची ॥१॥
दवस भूख न चैन कबहिन, नींद निसु नासी ।
ध वार को पार होइगो, ज्ञान गुह[4] गॉंसी ॥२॥
कुल कुटुंब सब आनि बैठे, जैसे मधु मासी[5] ।
दास मीरा लाल गिरधर, मिटी जग हॉंसी ॥३॥

(७)

नातो[6] नाम को मो सूँ, तनक न तोड्यो जाय ॥टेक॥
पानॉं ज्यूँ पीली पडी रे, लोग कहै पिंड रोग ।
छाने[7] लॉंघन[8] मैं किया रे, राम मिलन के जोग ॥१॥
बाबल[9] बैद बुलाइया रे, पकड दिखाई म्हॉंरो बॉंह[10] ।
मूरख बैद मरम नहिं जाने, करक[11] कलेजे मॉंह ॥२॥
जाओ बैद घर आपने रे, म्हॉंरो नॉंव न लेय ।
मैं तो दाधा[12] बिरह की रे, काहे कूँ औषद[13] देय ॥३॥

---

(१) अन्न । (२) बिलक बिलक कर । (३) खडी । (४) गुप्त । (५) शहद की मक्खी । (६) रिश्ता । (७) छिप कर । (८) फाका । (९) बाप । (१०) नाडी । (११) दर्द । (१२) जली हुई । (१३) दवा ।

(१०)

होली

रमैया बिन नींद न आवै ।
नींद न आवै बिरह सतावै, प्रेम की आँच डुलावै[1] ।टेक॥
बिन पिया जोत मंदिर अँधियारो, दीपक दाय[2] न आवै ।
पिया बिना मेरी सेज अलूनी[3], जागत रैन बिहावै[4],
पिया कब रे घर आवै ॥ १ ॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल सबद सुनावै ।
घुमँड घटा ऊलर[5] होइ आई, दामिनि दमक डरावै,
नैन झर लावै ॥ २ ॥
कहा करूँ कित जाऊँ मोरी सजनी, बेदन कूण बुतावै[6] ।
बिरह नागिन मोरी काया डसी है, लहर लहर जिव जावै,
जड़ी घस लावै ॥ ३ ॥
को है सखी सहेली सजनी, पिया कूँ आन मिलावै ।
मीरा कूँ प्रभु कब रे मिलोगे, मनमोहन मोहिं भावै,
कब हँस करि बतलावै[7] ॥ ४ ॥

(११)

होली

होली पिया बिन मोहिं न भावै, घर आँगन न सुहावै ॥टेक॥
दीपक जोय कहा करूँ हेली, पिय परदेस रहावै ।
सूनी सेज जहर ज्यूँ लागे, सुसक सुसक जिय जावै,
नींद नैन नहिं आवै ॥ १ ॥
कब की ठाढ़ी मैं मग जोऊँ, निस दिन बिरह सतावै ।
कहा कहूँ कछु कहत न आवै हिवड़ो अति अकुलावै ।
पिया कब दरस दिखावै ॥ २ ॥

ऐसा है कोइ परम सनेही, तुरत सदेसो लावे।
वा बिरियाँ कब होसी मो कूं, हँस करि निकट बुलावे,
मीरा मिल होरी गावै ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

आली साँवरो कि दृष्टि, मानो प्रेम की कटारी है ॥टेक॥
लागत बेहाल भई, तन की सुधि बुद्धि गई।
तन मन व्यापो प्रेम मानो मतवारी है ॥ १ ॥
सखियाँ मिलि दोइ चारी, बावरी सी भई न्यारी।
हौं[1] तो वा को नीके जानौं, कुंज को बिहारी है ॥२॥
चंद को चकोर चाहै, दीपक पतंग दाहै।
जल बिना मीन जैसे, तैसे प्रीत प्यारी है ॥३॥
बिनती करों है स्याम, लागौं मैं तुम्हारे पाम[2]।
मीरा प्रभु ऐसे जानो, दासी तुम्हारी है ॥ ४ ॥

(२)

जावो हरि निरमोहड़ा[3] रे जानी थाँरी प्रीत ॥टेक॥
लगन लगी जब और प्रीत छी[4], अब कुछ अँवली[5] रीत ॥१॥
अमृत पाय बिषै क्यूँ दीजे, कौन गाँव की रीत ॥२॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, आप गरज के मीत ॥३॥

(३)

जब से मोहिं नंद नँदन दृष्टि पड्यो माई।
तब से परलोक लोक कछू ना सुहाई ॥ १ ॥
मोरन की चंद्र कला सीस मुकुट सोहै।
केसर को तिलक भाल तीन लोक मोहै ॥ २ ॥

कुंडल की अलक झलक कपोलन पर छाई।
मनो[1] मीन सरवर तजि मकर[2] मिलन आई ॥ ३ ॥

कुटिल भृकुटि[3] तिलक भाल चितवन में टौना।
खंजन[4] अरु मधुप[5] मीन भूले मृग छौना[6] ॥ ४ ॥

सुंदर अति नासिका सुग्रीव[7] तीन रेखा।
नटवर[8] प्रभु भेष धरे रूप अति बिसेषा ॥ ५ ॥

अधर बिंब अरुन नैन मधुर मंद हाँसी।
दसन[9] दमक दाड़िम[10] दुति[11] चमके चपला[12] सी ॥ ६ ॥

छुद्र घंट किंकिनी[13] अनूप धुनि सुहाई।
गिरधर के अंग अंग मीरा बलि जाई ॥ ७ ॥

(४)

या मोहन के मैं रूप लुभानी ॥ टेक ॥

हाट बाट मोहिं रोकत टोकत,
या रसिया की मैं सार न जानी ॥ १ ॥

सुंदर बदन कमल दल लोचन,
बाँकी चितवन मंद मुसकानी ॥ २ ॥

जमुना के नीरे तीरे धेनु चरावत,
बंसी में गावत मीठी बानी ॥ ३ ॥

तन मन धन गिरधर पर वारूँ,
चरन कमल मीरा लपटानी ॥ ४ ॥

---

(१) मानो, गोया कि। (२) मगर। (३) भौं। (४) खड़रिच चिड़िया। (५) भौंरा। (६) बच्चा। (७) सुंदर गला। (८) नट के समान काछनी काछे। (९) दाँत। (१०) अनार। (११) प्रकाश। (१२) बिजली। (१३) छोटी छोटी घंटियाँ जो कमर में पहिन लेते हैं।

निपट बंकट[1] छबि, अटके मेरे नैना ॥टेक॥
देखत रूप मदनमोहन को, पियत पियूष[2] न मटके[3] ॥१॥
बारिज[4] भवाँ अलक[5] टेढ़ी मनो, अति सुगंध रस अटके ॥२॥
टेढ़ी कटि[6] टेढ़ो कर मुरली, टेढ़ी पाग लर[7] लटके ॥३॥
मीरा प्रभु के रूप लुभानी, गिरधर नागर नट के ॥४॥

( )

बरसे बदरिया सावन की, सावन की मन भावन की ॥टेक॥
सावन में उमग्यो मेरो मनवा, भनक सुनी हरि आवन की ॥१॥
उमड़ घुमड़ चहुँ दिस से आयो, दामिन दमक झर लावन की ॥२॥
नन्ही नन्ही बूँदन मेहा बरसे, सीतल पवन सुहावन की ॥३॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, आनँद मंगल गावन की ॥४॥

॥ विनय ॥

(१)

पिया मोहि आरत तेरी हो।
आरत तेरे नाम की मोहि साँझ सबेरी हो ॥ १ ॥
या तन को दियना करौं मनसा करौं बाती हो।
तेल भरावों प्रेम का बारौं दिन राती हो ॥ २ ॥
पटियाँ पारौं गुरु ज्ञान की सुमति माँग सवारौं हो।
पिया तेरे कारने धन जोबन वारौं हो ॥ ३ ॥
सेजड़िया बहु रंगिया चंगा फूल बिछाया हो।
रैन गई तारा गिणत प्रभु अजहुँ न आया हो ॥ ४ ॥
सावन भादों ऊमड़ो बरखा रितु छाई हो।
भौंह घटा घन घेरि के नैनन झारे लाई हो ॥ ५ ॥

---

(१) बाँकी। (२) अमृत। (३) मुड़े। (४) कमल। (५) बाल की लट। (६) कमर। (७) पेंच।

मात पिता तुम को दियो तुम ही भल जानो हो[1] ।
तुम तजि और भतार को मन में नहिं आनो हो ॥ ६ ॥
तुम हो पूरे साइयाँ पूरन पद दीजै हो ।
मीरा व्याकुल बिरहिनी अपनी करि लीजै हो ॥ ७ ॥

( )

तुम पलक उघाड़ो दीनानाथ, हूँ हाजिर नाजिर कब की खड़ी ॥टेक॥
साजँ[2] थे दुसमन होइ लागे, सब ने लगूँ कड़ी[3] ।
तुम बिन साजँ कोऊ नहीं है, डिगी[4] नाव मेरी समँद अड़ी ॥१॥
दिन नहिं चैन रात नहिं निंदरा, सूखूँ खड़ी खड़ी ।
बान बिरह के लगे हिये में, भूलूँ न एक घड़ी ॥२॥
पत्थर की तो अहिल्या तारी, बन के बीच पड़ी ।
कहा बोझ मीरा में कहिये, सौ ऊपर एक धड़ी[5] ॥३॥
गुरु रैदास मिले मोहिं पूरे, धुर से कलम भिड़ी ।
सतगुरु सैन दई जब आ के, जोत में जोत रली ॥४॥

॥ उपदेश ॥

राम नाम रस पीजे मनुआ, राम नाम रस पीजे ॥टेक॥
तज कुसंग सतसंग बैठ नित, हरि चरचा सुण लीजे ॥१॥
काम क्रोध मद लोभ मोह कूँ, चित से बहाय दीजे ॥२॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, ताहि के रंग में भीजे ॥३॥

(१) देखो जीवन चरित्र मीरा बाई का उनकी शब्दावली के ग्रंथ में ।
(२) स्वजन । (३) कड़वा । (४) झकोला खाता है । (५) पसेरा ।

नरसी मेहता जी

— ० ० —

जीवन समय—सत्रहवीं शताब्दी। रचना काल १ २ । जन्म स्थान—जूनागढ़ [गुजरात]। जाति और आश्रम—गुजराती ब्राह्मण गृहस्थ।

इन के माँ बाप बचपन ही में मर गये थे इस लिये भाई भावज के साथ रहने लगे। फिर भावज के कुत्सित वचनों के कारण उसका घर भी छोड़ दिया और एक शिवालय में सात दिन तक भूखे प्यासे पड़े रहे। शिवजी की कृपा से वृन्दावन आकर साक्षात दर्शन श्रीकृष्ण का पाया। वहां से जूनागढ़ लौट आये और वहां एक घर अलग बनाकर अपना ब्याह कर लिया जिस से एक लड़का और दो लड़की उत्पन्न हुए। इन की ईश्वर भक्ति जगत विख्यात है और इन की हुंडी की कथा जो साधुओं की एक जमात के वास्ते ७००) की इन्होंने साँवल साह पर द्वारका को लिख दी और जिस का दाम श्रीकृष्ण ने साँवल साहूकार का रूप धारण करके चुकाया भक्तमाल में दी है।

(१)

म्हाँने पार उतारो जी, थाँने निज भक्तन की आन।
हमरे अवगुन नेक न चितवो, अपनो ही करि जान॥१॥
काम क्रोध मद लोभ मोह बस, भूल्यो पद निर्बान।
अब तो सरन गही चरनन की, मत दीजो मोहि जान॥२॥
लख चौरासी भरमत भरमत, नेक न परी पिछान।
भवसागर में बह्यो जात हौं, राखिये स्याम सुजान॥३॥
हौं तो कुटिल अधम अपराधी, नहिं सुमर्यो तेरो नाम।
नरसी के प्रभु अधम उधारन, गावत बेद पुरान॥४॥

(२)

कहाँ लगाई एती देर, अरे अरे साँवरे॥ टेक॥
हौं गुजराती सिव को उपासी, पूजौं साँझ सवेर॥१॥
भक्ति मर्म को सार न जानौं, हाँसी कराई मेरी हेर॥२॥
ऊँचे चढ़ि के टेर सुनाऊ, अब सुनिये म्हारी टेर॥३॥
क्या कहिं काज सँवारे भक्तन के, क्या निद्रा ने लिये घेर॥४॥
नरसी के प्रभु अधम उधारन, राखिये अब की बेर॥५॥

गुसाईं तुलसीदासजी

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये दुर्गा सतशती संग्रह भाग १ पृष्ठ ७१]

॥ प्रेम ॥

ये दोउ झूलत रंग हिंडोरैं ।
दसरथ सुत अरु जनक नंदनी, चितवन मैं चित चोरैं ॥१॥
नान्ही नान्ही बूँद पवन पुरवैया, बरसत थोरैं थोरैं ।
हरि हरि भूमि घटा झुकि आई, सरजू लेत हिलोरैं ॥२॥
हय दल पैदल गज दल रथ दल कोटि बने चहु ओरैं ।
उपवन माहिं मधुर सुर बोलैं, कोकिल मोर चकोरैं ॥३॥
रत्न जटित को बन्यो हिंडोरा रेसम लागी डोरैं ।
अरस परस दोउ झूल झुलावैं, इक साँवर इक गोरैं ॥४॥
वा मैं विमल सखी उरझानी, अपनी अपनी ओरैं ।
तुलसिदास अनुकूल जानि के, सियाजी हँसी मुख मोरैं ॥५

॥ विनय ॥

( )

काहे तैं हरि मोहिं बिसारो ।
जानत निज महिमा मेरे अघ, तदपि न नाथ सम्हारो ॥१
पतित पुनीत दीनहित, असरण सरण कहत स्रुति चारो ।
हौं नहि अधम सभीत दीन, किधौं वेदन मृषा पुकारो ॥२॥
खग गणिका गज व्याध पाँति जहँ, तहँ हौं हूँ बैठारो ।
अब केहि लाज कृपानिधान, परसत पनवारो फारो ॥३

शब्द १ विनय के अर्थ—हे हरि मुझ को क्यों भूल जाते हो तुम तो अपनी बड़ाई और मेरे दोष दोनों को जानते हो फिर मुझे क्यों नहीं सम्हालते। चारों वेद आप के पतितपावन दुखिया के हितकारी असरन की सरन होने की महिमा गाते हैं

मसक बिरंचि बिरंचि मसक सम, करहु प्रभाउ तुम्हारो।
यह सामर्थ्य अछत मोहि त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो॥४॥
जनहिं न नरक परत मो कहँ डर, यद्यपि हौं अति हारो।
यह बड़ि त्रास दास तुलसी प्रभु नामहु पाप न जारो॥५॥

(९)

केसव कारन कवन गुसाईं।
जेहि अपराध असाधु जानि मोहिं, तज्यो अज्ञ की नाईं॥१॥
परम पुनीत सन्त कोमल चित, तिन्हहिं तुमहिं बनि आई।
तौ बिप्र ब्याध गनिकहि कस तार्‍यो, का कछु रही सगाई॥२॥
काल कर्म गति अगति जीव की, सब हरि हाथ तुम्हारे।
सोइ कछु करहु हरहु ममता प्रभु, फिरहुँ न तुमहिं बिसारे॥३॥
जौं तुम तजहु भजौं न आन प्रभु, यह प्रमान पन मोरे।
मन बच कर्म नरक सुरपुर जहँ, तहँ रघुबीर निहोरे॥४॥

तारने में डर लगते हो तो [illegible] के [illegible] कहा जाय कि [illegible] समस्त औगुनों में निपुण हो। मैं समझता हूँ या आप की महिमा बड़ों [illegible] भागा है। आप के प्रन के सहारे मैं खग [जटायु] गणिका [वेश्या] गज और व्याधा जिस ने श्रीकृष्ण के चरन में तीर मारा [illegible] पर [illegible] पाति में बैठाया गया तो फिर पंगत में बैठालने के पीछे कौन दोष आप को लगा [illegible] कि परोसन के समय मेरी पत्तल को फाड़ते हो। आप का सुभाव है कि छिन में मच्छड़ को ब्रह्मा और ब्रह्मा को मच्छड़ बना देते हो फिर ऐसे समर्थ हो कर जो मुझे त्यागते हो तो मेरा क्या बस है। सो यद्यपि मैं [illegible] पाप करते करते अति हार गया हूँ फिर भी मुझे नर्क में पड़ने का डर नहीं है पर यह चिन्ता [illegible] है कि लोग ही हँसेंगे कि नाम भी पापों का नहीं नाश सका।

(१) अनजान पन कर। (२) जो तुम कोमल पवित्र सन्तों का ही हित करते होते तो अजामिल विप्र व्याध गणिका [illegible] तुम्हारे [illegible] नातेदार थे जो उनको तारा। (३) फिर [illegible]। (४) जो तुम मुझे त्याग दो तो भी यह मेरा प्रन है कि दूसरे स्वामी को न भजूंगा, चाहे मुझे नर्क में डाल दो चाहे देव लोक में पहुँचाओ मैं मन बाचा कर्मना तुम्हारा ही आस रखूँगा।

जद्यपि नाथ उचित न होत अस, प्रभु सों करौं ढिठाई ।
तुलसिदास सीदत[1] निसि दिन, देखत तुम्हारि निठुराई ॥५

(३)

माधव अब न द्रवहु[2] केहि लेखे ।
प्रनतपाल[3] पन तोर, मोर पन जियउँ कमल पद देखे ॥१॥
जब लगि मैं न दीन दयाल तैं, मैं न दास तैं स्वामी ।
तब लगि जो दुख सहेउँ कहेउ नहिं, जद्यपि अन्तरजामी ॥२
तैं उदार मैं कृपन पतित मैं, तैं पुनीत स्रुति गावै ।
बहुत नात रघुनाथ तोहि मोहि, अब न तजे बनि आवै ॥३
जनक जननि गुरु बन्धु सुहृद पति, सब प्रकार हितकारी ।
द्वैत रूप तम कूप परौं नहिं, अस कछु जतन बिचारी[4] ॥४
सुनु अदभ्र करुना बारिज लोचन, मोचन भय भारी ।
तुलसिदास प्रभु तव प्रकास बिनु, ससय टरत न टारी[5] ॥५

(४)

तू दयाल दीन हौं, तू दानि हौं भिखारी ।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप पुंज हारी ॥१॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मो सों ।
मो समान आरत नहिं, आरत हर तो सों ॥२॥

---

(१) दुख पाता है । (२) पसीजते दया करते । (३) जो एक बार भी प्रनाम करे तिस का पालन करनेहारा । (४) पिता माता गुरु भाई मित्र स्वामी सब प्रकार तुम्हीं मेरे हितकारी हो सो ऐसा कुछ जतन करो कि द्वैत रूप अर्थात हौं मैं के अंध कूप में न गिर जाऊं । (५) सुनो हे अधिक [अदभ्र] करुना निधान कमल नैन भयहरन प्रभु तुम्हारे प्रकाश बिना मेरा भ्रम अपने पुरुषार्थ से टाले नहीं टलता ।

शब्द ४ का अर्थ—इस शब्द में गुसाईं जी ग्यारह नाते गिना कर अपने इष्ट से बिनय करते हैं कि जो नाता आप को भावे उसी एक को मान कर मोहे चरन सरन में लीजिये ।

ब्रह्म तू हौं जीव हौं, तू ठाकुर हौं चेरो ।
तात मात गुरु सखा तू, सब बिधि हित मेरो ॥३॥
तोहि मोहि नातो अनेक, मानिये जो भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी, कृपालु चरन सरन पावै ॥४॥

(५)

हरि जू मेरो मन हठ न तजै ।
निसि दिन नाथ देउँ सिख बहु बिधि, करत सुभाव निजै ॥१॥
ज्यौं जुवती अनुभवत प्रसव[1] अति, दारुन दुख उपजै ।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ, पुनि खल पतिहिं भजै ॥२॥
लोलुप भ्रमत ग्रामित निसि बासर, सिर पदत्रान बजै ।
तदपि अधम बिचरत तेहिं मारग, कबहुँ न मूढ़ लजै ॥३॥[2]
हौं हार्‌यो करि जतन बिबिध बिधि, अतिसय प्रबल अजै ।[3]
तुलसिदास बस होत तबै, जब प्रेरक प्रभु बरजै ॥४॥

(६)

दीन को दयालु दानि दूसरो न कोई ।
जाहि दीनता कहौ हौं दीन देखौं सोइ ॥१॥[4]
मुनि सुर नर नाग असुर साहिब तौ घनेरे ।
पै तौ लौं जौ लौं रावरे न नेकु नैन फेरे[5] ॥२॥
त्रिभुवन तिहुँ काल बिदित बदत[6] बेद चारी ।
आदि अंत मध्य राम साहिबी तिहारी ॥३॥

---

(१) जनने का दुख सहती है। (२) जैसे लालची रात दिन रुपया कमाने के फेर में थक जाता है और जूतियाँ खाता है फिर भी वही चाल चलता है और लाज नहीं लाता। (३) अजीत। (४) ईश्वर को छोड़ दूसरा दीनता छुड़ाने का समरथ नहीं है, जिस किसी से अपनी दीनता का दुख रोता हूँ उसी को आप दीन दुखी अर्थात असमरथ पाता हूँ। (५) सुर नर मुनि आदि की अभी तक प्रभुता है जब तक तेरी भौं उनकी ओर टेढ़ी नहीं होती। (६) कहता है।

तोहि माँगि माँगनो न माँगनो कहायो[१] ।
सुनि सुभाव सील सुजस जाचक जन आयो ॥४॥
पाहन पसु बिटप बिहँग अपने करि लीन्हे ।
महाराज दसरथ के रंक राव कीन्हे ॥५॥[२]
तू गरीब को निवाज हौं गरीब तेरो ।
बारक[३] कहिये कृपालु तुलसिदास मेरो ॥६॥

(७)

मैं हरि पतित पावन सुने ।
मैं पतित तुम पतित पावन, दोऊ बानिक[४] बने ॥१॥
ब्याध गनिका गज अजामिल, साखि निगमन भने ।
और अधम अनेक तारे, जात को पै गने ॥२॥
जानि नाम अजानि लीन्हें, नरक जमपुर मने ।
दास तुलसी सरन आयो, राखिये आपने ॥३॥

(८)

तुम सम दीन बन्धु, न दीन कोउ मो सम,
सुनहु नृपति रघुराइ ।
मो सम कुटिल मौलिमनि[५] नहिं जग,
तुम सम हरि न हरन कुटिलाई ॥१॥
हौं मन बचन कर्म पातक रत,
तुम कृपालु पतितन गति दाइ ।
हौं अनाथ प्रभु तुम अनाथ हित,
चित यह सुरति कबहुँ नहिं जाई ॥२॥

---

(१) जिस ने आप से मांगा वह फिर मंगता न रहा अर्थात परिपूर्ण हो गया। (२) दशरथ के पुत्र श्रीरामचन्द्र ने जिस जिस को अपनाया वह दरिद्री से राजा होगया यहाँ तक कि पत्थर जैसे अहिल्या जानवर [बंदर भालू] पेड़ [यमलार्जुन] चिड़िया [जटायु] की योनियों तक से दीन दुखियों का उद्धार कर दिया। (३) एक बेर। (४) [illegible] (५) [illegible] का शिरोमणि कपटी।

हौं आरत[१] आरत नासन तुम्ह,
कीरति निगम पुरानन गाई ।
हौं सभीत[२] तुम हरन सकल भय,
कारन कवन कृपा बिसराई ॥३॥
तुम सुखधाम राम स्रमभजन[३],
हौं अति दुखित त्रिबिध स्रम[४] पाई ।
यह जिय जानि दास तुलसी कह,
राखहु सरन समुझि प्रभुताई ॥४॥

(६)

जो पै दूसरा कोउ होइ ।
तो हौं बारहिं बार प्रभु, कत दुख सुनावौं रोइ ॥१॥
काहि ममता दीन पर, को पतित पावन नाम ।
पाप मूल अजामिल हि, केहि दियो अपनो धाम ॥२॥
रहे सम्भु बिरञ्चि सुरपति, लोक पाल अनेक ।
सोक सरि बूड़त करीसहिं, दइ काहु न टेक[५] ॥३॥
बिलखि भूपति सदसि महँ, नरनारि कह प्रभु पाहि ।
सकल समरथ सरन काहु न, बसन दीन्हों ताहि[६] ॥४॥
एक मुख क्यों कहौं, करुना सिन्धु के गुन गाथ[७] ।
भक्तहित धरि देह काह न, कियो कोसल नाथ[८] ॥५॥
आप से कहि सौंपिये मोहिं, जो पै अतिहिं घिनात ।
दासतुलसी और बिधि क्यों, चरन परिहरि[९] जात ॥६॥

(१) दीन दुखी । (२) भयमान । (३) क्लेश नाशक । (४) त्रय ताप ग्रसित । (५) शोक की नदी में डूबते हुए गजेन्द्र को किसी ने सहारा नहीं दिया । (६) नरनारी अर्थात द्रोपदी की जब राज सभा में सारी खींची गई और वह बिलख कर त्राहि २ पुकारी और तुम्हारी शरन ली तो तुम्हारे सिवाय किस ने उस को वस्त्र दिया । (७) गाथ कर । (८) अजोध्या के राजा श्रीरामचन्द्र । (९) छोड़ कर ।

(१०)

अस कछु समुझि परै रघुराया ।
बिन तव कृपा दयालु दास हित, मोह न छूटै माया ॥१॥
वाक्य ज्ञान अत्यन्त निपुन, भव पार न पावै कोई ।
निसि गृह मध्य दीप की बातन, तम निवृत्त नहिं होई ॥२॥
जैसे कोउ इक दीन दुखित अति असन हीन[1] दुख पावै ।
चित्र कल्पतरु कामधेनु गृह, लिखे न बिपति नसावै ॥३॥
षट रस बहु प्रकार भोजन कोउ, दिन अरु रैन बखानै ।
बिन बोले सन्तोष जनित सुख, खाइ सोई पै जानै ॥४॥
जब लगि नहि निज हृदे प्रकास, अरु बिषय आस मन माहीं ।
तुलसिदास तब लगि जग जोनि, भ्रमत सपनेहु सुख नाहीं ॥५॥

(११)

बेद न पुरान गान जानौं न बिज्ञान ज्ञान,
ध्यान धारना समाधि साधन प्रबीनता ॥१॥
नाहिंन बिराग जोग जाग भाग तुलसी के,
दया दान दूबरो हौं, पाप ही की पीनता[3] ॥२॥
लोभ मोह काम कोह[4], दोष कोष मो सों कौन,
कलि[5] हू जो सीखि लई मेरी ये मलीनता ॥३॥
एक ही भरोसो राम रावरो कहावत हौं,
रावरे दयाल दीन बंधु मेरी हीनता ॥४॥

(१)

स्वारथ को साज न समाज परमारथ को,
मो सों दगाबाज दूसरो न जग जाल है ॥१॥

---

(१) अहार बिना । (२) जो सुख संतोष से उत्पन्न हुआ अर्थात रसीला भोजन करने का आनंद । (३) मुटाई । (४) क्रोध । (५) कलियुग ।

टूटैं गच काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तन की ॥४
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आनन की ॥५॥
कहँ लग कहौं कुचाल कृपा निधि, जानत हौ गति जन की ॥६
तुलसिदास प्रभु हरो दुसह दुख, लाज करो निज पन की ॥७

(१५)

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो ।
श्रीरघुनाथ कृपालु कृपा तें, सन्त सुभाव गहौंगो ॥१॥
जथा लाभ सन्तोष सदा, काहू सों कछु न चहौंगो ।
परहित निरत निरन्तर मन, क्रम बचन नेम निबहौंगो ॥२॥
परुष[२] बचन अति दुसह[३] स्रवन सुनि, तेहि पावक न दहौंगो ।
बिगत[४] मान सम सीतल मन, परगुन नहिं दोष कहौंगो ३
परिहरि देह जनित[५] चिन्ता दुख, सुख सम बुद्धि सहौंगो ।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि कै, अबिचल भक्ति लहौंगो ॥४

॥ उपदेश ॥

(१)

जा के प्रिय न राम बैदेही ।
तजिये ताहि कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही ॥१॥
तज्यो पिता प्रह्लाद, बिभीषन बंधु, भरथ महतारी ।
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज बनिता, भये जग मंगलकारी ॥२॥
नाते नेह राम के मनियत, सुहृद सुसेव्य जहाँ लौं ।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं ॥३॥
तुलसी सो सब भाँति परम हित, पूज्य प्रान तें प्यारो ।
जा सों होय सनेह राम पद, एतो मतो हमारो ॥४॥

---

(१) जैसे शीशा की गच में अज्ञानी बाज़ चिड़िया (श्येन) अपने शरीर की छाया देख कर दूसरी चिड़िया का भ्रम कर के अपने मुँह (आनन) में घाव (छति) लगने का डर छोड़ कर भूख बस टूट पड़ता है। (२) कटु कड़ा।
[illegible]

(१)

राम राम राम जीह[1], जौ लौं तू न जपिहै ।
तौ लौं तू कहूँ जाय तिहूँ ताप तपिहै ॥१॥
सुरसरि[2] तीर बिनु नीर दुख पाइहै ।
सुरतरु[3] तर तोहि दुख दारिद सताइहै ॥२॥
जागत बागत[4] सुख सपने न सोइहै ।
जनम जनम जुग जुग जग रोइहै ॥३॥
छूटिबे के जतन बिसेष बाँध्यो जायगो ।
ह्वैहै बिष भोजन जो सुधा[5] सानि खायगो ॥४॥
तुलसी बिलोक तिहूँ काल तो सौं दीन को ।
राम नाम ही गति जैसे जल मीन को ॥५॥

(२)

ऐसी रघुबीर की यह बानि[6] ।
नीच हूँ सों करत नेह सो, प्रीति मन अनुमानि ॥१॥
परम अधम निषाद पामर, कौन ता की कानि ।
लियो सो उर लाय सुत ज्यों, प्रेम को पहिचानि ॥२॥
गीध कौन दयालु जो, बिधि रच्यो हिंसा सानि ।
जनक ज्यों रघुनाथ ता को, दियो जल निज पानि[7] ॥३॥
प्रकृति मलिन कुजाति सबरी, सकल अवगुन खानि ।
खात ता के दिये फल, अति रुचि बखानि बखानि ॥४॥
रजनिचर अरु रिपु बिभीषन सरन आयो जानि ।
भरत ज्यों उठि ताहि भेंटत, देह दसा भुलानि ॥५॥
कौन सौम्य[8] सुसील बानर, जिनहिं सुमिरत हानि ।
किये ते सब सखा पूजे, भवन अपने आनि ॥६॥

(१) जीभ । (२) गंगा । (३) कल्प वृक्ष । (४) चलते । (५) अमृत । (६) सुभाव ।

राम सहज कृपालु कोमल, दीन हित दिन दानि ।
भजहि ऐसे प्रभुहि तुलसी, कुटिल कपट न ठानि ॥७॥

(४)

जागु जागु जीव जड़ जोहै जग जामिनी ।
देह गेह नेह जानि जैसे घन दामिनी ।१॥[१]
सोवत सपने सहै संसृति सन्ताप रे ।
बूड्यो मृग बारि खायो जेवरि को साँप रे[२] ॥२॥
कहै वेद बुध[३] तू तो बूझ मन माहिं रे ।
दोष दुख सपने के जागे ही पै जाहिं रे ।३॥
तुलसी जागे तें जाय ताप तिहु ताय रे ।
राम नाम सुचि[४] रुचि[५] सहज सुभाय रे ॥४॥

(५)

सवैया

अपराध अगाध भये जन तें, अपने उर आनत नाहिन जू ॥
गनिका गज गीध अजामिल के, गनि पातक पुंज सराहिन जू ॥
लिये बारक[६] नाम सुधाम दिये जेहि धाम महा मुनि जाहिं न जू ॥
तुलसी भजु दीन दयालहि रे, रघुनाथ अनाथ हि दाहिन[७] जू ॥

(६)

सवैया

सो जननी सो पिता सोइ भ्रात, सो भामिनि सो सुत सो हित मेरो ॥
सोइ सगा सो सखा सोइ सेवक, सो गुरु सो सुर साहिब चेरो ॥
सो तुलसी प्रिय प्रान समान, कहं लौं बनाय कहौं बहुतेरो ॥
जो तजि देह को गेह को नेह, सनेह सों राम को होय सबेरो ॥

(१) हे जीव जो घोर निद्रा में सोय रहा है जाग कर रात्रि रूप जक्त को देख जहाँ देह और घर का प्रीत बादल म बिजली के समान छिन भंगी है। (२) नींद की दशा मे तू संसार स्वप्न जी कष्ट भोगता है जो मृग जल और रस्सी के साँप की नाईं केवल भ्रम रूप है। (३) पंडित। (४) पवित्र। (५) प्रिय लगै। (६) एक

॥ मिश्रित ॥

ममता तू न गई मेरे मन तें ॥ टेक ॥
पाके केस जन्म के साथी, लाज गई लोकन तें ।
तन थाके कर कम्पन लागे, जोति गई नैनन तें ॥१॥
सरवन बचन न सुनत काहु के, बल गये सब इंद्रिन तें ।
टूटे दसन बचन नहिं आवत, सोभा गई मुखन तें ॥२॥
कफ पित बात कंठ पर बैठे, सुत हि बुलावत कर तें ।
भाइ बन्धु सब परम पियारे, नारि निकारत घर तें ॥३॥
जैसे ससि मंडल बिच स्याही, छुटे न कोटि जतन तें ।
तुलसिदास बलि जाउँ चरन के, लोभ पराये धन तें ॥४॥

दादू दयाल

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो पृष्ठ ७८ संतबानी संग्रह भाग १]

॥ सर्व समरथ ॥

जिनि सत छाड़ै बावरे, पूरिक है पूरा ।
सिरजे की सब चिंत है,[१] देबे कौं सूरा ॥ टेक ॥
गर्भ बास जिन राखिया, पावक थैं न्यारा ।
जुगति जतन करि सींचिया, दे प्राण अधारा ॥१॥
कुंज कहाँ धरि संचरै,[२] तहँ को रखवारा ।
हेम हरत जिन राखिया,[३] सो खसम हमारा ॥२॥
जल थल जीव जिते रहैं, सो सब कौं पूरै ।
सपट सिला मैं देत है, काहे नर झूरै[४] ॥३॥

(१) उसे सारी रचना की चिंता है। (२) अंडे को सेवन—कहते हैं कि कुंज चिड़िया दूर रह कर सुरत से अंडे को सेती है। (३) श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को हिमालय पर्वत पर बर्फ में गलने से बचा लिया था। (४) मालिक दो पत्थरों की संधि में बंद जीव जन्तु की खबर लेता है तो [illegible] क्यों सोच करता है।

जिन यहु भार उठाइया, निरबाहै सोइ ।
दादू छिन न बिसारिये, ता थैं जीवन होइ ॥४॥

॥ नाम और सुमिरन ॥

(१)

नाँउ रे नाँउ रे सकल सिरोमणि नाँउ रे,
मैं बलिहारी जाउँ रे ॥ टेक ॥
दूतर तारै पारि उतारै, नरक निवारै नाँउ रे ॥१॥
तारणहारा भौजल पारा निर्मल सारा नाँउ रे ॥२॥
नूर दिखावै तेज मिलावै, जोति जगावै नाँउ रे ॥३॥
सब सुख दाता अमृत राता दादू माता नाँउ रे ॥४॥

(२)

मनाँ भजि राम नाम लीजै ।
साध संगति सुमिरि सुमिरि, रसना रस पीजै ॥ टेक ॥
साधू जन सुमिरण करि, केते जपि जागे ।
अगम निगम अमर किये, काल कोइ न लागे ॥१॥
नीच ऊँच चिंतन करि, सरणागति लीये ।
भगति मुकति अपणो गति, ऐसैं जन कीये ॥२॥
केते तिरि तीर लागे, बंधन भव छूटे ।
कलिमल बिष जुग जुग के, राम नाम खूटे[१] ॥३॥
भरम करम सब निवारि, जीवन जपि सोई ।
दादू दुख दूर करण, दूजा नहिं कोई ॥४॥

॥ चितावनी ॥

(१)

मन रे राम बिना तन छीजै ।
जब यहु जाइ मिलै माटी मैं, तब कहु कैसैं कीजै ॥ टेक ॥
पारस परसि कंचन करि लीजै, सहज सुरति सुखदाई ।
माया बेलि बिषै फल लागे, ता परि भूलि न भाई ॥१॥

जब लग प्राण प्यंड है नीका, तब लग ताहि जिनि भूलै।
यहु संसार सैंबल[१] के सुख ज्यूं, ता पर तू जिनि फूलै ॥२॥
औसर येह जानि जग जीवन, समझि देखि सचु पावै।
अंग अनेक आन मति भूलै, दादू जिनि डहकावै[२] ॥३॥

(२)

सजनी रजनी घटती जाइ।
पल पल छीजै अवधि दिन आवै, अपनौं लाल मनाइ ॥टेक॥
अति गति नींद कहा सुख सोवै, यहु औसर चलि जाइ।
यहु तन बिछुरैं बहुरि कहँ पावै, पीछैं ही पछिताइ ॥१॥
प्राणपति जागै सुंदरि क्यौं सोवै, उठ आतुर गहि पाँइ।
कोमल बचन करुणा करि आगैं, नख सिख रहु लपटाइ ॥२॥
सखी सुहाग सेज सुख पावै, प्रीतम प्रेम बढ़ाइ।
दादू भाग बड़े पिव पावे, सकल सिरोमणि राइ ॥३॥

(३)

कागा रे करंक परि बोलै।
खाइ माँस अरु लगही[३] डोलै ॥ टेक ॥
जा तन कौं रचि अधिक सँवारा।
सो तन ले माटी मैं डारा ॥१॥
जा तन देखि अधिक नर फूले।
सो तन छाड़ि चल्या रे भूले ॥२॥
जा तन देखि मन मैं गरबाना।
मिलि गया माटी तजि अभिमाना ॥३॥

(१) सेमर एक वृक्ष होता है जिस के बड़े सुन्दर लाल फूल देख कर सुवा मगन होता है पर फल पर चोंच मारने से केवल रुई उसके भीतर से निकलती है।
(२) [illegible] (३) [illegible]

दादू तन की कहा बड़ाई ।
निमख माहिं माटी मिलि जाई ॥४॥

॥ बिरह ॥

(१)

कौण बिधि पाइये रे, मीत हमारा सोइ ॥ टेक ॥
पास पीव परदेस है रे, जब लग प्रगटै नाहिं ।
बिन देखे दुख पाइये, यहु सालै मन माहिं ॥१॥
जब लग नैन न देखिये, परगट मिलै न आइ ।
एक सेज संगहि रहै, यहु दुख सह्या न जाइ ॥२॥
तब लग नेड़े दूरि है, जब लग मिलै न मोहिं ।
नैन निकट नहिं देखिये, संगि रहै क्या होइ ॥३॥
कहा करौं कैसे मिलै रे, तलफै मेरा जीव ।
दादू आतुर बिरहनी, कारण अपने पीव ॥४॥

(२)

अजहूँ न निकसै प्राण कठोर ॥ टेक ॥
दरसन बिना बहुत दिन बीते, सुंदर प्रीतम मोर ॥१॥
चारि पहर चारौं जुग बीते, रैनि गँवाई भोर ॥२॥
अवधि गई अजहूँ नहिं आये, कतहु रहे चित चोर ॥३॥
कबहूँ नैन निरखि नहिं देखे, मारग चितवत तोर ॥४॥
दादू ऐसे आतुर बिरहणि, जैसे चंद चकोर ॥५॥

(३)

कतहूँ रहे हो बिदेस, हरि नहिं आये हो ।
जनम सिरानो जाइ, पिव नहिं पाये हो ॥ टेक ॥
बिपति हमारी जाइ, हरि सौं को कहै हो ।
तुम्ह बिन नाथ अनाथ, बिरहनि क्यों रहै हो ॥१॥

पिव के बिरह बियोग, तन की सुधि नहि हो ।
तलफि तलफि जिव जाइ, मिरतक ह्वै रही हो ॥२॥
दुखित भई हम नारि, कब हरि आवै हो ।
तुम्ह बिन प्राण अधार, जिव दुख पावै हो ॥३॥
प्रगटहु दीनदयाल, बिलम न कीजै हो ।
दादू दुखी बेहाल, दरसन दीजै हो ॥४॥

(४)

आवो राम दया करि मेरे, बार बार बलिहारी तेरे ॥ टेक ॥
बिरहनि आतुर पंथ निहारै, राम राम कहि पीव पुकारै ॥१॥
पंथी बूझै मारग जोवै, नैन नीर जल भरि भरि रोवै ॥२॥
निस दिन तलफै रहै उदास, आतम राम तुम्हारे पास ॥३॥
बप[1] बिसरै तन की सुधि नाहीं, दादू बिरहनि मिरतक माहीं[2] ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

बाला सेज हमारी रे, तू आव हौं वारी रे,
हौं दासी तुम्हारी रे ॥ टेक ॥
तेरा पंथ निहारूं रे, सुन्दर सेज सँवारूं रे,
जियरा तुम पर वारूं रे ॥१॥
तेरा अंगना पेखौं रे, तेरा मुखड़ा देखौं रे,
तब जीवन लेखौं रे ॥२॥
मिलि सुखड़ा दीजै रे, यह लाहड़ा[3] लीजै रे,
तुम देखैं जीजै रे ॥३॥
तेरे प्रेम की माती रे, तेरे रंगड़े राती रे,
दादू वारणे जाती रे ॥४॥

(२)

अरे मेरा अमर उपावणहार रे, खालिक आसिक तेरा ॥टेक

तुम सौं राता तुम सौं माता, तुम सौं लागा रंग रे खालिक ॥१

तुम सौं खेला तुम सौं मेला, तुम सौं प्रेम सनेह रे खालिक ॥२

तुम सौं लेणा तुम सौं देणा, तुमहीं सौं रत होइ रे खालिक ३

खालिक मेरा आसिक तेरा, दादू अनत न जाइ रे खालिक ॥४

(३)

हरि रस माते मगन भये ।

सुमिरि सुमिरि भये मतवाले, जामण मरण सब भूलि गये ॥टेक

निर्मल भगति प्रेम रस पीवैं, आन न दूजा भाव धरैं ।

सहजैं सदा राम रंगि राते, मुकति बैकुंठैं कहा करैं ॥१॥

गाइ गाइ रस लीन भये हैं, कछू न माँगैं संत जनाँ ।

और अनेक देहु दत आगैं, आन न भावै राम बिनाँ ॥२॥

इकटग ध्यान रहैं ल्यौ लागे, छाकि परे हरि रस पीवैं ।

दादू मगन रहैं रसि माते, ऐसैं हरि के जन जीवैं ॥३॥

(४)

तेरे नाँउ की बलि जाऊं, जहाँ रहौं जिस ठाऊं ॥टेक॥

तेरे बैनौं की बलिहारी, तेरे नैनहु ऊपरि वारी ।

तेरी मूरति की बलि कीती, वारि वारि हौं दीती ॥१॥

सोभित नूर तुम्हारा, सुंदर जोति उजारा ।

मीठा प्राण पियारा, तू है पीव हमारा ॥२॥

तेज तुम्हारा कहिये, निर्मल काहे न लहिये ।

दादू बलि बलि तेरे, आव पिया तूं मेरे ॥३॥

॥ विनय ॥

(१)

पार नहिं पाइये रे राम बिना को निरबाहणहार ॥टेक॥
तुम बिन तारण को नहीं, डूभर[1] यहु संसार ।
पैरत थाके केसवा, सूझै वार न पार ॥१॥
बिषम भयानक भौजला, तुम बिन भारी होइ ।
तूँ हरि तारण केसवा दूजा नाहीं कोइ ॥२॥
तुम बिन खेवट को नहीं, अतिर[2] तिर्‌यो नहिं जाइ ।
औघट भेरा[3] डूबिहै, नाहीं आन उपाइ ॥३॥
यहु घट औघट बिषम है, डूबत माहिं सरीर ।
दादू काइर राम बिन, मन नहिं बाँधे धीर ॥४॥

(२)

हमारे तुमही हौ रखपाल ।
तुम बिन और नहीं कोइ मेरे, भौ दुख मेटणहार ॥टेक॥
बैरी पंच निमष नहिं न्यारे, रोकि रहे जम काल ।
हो जगदीस दास दुख पावै, स्वामी करो सँभाल ॥१॥
तुम बिन राम दहैं ये दुंदर, दसौं दिसा सब साल ।
देखत दीन दुखी क्यों कीजे, तुम हौ दीनदयाल ॥२॥
निर्भय नाँव हेत हरि दीजे, दरसन परसन लाल ।
दादू दीन लीन करि लीजे, मेटहु सबै जंजाल ॥३॥

(३)

क्यौं बिसरै मेरा पीव पियारा ।
जीव की जीवन प्राण हमारा ॥ टेक ॥
क्यौंकर जीवै मीन जल बिछुरैं, तुम बिन प्राण सनेही ।
च्यंतामणि जब कर थैं छूटै, तब दुख पावै देही ॥१॥

माता बालक दूध न देवै, सो कैसैं करि पीवै ।
निर्धन का धन अनत भुलाना, सो कैसैं करि जीवै ॥२॥
बरखहु राम सदा सुख अमृत, नीझर निर्मल धारा ।
प्रेम पियाला भरि भरि दीजे, दादू दास तुम्हारा ॥३॥

(४)

तो निबहै जन सेवग तेरा, ऐसैं दया करि साहिब मेरा ॥टेक
ज्यूँ हम तोरैं त्यूँ तूँ जोरै, हम तोरैं पै तू नहि तोरै ॥१॥
हम बिसरैं त्यूँ तूँ न बिसारै, हम बिगरैं पै तूँ न बिगारै ॥२॥
हम भूलैं तूँ आनि मिलावै, हम बिछुरैं तूँ अंगि लगावै ॥३॥
तुम भावै सो हम पै नाही, दादू दरसन देहु गुसाईं ॥४॥

॥ साध ॥

सोई साध सिरोमणी, गोबिंद गुण गावै ।
राम भजै बिषिया तजै, आपा न जनावै ॥ टेक ॥
मिथ्या मुखि बोलै नहीं, पर निंद्या नाहीं ।
औगुण छाडै गुण गहै, मन हरि पद माहीं ॥ १ ॥
निर्बैरी सब आतमा, पर आतम जानै ।
सुखदाई समिता गहै, आपा नहिं आनै ॥ २ ॥
आपा पर अंतर नहीं, निर्मल निज सारा ।
सतबादी साचा कहै, लैलीन बिचारा ॥ ३ ॥
निर्भै भजि न्यारा रहै, काहू लिपत न होई ।
दादू सब संसार मैं, ऐसा जन कोई ॥ ४ ॥

॥ घट मठ ॥

(१)

भाई रे घर ही मैं घर पाया ।
सहजि समाइ रह्या ता माहीं, सतगुरु खोज बताया ।टेक
ता घर काज सबै फिरि आया, आपै आप लखाया ।

भय औ भेद भरम सब भागा, साच सोइ मन लाया।
प्यंड परै जहाँ जिव जावै, ता मैं सहज समाया ॥ २ ॥
निहचल सदा चलै नहिं कबहूँ, देख्या सब मैं सोई।
ताही सूं मेरा मन लागा, और न दूजा कोई ॥ ३ ॥
आदि अन्त सोई घर पाया, इब मन अनत न जाई।
दादू एक रंगै रंग लागा, तामैं रह्या समाई ॥ ४ ॥

(२)

आप आपण मैं खोजौ रे भाई।
वस्तु अगोचर गुरू लखाई ॥ टेक ॥
ज्यूं मही बिलोयैं माखण आवै।
त्यूं मन मथियाँ तैं तत पावै ॥ १ ॥
काठ हुतासन[१] रह्या समाइ।
त्यूं मन माँहि निरंजन राइ ॥ २ ॥
ज्यूं अवनी[२] मैं नीर समाना।
त्यूं मन माँहैं साच सयाना ॥ ३ ॥
ज्यूं दर्पन के नहिं लागै काई।
त्यूं मूरति माँहैं निरखि लखाई ॥ ४ ॥
सहजैं मन मथियाँ तैं तत पाया।
दादू उन तौ आप लगाया ॥ ५ ॥

॥ सेवक ॥

तूं साहिब मैं सेवग तेरा, भावै सिर दे सूली मेरा ॥टेक॥
भावै करवत सिर पर सारि, भावै लेकर गरदन मारि ॥१॥
भावै चहुं दिसि अगिन लगाइ, भावै काल दसौ दिसि खाइ ॥२॥
भावै गिरवर गगन गिराइ, भावै दरिया माँहि बहाइ ॥३॥
भावै कनक कसौटी देह, दादू सेवग कसि कसि लेहु ॥४॥

॥ उपदेश ॥

( )

जियरा मेरे सुमिर सार काम क्रोध मद तजि विकार ॥टेक॥
तूँ जिनि भूले मन गँवार, सिर भार न लीजै मानि हार ॥१॥
सुणि समझायौ बारबार, अजहुँ न चेतै हो हुसियार ॥२॥
करि लैसैं भव तिरिये पार, दादू इब यै यहि बिचार ॥३॥

(२)

डरिये रे डरिये, परमेसुर थैं डरिये रे ।
लेखा लेवे भरि भरि देवै, ता थैं बुरा न करिये रे ॥टेक॥
साचा लीजी साचा दीजी, साचा सौदा कीजी रे ।
साचा राखो झूठा नाखो, विष ना पीजी रे ॥ १ ॥
निर्मल गहिये निर्मल रहिये, निमल कहिये रे ।
निमल लीजी निर्मल दीजी, अनत न बहिये रे ॥ २ ॥
साह पठाया बनिज न आया, जिनि डहकावे रे ।
झूठ न भावे फेरि पठावे, कीया पावै रे ॥ ३ ॥
पथ दुहेला जाइ अकेला, भार न लीजी रे ।
दादू मेला होइ सुहेला, सो कुछ कीजी रे ॥ ४ ॥

॥ मन ॥

(१)

मन चंचल मेरो कह्यौ न मानै, दसौं दिसा दौरावे रे ।
आवत जात बार नहि लागै, बहुत भाँति बौरावे रे ॥टेक॥
बेर बेर बरजत या मन कौं, किंचित सीख न मानै रे ।
ऐसैं निकसि जात या तन थैं, जैसैं जीव न जानै रे ॥१॥
कोटिक जतन करत या मन कौं, निहचल निमिष न होइ रे ।
चंचल चपल चहूँ दिसि भरमै, कहा करे जन कोई रे ॥२॥
सदा सोच रहत घट भीतरि, मन थिर कैसैं कीजै रे ।
सहजैं सहज साध की संगति, दादू हरि भजि लीजै रे ॥३॥

मेरे तुमही राखणहार, दूजा को नहीं ।
ये चंचल चहुँ दिसि जाइ, काल तहीं तहीं ॥ टेक ॥
मैं केते किये उपाइ, निहचल ना रहै ।
जहँ बरजौं तहँ जाइ, मदमातो बहै ॥ १ ॥
जहँ जाणे तहँ जाइ, तुम थै ना डरै ।
ता स्यौं कहा बसाइ, भावै त्यूं करै ॥ २ ॥
सकल पुकारै साध, मैं केता कह्या ।
गुर अंकुस मानै नाहिं, निरभै ह्वै रह्या ॥ ३ ॥
तुम बिन और न कोइ, इस मन को गहै ।
तूं राखै राखणहार, दादू तो रहै ॥ ४ ॥

॥ जगत मिथ्या ॥

मन रे तूं देखै सो नाहीं, है सो अगम अगोचर माहीं ॥टेक
निस अँधियारी कछू न सूझै, ससै सरप दिखावा ।
ऐसैं अंध जगत नहिं जानै, जीव जेवडी[1] खावा ॥१॥
मृग जल देखि तहाँ मन धावै, दिन दिन झूठी आसा ।
जहँ जहँ जाइ तहाँ जल नाहीं, निहचै मरै पियासा ॥२॥
भरम बिलास बहुत बिधि कीन्हा, ज्यौं सुपिनैं सुख पावै ।
जागत झूठ तहाँ कुछ नाहीं, फिरि पीछैं पछितावै ॥३॥
जब लग सूता तब लग देखै, जागत भरम बिलाना ।
दादू अंति इहाँ कुछ नाहीं, है सो सोधि सयाना ॥४॥

॥ करम धरम ॥

मूल सींचि बधै[2] ज्यूं बेला । सो तत तरवर रहै अकेला ॥टेक॥
देवी देखत फिरैं ज्यूं भूले । खाइ हलाहल बिष कौं फूले ।
सुख कौं चाहै पड़ै गल पासी[3] । देखत हीरा हाथ थैं जासी ॥१॥

केइ पूजा रचि ध्यान लगावैं। देवल देखै खबरि न पावैं।
तोरैं पाती जुगति न जानी। इहि भ्रमि रहे भूलि अभिमानी ॥२
तीरथ बरत न पूजै[1] आसा। बनखंडि जाहीं रहैं उदासा।
यूं तप करि करि देह जलावैं। भरमत डालैं जनम गँवावैं ॥३
सतगुर मिलैं न ससा जाई। ये बंधन सब देइ छुडाई।
तब दादू परम गति पावै। सो निज मूरति माँहि लखावै ॥४

॥ कपट भक्ति ॥

हम पाया हम पाया रे भाई।
भेष बनाइ ऐसी मनि आई ॥ टेक ॥
भीतर का यहु भेद न जानै।
कहै सुहागनि क्यूं मन मानै ॥ १ ॥
अंतर पीव सौं परचा नाहीं।
भई सुहागनि लोगन माहीं ॥ २ ॥
साईं सुपिनै कबहु न आवै।
कहिबा ऐसैं महल बुलावै ॥ ३ ॥
इन बातन मोहिं अचिरज आवै।
पटम[2] कियैं पिव कैसैं पावै ॥ ४ ॥
दादू सुहागनि ऐसैं कोई।
आपा मेटि राम रत होई ॥ ५ ॥

॥ निंदक ॥

न्यंदक बाबा बीर हमारा। बिनही कौडे बहै बिचारा[3] ॥टेक
कर्म कोटि के कुसमल काटै। काज सँवारै बिनही साटै[4] ॥१
आपण डूबै और कौं तारै। ऐसा प्रीतम पार उतारै ॥२॥
जुगि जुगि जीवौ न्यंदक मोरा। राम देव तुम करौ निहोरा ३
न्यंदक बपुरा पर उपगारी। दादू न्यंद्या करै हमारी ॥४॥

---

(१) पूरन होय। (२) पाखंड। (३) बेचारा बिना पैसे [कौडे] के काम करता

बाबा मलूकदास

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ९६]

॥ गुरुदेव ॥

हमारा सतगुरु बिरले जाने ।
सुई के नाके सुमेर चलावै, सो यह रूप बखाने ॥ १ ॥
की तो जानै दास कबीरा, की हरिनाकस पूता ।
की तो नामदेव औ नानक, की गोरख अवधूता ॥ २ ॥
हमरे गुरु की अद्‌भुत लीला ना कछु खाय न पीवै ।
ना वह सोवै ना वह जागै, ना वह मरै न जीवै ॥ ३ ॥
बिन तरवर फल फूल लगावै, सो तो वा का चेला ।
छिन में रूप अनेक धरत है, छिन में रहै अकेला ॥ ४ ॥
बिन दीपक उँजियारा देखै, एड़ी समुद्र थहावै ।
चींटी के पग कुंजर बाँधै, जा को गुरू लखावै ॥ ५ ॥
बिन पखन उड़ि जाय अकासे, बिन पखन उड़ि आवै ।
सोई सिष्य गुरू का प्यारा, सूखे नाव चलावै ॥ ६ ॥
बिन पायन सब जग फिरि आवै, सो मेरा गुरु भाई ।
कहै मलूक ता की बलिहारी, जिन यह जुगत बताई ॥ ७ ॥

॥ नाम ॥

नाम तुम्हारा निरमला, निरमोलक हीरा ।
तू साहिब समरत्थ, हम मल मुत्र के कीरा ॥ १ ॥
पाप न राखै देह में, जब सुमिरन करिये ।
एक अच्छर के कहत ही, भौसागर तरिये ॥ २ ॥
अधम उधारन सब कहैं, प्रभु बिरद तुम्हारा ।
सुनि सरनागत आइया, तब पार उतारा ॥ ३ ॥

तुझ सा गरुवा औ धनी, जा में बडई समाई ।
जरत उबारे पाडवा, ताती बाउ न लाई ॥ ४ ॥
कोटिक औगुन जन करै, प्रभु मनहिं न आनै ।
कहत मलूकादास को, अपना करि जानै ॥ ५ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

तेरा मैं दीदार दिवाना ।
घडी घडी तुझे देखा चाहूं, सुन साहिब रहमाना ॥१॥
हुवा अलमस्त खबर नहिं तन की, पीया प्रेम पियाला ।
ठाढ होउं तो गिरि गिरि परता, तेरे रंग मतवाला ॥२॥
खडा रहूं दरबार तुम्हारे, ज्यों घर का बंदाजादा[1] ।
नेकी की कुलाह[2] सिर दीये, गले पैरहन साजा ॥ ३ ॥
तौजी और निमाज न जानूं, ना जानूं धरि रोजा ।
बांग जिकिर[4] तबही से बिसरी, जब से यह दिल खोजा ॥
कहैं मलूक अब कजा[5] न करिहौं, दिलही सौं दिल लाया ।
मक्का हज्ज हिये में देखा, पूरा मुरसिद पाया ॥५॥

(२)

दर्द-दिवाने बावरे, अलमस्त फकीरा ।
एक अकीदा[6] लै रहे, ऐसे मन धीरा ॥ १ ॥
प्रेम पियाला पीवते, बिसरे सब साथी ।
आठ पहर यों झूमते, ज्यों माता हाथी ॥ २ ॥
उनकी नजर न आवते, कोइ राजा रंक ।
बंधन तोडे मोह के, फिरते निहसंक ॥ ३ ॥

---

(१) गुलाम बच्चा । (२) टोपी । (३) मेखला । (४) सुमिरन । (५) चूकी हुई

साहिब मिल साहिब भये, कछु रहि न तमाई[1] ।
कहँ मलूक तिस घर गये जहँ पवन न जाई ॥ ४ ॥

॥ विनय ॥

(१)

अब तेरी सरन आयो राम ॥ १ ॥
जबै सुनिया साध के मुख, पतित पावन नाम ॥ २ ॥
यही जान पुकार कीन्हो, अति सतायो काम ॥ ३ ॥
बिषय सेती भयो आजिज, कह मलूक गुलाम ॥ ४ ॥

(२)

दीन बंधु दीना नाथ, मेरी तन हेरिये ॥ टेक ॥
भाई नाहिं बंधु नाहि, कुटुम परिवार नाहि ।
ऐसा कोई मित्र नाहिं, जाके ढिग जाइये ॥ १ ॥
सोने की सलैया नाहिं, रूपे का रुपैया नाहि ।
कौटी पैसा गाँठि नाहिं, जा से कछु लीजिये ॥ २ ॥
खेती नाहि बारी नाहिं, बनिज ब्यौपार नाहिं ।
ऐसा कोई साहु नाहि, जा सोँ कछु माँगिये ॥ ३ ॥
कहत मलूकदास, छोड दे पराई आस ।
राम धनी पाय के, अब का की सरन जाइये ॥ ४ ॥

(३)

सवैया

दीन दयाल सुने जब तें तब तें, मन मैं कछु ऐसी बसी है ॥१
तेरो कहाय के जाऊ कहाँ, तुम्हरे हित की पट खैंचि कसी है२
तेरोही आसरो एक मलूक, नही प्रभु सोँ कोउ दूजो जसी है३
ए हो मुरार पुकार कहैा अब, मेरी हसी नहिं तेरी हँसी है४

(१) इच्छा, चाह । (२) परका ।

॥ उपदेश ॥

(१)

ना वह रीझै जप तप कीन्हे, ना आतम को जारे ।
ना वह रीझै धोती नेती, ना काया के पखारे ॥१॥
दाया करै धरम मन राखै, घर में रहै उदासी ।
अपना सा दुख सब का जानै, ताहि मिलै अबिनासी ॥२॥
सहै कुसब्द बाद हू त्यागे, छाड़ै गर्ब गुमाना ।
यही रीझ मेरे निरकार की, कहत मलूक दिवाना ॥३॥

(२)

मन तैं इतने भरम गँवावो ।
चलत बिदेस बिप्र जनि पूछो, दिन का दोष न लावो ॥१॥
संझा होय करो तुम भोजन, बिनु दीपक के बारे ।
जौन कहैं असुरन की बिरिया, मूढ़ दई के मारे ॥२॥
आप भले तो सबहि भलो है, बुरा न काहू कहिये ।
जा के मन कछु बसै बुराई, ता सों भागे रहिये ॥३॥
लोक बेद का पैंडा औरहि, इनकी कौन चलावै ।
आतम मारि पषानै पूजैं, हिरदे दया न आवै ॥४॥
रहो भरोसे एक राम के, सूरे का मत लीजै ।
संकट पड़े हरज नहिं मानो, जिय का लोभ न कीजै ॥५॥
किरिया करम अचार भरम है, यही जगत का फंदा ।
माया जाल में बाँधि अँड़ाया[1], क्या जानै नर अंधा ॥६॥
यह संसार बड़ा भौसागर, ता को देखि सकाना[2] ।
सरन गये तोहि अब क्या डर है, कहत मलूक दिवाना ॥७॥

॥ माया ॥

हम से जनि लागै तू माया ।
थोरे से फिर बहुत होयगी, सुनि पैहैं रघुराया ॥१॥

अपने मैं है साहिब हमरा, अजहूँ चेतु दिवानी ।
काहू जन के बस परि जैहौ, भरत मरहुगी पानी ॥२॥
तर ह्वै चितै[1] लाज करु जन की, डारु हाथ की फाँसी ।
जन तैं तेरो जोर न लहिहै, रच्छपाल अबिनासी ॥३॥
कहै मलूका चुप करु ठगनी, औगुन राखु दुराइ ।
जो जन उबरै राम नाम कहि, ता तैं कछु न बसाई ॥४॥

नाभाजी

इन का जीवन समय सत्रहवां शतक था और इन का देहान्त होना सं० १७०० में इन के शिष्य प्रियादास जी ने लिखा है जिन्हों ने अपने गुरु की आज्ञानुसार उन के मुख्य ग्रन्थ भक्तमाल छंदबंद की टीका उनके देहान्त होने के पीछे बनाई, परन्तु मिश्र बंधु बिनोद में सं० १७२० के लगभग इन का मृत्यु काल सिद्ध किया गया है। इन की जाति के बिषय में झगड़ा है प्राय लोग डोम बतलाते हैं। इन के शिष्य प्रियादासजी ने अपनी टीका में इन्हें हनुमान बंशी लिखा है और माड़वारी भाषा में डोम शब्द का प्रयोजन हनुमान है। दूसरे टीकाकार ने ऐसा लिखा है कि वैष्णवों की जाति पाँति वक्तव्य नहीं है। नाभाजी अग्रदास के शिष्य और गुसाईं तुलसीदासजी के बड़े मित्र थे।

॥ शब्द ॥

नाभा नभ खेला कँवल केल रस सैला ॥ टेक ॥
दरपन नैन सैन मन माँजा, लाजा अलख अकेला ॥१॥
पल पर दल दल ऊपर दामिनि, जोत मैं होत उजेला ॥२॥
अड्डा पार सार लख सूरत, सुन्नी सुन्न सुहेला ॥३॥
चढ़ गइ धाय जाय गढ़ ऊपर, सबद सुरत भया मेला ॥४॥
यह सब खेल अलेख अमेला, सिंध नीर नद मेला ॥५॥
जल जलधार सार पद जैसे, नहीं गुरू नहिं चेला ॥६॥
नाभा नैन स्रौन अंदर के, खुल गये निरख निहाला ॥७॥
संत उचिष्ट बार मन झेला, दुर्लभ दीन दुहेला ॥८॥

सुंदरदासजी

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १०६]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

सो गुरुदेव लिपै न छिपै कछु,
सत्व रजो तम ताप निवारी ।
इंद्रिय देह मृषा[१] करि जानत,
सीतलता समता[२] उर धारी ॥
व्यापक ब्रह्म बिचार अखंडित,
द्वैत उपाधि सबै जिन टारी ।
सब्द सुनाय सँदेह मिटावत,
सुंदर वा गुरु की बलिहारी ॥

(२)

गोबिंद के किये जीव, जात हैं रसातल को ।
गुरु उपदेसे सो तो, छूटै जम फंद तें ॥
गोबिंद के किये, जीव बस परे कर्मन के ।
गुरु के निवाजे से, फिरत हैं स्वछंद[३] तें ॥
गोबिंद के किये, जीव बूडत भवसागर में ।
सुंदर कहत गुरु, काढै दुख द्वंद[४] तें ।
और हू कहाँ लौं कछू, मुख तें कहूँ बनाय ।
गुरु की तो महिमा, अधिक है गोबिंद तें ॥

॥ अजपा जाप ॥

स्वासों स्वास राति दिन सोहं सोहं होइ जाप ।
याही माला अरबार दृढ के धरतु है ॥

---

(१) वृथा । (२) सम-दृष्टि । (३) स्वाधीन । (४) झगड़ा ।

देह परे इन्द्री परे अंत करण परें।
एकही अखंड जाप ताप[1] कूँ हरतु है॥
काठ की रुद्राच्छ की रु सूतहू की माला और।
इनके फिराये कछु कारज सरतु है॥
सुंदर कहत ता तैं आतमा चैतन्य रूप।
आप को भजन सो तो आपही करतु है॥

॥ शूर ॥

(१)

पाँव रोपि रहै, रण माहिं रजपूत कोऊ।
हय गज गाजत, जुरत जहाँ दल है॥
बाजत जुझाऊ सहनाई, सिंधु राग पुनि।
सुनतहि कायर की, छूटि जात कल है॥
झलकत बरछी, तिरछी तरवार बहै।
मार मार करत, परत खलभल[2] है॥
ऐसे जुद्ध मैं अडिग्ग, सुंदर सुभट सोई।
घर माहिं सूरमा कहावत सकल है॥

(२)

असन बसन[3] बहु, भूषण सकल अंग।
संपति बिबिधि भाँति, भर्यो सब घर है॥
स्रवण नगारो सुनि, छिनक मैं छाडि जात।
ऐसे नहिं जानै कछु, मेरो वहाँ मर है॥
मन मैं उछाह, रण माहिं टूक टूक होइ।
निर्भय निसंक वा के, रंचहू न डर है॥
सुंदर कहत कोउ, देह को ममत्व नाहिं।
सूरमा को देखियत, सीस बिनु धर है॥

---

(१) तपन, दुख। (२) खलबल, घबराहट। (३) भोजन और वस्त्र।

॥ पतिव्रता ॥

(१)

जल को सनेही मीन, बिछुरत तजै प्रान ।
  मणि बिनु अहि[1] जैसे, जीवत न लहिये ॥
स्वाँति बुंद को सनेही, प्रगट जगत माहिं ।
  एक सीप दूसरो सु, चातक हू कहिये ॥
रवि को सनेही पुनि कमल सरोवर में ।
  ससि को सनेही हू, चकोर जैसे रहिये ॥
तैसेही सुंदर एक, प्रभु सूँ सनेह जोरि ।
  और कछु देखि, काहू ओर नहिं बहिये ॥

(२)

एक सही सब के उर अंतर, ता प्रभु कूँ कहु काहि न गावै ।
संकट माहि सहाय करै पुनि, सो अपनो पति क्यूँ बिसरावै ॥
चार पदारथ और जहाँ लगि, आठहु सिद्धि नवौ निधि पावै ।
सुंदर छार परौ तिन के मुख, जो हरि कूँ तजि आन कूँ ध्यावै ॥

॥ बिरह उराहना[2] ॥

(१)

पीव को अंदेसो भारी, तो सूँ कहूँ सुन प्यारी ।
  यारी[3] तोरि गये सो तौ, अजहूँ न आये हैं ॥
मेरे तो जीवन प्राण, निसि दिन उहै ध्यान ।
  मुख सू न कहूँ आन, नैन उर लाये हैं ॥
जब तें गये बिछोहि, कल न परत मोहिं ।
  ता तें हू पूछत तोहि, किन बिरमाये[4] हैं ॥
सुंदर बिरहिनी को, सोच सखी बार बार ।
  हम कूँ बिसार अब कौन के कहाये हैं ॥

---

(१) साँप । (२) उलहना । (३) स्नेह । (४) रिझाकर रोक लेना ।

॥ जीवा मा वा सुरत ॥

स्रोत्र सुनैं दृग देखत हैं, रसना रस घ्राण सुगध पियारो ॥
कोमलता त्वक[१] जानत है पुनि, बोलत है मुख सबद उचारो ॥
पाणि[२] गहै पद गौन करै, मलमूत्र तजै उभयो[३] अध द्वारो ॥
जासु प्रकास प्रकासत हैं सब, सुदर सोई रहै घट न्यारो ॥

॥ स्वरूप बिस्मरण ॥

(१)

आपन देखत है अपनो मुख, दर्पण काट[४] लग्यो अति थूला ॥
ज्यूँ दृग देखत तैं रहि जात, भयो जबही पुतरी परि फूला ॥
छाय अज्ञान रह्यो अभि अतर, जानि सकै नहिं आतम मूला ॥
सुदर यूँ उपजे मन के मल, ज्ञान बिना निज रूपहि भूला ॥

(२)

इद्रिन कूँ प्रेरि पुनि, इद्रिन के पीछे पर्यो ।
आपनी अबिद्या करि, आप तनु गह्यो है ॥
जोइ जोइ देह कूँ, सकट आइ परै कछु ।
सोइ सोइ मानै आप, या तैं दुख सह्यो है ॥
भ्रमत भ्रमत कहूँ, भ्रम को न आवै अत ।
चिरकाल बीत्यो पै, स्वरूप कूँ न लह्यो है ॥
सुदर कहत देखौ, भ्रम की प्रबलताई ।
भूतन मैं भूत मिलि, भूत होइ रह्यो है ॥

॥ भ्रम ॥

जैसे स्वान काच के, सदन[५] मध्य देखि और ।
भूँकि भूँकि मरत, करत अभिमान जू ॥
जैसे गज फटिक, सिला सूं लरि तोरै दत ।
जैसे सिह कूप माहिं, उझक भुलान जू ॥

---

(१) त्वचा । (२) हाथ । (३) दोनों । ((४) मोरचा । (५) घर ।

जैसे कोउ फेरी खाल, फिरत सु देखै जग ।
तैसेही सुंदर सब, तेरोही अज्ञान जू ॥
अपनो ही भ्रम सो तो, दूसरे दिखाई देत ।
आप कूँ बिचारे कोऊ, देखिये न आन जू ॥

॥ मत ॥

(१)

पलही मैं मरि जाय, पलही मैं जीवतु है,
पलही मैं पर हाथ, देखत बिकानो है ।
पलही मैं फिरै, नवखंड हू ब्रह्मांड सब
देख्यो अनदेख्यो सो तो, या तें नहिं छानो[1] है ॥
जातो नहिं जानियत, आवतो न दीसै कछु,
ऐसोसी बलाइ अब, ता सूं परयो पानो[2] है ।
सुंदर कहत या कौ, गति हू न लखि परै,
मन की प्रतीत कोऊ, करै सो दिवानो है ॥

(२)

घेरिये तो घेरे हू, न आवत है मेरो पूत,
जोई परबोधिये, सो कान न धरतु है ।
नीति न अनीति देखै, सुभ न असुभ पेखै,
पल ही मैं होती, अनहोती हू करतु है ॥
गुरु की न साधु की, न लोक वेदहू की सक,
काहू की न मानैं, न तो काहू तें डरतु है ।
सुंदर कहत ताहि, धीजिये[3] सु कौन भाँति,
मन को सुभाव, कछु कह्यो न परतु है ॥

(३)

तो सों न कपूत कोऊ, कितहू न देखियत ।
तो सौं न सपूत कोऊ, देखियत और है ॥

तूही आप भूलै महा, नीचहू तैं नीच होइ ।
तूही आप जानै तो, सकल सिर मौर है ॥
तूही आप भ्रमै तब, जगत भ्रमत देखै ।
तेरे स्थिर भये सब, ठौर ही को ठौर है ॥
तूही जीवरूप तूही, ब्रह्म है अकासवत ।
सुंदर कहत मन, तेरी सब दौर है ॥

॥ बिचार ॥

( )

एकहि कूप तैं नीरहि सींचत, ईख अफीमहि अंब अनारा ॥
होत उहै जल स्वाद अनेकनि, मिष्ट कटू क[1]खटा अरु खारा ॥
त्यूँही उपाधि सँजोग तैं आतम, दीसत आहि मिल्यो सबिकारा ॥
काढि लिये सु बिबेक बिचार सुँ, सुंदर सुद्ध सरूपहि न्यारा ॥

(२)

देह ओर देखिये तौ, देह पंचभूतन को ।
ब्रह्मा अरु कीट लग, देहही प्रधान है ॥
प्राण ओर देखिये तौ, प्राण सबही के एक ।
छुधा पुनि तृषा दोऊ, ब्यापत समान है ॥
मन ओर देखिये तौ, मन को सुभाव एक ।
संकल्प बिकल्प करै, सदाही अज्ञान है ॥
आतम बिचार किये, आतमाही दीसै एक ।
सुंदर कहत कोऊ, दूसरो न आन है ॥

॥ बचन बिबेक ॥

(१)

और तौ बचन ऐसे, बोलत हैं पसु जैसे ।
तिन के तौ बोलिबे मैं, ढंगहूँ न एक है ॥

---

(१) कसेला ।

कोऊ रात दिवस, बकतही रहत ऐसे ।
जैसो बिधि कूप मैं, बकत मानो भेक[1] है ॥
बिबिधि प्रकार करि, बोलत जगत सब ।
घट घट प्रतिमुख, बचन अनेक है ॥
सुंदर कहत ता तैं, बचन बिचारि लेहु ।
बचन तो वहै जा मैं, पाइये बिबेक है ॥

(२)

एकनि के बचन सुनत, अति सुख होइ ।
फूल से झरत हैं, अधिक मनभावने ॥
एकनि के बचन तो, असि[2] मानो बरसत ।
स्रवण के सुनत, लगत अलखावने ॥
एकनि के बचन, कटुक कहु बिष रूप ।
करत मरम छेद, दुक्ख उपजावने ॥
सुंदर कहत घट घट मैं बचन भेद ।
उत्तम मध्यम अरु, अधम सुहावने ॥

(३)

बोलिये तो तब जब, बोलिबे की सुधि होइ ।
न तो मुख मौन गहि, चुप होइ रहिये ॥
जोरिये तो तब जब, जोरिबे की जानि परै ।
तुक छंद अरथ, अनूप जा मैं लहिये ॥
गाइये तो तब जब, गाइबे को कंठ होइ ।
स्रवण के सुनतही, मन जाइ गहिये ॥
तुक भंग छंद भंग, अरथ मिलै न कछु ।
सुंदर कहत ऐसो, बाणी नहीं कहिये ॥

॥ विश्वास ॥

(१)

धीरज धारि बिचार निरंतर, तोहि रच्यो सोइ आपुहि ऐहै॥
जेतिक भूख लगी घट प्राणहि, तेतिक तू अनयासहि पैहै॥
जो मन मैं तृस्ना करि धावत, तौ तिहुं लोक न खात अघैहै॥
सुंदर तू मत सोच करै कछु, चोंच दई जिन चूनहु दैहै॥

(२)

जगत मैं आइ के, बिसार्‍यो है जगतपति।
जगत कियो है सोई, जगत भरतु है॥
तेरे निसि दिन चिंता, औरहि परी है आइ।
उद्यम अनेक, भाँति भाँति के करतु है॥
इत उत जाय के, कमाई करि लाऊँ कछु।
नेक न अज्ञानी नर, धीरज धरतु है॥
सुंदर कहत एक, प्रभु के बिस्वास बिनु।
बादहि कूँ वृथा सठ, पचि के मरतु है॥

॥ ज्ञानी ॥

(१)

तमोगुण बुद्धि सो तौ, तवा के समान जैसे।
ता के मध्य सूरज की, रचहू न जोत है॥
रजोगुण बुद्धि जैसे, आरसी की औंधी ओर।
ता के मध्य सूरज की, कछुक 'उद्योत'[1] है॥
सत्त्वगुण बुद्धि जैसे, आरसी की सूधी ओर।
ता के मध्य प्रतिबिंब, सूरज को पोत[2] है॥
त्रिगुण अतीत[3] जैसे, प्रतिबिंब मिटि जात।
सुंदर कहत एक, सूरजही होत है॥

---

(१) चमक। (२) गया। (३) तीनों गुणों से रहित।

(२)

बिधि न निषेध कछु भेद न अभेद पुनि ।
क्रिया सो करत दीसै, यूँही निलमति है ॥
काहू कूँ निकट राखै, काहू कू तौ दूर भाखै ।
काहू सूँ नेरे न दूर, ऐसी जा को मति है ॥
रागहू न द्वेष कोऊ, सोक न उछाह दोऊ ।
ऐसी विधि रहै कहू, रति न बिरति[1] है ॥
बाहिर ब्योहार ठानै, मन मैं सुपन जानै ।
सुंदर ज्ञानी की कछु, अद्भुत गति है ॥

(३)

ज्ञानी कर्म करै नाना बिधि, अहंकार या तन को खोवै ॥
कर्मन को फल कछू न जोवै, अंत करण बासना धोवै ॥
ज्यूँ कोऊ खेती कूँ जोतत, लेकरि बीज भूमि के बोवै ॥
सुंदर कहै सुनो दृष्टांतहि, नाँगि[2] नहाई कहा निचोवै ॥

॥ सांख्य ज्ञान ॥

(१)

छीर नीर मिले दोऊ, एकठेही होइ रहे ।
नीर जैसे छांडि हंस, छीर कूँ गहतु है ॥
कंचन मैं और धातु, मिलि करि बानि पर्यो ।
सुद्ध करि कंचन, सुनार ज्यू लहतु है ॥
पावकहू दारु[3] मध्य, दारुहू सौं होइ रह्यो ।
मथि करि काढै वह, दारु कूँ दहतु है ॥
तैसेही सुंदर मिल्यो, आतमा अनातमा जु ।
भिन्न भिन्न करै सो तौ, सांख्यही कहतु है ॥

---

(१) न कहीं आशक्त और न विरक्त । (२) नगी । (३) काठ

(२)

देह के संजोगही तैं, सीत लगै घाम लगै ।
देह के संजोगही तैं, छुधा तृषा पौन कूँ ॥
देह के संजोगही तैं, कटुक[1] मधुर स्वाद ।
देह के संजोग कहै, खाटो खारो लौन कूँ ॥
देह के संजोग कहै, मुख तैं अनेक बात ।
देह के संजोगही, पकरि रहै मौन कूँ ॥
सुंदर देह के संजोग, दुख मानै सुख मानै ।
देह के संजोग गये, दुख सुख कौन कूँ ॥

॥ निःसंशय ज्ञानी ॥

भावै देह छूटि जाहु, कासी माँहि गंगा तट ।
भावै देह छूटि जाहु, छेत्र मगहर में ॥
भावै देह छूटि जाहु, विप्र के सदन[2] मध्य ।
भावै देह छूटि जाहु, स्वपच[3] के घर में ॥
भावै देह छूटै देस, आरज अनारज[4] मैं ।
भावै देह छूटि जाहु, बन में नगर में ॥
सुंदर ज्ञानी के कछु, संसय रहत नाँहि ।
सुरग नरक सब, भागि गयो भरमें ॥

॥ प्रेम ज्ञानी ॥

द्वंद बिना बिचरै बसुधा पर, जा घट आतम ज्ञान अपारो ॥
काम न क्रोध न लोभ न मोह, न राग न द्वेष न म्हारु न थारो[5] ॥
जोग न भोग न त्याग न संग्रह, देह दसा न ढंक्यो न उघारो ॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँव को पैंडोहि न्यारो ॥

---

(१) कडुवा। (२) घर। (३) डोम। (४) पवित्र चाहे अपवित्र देश में। (५) मेरा और तेरा।

॥ वाचक ज्ञान ॥

(१)

देह सूँ ममत्व पुनि, गेह सूँ ममत्व ।
सुत दारा[1] सूँ ममत्व, मन माया मैं रहतु है ॥
थिरता न लहै जैसे, कंदुक[2] चौगान[3] माहिं ।
कर्मनि के बस मार्‍यो, धका कूँ बहतु है ॥
अंत करण सदा, जगत सूँ रचि रह्यो ।
मुख सूँ बनाय बात, ब्रह्म की कहतु है ॥
सुंदर अधिक मोहिं, याहि तैं अचंभो आहि ।
भूमि पर पर्‍यो कोऊ, चंद कूँ गहतु है ॥

(२)

ज्ञानी की सी बात कहै, मन तौ मलिन रहै ।
वासना अनेक भरि, नेक न निवारी है ॥
जैसे कोऊ आभूषण, अधिक बनाइ राखै ।
कलई ऊपर करि, भीतर भंगारी है ॥
ज्यूँही मन आवै त्यूँही, खेलत निसंक होइ ।
ज्ञान सुनि सीखि लियो, ग्रंथ[4] न बिचारी है ॥
सुंदर कहत वा के, अटक न कोऊ आहि ।
जोई वा सूँ मिलै जाइ, ताही कूँ बिगारी है ॥

॥ आत्म अनुभव ॥

(१)

है दिल मैं दिलदार सही, अँखियाँ उलटी करि ताहि चितैये॥
आब[5] मैं खाक मैं बाद[6] मैं आतस[7], जान मैं सुंदर जानि जनैये॥
नूर[8] मैं नूर है तेज मैं तेजहि, ज्योति मैं ज्योति मिले मिलि जैये॥
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहते हि लजैये॥

(१) स्त्री। (२) गेंद। (३) गेंद का खेल। (४) जड़ चेतन की गाँठ।
(५) पानी। (६) हवा। (७) आग। (८) प्रकाश।

(१)

न्याय सास्त्र कहत है, प्रगट ईसुरवाद ।
मीमांसाहि सास्त्र माँहि, कर्मवाद कह्यो है ॥
वैसेषिक सास्त्र पुनि, कालवादी है प्रसिद्ध ।
पातंजलि सास्त्र माँहि, योगवाद लह्यो है ॥
सांख्य सास्त्र माँहि पुनि, प्रकृति पुरुष वाद ।
वेदांत जु सास्त्र तिन, ब्रह्मवाद गह्यो है ॥
सुंदर कहत षटसास्त्र, माँहि भयो वाद ।
जा के अनुभव ज्ञान, वाद मैं न बह्यो है ॥

(२)

काहू कूँ पूछत रंक धन कैसे पाइयत ।
कान देके सुनत, स्रवण सोई जानिये ॥
उन कह्यो धन हम, देख्यो है फलानी ठौर ।
मनन करत भयो, कब घर आनिये ॥
फेरि जब कह्यो धन, गड्यो तेरे घर माँहि
खोदन लाग्यो है तब, निदिध्यास ठानिये ॥
धन निकस्यो है जब, दारिद गयो है तब ।
सुंदर साक्षातकार, नृपति बखानिये ॥

॥ साध के लक्षण ॥

धूलि जैसो धन जा के, सूलि सो संसार सुख ।
भूलि जैसो भाग देखै, अंत कैसी यारी है ॥
पाप जैसी प्रभुताई, स्राप जैसो सनमान ।
बड़ाई बिच्छुन जैसी, नागिनी सी नारी है ॥
अग्नि जैसो इंद्र लोक, बिघ्न जैसो बिधि लोक ।
कीरति कलंक जैसी, सिद्धि सो खगारी है ॥

बासना, न कोइ वा की, ऐसी मति सदा जा की।
सुदर कहत ताहि, बदना[२] हमारो है ॥

॥ सतसग ॥

(१)

प्रीति प्रचड लगै परब्रह्महि, और सबै कछु लागत फीको ॥
सुद्ध हृदय मन होइ सु निर्मल, द्वैत प्रभाव मिटै सब जी को ॥
गोष्टि रु ज्ञान अनत चलै जह, सुदर जैसो प्रबाह नदी को ॥
ताहितैंजानिकरौनिसिबासर, साधुकोसगसदाअतिनीको॥

(२)

जो कोइ जाइ मिलै उन सूँ नर, होत पबित्र लगै हरि रगा।
दोष कलक सबै मिटि जाइसु, नीचहु जाइ जु होत उतगा॥
ज्यूँ जल औरमलीन महा अति,गग मिल्यो हुइ जातहि गगा॥
सुदर सुद्ध करै ततकाल जु, है जग माहिं बडो सतसगा ॥

॥ दुष्ट ॥

(१)

अपने न दोष देखे, पर के औगुण पेखे,
दुष्ट को सुभाव, उठि निदाही करतु है ।
जैसे कोई महल, सँवारि राख्यो नीके करि,
कीरी[३] तहाँ जाय, छिद्र ढूँढत फिरतु है ॥
भोरही तें साँझ लग, साँझही तें भोर लग,
सुदर कहत दिन, ऐसेही भरतु है ।
पाँव के तरे की, नही सूझे आग मूरख कूँ,
और सूँ कहत तेरे, सिर पै बरतु है ॥

(२)

आपनु काज सँवारन के हित, और कु काज बिगारत जाई।
आपनु कारज होउ न होउ, बुरो करि और कु डारत भाई ॥

---

(१) चाह। (२) प्रणाम। (३) चींटी।

आपहु खोवत औरहु खोवत, खोइ दुनौं घर देत बहाइ ।
सुंदर देखत ही बनि आवत, दुष्ट करै नहिं कौन बुराई ॥

( )

सर्प डसै सु नहीं कछु तालुक, बीछू लगै सु भले करि मानौ ।
सिंहहु खाय तु नाहिं कछू डर, जो गज मारत तौ नहिं हानौ ॥
आगि जरौ जल बूडि मरौ, गिरि जाइ गिरौ कछु भै मत आनौ ॥
सुंदर और भले सबही यह, दुर्जन संग भलो जिनि जानौ ॥

॥ तृष्णा ॥

(१)

जो दस बीस पचास भये सत[1],
होइ हजार तु लाख मगैगी ।
कोटि अरब्ब खरब्ब असंख्य,
पृथ्वीपति[2] होन की चाह जगैगी ॥
स्वर्ग पताल को राज करौं,
तृष्ना अधिकी अति आग लगैगी ।
सुंदर एक संतोष बिना सठ,
तेरी तो भूख कधी न भगैगी ॥

(२)

किधौं पेट चूल्हो कीधौं, भाठि किधौं भाड आहि ।
जोइ कछु झोंकिये, सु सब जरि जातु है ॥
किधौं पेट थल किधौं, वापि[3] किधौं सागर है ।
जेतो जल परै तेतो, सकल समातु है ॥
किधौं पेट दैत किधौं, भूत प्रेत राच्छस है ।
खाउँ खाउ करै कछु, नेक न अघातु है ॥

सुंदर कहत प्रभु, कौन पाप लायो पेट ।
जबही जनम भयो, तबही को खातु है ॥

॥ कामिनी ॥

(१)

कामिनी को तनु मानु कहिये सघन बन,
वहाँ कोऊ जाय सो तौ भूलेही परतु है ।
कुंजर है गति कटि केहरी को भय जा में,
बेनी काली नागिनीऊ फन कूं धरतु है ॥
कुच हैं पहार जहाँ काम चोर रहै तहाँ,
साधि के कटाच्छ बान प्रान कूँ हरतु है ।
सुंदर कहत एक और डर जा में अति,
राच्छसी बदन खाँउ खाँउ ही करतु है ॥

(२)

रसिक प्रिया रस मंजरी, और सिंगारहि जान ।
चतुराई करि बहुत बिधि, बिषय बनाई आन ॥
बिषय बनाई आन, लगत बिषयिन[1] कूं प्यारी ।
जागे मदन[2] प्रचंड, सराहै नखसिख नारी ॥
ज्यूँ रोगी मिष्टान खाइ, रोगहि बिस्तारै ॥
सुंदर ये गति होइ, रसिक जो रस प्रिया धारै ॥

॥ करम धरम ॥

(१)

मेघ सहै सीत सहै, सीस पर घाम सहै ।
कठिन तपस्या करि, कंद मूल खात है ॥
जोग करै जज्ञ करै, तीरथ रु ब्रत करै ।
पुन्य नाना बिधि करै, मन मैं सुहात है ॥

और देवी देवता, उपासना अनेक करै।
आँखन की हौस कैसे, आक डोंडे[1] जात है।
सुंदर कहत एक, रवि के प्रकास बिनु।
जँगना[2] की जोति, कहा रजनी[3] बिलात है॥

(२)

गेह तज्यो पुनि नेह तज्यो, पुनि खेह लगाइ के देह सँवारी॥
मेघ सहै सिर सीत सहै तन, धूप समय जु पचागिनि बारी॥
भूख सहै रहि रूख तरे, पर सुंदरदास सहै दुख भारी॥
डासन[4] छाडि के कासन ऊपर, आसनमारिपै आस न मारी॥

॥ चितावनी ॥

( )

तू कछु और विचारत है नर,
तेरो विचार धर्योहि रहैगो।
कोटि उपाय करै धन के हित,
भाग लिख्यो तितनोहि लहैगो॥
भोर कि साँझ घरी पल माँझ सु,
काल अचानक आइ गहैगो।
राम भज्यो न कियो कछु सुकिरत,
सुंदर यूँ पछताइ रहैगो॥

(२)

मातु पिता युवती[5] सुत बांधव,
लागत है सब कूं अति प्यारो।
लोक कुटुंब खरो हित राखत,
होइ नहीं हम तैं कहुँ न्यारो॥

---

(१) मदार का फल या डोंडी। (२) जुगनू। (३) रात। (४) बिछौना।

देह सनेह तहाँ लग जानहु,
बोलत है मुख सबद उचारो।
सुंदर चेतन सक्ति गई जब,
बेगि कहै घरबार निकारो॥

॥ उपदेश ॥

(१)

कार उहै अबिकार[1] रहै नित, सार[2] उहै जु असारहिं नाखै[3]॥
प्रीति उहै जु प्रतीति धरै उर, नीति उहै जु अनीतिन भाखै॥
तंत[4] उहै लगि अंत न टूटत, संत उहै अपनो सत राखै॥
नाद[5] उहै सुनि बाद तजै सब, स्वाद उहै रस सुंदर चाखै॥

(२)

सोवत सोवत सोइ गयो सठ, रोवत रोवत कै बेर रोयो॥
गोवत[7] गोवत गोइ धरयो धन, खोवत खोवत तैं सब खोयो॥
जोवत[8] जोवत बीति गये दिन, बोवत बोवत लै बिष बोयो॥
सुंदर सुंदर राम भज्यो नहिं, ढोवत ढोवत बोझहि ढोयो॥

॥ मिश्रित ॥

(१)

जा सरीर माहिं तू अनेक सुख मानि रह्यो,
ताहि तू बिचार या मैं कौन बात भली है।
मेद मज्जा मांस रग रग मैं रकत भरयो,
पेटहू पिटारी सी मैं ठौर ठौर मली है॥
हाडन सूँ भर्यो मुख हाडन के नैन नाक,
हाथ पाँउ सोऊ सब हाडन की नली है।
सुंदर कहत याहि देखि जनि भूलै कोइ,
भीतर भँगार भरी ऊपर तौ कली है॥

( )

प्रीति सी न पाती कोऊ प्रेम से न फूल और ।
 चित्त सोँ न चंदन सनेह सोँ न सेहरा ॥
हृदय सोँ न आसन सहज सोँ न सिंहासन ।
 भाव सी न सेज और सून्य सोँ न गेहरा ॥
सील सोँ न स्नान अरु ध्यान सोँ न धूप और ।
 ज्ञान सोँ न दीपक अज्ञान तम केहरा ॥
मन सी न माला कोऊ सोहं सो न जाप और ।
 आतम सोँ देव नाहिं देह सोँ न देहरा ॥

धरनी दासजी

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ११२]

॥ चितावनी ॥

पानी से पैदा कियो सुनु रे मन बौरे,
 ऐसा खसम खुदाय कहाई रे
दाह[1] भयो दस मास को सुनु रे मन बौरे,
 तर सिर ऊपर पाँई रे ॥ १ ॥
आँच लगी जब आग की सुनु रे मन बौरे,
 आजिज ह्वै अकुलाई रे ।
कौल[2] कियो मुख आपने सुनु रे मन बौरे,
 नाहक अंक लिखाई रे ॥ २ ॥
अब की करिहौं बंदगी सुनु रे मन बौरे,
 जो पइहौं मुकलाई[3] रे ।

---

(१) गर्भ की जलन । ( ) प्रतिज्ञा । (३) मुकलना = भेजना गर्भ में जब बालक बहुत तकलीफ पाता है तो मालिक से प्रार्थना करता है कि अब का कष्ट

जग आये जंगल परे सुनु रे मन बौरे,
भरम रहे अरुझाई रे ॥ ३ ॥
पर की पीर न जानिया सुनु रे मन बौरे,
नाहक छुरी चलाई रे ।
बाँधि जंजीरे जाइहौ सुनु रे मन बौरे,
बहुरि ऐसही जाई रे ॥ ४ ॥
सतगुरु के उपदेस ले सुनु रे मन बौरे,
दोजख दरद मिटाई रे ।
मानुष देह दुरलभ अहै सुनु रे मन बौरे
धरनी कह समुझाई रे ॥ ५ ॥

॥ बिरह ॥

अजहुँ मिलो मेरे प्रान पियारे ।
दीनदयाल कृपाल कृपानिधि,
करहु छिमा अपराध हमारे ॥ १ ॥
कल न परत अति बिकल सकल तन,
नैन सकल जनु[1] बहत पनारे ।
माँस पचो अरु रक्त रहित भे
हाड़ दिनहु दिन होत उघारे ॥ २ ॥
नासा नैन स्रवन रसना रस,
इन्द्री स्वाद जुआ जनु हारे ।
दिवस दसो दिसि पंथ निहारत,
राति बिहात[2] गनत जस तारे ॥ ३ ॥
जो दुख सहत कहत न बनत मुख,
अंतरगत के हौ जाननहारे ।

धरनी जिव झिलमलित दीप ज्यों,
होत अधार करो उजियारे ॥ ४ ॥

॥ प्रेम ॥

( )

इक पिय मोरे मन मान्यो, पतिब्रत ठानों हो ।
अवरो जो इन्द्र समान, तौ त्रिन करि जानों हो ॥१॥
जहँ प्रभु बैसि सिंहासन, आसन डासब हो ।
तहवाँ बेनियाँ डोलइबों, बड सुख पइबों हो ॥२॥
जहँ प्रभु करहिं लवासन[1], पउढ़हि आसन हो ।
कर तें पग सुहरैबों, हृदय सुख पइबों हो ॥३॥
धरनी प्रभु चरनामृत, नितहि अचइबों हो ।
सन्मुख रहिबों मैं ठाढ़ि, अतै नहिं जइबों हो ॥४॥

(२)

पिया मोर बसैं गउरगढ़[2], मैं बसौं प्राग[3] हो ।
सहजहि लागु सनेह, उपजु अनुराग हो ॥१॥
असन बसन तन भूषन, भवन न भावे हो ।
पल पल समुझि सुरति, मन गहबरि[4] आवै हो ॥२॥
पथिकन मिलहि सजन जन, जिनहिं जनावौं हो ।
बिहबल बिकल बिलखि चित, चहुँ दिसि धावौं हो ॥३॥
होय अस मोहिं ले जाय, कि ताहि ले आवै हो ।
तेकरि होइबों लौंडिया, जे रहिया बतावै हो ॥४॥
तबहिं त्रिया पत[5] जाय, दोसर जब चाहै हो ।
एक पुरुष समरथ, धन बहुत न चाहै हो ॥५॥

---

(१) भोजन । (२) स्वेत या दयाल देश । (३) माया देश । (४) पछताना,

धरनी गति नहि आनि, करहु जस जानहु हो ।
मिलहु प्रगट पट[1] खोलि, भरम जनि मानहु हो ॥६॥

(८)

हरि जन हरि के हाथ बिकाने ।
भावै कहो जग धृग जीवन है, भावे कहो बौराने ॥१॥
जाति गँवाय अजाति कहाये, साधु संगति ठहराने ।
मेटो दुख दारिद्र परानो[2], जूठन खाय अघाने ॥२॥
पाँच जने परबल परपंची, उलटि परे बंदिखाने ।
छूटी मजूरी भये हजूरी, साहिब के मन माने ॥३॥
निरममता निरबैर सभन तें, निरसंका निरबाने ।
धरनी काम राम अपने तें, चरन कमल लपटाने ॥४॥

॥ बिनय ॥

(१)

प्रभुजी अब जिनि मोहि बिसारो ।
असरन सरन अधम-जन तारन, जुग जुग बिरद निहारो ॥१॥
जहँ जहँ जनम करम बसि पायो, तह अरुझे रस खारो ।
पाँचहु के परपंच भुलानो, धरेउ न ध्यान अधारो ॥२॥
अध गर्भ दस मास निरंतर, नखसिख सुरति सँवारो ।
मज्जा[3] मुत्र अग्नि मल कृम जह, सहजै तहँ प्रतिपारो ॥३॥
दीजै दरस दयाल दया करि, गुन ऐगुन न बिचारो ।
धरनी भजि[4] आयो सरनागति, तजि लज्जा कुल गारो[5] ॥४॥

(२)

तुहि अवलंब हमारे हो ।
भावै पंगु नाँगो करो, भावै तुरय[1] सवारे हो ॥१॥

---

(१) घूँघट । (२) भागा । (३) मज्जा = हड्डी का गूदा या सड़ा पछा । (४) भाग

जनम अनेकन बादि गे, निजु नाम बिसारे हो ।
अब सरनागत रावरी, जन करन पुकारे हो ॥२॥
भवसागर बेरा[1] परो, जल माँझ मँझारे हे ।
सतत[2] दीनदयाल हौ, करि पार निकारे हो ॥३॥
धरनी मन बच कर्मना, तन मन धन वारे हो ।
अपनो बिरद निबाहिये, नहि बनत बिचारे हो ॥४॥

(२)

मो सोँ प्रभु नाहि दुखित, तुम सोँ सुखदाई ॥ टेक ॥
दीनबन्धु बान तेरो, आइ करु सहाई ।
मो सोँ नहिं दीन और, निरखो जग माँइ ॥१॥
पतित पावन निगम कहत, रहत हौ कित गोई[3] ।
मो सोँ नहिं पतित और, देखो जग टोई ॥२॥
अधम के उधारन तुम, चारो जुग ओई ।
मो तें अब अधम आहि, कवन धौं बडोई ॥३॥
धरनी मन मनिया, इक ताग मैं परोई ।
आपन करि जानि लेहु, कर्म फंद छोई[4] ॥ ४ ॥

॥ उपदेश ॥

कबित्त—जीव की दया जेहि जीव ब्यापै नहीं,
भूखे न अहार प्यासे न पानी ।
साधु से संग नहिं सबद से रंग नहिं,
बोलि जानै न मुख मधुर बानी ॥
एक जगदीस को सीस अरपै नहीं,
पाँच पच्चीस बहु बात ठानी ।
राम को नाम निज धाम बिस्राम नहि,
धरनी कह धरनि मोँ धृग सो प्रानी[5] ॥

जगजीवन साहिब

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ११७]

॥ चितावनी ॥

(१)

अरे मन देहु तजि मतवारि ।
जे जे आये जगत महँ इहि, गये ते ते हारि ॥१॥
नाहिं सुमिर्‌यौ नाम कौं, सब गयो काम बिगारि ।
आपु कौं जिन बड़ा जान्यो, काल खायो मारि ॥२॥
जानि आपुहि छोट जग, रहि रहौ टोरि सँभारि ।
बैठि कै चौगान निरखहु, रूप छबि अनुहारि[1] ॥३॥
रहौ थिर सतसंग बासी, देह सकल बिसारि ।
जगजिवन सतगुरु कृपा करि, लेहि सबै सँवारि ॥४॥

(२)

अरे मन समुझि करु पहिचान ।
को तैं अहसि कहाँ तैं आयसि, काहे भर्म भुलान ॥१॥
सुधि सँभारु बिचार करिकै, बूझु पाछिल ज्ञान ।
नात यहि दुइ चारि दिन का, अचल नाहि अस्थान ॥२॥
लोक गढ यहु कोट काया, कठिन माया बान ।
लाग सब के बचे कोउ नाहिं, हर्‌यो सब को ध्यान ॥३॥
खबरदार बेखबर हो नहिं, ओट नाम निरबान ।
जगजिवन सतगुरु राखि लैहैं, चरन रहु लपटान ॥४॥

(३)

मैं तैं जग त्यागि मन, चलिये सिर नाई।
नाम जानि दीन हीन, करिये दीनताई ॥१॥
अहंकार गर्ब तें, सब गये हैं बिलाई।
रावन के सीस काटि, राम की दुहाई ॥२॥
जिन जिन गुमान कीन्ह, मारि गदही मिलाई।
साधि साधि बाँधि प्रीति, ताहि पर सहाई ॥३॥
परसहु गुरु सीस डारि, दुनिया बिसराई।
जगजीवन आस एक, टेक रहिये लगाई ॥४॥

(४)

मन महँ नाहिं बूझत कोय।
नहीं बसि कछु अहै आपन, करै करता होय ॥१॥
कहत मैं तैं सूझि नाहीं, भर्म भूला सोय।
पड़े धारा मोह की ग्रसि, डारि सबस खोय ॥२॥
करै निंदा साध की, परि पाप बूड़े सोय।
अंत फजिहत होहिंगे, पछिताय रहिहैं रोय ॥३॥
कहौं समुझि बिचारि के, गहि नाम दृढ़ करु टोय।
जगजीवन ह्वै रहहु निर्भय, चरन चित्त समोय ॥४॥

(५)

कहाँ गयो मुरली को बजइया, कहाँ गयो रे ॥ टेक ॥
एक समय जब मुरली बजायो, सब सुनि मोहि रह्यो रे।
जिन के भाग भये पूर्बज[1] के, ते वहि संग गह्यो रे ॥१॥
खबरि न कोई केहु को पाई, को धौं कहाँ गयो रे।
ऐसे करता हरता यहि जग, तेऊ थिर न रह्यो रे ॥२॥

---

(१) पूर्ब जन्म।

रे नर बौरे तैं कितान है, केहि गनती माँ है रे।
जगजीवनदास गुमान करहु नहि, सत्त नाम गहि रहु रे ॥३॥

॥ बिरह ॥

(१)

सखी री करौं मैं कौन उपाई ।
मैं तो व्याकुल निसि दिन डोलौं, उनहि दरद नहिं आई ॥१
काह जानि कै सुधि बिसराई, कछु गति जानि न जाई ।
मैं तो दासी कलपौं पिय बिनु घर आँगन न सुहाई ॥२॥
तलफि तलफि जल बिना मीन ज्यों, अस दुख मोहिं अधिकाई।
निर्गुन नाह१, बाँह गहि सेजिया, सूतहि हियरा जुड़ाई ॥३॥
बिन सँग सूते सुख नहिं कबहूँ, जैसे फूल कुम्हिलाई ।
ह्वै जोगिनि मैं भस्म लगायौं, रहिउँ नयन टक लाई ॥४॥
पैयाँ परौं मैं निरखि निरखि कै, मोहि का देहु मिलाई ।
सुरति सुमति करि मिलहि एक ह्वै, गगन मँदिल चलि जाई ॥५
रहि याह महल टहल महँ लागी, सत की सेज बिछाई ।
हम तुम उनके सूति रहहि सँग, मिटै सबै दुचिताई ॥६॥
जगजीवन सिव ब्रह्मा बिस्नू, मन नहिं रहि ठहराई ।
रबि ससि करि कुरबान ताहि छबि, पीवो दरस अघाई ॥७॥

(२)

उनहीं सों कहियो मोरी जाय ॥ टेक ॥
ए सखि पैयाँ परि मैं बिनवौं, काहे हमैं डारिन बिसराय ॥१
मैं का करौं मोर बस नाहीं, दीन्ह्यो अहै मोहि भटकाय ॥२
ए सखि साईं मोहिं मिलावहु, देखि दरस मोर नैन जुड़ाय ॥३
जगजीवन मन मगन होउ मैं, रहौं चरन कमल लपटाय ४

---

(१) पति

(४)

अरी मोरे नैन भये बैरागी ॥ टेक ॥

भसम चढ़ाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, सबै अभूषन त्यागी ।
तलफि तलफि मैं तन मन जारयौं, उनहिं दरद नहिं लागी १
निसु बासर मोहिं नींद हरी है रहत एक टक लागी ।
प्रीति सोँ नैनन नीर चुवतु है, पीवो पी बिनु जागी ॥२॥
सेज आय समुझाय बुझावहु, लेउ दरस छबि माँगी ।
जगजीवन सखि तृप्त भये हैं, चरन कमल रस पागी ॥३

(५)

सखि बाँसुरी[१] बजाय कहाँ गयो प्यारो ॥ टेक ॥

घर की गैल बिसरि गइ मोहिं तैं, अंग न वस्तु सम्भारो ।
चलत पाँव डगमगत धरनि पर, जैसे चलत मतवारो ॥१॥
घर आँगन मोहिं नीक न लागै, सबद बान हिये मारो ।
लागि लगन मैं मगन वही सोँ, लोक लाज कुल कानि बिसारो॥२
सुरत दिखाय मोर मन लीन्हयो, मैं तो चहौं होय नहिं न्यारो ।
जगजीवन छबि बिसरत नाहीं, तुम से कहौं सो इहै पुकारो ३

(६)

होला

कौनि बिधि खेलैाँ होरी, यहि बन माँ भुलानी ॥टेक॥

जोगिन ह्वै अंग भसम चढ़ायो, तनहिं खाक करि मानी ।
ढूँढ़त ढूँढ़त मैं थकित भइ हैाँ, पिया पीर नहिं जानी ॥१॥
औगुन सब गुन एकौ नाहीं, माँगन ना मैं जानी ।
जगजीवन सखि सुखित होहु तुम, चरनन मैं लपटानी ॥२॥

---

(१) भँवरगुफा की धुनि ।

॥ प्रेम ॥

(१)

ऐसे साईं की मैं बलिहरियाँ री।
ए सखि संग रंग रस मातिउ, देखि रहिउँ अनहरियाँ री॥
गगन भवन माँ मगन भइउँ मैं, बिनु दीपक उजियरियाँ री
झलकि चमकि तहँ रूप बिराजे, मिटी सकल अँधियरियाँ री
काह कहौं कहिबे की नाहीं, लाग जाहि मन मोहियाँ री
जगजीवन वह जोती निरमल, मोती हीरा वरियाँ[1] री ॥३॥

(२)

साईं तुम सौं लागो मन मोर ॥ टेक ॥
मैं तो भ्रमत फिरौं निसुबासर,
चितवौ तनिक कृपा करि कोर ॥१॥
नहिं बिसरावहु नाहिं तुम बिसरहु,
अब चित राखहु चरनन ठौर ॥२॥
गुन औगुन मन आनहु नाही,
मैं तो आदि अंत को तोर ॥३॥
जगजीवन बिनती करि माँगै,
देहु भक्ति बर जानि कै थोर ॥४॥

(३)

गुरु बलिहारियाँ मैं जाउँ ॥ टेक ॥
डोरि लागी पोढ़ि, अब मैं जपहु तुम्हरा नाउँ।
नाहिं इत उत जात मनुवाँ, गगन बासा गाँउ[2] ॥१॥
महा निर्मल रूप छबि संत, निरखि नैन अन्हाउँ।
नाहिं दुख सुख भर्म ब्यापै, तब नीचे आउँ[3] ॥२॥
मारि आसन बैठि थिर ह्वै, काहु नाहि डेराउँ।
जगजीवन निरबान भे, संत सदा संगी आउँ ॥३॥

(२)

जोगिया भँगिया खवाइल, बौरानी फिरौं दिवानी ॥टेक॥
ऐसे जोगिया की बलि बलि जैहौं, जिह मोहिं दरस दिखाइल ॥१
नहिं कर तें नाहिं मुखहि पियावै, नैनन सुरति मिलाइल ॥२
काह कहौं कहि आवत नाहीं, जिन्ह के भाग तिन्ह पाइल ॥३॥
जगजीवनदास निरखि उन्नि देखै, जोगिया मुरति मन भाइल ॥४

॥ विनय ॥

( )

अब की बार तारु मोरे प्यारे। बिनती करि के कहौं पुकारे ॥१॥
नहिं बसि अहै केतो बहि हारे। तुम्हरे अब सब नहिं सवारे ॥२॥
तुम्हरे हाथ अहै अब सोई। और दूसरो नाहीं कोई ॥३॥
जो तुम चहत करत सो होई। जल थल महँ रहि जोति समोई ॥४
काहु क देत हो मंत्र सिखाई। सो भाज अंतर भक्ति दृढ़ाई ॥५॥
कहौं तो कछू कहा नहिं जाई। तुम जानत तुम देत जनाई ॥६
जगत भगत केते तुम तारा। मैं अजान केतान बिचारा ॥७॥
चरन सीस मैं नाहीं टारौं। निर्मल मुरति निर्बान निहारौं ॥८॥
जगजीवन काँ अब बिस्वास। राखहु सतगुरु अपने पास ॥९॥

(२)

प्रभु गति जानि नाहीं जाइ।
अहै केतिक बुद्धि केहि महँ, कहै को गति गाइ ॥१॥
सेस सम्भू थके ब्रह्मा, बिस्नु तारी लाइ।
है अपार अगाध गति प्रभु, केहू नाहीं पाइ ॥२॥
भान गन ससि तीनि चौथो, लियो छिनहिं बनाइ।
जोति एकै कियो बिस्तर, जहाँ तहाँ समाइ ॥३॥
सीस दैके कहौं चरनन, कबहुँ नहि बिसराइ।
जगजीवन के सत्त गुरु तुम चरन की सरनाइ ॥४॥

(३)

अब मैं कवन गनती आउं ।
दियो जबहि लखाइ मोहि कह तबहि सुमिरौ नाउँ ॥१॥
समुझि ऐसे परत मोह कहँ, नसे सरबस ठाउं ।
अहौ न्यारे कहूँ[1] नाही, रूप की बलि जाउँ ॥२॥
नाम का बल दियो जेहि कह, राखि निर्भय गाउँ ।
काल को डर नाहिं उहवाँ, भला पायो दाउँ ॥३॥
चरन सीसहि राखि निरखौ, चाखि दरस अघाउँ ।
जगजिवन गुरु करहु दाया, दास तुम्हरा आउँ ॥४॥

(४)

साईं को केतानि गुन गावै ।
सूझि बूझि तस आवै तेहि काँ, जेहि काँ जौन लखावै ॥१॥
आपुहि भजत है आपु भजावत, आपु अलेख लखावै ।
जेहिं कह अपनी सरनहि राखे, सोई भगत कहावै ॥२॥
टारत नहीं चरन तें कबहूँ, नहि कबहू बिसरावै ।
सूरति खैंचि ऍंचि जब राखत, जोतिहि जोति मिलावै ॥३॥
सतगुरु कियो गुरुमुखी तेहिकाँ, दूसर नाहि कहावै ।
जगजीवन ते भे सँग बासी, अंत न कोऊ पावै ॥४॥

(५)

प्रभुजी का बसि अहै हमारी ।
जब चाहत तब भजन करावत, चाहत देत बिसारी ॥१॥
चाहत पल छिन छूटत नाही, बहुत होत हितकारी ।
चाहत डारि[2] सूखि पल डारत, डारि देत सहारी ॥२॥
कहँ लहि बिनय सुनावौं तुम तें, मैं तो अहौं अनारी ।
जगजिवन दास पास रहै चरनन, कबहूँ करहु न न्यारी ॥३॥

( )

तुम सोँ यह मन लागा मोरा ॥ टेक ॥

करौँ अरदास[1] इतनो सुनि लीजै, तको तनक मोहि कोरा ॥१॥
कहँ लगि ऐगुन कहौँ आपना, कामी कुटिल लोभी औ चोरा २
सब के अन्त के रहु गुनाह मे, नाहि ख्याल कछु छोरा ॥३॥
साईं अब गुनाह सब मेटहु चितै आपनी ओरा ॥४॥
जगजीवन के इतनी बिनती, टूटै प्रीति न डोरा ॥५॥

(७)

बालकबुद्धि हीन मति मोरा। भरमत फिरौँ नाहि दृढ डोरी १
सूरति राखौ चरनन मोरी। लागि रहै कबहूँ नहि तोरी[2] ॥२॥
निरखत रहौँ जाउँ बलिहारी। दास जानि कै नाहिँ बिसारी ॥३
तुमहिँ सिखाय पढ़ायो ज्ञाना। तब मैं धर्यौ चरन के ध्याना ॥४
साईं समरथ तुम हौ मोरे। बिनती करौँ ठाढ़ कर जोरे ॥५॥
अब दयाल है दाया कीजै। अपने जन कह दरसन दीजै ॥६॥
नाम तुम्हार मोहिँ है प्यारा। सोई भजे घट भा उजियारा ॥७
जगजीवन चरनन दियो माथ। साहिब समरथ करहु सनाथ ॥८

(८)

तेरा नाम सुमिरि ना जाय।

नहीं बस कछु मोर आहै, करहुँ कौन उपाय ॥१॥
जबहिँ चाहत हितू करि कै, लेत चरनन लाय।
बिसरि जब मन जात आहै, देत सब बिसराय ॥२॥
अजब ख्याल अपार लीला, अंत काहु न पाय।
जीव जंत पतंग जग महँ, काहु ना बिलगाय ॥३॥
करौँ बिनती जोरि दोउ कर, कहत अहौँ सुनाय।
जगजिवन गुरु चरन सरन, है तुम्हार कहाय ॥४॥

---

(१) अर्ज़दाश्त, प्राथना। (२) तोड़ी।

(९)

साईं मोहिं भरोस तुम्हारा ।
मोरे बस नहिं अहै एको, तुम्हहिं करो निस्तारा ॥१॥
मैं अज्ञान बुद्धि है नाही, का करि सकौं बिचारा ।
जब तुम लेत पढ़ाय सिखावत, तब मैं प्रगट पुकारा ॥२॥
बहुतन भवसागर महँ बूड़त, तेहिं उबारि कै तारा ।
बहुतन काँ जब कष्ट भयो है, तिन कै कष्ट निवारा ॥३॥
अब तो चरन कि सरनहिं आयौं, गह्यौं मैं पच्छ तुम्हारा ।
जगजीवन के साईं समरथ, मोहि बल अहै तुम्हारा ॥४॥

(१०)

साहिब अजब कुदरत तोर ।
देखि गति कहि जात नाही, केतिक मति है मोर ॥१॥
नचत सब कोउ काछि कछनी, भ्रमत फिर बिन डोर ।
होत औगुन आप तें, सब देत साहिब खोर[1] ॥२॥
कौल करि जग पठै दीन्ह्यो, तौन डार्‌यो तोर[2] ।
करत कपट सत लेतीं, कहैं मोरी मोर ॥३॥
ऐसी जग की रीति आहै, कहा कहिये टेर ।
जगजिवनदास चरन गुरू के, सुरत करिये पोढ़ ॥४॥

(११)

चरनन तर दियो माथ, करिये अब मोहिं सनाथ ।
दास करिकै जानी ॥१॥
बूड़ा सब जगत सार, सूझै नहिं वार पार ।
देखि नैनन बूझिय हित आनी ॥२॥
सुमति मोहि देउ सिखाय, आनि मैं न रहि लुभाय ।
बुद्धिहीन भजनहीन, सुद्धि नाहि आनी ॥ ३ ॥

---

(१) दोष । (२) तोड़ ।

सहस फन तेँ सेस गावै, संकर तेहि ध्यान लावै ।
ब्रह्मा बेद प्रगट कहै बानी ॥४॥
कहौँ का कहि जात नाहि, जोती वा सर्ब माहि ।
जगजीवन दरस चहै, दीजै बरदानी ॥५॥

(१२)

आरत अरज लेहु सुनि मोरी ।
चरनन लागि रहै दृढ़ डोरी ॥१॥
कबहुँ निकट तेँ टारहु नाहीँ ।
राखहु मोहि चरन की छाहीँ ॥२॥
दीजै केतिक नाम यहै कीजै ।
अघ कर्म मेटि सरन करि लीजै ॥३॥
दासन दास है कहौँ पुकारी ।
गुन मोहिँ नाहिँ तुम लेहु सँवारी ॥४॥
जगजीवन काँ आस तुम्हारी ।
तुम्हरी छवि मूरति पर वारी ॥५॥

(१३)

केतिक बूझि, का आरति करऊँ । जैसे रखिहहिँ तैसे रहऊ ॥१
नाहीँ कछु बसि आहै मोरी । हाथ तुम्हारे आहै डोरी ॥२॥
जस चाहौ तस नाच नचावहु । ज्ञान बास करि ध्यान लगावहु॥
तुमहिँ जपत तुमही बिसरावत। तुमहिँ चिताइ सरन लै आवत॥४
दूसर कवन एक है सोई । जेहि काँ चाहौ भक्त सो होई ॥५॥
जगजीवन करि बिनय सुनावै। साहिब समरथ नहिँ बिसरावै॥६॥

(१४)
होली

यहि जग होरी, अरी मोहिँ तेँ खेलि न जाई ।
साईं मोहिँ बिसराय दियो है, तब तेँ परयौं भुलाई ॥१॥

सुख पाँच सुद्धि गई हरि मोरी, चित्त चेत नहिं आई।
अनहित हित करि जानि बिषै महँ, रह्यो ताहि लपटाई ॥२॥
यहि साँचे महँ पाँचौ राखौं, अपनि अपनि प्रभुताई।
मैं का करौं मोर बस नाहीं, राखत हैं अरुझाई ॥३॥
गगन मँदिल चलि थिर ह्वै रहिये, ताकि छाब छकि निरथाई।
जगजीवन साख साईं समरथ, लेहैं सबै बनाई ॥४॥

॥ साध ॥

(१)

जब मन मगन भा मस्तान।
भयो सीतल महा कोमल, नाहिं भावै आन ॥१॥
डोरि लागी पोढ़ि गुरु तें, जगत तें बिलगान।
अहै मता अगाध तिन का, करै को पहिचान ॥२॥
अहैं ऐसे जगत माँ कोइ, कहत आहैं ज्ञान।
ऐसे निरमल ह्वै रहे हैं, जैसे निरमल भान ॥३॥
बड़ा बल है ताहि के रे, थमा है असमान।
जगजिवन गुरु चरन परि कै, निगुन धारे ध्यान ॥४॥

(२)

गऊ निकसि बन जाहीं। बाछा उन घर ही माहीं ॥१॥
तृन चरहिं चित्त सुत पासा। यहि जुक्ति साध जग बासा ॥२॥
साध तें बड़ा न कोइ। कहि राम सुनावत सोई ॥३॥
राम कही हम साधा। रत एक मता औराधा ॥४॥
हम साध साध हम माहीं। कोउ दूसर जानै नाहीं ॥५॥
जिन दूसर करि जाना। तेहि होइहि नरक निदाना ॥६॥
जगजिवन चरन चित लावै। सो काहू के राम समझावै ॥७॥

॥ भेद ॥

(१)

जा के लगी अनहद तान हो, निरबान निरगुन नाम की ॥१॥
जिकर करके सिखर हेरे, फिकर रारकार की ॥२॥
जा के लगी अजपा गगन झलके, जोति देख निसान की ॥३॥
मह मुरली मधुर बाजै, त्रॉए किंगरी सारगी ॥४॥
दहिने जो घटा सख बाजै, गैब धुन झनकार की ॥५॥
अकह की यह कथा न्यारी, सीखा नाहीं आन है ॥६॥
जगजिवन प्रानहि सोधि कै, मिलि रहे सतनाम है ॥७॥

(२)

गगरिया मोरी चित सौं उतरि न जाय ॥ टेक ॥
इक कर करवा[1] एक कर उबहनि[2], त्रतियाँ कहौं अरथाय ॥१॥
सास ननद घर दारुन आहैं, ता सौं जियरा डेराय ॥२॥
जो चित छूटै गागर फूटै, घर मोरि सासु रिसाय ॥३॥
जगजीवन अस भक्ती मारग, कहत अहौं गोहराय ॥४॥

॥ ज्ञान ॥

आनद के सिंध में आन बसे,
तिन को न रह्यो तन को तपनो ।
जब आपु में आपु समाय गये,
तब आपु में आपु लह्यो अपनो ॥
जब आपु में आपु लह्यो अपनो,
तब अपनो ही जाप रह्यो जपनो ।
जब ज्ञान को भान प्रकास भयो,
जगजीवन होय रह्यो सपनो ॥

---

(१) डाल । (२) रस्सी ।

॥ कर्म भरम ॥

कोउ बिन भजन तरिहै नाहिं ।
कहँ जाय अचार केती, प्रात नित्त अन्हाहिं ॥१॥
दान पुन्य करि तपस्या, ब्रत बहुत रहाहिं ।
त्यागि बस्ती बैठि बन महँ, कन्दमूरहि खाहिं ॥२॥
पाठ करि पढ़ि बहुत बिद्या, रैन दिनहिं बकाहिं ।
गाय बहुत बजाय बाजा, मनहिं समुझत नाहिं ॥३॥
करहिं स्वासा बन्द कष्टित, भाँड की गति आहिं ।
साधि पवन चढ़ाय गगनहि, कमल उलटै नाहिं ॥४॥
साध नहिं केहु कीन्ह ऐसे, सीखि बहुत कहाहिं ।
प्रीति रस मन नाहिं उपजत, परे ते भव माहिं ॥५॥
जरा सँजोग बिजोग तैसे, तत अच्छर दुइ आहिं ।
रटत अंतर भेंट गुरु तें, मन्त्र अजपा माहिं ॥६॥
कहौं प्रगट पुकारि जेहि के, प्रीति अंतर आहिं ।
जगजिवन दास रीति अस, तब चरन महँ मिलि जाहिं ॥७॥

॥ उपदेश ॥

(१)

अरे मन चरन तें रहु लागि ।
जोरि दुइ कर सीस दैकै, भक्ति बर ले माँगि ॥१॥
और आसा झूठि आहै, गरम जैसे आगि ।
परहिंगे सो जरहिंगे पै, देहु सर्ब तियागि ॥२॥
समै फिरि यह पाइहौ नहिं, सोउ नहिं गहि जागि ।
चेतु पाछिल सुद्धि करिके, दरस रस रहु पागि ॥३॥
कठिन माया है अपरबल, संग सब के लागि ।
सूल तें कोइ बचे बिरले, गगन बैठे भागि ॥४॥

भर्म नाहिँ तहँ भयो निर्भय, सत्त रत बैरागि ।
जगजीवन निरबान भे, गुरु दया जागि भागि ॥५॥

(२)

मन तन खाक करि के जानु ।
नीच तें है नीच, तेहि तें नीच आपुहि मानु ॥१॥
त्यागु मैं लै दीन ह्वै रहु, तजहु गर्ब गुमान ।
हेतु हौं उपदेस याहै, निरखु सो निरबान ॥२॥
कर्म धागा लाय बाँधा, हिंदु मूसलमान ।
खैंचि लीन्ह्यो तोरि धागा, बिरल कोइ बिलगान ॥३॥
खाक है सब खाक होइहि, समुझि आपन ज्ञान ।
सब्द सत कहि प्रगट भाखौं, रहहि नाम निदान ॥४॥
काल को डर नाहिं तिन्ह कों, चौथ[1] रहि चौगान ।
जगजीवन दास सतगुरु के, चरन रहि लपटान ॥५॥

(३)

मन मैं जेहिं लागी जस भाई ।
सो जानै तैसे अपने मन, का सों कहै गोहराई ॥१॥
साँची प्रीति की रीति है ऐसी, राखत गुप्त छिपाई ।
झूठे कहुँ सिखि लेत अहहिं पढ़ि, जहँ तह झगरा लाई ॥२
लागे रहत सदा रस पागे, तजे अहहि दुचिताई ।
ते मस्ताने तिनहीं जाने, तिनहिं को देइ जनाई ॥३॥
राखत सीस चरन तें लागा, देखत सीस उठाइ ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, सूरति रहे मिलाइ ॥४॥

(४)

जो कोइ घरहिं बैठा रहै ।
पाँच सगत करि पचीसौ, सब्द अनहद लहै ॥१॥

---

(१) चौथे लोक में ।

दीन सीतल लीन मारग, सहज आहनि बहै ।
कुमति कर्म कठोर काठहि, नाम पावक दहै ॥२॥
मारि म सैं लाय डोरी, पवन थाम्हे रहै ।
चित्त कर तहँ सुमति साधू, सुरति माला गहै ॥३॥
राति दिन छिन नाहिं छूटै, भक्त सोइ अहै ।
जगजीवन कोइ संत बिरला, सब्द की गति कहै ॥४॥

(५)

सत्त नाम बिना कहौ, कैसे निस्तरिहौ ॥ टेक ॥
कठिन अहै माया जार, जा को नहिं वार पार,
कहौ काह करिहौ ॥ १ ॥
हो सचेत चौंकि जागु, ताहि त्यागि भजन लागु,
अंत भरम परिहौ ॥ २ ॥
डारहि जमदूत फाँसि, आइहि नहिं रोइ हाँसि,
कौन धीर धरिहौ ॥ ३ ॥
लागहि नहिं कोइ गोहारि, लेइहि नहिं कोइ उबारि,
मनहिं रोइ रहिहौ ॥ ४ ॥
भगनी सुत नारि भाइ, मातु पितु सखा सहाइ,
तिनहिं कहा कहिहौ ॥ ५ ॥
काहुक नहिं कोऊ जगत, मनहिं अपने जानु गत,
जीवत मरि जाहु दीन अंतर माँ रहिहौ ॥६॥
सिद्ध साध जोगि जती, जाइहि मरि सब कोई,
रसना सतनाम गहि रहिहौ ॥ ७ ॥
जगजीवनदास रहै, बैठे सतगुरु के पास,
चरन सीस धरि रहिहौ ॥ ८ ॥

यारी साहिब

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १२०]

॥ गुरुदेव ॥

॥ झूलना ॥

गुरु के चरन की रज लै के, दोउ नैन के बिच अंजन दीया।
तिमिर मेटि उँजियार हुआ, निरकार पिया को देखि लिया॥
कोटि सुरज तहँ छिपे घने, तीनि लोक धनी धन पाइ पिया।
सतगुरु ने जो करी किरपा, मरि के यारी जुग जुग जीया॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

झिलमिल झिलमिल बरखै नूरा,
नूर जहूर सदा भरपूरा ॥ १ ॥
रुनझुन रुनझुन अनहद बाजै,
भँवर गुँजार गगन चढ़ि गाजै ॥ २ ॥
रिमझिम रिमझिम बरखै मोती,
भयो प्रकास निरंतर जोती ॥ ३ ॥
निरमल निरमल निरमल नामा,
कह यारी तहँ लियो बिस्रामा ॥ ४ ॥

(२)

सुन्न के मुकाम में बेचून[१] की निसानी है ॥ १ ॥
जिकिर[२] रूह सोई अनहद बानी है ॥ २ ॥
अगम को गम्म नाहीं झलक पिसानी[३] है ॥ ३ ॥
कहै यारी आपा चीन्है सोई ब्रह्मज्ञानी है ॥ ४ ॥

---

(१) मालिक। (२) सुमिरन। (३) पेशानी, माथा।

॥ प्रेम ॥

(१)

बिरहिनी मंदिर दियना बार ॥ टेक ॥
बिन बाती बिन तेल जुगति सों, बिन दीपक उँजियार ॥१॥
प्रान पिया मेरे गृह आयो, रचि रचि सेज सँवार ॥२॥
सुखमन सेज परम तत रहिया, पिय निर्गुन निरकार ॥३॥
गावहु री मिलि आनँद मंगल, यारी मिलि के यार ॥४॥

(२)

होली

हौं तो खेलौं पिया सँग होरी ॥ १ ॥
दरस परस पतिबरता पिय की, छबि निरखत भइ बौरी ॥२॥
सोरह कला सँपूरन देखौं, रबि ससि भे इक ठौरी ॥३॥
जब तें दृष्टि परो अबिनासी, लागो रूप ठगौरी ॥४॥
रसना रटत रहत निस बासर, नैन लगो यहि ठौरी ॥५॥
कह यारी भक्ती करु हरि की, कोई कहै सो कहौ री ॥६॥

॥ भेद ॥

(१)

झूलना

दोउ मूँदि के नैन अंदर देखा, नहिं चाँद सुरज दिन राति है रे।
रोसन समा बिनु तेल बाती, उस जोति सों सबै सिफाति[1] है रे॥
गोता मारि देखो आदम, कोउ अवर नाहिं सँग साथि है रे।
यारी कहै तहकीक किया, तू मलकुलमौत[2] की जाति है रे॥

(२)

झूलना

जमीं बरखै असमान भीजै, बिन बातिहि तेल जलाइये जी।
जहाँ नूर तजल्ली[3] बीच है रे, बेरंगी रंग दिखाइये जी॥

फूल बिना जदि फल होवै, तदि हीरा[1] की लज्जत पाइये जी ।
यारी कहै यहि कौन बूझै, यह का सों बात जनाइये जी ॥

॥ उपदेश ॥

( )

कवित्त

गहने के गढ़े तें कहीं सोनो भी जातु है ।
सोनो बीच गहनो और गहनो बीच सोन है ॥
भीतर भी सोनो और बाहर भी सोन दीसै ।
सोनो तो अचल अत गहनो को मीच[2] है ॥
सोन को तो जानि लीजे गहनो बरबाद कीजै ।
यारी एक सोनो ता में ऊंच कवन नीच है ॥

(२)

झूलना

बिन बंदगी इस आलम में, खाना तुझे हराम है रे ।
बंदा करै सोइ बंदगी, खिदमत में आठो जाम है रे ॥
यारी मौला बिसारि के, तू क्या लागा बेकाम है रे ।
कुछ जीते बंदगी करले, आखिर को गोर[3] मुकाम है रे ॥

॥ मिश्रित ॥

कवित्त

आँधरे को हाथी हरि, हाथ जा को जैसो आयो ।
बूझो जिन जैसो, तिन तैसोइ बतायो है ॥१॥
टकाटोरी दिन रैन, हिये हू के फूटे नैन ।
आँधरे को आरसी में, कहा दरसायो है ॥२॥
मूल की खबरि नाहिं, जा सों यह भयो मुलुक ।
वा को बिसारि भोंदू, डारै[4] अरुझायो है ॥३॥
आपनो सरूप रूप, आपु माहि देखै नाहिं ।
कहै यारी आँधरे ने हाथी कैसो पायो है ॥४॥

---

(१) [illegible] । (२) [illegible] । (३) [illegible] । (४) [illegible] में ।

॥ प्रेम ॥

तुम मेरो साईं मैं तेरो दास, चरन कँवल चित मेरो वास ॥१॥
पल पल सुमिरौं नाम सुभाव, [illegible] जग मैं देखो दास ॥२॥
जल मैं कुमुदिनि [illegible] ॥३
उनमुनि गगन भया परगास, कह दरिया मेटा जम त्रास ॥४

॥ विनय ॥

(१)

अब के बार बकस मोरे साहिब ।
तुम लायक सब जोग हे ॥ १ ॥
गुनह[1] बकसिहै सब भ्रम [illegible] ।
रखिहौ आपन पास हे ॥ २ ॥
अछै बिरिछि तरि लै [illegible] ।
तहवाँ धूप न छाँह हे ॥ ३ ॥
चाँद न सुरज दिवस नाहिं तहवाँ ।
नाहिं निसु होत बिहान हे ॥ ४ ॥
अमृत फल मुख [illegible] दैहौ ।
सेज सुगन्धि सुहाय हे ॥ ५ ॥
जुग जुग अचल अमर पद दैहौ ।
इतनी अरज हमार हे ॥ ६ ॥
भौसागर दुख दारुन मिटिहै ।
छुटि जैहै कुल परिवार हे ॥ ७ ॥
कह दरिया यह मंगल मूला ।
अनूप फुलै जहाँ फूल हे ॥ ८ ॥

(२)

मैं जानहुँ तुम दीनदयाल ।
तुम सुमिरे नाहिं तपत काल ॥ १ ॥

---

(१) पाप, दोष ।

ज्यौं [illegible] सूत[१] ।
　　गर्भ बास जिन दियो अकूत ॥ २ ॥
जठर [illegible] तैं लियो है काढ़ि ।
　　ऐसी वा की ठवर गाढ़ि ॥ ३ ॥
गाढ़े जो जन सुमिरन कीन्ह ।
　　परघट जग मैं तेहि गति दीन्ह ॥ ४ ॥
गरबी मारेउ गैब बान ।
　　संत को राखेउ जीव जान ॥ ५ ॥
जल मैं बुदबुदि इन्दु[२] अकास ।
　　प्रेम सदा गुरु चरन पास ॥ ६ ॥
जैसे पपिहा जल से नेह ।
　　बुन्द एक भिखारा तेह ॥ ७ ॥
स्वर्ग पताल मृत मंडल तीनि ।
　　तुम ऐसो साहिब मैं अधीन ॥ ८ ॥
जानि आयो तुम चरन पास ।
　　निज मुख बोलेउ कहेउ दास ॥ ९ ॥
सत पुरुष बचन नहिं होहिं आन ।
　　बलु पुरब से [illegible] उगहि भान ॥ १० ॥
कह दरिया तुम हमहिं एक ।
　　ज्यौं हारिल की लकड़ी टेक[३] ॥ ११ ॥

[illegible]

मानु सबद जो करु विवेक ।
　　अगम पुरुष जहँ रूप न रेख ॥ १ ॥

---

(१) पुत्र । (२) चंद्रमा । (३) हारिल चिड़िया चंगुल में लकड़ी पकड़े बिना ज़मीन पर नहीं उतरती ।

[illegible] कँवल सुरति लौ लाय ।
  [illegible] जपि के मन [illegible] ॥ २ ॥
[illegible] मेँ उलटि जाय ।
  [illegible] जोति रहै छवि छाय ॥ ३ ॥
बंक नाल गहि खैँचे सूत ।
  चमके [illegible] मोती बहुत ॥ ४ ॥
सेत घटा चहुँ ओर [illegible] ।
  अजरा जहवाँ होय अँजोर ॥ ५ ॥
[illegible] कँवल निज करो [illegible] ।
  चुवत बुन्द जहँ अमृत धार ॥ ६ ॥
छव चक्र खोजि करो [illegible] ।
  मूल चक्र जहँ जिव को वास ॥ ७ ॥
काया खोजि जोगी [illegible] ।
  काया बाहर पद [illegible] ॥ ८ ॥
[illegible] सबद जो करै खोज ।
  कहैँ दरिया तब पूरन जोग ॥ ९ ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

पेड़ को पकरु तब डारि पालो मिलै ।
  डारि गहि पकर नहिं पेड़ यारा[१] ॥
देख दिब दृष्टि [illegible] मेँ चन्द्र है ।
  चन्द्र की जोति [illegible] तारा ॥ १ ॥
आदि औ अंत सब मध्य है मूल मेँ ।
  मूल मेँ फूल धौँ केति डारा ॥

(१) हे यार पेड़ पकड़ने से डाल पत्ती भी मिल जायगी, पर डाल के पकड़ने से पेड़ नहीं हाथ आवैगा ।

नाम निर्गुन निर्लेप निर्मल वरी ।
एक से अनँत सब जगत सारा ॥ २ ॥
पढ़ि बेद [illegible] बक्ता कथै ।
हारि बेचून वह नूर न्यारा ॥
निर्दोष निर्बान निराकार निःभर्म वह ।
एक सर्बज्ञ सत नाम प्यारा ॥ ३ ॥
तजु मान मनी करु काम के काबु[1] यह ।
खोजु सतगुरू भरपूर सूरा ॥
असमान कै बुन्द गरकाब[2] हूआ ।
दरियाव की लहरि कहि बहुरि मूरा[3] ॥ ४ ॥

(२)

भीतर मैलि चहल[4] के लागी, ऊपर तन का धोवै है ॥१॥
[illegible] सुरति महल के भीतर, वा का पंथ न जोवै है ॥२॥
जुगुति बिना कोइ भेद न पावै, साधु सँगति का गोवै है ॥३
कह दरिया कुटने बे गोदी[5], सीस पटकि का रोवै है ॥४॥

॥ मिश्रित ॥

सत सुकृत दूनौं खंभा हो, सुरति लागलि डोरि ।
अरध उरध दूनौं मचवा[6] हो, इँगला पिंगला झकझोरि ॥१॥
कौन सखी सुख बिलसै हो, कौन सखी दुख साथ ।
कौन सखिया सुहागिनि हो, कौन कमल गहि हाथ ॥२॥
सत सनेह सुख बिलसै हो, कपट करम दुख साथ ।
पिया-मुख सखिया सुहागिनि हो, राधा कमल गहि हाथ ॥३

(१) बस में। (२) पानी में डूब गया। (३) मुड़ा। (४) कीचड़। (५) भौंदू, मूढ़। (६) मचिया या खटोला जिस पर बैठ कर हिंडोला झूलते हैं।

कौन [illegible] कौन [illegible] है, कौन [illegible] ।
कौन [illegible] [illegible] ॥५॥
[illegible] ।
[illegible] ॥५॥
[illegible] ।
[illegible] है, ओहि सभी पुरुष [illegible] ॥६॥
जीव जंतु [illegible] है, फूल [illegible] अंति गानैव ।
कल्प कोटि [illegible] है, कोइ कहैं न [illegible] ॥७॥
सन्त सब्द [illegible] ।
कहै दरिया [illegible] है, साध पुरुष के पास ॥८॥

([illegible] वाले)

[संक्षिप्त [illegible] के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १२८]

॥ नाम ॥

नाम बिन भाव करम नहिं छूटै ॥ टेक ॥
साध संग औ राम भजन बिन, काल [illegible] लूटै ॥१॥
मल सेती जो मल को धोवै, सो मल कैसे छूटै ॥२॥
प्रेम का [illegible] नाम का पानी, दुइ मिलि ताँता टूटै ॥३॥
भेद [illegible] साँचा, बौड़ि [illegible] पार फूटै ॥४॥
[illegible] सबद गहै उर अंतर, [illegible] से छूटै ॥५॥
राम का ध्यान धरहु रे प्रानी, अमृत का मेंह बूटै[२] ॥६॥
जन [illegible] अरप दै आपा, [illegible] तब छूटै ॥७॥

(१) [illegible] । (२) बरसै ।

॥ प्रेम ॥

(१)

बाबुल[1] कैसे बिसरा जाई ।
यदि मैं पति सँग रल मिलूँगी, आपा धरम समाई ॥टेक॥
सतगुर मेरे किरपा कीन्ही, उत्तम बर परनाई[2] ।
अब मेरे साईं को सरम पड़ैगी, लेगा चरन लगाई ॥१॥
थे[3] [illegible] मैं बाली भोली, थे निर्मल मैं मैली ।
वे बतरावैं[4] मैं बोल न जानूँ, भेद न सकूँ सहेली ॥२॥
थे ब्रह्म भाव मैं आतम कन्या, समझ न जानूँ बानी ।
दरिया कहै पति पूरा पाया, यह निस्चय करि जानी ॥३॥

(२)

कहा कहूँ मेरे पिउ की बात ।
जो रे कहूँ सोइ अंग सुहात ॥ टेक ॥
जब मैं रही थी कन्या क्वारी ।
तब मेरे करम हता[5] सिर भारी ॥१॥
जब मेरी पिउ से मनसा दौड़ी ।
सतगुर आन सगाई जोड़ी ॥२॥
तब मैं पिउ का मंगल गाया ।
जब मेरा स्वामी ब्याहन आया ॥३॥
हथलेवा दै बैठी संगा ।
तब मोहिं लीन्ही बायें अंगा ॥४॥
जन दरिया कहै मिटि गइ दूती[6] ।
आपा अरपि पीव सँग सूती ॥५॥

(१) बाप । (२) ब्याह कराया । (३) तुम । (४) बात करैं । (५) था । (६) द्वैत भाव ।

॥ भेद ॥

परिमल पति मिली है लाग ।
जहँ गगन मँडल मैं परम भाग ॥ टेक ॥

जहँ जल बिन कँवल बहु अनंत ।
जहँ बपु[1] बिन भौंरा गोह[2] करंत ॥१॥

[illegible] बानी अगम खेल ।
जहँ दीपक जरै बिन बाती तेल ॥२॥

जहँ अनहद सबद है करत घोर ।
बिन मुख बोलै चात्रिक मोर ॥३॥

बिन रसना गुन उदृत[3] नार ।
बिन पग पातर निरतकार[4] ॥४॥

जहँ जल बिन सरवर भरा पूर ।
जहँ अनँत जोत बिन चंद सूर ॥५॥

बारह मास जहँ रितु बसंत ।
ध्यान धरैं जहँ अनँत संत ॥६॥

त्रिकुटी सुखमनि चुवत छीर ।
बिन बादल बरखै मुक्ति नीर ॥७॥

अमृत धारा चलै सीर[5] ।
कोइ पीवै बिरला संत धीर ॥८॥

झंकार धुन अरूप एक ।
सुरत गही उनहीं की टेक ॥९॥

जन दरिया बैराट चूर ।
जहँ बिरला पहुँचै संत सूर ॥१०॥

---

(१) शरीर । (२) गुंजार । (३) गाती है । (४) वेश्या नाचती है । (५) ठंडी ।

॥ [illegible] ॥

[illegible] के उर [illegible] आई ।
सो क्या जानै [illegible] ॥ टेक ॥

ब्यावर[1] जानै पीर [illegible] ।
बाँझ [illegible] क्या [illegible] ॥१॥

पतिब्रता पति को [illegible] जानै ।
[illegible] कहा [illegible] ॥२॥

हीरा पारख जौहरि [illegible] ।
मूरख [illegible] के कहा बतावै ॥३॥

लागा घाव कराहै सोई ।
[illegible] के दर्द न कोई ॥४॥

राम नाम मेरा प्रान [illegible] ।
सोई राम [illegible] ॥५॥

जन दरिया जानैगा सोई ।
(जाके) प्रेम की भाल कलेजे पोई ॥६॥

॥ मिश्रित ॥

संतो कहा गृहस्थ कहा त्यागी ।
जेहि देखूँ तेहि बाहर भीतर, घट घट माया लागी ॥टेक॥
माटी की भीत पवन का थंभा, गुन [illegible] से छाया ।
पाँच तत्त [illegible], सहजाँ [illegible] ॥१॥
मन भयो पिता मनसा भई माई, दुख सुख दोनों भाई ।
[illegible] तृस्ना [illegible], गृह की सौज[2] [illegible] ॥२॥
[illegible] भयो पुरुष [illegible] भई [illegible], पाँचो [illegible] जाया ।
[illegible] बहुत [illegible] ॥३॥

(१) [illegible] (२) [illegible] देखने वाला । (३) [illegible]
[illegible] । (४) [illegible]

[illegible] के सँग [illegible] जाई, ता का नाम [illegible] ।
बन मैं बैठी घर घर डोलै, [illegible] संग खपी री ॥४॥
पाप पुन्न दोउ पाड़ [illegible], अनँत [illegible] नाती ।
राग द्वेष का बंधन लागा, गिरह बना [illegible] ॥५॥
कोइ गृह माँडि[१] गिरह मैं बैठा, [illegible] बन बासा ।
जन दरिया इक राम भजन बिन, घट घट मैं घर बासा ॥६॥

[illegible]

[संक्षिप्त [illegible] के लिये देखो [illegible] भाग १ पृष्ठ १३३]

॥ नाम महिमा ॥

(१)

कोइ [illegible] यहि [illegible] नाम कहै ॥ टेक ॥
[illegible] दुइ [illegible], बिनु रसना रट लागि रहै ॥१॥
होठ न डोलै जीभ न बोलै, सुरति धरनि [illegible] गहै ॥२॥
दिन औ राति रहै सुधि लागी, यहि माला यहि सुमिरन है ॥३॥
जन दूलन [illegible], ता की नाव पार निबहै ॥४॥

(२)

बाजत नाम [illegible] आज ।
है [illegible], सुनहु गैब [illegible] ॥१॥
[illegible] नाद सुनि, दुख [illegible] क्रम भ्रम भाज ।
[illegible] बरसै पानि, धुनि निर्बान यहि मन बाज ॥२॥
ताईं चेत चित दै प्रेम मगन, अनंद [illegible] साज ।
घर राम आये जानि, [illegible] सनाथ [illegible] राज ॥३॥

---

(१) बनाकर । (२) दूर हुए । (३) हुई । (४) पलटा, लौटा ।

[illegible] कृपा पूरन, सुफल भे जन काज ।
धनि भाग [illegible] तेरे, भक्ति [illegible] ॥४॥

(३)

मन यहि नाम की धुनि लाउ ।
रटु निरंतर नाम केवल, अवर सब [illegible] ॥१॥
साधि सूरति [illegible], करि सुवा[1] [illegible] चढ़ाउ ।
पोखि प्रेम प्रतीत तैं, कहि राम नाम पढ़ाउ ॥२॥
[illegible] निसु दिन, नाम के गुन गाउ ।
बनी तौ का [illegible], आगे और बनी [illegible] ॥३॥
[illegible] बचन साचे, साच मन माँ लाउ ।
करु बास [illegible] सत माँ, फिरि न यहि जग आउ ॥४॥

(४)

जब गज अरध नाम गुहरायो ।
जब लगि आवै दूसर [illegible], तब लगि आपुहि धायो ॥१॥
पाँय [illegible] मे [illegible] ।
धाय गजंद गोद प्रभु [illegible], आपनि भक्ति [illegible] ॥२॥
मीरा को बिष अमृत [illegible], [illegible] सुजस जग छायो ।
[illegible] हित कारन प्रभु तुम, [illegible] गाय [illegible] ॥३॥
भक्त हेत तुम जुग जुग [illegible], तुमहिं सदा यह भायो ।
[illegible] नाम की, नामहिं तैं चित लायो ॥४॥

॥ भेद ॥

(१)

साईं तेरो गुप्त मर्म हम जानी ।
कस करि कहौं [illegible] ॥ टेक ॥
[illegible] संत भेद मोहिं [illegible], जग से राखा छानी ।
[illegible] न कीन्हा, करम भरम [illegible] ॥१

(१) [illegible] । (२) [illegible]

निज घर है वह अगम अपारा, जहँ [illegible] ।
ता के परे [illegible], जा का रूप न नामी ॥२॥
ब्रम्ह रूप धरि सृस्टि उपाई, आप रहा [illegible] ।
बेद कितेब की रचन रचाई, द्वस [illegible] ॥३॥
निज माता सीता सोइ राधा, जिन पितु राम सुवामी ।
दोउ मिलि [illegible], [illegible] मैं दिया ठामी ॥४॥
दूलनदास के साईं [illegible], निज सुन जक्त पठानी ।
मुक्ति द्वार की कूँची दीन्ही, ता तें कुलुफ खुलानी ॥५॥

॥ दोहा ॥

दूलन यह मत गुप्त है, प्रगट न करौ [illegible] ।
ऐसे राखु [illegible] मन, जस [illegible] ॥६॥

(२)

देख आयौं मैं तो साईं की सेजरिया ।
साईं की सेजरिया सतगुरु की डगरिया ॥१॥
सबदहि ताला सबदहि कूँची, सबद की लगी है जँजिरिया ॥२॥
सबद ओढ़ना सबद बिछौना, सबद की चटक चुनरिया ॥३॥
सबद सरूपी स्वामी आप [illegible], सीस चरन मैं [illegible] ॥४॥
दूलनदास भजु साईं [illegible], [illegible] से अहँग [illegible] ॥५॥

॥ [illegible] ॥

(१)

[illegible] क्या दिन जात बीते, समुझु करु नर चेत रे ।
[illegible] तेरे कंध सिर पर, काल डंका देत रे ॥१॥
हुसियार ह्वै गुन गाव प्रभु के, ठाढ़ रहु गुरु खेत रे ।
ताके रहै छूटै नहीं, जिमि राहु रवि ससि केत रे ॥२॥
जम द्वार तर सब [illegible], चढ़ अचार निन्दक जेत रे ।
[illegible] अमृत नाम रस, भरि स्वास [illegible] रे ॥३॥

मद मोह महुवा दारु दुरन, मिथ्या [illegible] तेल रे ।
जग नात गोत [illegible] साथ, हुइ हैं गुरु से हेल रे ॥४॥
सगरो सुपन [illegible] नहीं, जिस रोज पारस संकेत रे ।
वह आइ [illegible] हाँ, [illegible] सेग रे ।
जन दूलन [illegible] चरन कंवल, प्रेम प्रीति समेत रे ॥५॥

(२)

तू काहे को जग में आया, जो पै नाम से प्रीति न लाया रे ॥ टेक
तृस्ना काम सवाद घनेरे, मन से नाहिं [illegible] रे ।
भोग [illegible] आस निस बासर, इत उत चित [illegible] रे ॥१
त्रिकुटी तिरथ प्रेम जल [illegible] सुरत नहीं [illegible] रे ।
दुर्मति [illegible] सब मन के, ओंकार सुमिरि न [illegible] ॥२
कहँ से आयो कहँ को जैहो, अंत खोज नहिं पाया रे ।
[illegible] गये सब, काम्ह सबै [illegible]
कर [illegible] अंतर, तजि तन मोह औ माया रे ।
[illegible] बल बल [illegible], जिन माहिं अलख [illegible]

॥ उपदेश ॥

(१)

बोल [illegible] राम राम ॥ टेक ॥
सन्त [illegible] और सुपना, [illegible] लावो अष्ट जाम ॥१॥
समुझि बूझि [illegible] देखो, पिंड [illegible] धूम धाम ॥२॥
[illegible] पूछो, जपत उलटा सिद्ध काम ॥३॥
दास दूलन आस प्रभु की, [illegible] ना [illegible] ॥४॥

॥ दोहा ॥

राम नाम दुइ [illegible], रटै [illegible] कोय ।
दूलन [illegible] मन [illegible] ज होय ॥५॥

(२)

जागु जागु [illegible], पुरान दाग धोउ रे।
कर्म भर्म दूर करु, कीच काम खोउ रे ॥१॥
अपनी सुधि भूलि गई, और की क्या टोउ रे।
सत्त बात झूठ करै, झूठ ही को गोउ[1] रे ॥२॥
इहै बात जानि जानि, द्वार द्वार रोउ रे।
सत्तर पानी साबुन का, प्रेम पानी मोउ[2] रे ॥३॥
लाग दाग धोय डारु, वाह वाह होउ रे।
दूलन [illegible] काम, [illegible] है न सोउ रे ॥४॥

(३)

चलो चढ़ो मन यार महल अपने ॥ टेक ॥
चौक चाँदनी तारे [illegible], बरनत बनत न जात गने ॥१॥
हीरा रतन जड़ाव जड़े जहँ, [illegible] कोटि [illegible] बने ॥२
सुखमन पलँगा सुहज बिछौना, सुख सोवो को करै मने ॥३॥
दूलनदास के साईं [illegible], को आवै यह जग सुपने ॥४॥

(४)

जोगी चेत नगर मेँ रहो रे ॥ टेक ॥
प्रेम रंग रस ओढ़ चदरिया, मन [illegible] गहो रे ॥१॥
अन्तर लाओ नामहि की धुनि, [illegible] म सब धो रे ॥२॥
सूरत साधि गहो सत मारग, भेद न प्रगट कहो रे ॥३॥
[illegible] के साईं [illegible], भवजल पार करो रे ॥४॥

(५)

प्रानी जपि ले तू सतनाम ॥ टेक ॥
मात पिता सुत कुटुम [illegible], यह नाहिं आवैं काम।
सब अपने स्वारथ के संगी, संग न चलै छदाम ॥१॥

देना लेना जो कुछ होवै, करि ले [illegible] काम ।
आगे हाट बजार न पावै, कोइ नहिं पावै ग्राम ॥२॥
काम क्रोध मद लोभ मोह ने, आन बिछाया दाम ।
क्यौं मतवारा भया बावरे, भजन करो [illegible] ॥३॥
यह नर देही हाथ न आवै, चल तू अपने धाम ।
अब की चूक माफ नहिं होगी, दूलन अचल मुकाम ॥४॥

(६)

राम राम रटु राम राम सुनु, [illegible] सुवा सलोना रे ॥टेक॥
तन हरियाले बदन[1] सुलाले, बोल अमोल [illegible] रे ॥१॥
सत्त तंत्र अरु सिद्ध मंत्र पढ़ु, सोई मृतक जिवौना रे ॥२॥
सुबचन तेरे भौजल बेरे[2], [illegible] रे ॥३॥
दुलनदास के साईं जगजीवन, चरन सनेह [illegible] रे ॥४॥

(७)

मन रहि जा [illegible] सीस धरी, लागि रहै धुनि हरी हरी ॥१
तोहि [illegible] तारि जाय [illegible]
पाँच पचीसौ एक करी, पियहु दरस रस पेट भरी ॥३॥
हारे बहुत बहुत थकरी[3], चरन प्रीति बिन कछु न सरी ॥४॥
चरन प्रभाव जानु कुबरी[4], परसत गौतम नारि तरी[5] ॥५॥
साईं जगजीवन कृपा करी, जन दूलन परतीत परी ॥६॥

॥ बिनय ॥

(१)

साईं हो गरीब निवाज ॥ टेक ॥
देखि तुम्हैं घिन लागत नाहीं, अपने सेवक के साज ॥१॥
मोहिं अस निलज न यहि जग कोऊ, तुम ही से [illegible]

---

(१) चिहरा। (२) बेड़ा, नाव। (३) थक कर। (४) कुबजा जिसकी पीठ का कूब श्रीकृष्ण ने अपने हाथ से सीधा किया। (५) गौतम की नारी अहिल्या

और कछू हम [illegible] नाहीं, [illegible] नाम चरन तें काज ॥३॥
[illegible] गरीब [illegible], साईं [illegible] महराज ॥४॥

(२)

साईं दरस माँगौं तोर, आपनो जन जानि साईं मान राखहु मोर ॥१॥
अपथ[1] पंथ न सूझि इत उत, प्रबल पाँचो चोर ।
भजन केहि बिधि करौं साईं, चलत नाहीं जोर ॥२॥
नात लाइ दुराव[2] काहे, पतित जन की दौर ।
बचन अवधि[3] अधार मेरे, [illegible] नहिं और ॥३॥
हेरिये करि कृपा जन तन, [illegible] कोर ।
दास दूलन सरन आयो, राम बंदी-छोर ॥४॥

(३)

साईं तेरे कारन नैना भये बैरागी ।
तेरा सत दरसन चहौं, कछु और न माँगी ॥१॥
निसु बासर तेरे नाम की, अंतर धुनि जागी ।
फेरत हौं माला मनौं[5], अँसुवन झरि लागी ॥२॥
पलक तजी इत उक्ति तें[6], मन माया त्यागी ।
दृष्टि सदा सत सनमुखी, दरसन अनुरागी ॥३॥
मदमाते राते मनौं[5], दाधे बिरह आगी ।
मिलि प्रभु दूलनदास के, करु परम सुभागी ॥४॥

(४)

सुनहु दयाल मोहिं [illegible] ॥ टेक ॥
जन मन लगन सुधारन साईं, मोरि अबैको तुमहिं [illegible] ॥१॥
इत उत बिरम [illegible] हमारा, सूरत चरन कमल लपटावहु ॥२॥
तबहूँ अब मैं दास तुम्हारा, अब जिनि बिसरो [illegible]
दूलनदास के साईं [illegible], हमहूँ काँ [illegible] माँ लावहु ॥४

(१) कुराह । (२) हटाते हो । (३) प्रतिज्ञा । (४) सुंदर, मोहनी । (५) गोया कि ।

(५)

साईं सुनहु [illegible] मोरि ॥ टेक ॥

[illegible] मैं, [illegible] कर जोरि १

इत उत कतहूँ जाइ न [illegible], लागि रहै चरनन माँ डोरि ॥२

राखहु [illegible] पास [illegible], कस को [illegible] तोरि ॥३॥

आपन जानि कै मेटहु मेरे, औगुन सब क्रम भ्रम खोरि[१] ॥४॥

केवल एक हितू तुम मेरे, दुनियाँ भरी लाख [illegible] ॥५॥

दूलनदास के साईं [illegible], माँगौं सत दरस निहोरि ॥६॥

(६)

साईं [illegible] ना करि जाइ ।

पाँच [illegible] संग लागे, मोहिं [illegible][२] धाइ ॥१॥

चहत मन [illegible] करनो, अधर बैठि न पाइ ।

चढ़त उतरत रहत छिन छिन, नाहिं तहँ [illegible] ॥२॥

कठिन फाँसी अहै जग की, लियो सबहिं [illegible] ।

पास मन मनि नैन [illegible], सत्य गयो भुलाइ ॥३॥

[illegible] सतगुरु करहु दाया, चरन मन लपटाइ ।

दास दूलन बास सत माँ, सुरत नाहिं अलगाइ ॥४॥

(७)

प्रभु तुम किहेउ कृपा [illegible] ।

तुम कृपाल मैं कृपा [illegible][४] [illegible] साईं ॥१॥

कूकुर धोये होइ न बाछा,[५] तजै न नीच निचाई ।

बगुला होइ न [illegible] बासी,[६] [illegible] जे चिपै [illegible] ॥२॥

(१) कसर, ऐब । (२) सकते हैं । (३) [illegible] (४) अजोग । (५) गऊ का बच्चा । (६) मानसरोवर का बासी ।

प्रभु [illegible] अनुहारि [illegible] पाय चरन [illegible]।[1]
[illegible] पौरुष करै कहाँ लगि, दौरि कँडौरे[2] जाई ॥३॥
अब नहिं बनत बनाये मेरे, कहत अहौं [illegible]।
दूलनदास के साईं [illegible], समरथ लेहु बनाई ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

धनि मोरि आज [illegible] ॥ टेक ॥
आज मोरे अँगना [illegible] चलि आये, कौन करौं [illegible] ॥१
निहुरि निहुरि मैं अँगना बुहारैं, मातो मैं प्रेम [illegible] ॥२
भाव कै भात प्रेम कै [illegible], ज्ञान की दाल [illegible] ॥३॥
दूलनदास के साईं [illegible], गुरु के चरन [illegible] ॥४॥

(२)

जागु री मोरि सुरत पियारी।
चरन कमल छबि [illegible] निहारी ॥ १ ॥
बिसरि जाइ दे यह संसारी।
धरहु ध्यान मन ज्ञान बिचारी ॥ २ ॥
पाँच पचीसों दे झकझारी।
गहहु नाम की डोरि सँभारी ॥ ३ ॥
साईं जगजीवन अरज हमारी।
दूलनदास को आस तुम्हारी ॥ ४ ॥

(३)

सतनाम तें लागी अँखिया, मन परिगै [illegible] हो ॥१
सखि नैना [illegible] रहैं, [illegible][5] जात बोहि तीर[6] हो ॥२॥

---

(१) ईश्वर [illegible] बन जाय तब उस के चरनों में बासा मिले। (२) कंडों या उपलों का ढेर। (३) फटकार या डाँट। (४) स्मरण या सुमिरन। (५) [illegible] से जम जाने को "[illegible]" कहते हैं [illegible] में "टरे" है जिसके [illegible] के हैं। (६) पास।

नाम सनेही बावरे, दृग भरि भरि आवत नीर हो ॥३॥
र[illegible] रस-मसे[1], यहि लागी लगन गँभीर हो ॥४॥
सखि इश्क पिया से [illegible], तजि [illegible]
सखि [illegible] भरथरी, सुलतान भयो फकीर हो ॥६॥
सखि दूलन का से कहै, तह [illegible] प्रेम की पीर हो ॥७॥

(४)

हुआ है मस्त मंसूरा, चढ़ा सूली न छोड़ा हक़ ।
[illegible] को, अहै मरना यही बरहक़ ॥१॥
जो बोले [illegible] यारों, हमारे दिल में है जो शक ।
अहै यह काम सूरों का, [illegible] पीर से अब तक ॥२॥
[illegible] की सीफ़त, जहाँ में [illegible] अब तक ।
[illegible], सभी मेटे दुनी के धक ॥३॥
[illegible] रहे नूर अल्लाह का, रहे जीते रहे जब तक ।
हुआ [illegible] ठिकाना भी, भये ऐसे नहीं हर यक ॥४॥
सुना है इश्क़ मजनूँ का, लगी लैला कि रहती ज़क ।
[illegible] ख़ाक तन कीन्हा, हुए वह भी उसी माफ़िक़ ॥५॥
दुलन जन को दिया मुर्शिद, [illegible] नाम का [illegible] ।
वही है शाह [illegible], चमकता देखिये लक़लक़ ॥६॥

(५)

अब [illegible] दिल का, [illegible] में आया है ।
संतों की सुहबत में रह कर, हक़ हादी को सिर नाया है ॥१॥
उपदेस उग्र गहि सत्त नाम, सोइ अष्ट जाम धुनि [illegible] है ।
मुर्शिद की मेहर हुई यों कर, मज़बूत जोश उपजाया है ॥२॥

---

(१) रस में पगे । (२) प्रेमी जन जिन की प्रीति प्रीतम से लगी है उन्हें संसार और धन माल की चिन्ता नहीं रहती । (३) अलबत्ता, अनोखी ।

हर वक़्त तसौवर मैँ सूरत, मूरत अंदर [illegible] है ।
बूअली क़लंदर औ फ़रीद, [illegible] वही मत गाया है ॥३॥
कर [illegible] सबूरी [illegible], अल्लाह [illegible] दरसाया है ।
लखि जन [illegible] पीर, [illegible] भाया है ॥
[illegible] ख़ास ग़ैबी हुज़ूर, वह दिल अंदर मैँ आया है ॥४॥

(६)

ऐसा रंग रँगैहौँ, मैं तो [illegible] ॥ टेक ॥
भट्ठी अधर लगाइ, नाम की सोज[1] [illegible] ।
पवन सँभारि उलटि दै [illegible], [illegible] सुरति [illegible] ॥१॥
गुरमति लहन[2] सुरति भरि गागरि, [illegible] नेह [illegible] ।
प्रेम नीर दै प्रीति [illegible], यहि बिधि [illegible] ॥२॥
अमल अगारी नाम [illegible], नैनन छबि [illegible] ।
दै [illegible] महँ सत [illegible], बहुरि न यहि जग ऐहौँ ॥३॥
है रस मगन पियौँ भर [illegible], माला दाम [illegible] ।
कह दूलन सतसाइँ जगजीवन, पिउ मिलि प्यारी कहैहौँ ॥४॥

॥ कहरा ॥

(१)

हमरे तो केवल नाम अधार ।
पूरन काम नाम दुइ अच्छर, अंतर लागि रहे [illegible] ॥१॥
दासन पास बसै निसु बासर, [illegible] कबहुँ न न्यार ।
अरध नाम टेरत प्रभु धाये, आय तुरत गज गाढ़ निवार ॥२॥
जन मन-रंजन सब दुख-भंजन, [illegible] परम हित प्यार ।
नाम पुकारत चीर [illegible], द्रुपदी लज्या के [illegible] ॥३॥

---

(१) तपन, बिरह । (२) जामन जिस से शराब का ख़मीर जल्द उठ आता है ।

[illegible] गनेस औ सेष सहसजीहिं, नारद सुक[1] [illegible] ।
[illegible] जीहिं [illegible] सिवमन [illegible] ॥४॥

(२)

भक्तन राम चरन धुनि लाई ॥ टेक ॥
चारिहु जुग गोहारि प्रभु लागे, जब दासन [illegible]ई ॥१॥
[illegible] रावन [illegible], छिन माँ खाक [illegible]ई ॥२॥
[illegible] भक्ति नाम की महिमा, कोऊ न सकत [illegible]ई ॥३॥
कोउ [illegible][3] न एकौ मानहु, दिन दिन की [illegible]ई ॥४॥
[illegible] के साईं [illegible], है [illegible] दुहाई ॥५॥

॥ झूलना ॥

(१)

पंखा चँवर [illegible] ढुरैं, सूबा सबै [illegible] करैं ।
[illegible] को तंबू तन्यो, बैठक बन्यो [illegible] का ॥
दिन रात [illegible] बाजती, सुथरी सहेली [illegible] ।
[illegible][4] आगे यों जलै, [illegible] मानो चंद का ॥
एकै अतर चोवा चमेली, बेला खुसबोई लिये ।
एकै कटोरे मैं किये, सरबत सलोना कंद का ॥
हिन्दू तुरुक दुइ दीन आलम, [illegible] ताबीन[5] मैं ।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान दसरथ-नंद का ॥

(२)

बर[6] जे अठारह बरन मैं, निरपच्छ[7] हैं ब्याकरन मैं ।
[illegible] चरन मैं, जानैं न स्वाद [illegible] का ॥
कुस मुद्रिका कर [illegible] जे [illegible] भाखते ।
नहिं अन्न [illegible], नित पान करते छीर का ॥

---

(१) सुकदेव। (२) ब्रह्मा। (३) संशय। (४) [illegible] यानी [illegible]
[illegible]

धोती ... अंग मैं, रत भेद किन्हा रंग मैं।
... बहु संग मैं, जिन्ह आस तीरथ तीर का ॥
सूतहिं सदा मुहुँ सेज जे, भूरे ... तेज के।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान श्री ... का ॥

(३)

राखे जटा जिन्ह माथ मैं, ... लाये गात मैं।
तिरसूल तौंबी हाथ मैं, छोड़ेउ सकल सुख धाम का ॥
भावै जहीं जावैं तहीं, पुर बीच मैं आवैं नहीं।
रुद्राच्छ का माला गरे, आला[१] ... धाम का ॥
दसहूँ दिसा जिन्ह घूमि के, ... भूमि कै।
फिरि मौन होइ बैठेउ तज्यो, ... दौलत दाम का[३] ॥
करि जोग देहीं ..., हरताल पारा मारते।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान ... स्याम का ॥

॥ ... ॥

(१)

साहिब अपने पास हो, कोइ दरद सुनावै ॥ टेक ॥
साहिब जल थल घट ..., धरती पवन ... ॥१॥
नीची अटरिया की ... बरत ... हो ॥२॥
सखिया इक पैठी जल भीतर, रटत ... पियास हो ॥३॥
मुख नाहिं पिये ... पियत हुलास हो ॥४॥
साईं ... साईं ...[५], ... हो ॥५॥

(२)

नीक न लागे बिनु भजन ... ॥ टेक ॥
का कहि आयौ हियाँ बरत्यो नाहीं,
भूलि गयल तोरा कौल ... ॥ १ ॥

---

(१) उत्तम। (२) फेरा। (३) फिर मौन (चुप) साध कर बैठे और ... की चर्चा छोड़ दो। (४) तालाब। (५) संसार के ...।

माया रँग ... नाहीं,

भेष बनाय रँग ... ॥ २ ॥

बिन रे भजन तोरी ... होइहै,

... जैसे तू जम के दुवरवा ॥ ३ ॥

... के साईं ...

हरि के चरन पर हमरो ... ॥ ४ ॥

...

[संक्षिप्त ... चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १५०]

॥ गुरुदेव ॥

बलि हौं बलि हौं ... की ॥ टेक ॥

जिन ध्यान दियो ... को ।

त्रिकुटी संगम जिन राह निबेरी ॥ १ ॥

प्रेम बिलास ... मैं बास है ।

... रहित भो फेरी ॥ २ ॥

अनहद बाजे ... कि बानी ।

बिन स्रवन तहँ सुनत है टेरी ॥ ३ ॥

बुल्ला हिरदे ... बोलै ।

ब्रह्म ज्ञान कि बात सुनो मेरी ॥ ४ ॥

॥ नाम ॥

साईं के नाम की बलि जाऊँ ।

सुमिरत नाम बहुत सुख पायो अंत कतहुं नाहिं ठाँव ॥१॥

नाम बिना मन ... , ... चित लै जाँव ॥२॥

बिन [illegible] मन कैसो, ज्यों लूले को गाँव[1] ॥३॥
पवन मथानी हिरदे ढूँढ़ो, तब पावै मन ठाँव ॥४॥
जन बुल्ला [illegible] कर जोरे, [illegible] चरन [illegible] ॥५॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

सोहं हंसा लागलि डोर ।
सुरति निरति चढ़ु [illegible] मोर ॥ १ ॥
झिलमिलि [illegible] त्रिकुटी ध्यान ।
[illegible] गगन तान ॥ २ ॥
गह गह गह [illegible] ।
[illegible] तहँ रहत जान ॥ ३ ॥
लहरि लहरि उठि पछिँव[2] घाट ।
फहरि फहरि चल उतर बाट ॥ ४ ॥
सेत बरन तहँ आवै आप ।
कह बुल्ला सोइ माइ बाप ॥ ५ ॥

(२)

अरिल

स्याम घटा घन घेरि चहूँ दिसि [illegible] ।
[illegible] बाजे घोर जो गगन [illegible] ॥
दामिनि दमकि जो [illegible] त्रिवेनी [illegible] ।
बुल्ला हृदे बिचार तहाँ मन [illegible] ॥

(३)

अरिल

सामहिँ उगवे सूर भोर ससि [illegible] ।
गंगा [illegible] के संगम [illegible] ॥

---

(१) जिस तरह लूला अपने पैरों से चल कर गांव (मुक़ाम) को नहीं पहुंच [illegible] तरह बिना नाम के दरस परस के मन की हालत है यानी अंतर में चाल नहीं चलती । (२) पच्छिम ।

[illegible] आप सोइँ डोरि लागइ ।
बुल्ला ता मैं पैठि जोति मैं [illegible] ।

॥ बिरह ॥

(१)

देखो पिया काली घटा मो पै भारी ॥१॥
सूनी सेज [illegible] लागी, मरौं बिरह की जारी ॥२॥
प्रेम प्रीति यहि रीति चरन लगु, पल छिन नाहिं [illegible] ॥३॥
[illegible] पंथ अंत नहिं पायो, जन बुल्ला [illegible] ॥४॥

(२)

नैना मोरे निपट [illegible] ठौर अटके ॥१॥
सुख को साथ सबै कोइ चाहे, दुखहिं परे पर छटके ॥२॥
भौंह [illegible] नैन दोउ गाँसी, जहाँ लगे तहँ लटके ॥३॥
जन बुल्ला दाया [illegible] की, देखु सकल जग भटके ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

साचो भक्ति [illegible] की, मेरो मन माना ।
[illegible] बाचा [illegible], सुनु संत [illegible] ॥१॥
लँगरा लुंजा ह्वै रहो, [illegible] अरु काना ।[1]
राम नाम सोँ खेल है, दीजै तन दाना ॥२॥
भक्ति हेतु गृह [illegible], तजि गर्व [illegible] ।
जन बुल्ला पायो बाक[2] है, [illegible] ॥३॥

(२)

या बिधि करहु आपहिं पार ।
जस मीन जल की प्रीति जानै, देखु आपु बिचार ॥१॥

(१) [illegible] बंद करो तब मालिक की ओर अंतर में [illegible] । (२) [illegible]

जस सीप रहत समुद्र माहीं, गहत [illegible] बार[1] ।
वा की सुरत [illegible] लागी, [illegible] बुंद [illegible] ॥२॥
(जस) चकोर चन्द सोँ दृष्टि लावै, अहार करत अँगार ।
दहत [illegible] पान कीन्हे, [illegible] होत [illegible] ॥३॥
कीट भृंग की रहनि जानो, जाति पाँति गँवाय ।
बरन [illegible] एक मिलि भे, [illegible] समाय ॥४॥
(अस) दास बुल्ला आस [illegible], राम चरन [illegible] ।
देहु दरसन मुक्ति परसन, [illegible] निवार ॥५॥

॥ बेहद ॥

(१)

प्रभु [illegible] अधार उज्जल, बिन्दु सकल [illegible] ।
[illegible] रूप सरूप तेरो, मो पै बरनि न जावई ॥१॥
बाँधि [illegible] साधि [illegible], गरज गरज [illegible] ।
तहँ हंस मुनि जन चूगते मनि, रस परसि परसि अघावई ॥२
बिना कर मुख बेनु[3] बाजै, बीन [illegible] गुंजई ।
बिना नैनन दरस देखो, [illegible] [illegible] जनावई ॥३॥
वा के जाति पाँति न नेम धर्मा, भर्म सकल गँवावई ।
आपु आपु बिचारि देखो, ऐसो है वह रावई[4] ॥४॥
जीति पाँच पचीस तीनौं, चौथे जा [illegible] ।
तब दास बुल्ला लियो गढ़, जब गुरू दीन्ह [illegible] ॥५॥

(२)

अनहद ताल मृदंग थेइ थेइ बाजै, सकल भुवन जाकी [illegible] ॥१
ब्रह्मा बिस्नु खड़े सिव द्वारै, परम जोति सो करहिं जुहारै[5] ॥२

---

(१) पानी। (२) चकोर आग खाने से नहीं जलता बल्कि उस में चैतन्यता बढ़ती है। (३) एक लम्बा बाजा जो मुँह से बजाया जाता है। (४) राजा। (५) बंदगी।

गगन मँडल महँ मिलन होय, [illegible] मिलै तो देखै सोय ॥३॥
आठ पहर [illegible] गाजै, भक्ति भाव माथे पर छाजै ॥४॥

॥ [illegible] ॥

(१)

अब कि बार मो पै होहु दयाल, रोम रोम जन होइ [illegible] ॥१॥
[illegible], तुम्हरे चरन पर आपा वार ॥२॥
तुम [illegible] हहु [illegible] सार, मोरे हिये महँ तुम [illegible] ॥३॥
तुम बिन जीवन कौने काज, बार बार मो को आवै लाज ॥२॥
[illegible] साज समाज, बुल्ला माँगै भक्ती राज ॥५॥

(२)

ऐसी बिनय सुनहु [illegible] ।
अब की बार काटहु जम फाँसी ॥१॥
भया प्रकास मिटा [illegible] ।
आदि अंत मध मो [illegible] ॥२॥
रूप रेख तहँ बरनि न जासी ।
[illegible] ॥३॥
जन बुल्ला तहँ रहे हजूरा ।
पूरन ब्रह्म देखा जहँ नूरा ॥४॥

॥ भेद ॥

सुखमनि सुरति डोरि बनाव ।
मेटिहै सब कर्म जिय के, बहुरि इतहिं न आव ॥१॥
पैठि अंदर देखु कंदर[२], जहाँ जिय को बास ।
उलटि प्रान [illegible] मेटो, सेत [illegible] निवास ॥२॥
गंग जमुना मिलि [illegible], [illegible] बहाव ।
लवकति[३] बिजुली [illegible], [illegible] गरज [illegible] ॥३॥

---

(१) पहर । (२) गुफा । (३) चमकती है ।

जोति आया आपहीं, गुरु यारि सब्द सुनाव ।
तब दास बुल्ला भक्ति लागो, [illegible] गाव ॥४॥

॥ उपदेश ॥

(१)

[illegible] क्यों नहिं आप, [illegible] अजपा जाप ॥टेक॥
बिन खोजे कहुँ राह न पैहौ, [illegible] करहु बिलाप ॥१॥
निकरहिं राम नाम अभि अंतर, [illegible] जाहि [illegible] ॥२॥
[illegible] हजूर [illegible] संगम, [illegible] नूर जो जाप ॥३॥
जन बुल्ला महबूब नूर मैं, यारी पीर[1] प्रताप ॥४॥

(२)

होली

होरी खेलो रंग भरी, सब [illegible] संग लगाई ॥टेक॥
फागुन आयो मास अनँद भो, खेलि लेहु नर नारी ।
ऐसा समय बहुरि नहिं पैहो, जैहो जनम जुवा हारी ॥१॥
तीर त्रिबेनी होरी खेलो, अनहद डंक बजाई ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस तिनौं जन, रहे चरन [illegible] ॥२॥
बनि बनि आवैं दरस दिखावैं, [illegible] कला बनाई ।
जन बुल्ला ऐसि होरी खेले, रहे नाम [illegible] ॥३॥

(३)

अरिल्ल

मुरगी यह संसार चेहु चेहुँ करत है ।
आतम राम को नाम हदे नहिं धरत है ॥
बिना राम नहिं मुक्ति झूठ सब कहत है ।
बुल्ला हदे [illegible] राम [illegible] है ॥

[illegible] जी

[संक्षिप्त [illegible] के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १४१]

॥ [illegible] ॥

कवित्त

दौलत निसान बान धरै खुदी [illegible],
  करत न दाया काहू जीव की जगत मैं ।
[illegible] है नीके यह [illegible] है सकल रंग,
  गहे फिरै काल फंद [illegible] मैं ॥
घेरा डेरा गज [illegible] झूठो है सकल साजि,
  बादि[illegible] हरि नाम कोऊ काज नाहिं अंत कै ।
बार बार कहौं तोहि छोड़ु मान माया मोह,
  केसो काहे को करै छोभ मोह काम कै ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

[illegible] कंत संत हम पाया ।
  कोटि सूर जा की निर्मल काया ॥१॥
प्रेम बिलास अमृत रस [illegible] ।
  अनुभौ चँवर रैन दिन ढुरिया ॥२॥
आनँद मंगल सोहं गावैं ।
  सुख सागर प्रभु कंठ [illegible] ॥३॥
सत्य पुरुष धुनि अति उजियारी ।
  कोटि भानु ससि छवि पर वारी ॥४॥
तेज पुंज निर्गुन [illegible] ।
  कह केसो सोइ कंत [illegible] ॥५॥

(२)

पिय थारे रूप लुभानी हो ।
प्रेम ठगौरी मन हरो, बिन दाम बिकानी हो ॥१॥
भँवर कँवल रस बेधिया, सुख स्वाद बखानी हो ।
दीपक ज्ञान पतंग सोँ, मिलि जोति समानी हो ॥२॥
सिंधु भरा जल पूरना, सुख सीप समानी हो ।
स्वाँति बुंद सोँ हेतु है, अरध-सुख आनी हो ॥३॥
नैन स्रवन मुख नासिका, तुम अंतर जानी हो ।
तुम बिन पलक न जीविये, जस मीन रु पानी हो ॥४॥
व्यापक पूरन दसौ दिसि, परगट पहिचानी हो ।
केसो यारी गुरु मिले, आतम रति मानी हो ॥५॥

(३)

म्हारे हरिजु सूँ जुरलि सगाई हो ।
तन मन प्रान दान दै पिया को, सहज सरूपम पाई हो ॥१॥
अरध उरध के मध्य निरंतर, सुखमन चौक पुराई हो ।
रवि ससि कुंभक अमृत भरिया, गगन मँडल मठ छाई हो ॥२
पाँच सखी मिलि मंगल गावहिँ, अनहद तूर बजाई हो ।
प्रेम तत्त दीपक उँजियारे, आतम जोति जगाई हो ॥३॥
साध संत मिलि कियो बसीठो[1], सतगुर लगन लगाई हो ।
दरस परस पतिब्रता पिव की, सिव घर सक्ति बसाई हो ॥४
अमर सुहाग भाग उँजियारो, पूर्व प्रीति जगाई हो ।
रोम रोम मन रस के बसि भइ, केसो पिय मन भाई हो ॥५॥

---

(१) दूत या बिचौलिया का काम ।

॥ घट मठ ॥

धनि सो घरी धनि बार, जबहिँ प्रभु पाइये ।
प्रगट प्रकास हजूर, दूर नहिँ जाइये ॥ १ ॥

नहिँ जाइ दूर हजूर साहिब, फूलि सब तन मैं रह्यो ।
अमर अछय सदा जुगन जुग, जक्त दीपक उगि रह्यो ॥२॥

निरखी दसव दिसि सर्व सोभा, कोटि चंद सुहावनं ।
सदा निरभय राज नित सुख, सोई केसो ध्यावनं ॥३॥

पूरन सर्व निहचल, जानि सोइ लीजिये ।
निर्मल निर्गुन कंत, ताहि चित दीजिये ॥ ४ ॥

[illegible] चित रीझि कै उत, बहुरि इतहिँ न आइये ।
जहँ तेज पुंज अनंत सूरज, गगन मैं मठ छाइये ॥ ५ ॥

लये घट पट खोलि कै प्रभु, अगम गति तब गति करी ।
बढ़ो अधिक सुहाग केसो, बिछुरत नाहिँ इक घरी ॥६॥

अदभुत भेष अगाध, अलेख मनाइये ।
निसु बासर करि प्रेम, तो कंठ लगाइये ॥ ७ ॥

लाइये घट छाड़ि कै मठ, उमँगि सोहं भरि रहो ।
बढ़ो अधिक सुहाग सुंदरि, अलख स्वामी रमि रहो ॥८॥

मिलो प्रभू अनूप उदै अति, सर्व गति जा सोँ भई ।
आदि अंत रु मध्य सोई, मिलि पिया केसो मई ॥ ९ ॥

फूलि रह्यो सब ठाँव, तो धरनि अकास मैं ।
सो त्रिभुवन-पति नाथ, निरखि लयो आप मैं ॥ १० ॥

निरखि आपु अघात नाहीं, सकल सुख रस मानिये ।
पिवहि अमृत सुरति भर करि, संत बिरला जानिये ॥११॥

कोटि बिस्नु अनंत ब्रह्मा, सदा सिव जेहि ध्यावहीं ।
सोइ मिलो सहज सरूप केसो, अनँद मंगल [illegible] ॥१२॥

[illegible]

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १४२]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

गुरु बिन और न जान, मान मेरो कहो ।
चरनदास गुरुदेव, बिस्वास ही रहो ॥१॥
बेद रूप गुरु होहिँ, कि कथा सुनावहीं ।
पंडित को धरि रूप, कि अर्थ बतावहीं ॥२॥
कल्पबृच्छ गुरुदेव, मनोरथ सब सरैं ।
कामधेनु गुरुदेव, छुधा तृस्ना हरैं ॥३॥
गुरु ही सेस महेस, तोहि चेतन करैं ।
गुरु ब्रह्मा गुरु बिस्नु, होय खाली भरैं ॥४॥
गंगा सम गुरु होय, पाप सब धोवहीं ।
सूरज सम गुरु होय, तिमिर हरि[1] लेवहीं ॥५॥
गुरु ही को करु ध्यान, नाम गुरु को जपौ ।
आपा दीजै भैंट, पुजन गुरु ही थपौ ॥६॥
समरथ स्री सुकदेव, कहा महिमा करौं ।
अस्तुति कही न जाय, सीस चरनन धरौं ॥७॥

---

(१) खींच ।

(२)

गुरु दूती[1] बिन हे सखी, पीव न देखो जाय ।
भावै तुम जप तप करि देखैा, भावै तीरथ न्हाय ॥१॥
पाँच सखी पच्चीस सहेली, अति चातुर [illegible] ।
मोहिं अयानी जानि कै, मेरो [illegible] लियो लुकाय[2] ॥२॥
बेद पुरान सबै जो ढूँढ़े, स्रुति सिमरित सब धाय ।
आन धर्म औ क्रिया कर्म मैं, दीन्हो मोहिं भरमाय ॥३॥
भटकत भटकत जनमै हारी, चरन सखी गहे आय ।
सुकदेव साहिब किरपा करिकै, दीन्हो अलख लखाय ॥४॥
देखत ही सब भ्रम भय भागे, सिर सूँ गई बलाय ।
चरनदास जब प्रीतम पायो, दरसन कियो अघाय ॥५॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

अनहद सबद अपार दूर सूँ दूर है ।
चेतन निर्मल सुद्ध दह भरपूर है ॥ १ ॥
निःअच्छर है ताहि और निःकर्म है ।
परसाराम तेहि मानि वही परब्रह्म है ॥ २ ॥
या के कीन्हे ध्यान होत है ब्रह्म हीं ।
धारै तेज अपार जाहिं सब भर्म हीं ॥ ३ ॥
या को छोड़ै नाहिं सदा रहै लीन हीं ।
यही जो अनहद सार जानि परबीन हीं ॥ ४ ॥

(२)

जब से अनहद घोर सुनी ।
इन्द्री थकित गलित मन हूवा, आसा सकल भुनी ॥१॥
घूमत नैन सिथिल भइ काया, अमल जु सुरत सनी ।
रोम रोम आनंद उपज करि, आलस सहज भनी ॥२॥

---

(१) बिचौलिया । (२) छिपाय ।

झलकारै ज्यौं सबद समावै, अंतर भौंज कनी ।
करम भरम के बंधन छूटे, दुबिधा बिपति हनी ॥३॥
आपा बिसरि जक्त कूँ बिसरो, कित रहिँ पाँच जनी ।
लोक भोग सुधि रही न कोई, भूले ज्ञान गुनी ॥४॥
हो तहँ लीन चरनहीं दासा, कहै सुकदेव मुनी ।
ऐसा ध्यान भाग सूँ पैये, चढ़ि रहै सिखर अनी[1] ॥५॥

॥ चितावनी ॥

(१)

अरे नर हरि का हेत न जाना ।
उपजाया सुमिरन के काजे, तैं कछु औरै ठाना ॥१॥
गर्भ माहिँ जिन रच्छा कीन्ही, हूँआँ खाने कूँ दीन्हा ।
जठर अगिन सौँ राखि लियो है, अँग संपूरन कीन्हा ॥२॥
बाहर आय बहुत सुधि लीन्ही, दसन[2] बिना पय प्यायो ।
दाँत भये भोजन बहु भाँती, हित सौँ तोहि खिलायो ॥३॥
और दिये सुख नाना बिधि के, समुझि देखु मन माहीं ।
भूलो फिरत महा मदमायो, तू कछु जानत नाहीं ॥४॥
तुव कारन सब कछु प्रभु कीन्हो, तू कीन्हा निज काजा ।
जग ब्यौहार पगो ही बोलै, तोहि न आवै लाजा ॥५॥
अजहूँ चेत उलट हरि सौंही[3], जन्म सुफल करु भाई ।
चरनदास सुकदेव कहैं यौं, सुमिरन है सुखदाई ॥६॥

(२)

कछु मन तुम सुधि राखौ वा दिन की ।
जा दिन तेरी देह छुटैगी, ठौर बसौगे बन की ॥१॥
जिन के संग बहुत सुख कीन्हे, मुख ढकि ह्वैहैं न्यारे ।
जम का त्रास होय बहु भाँती, कौन छुटावनहारे ॥२॥

देहरी लौं तेरी नारि चलैगी, बड़ी पौरि लौं माई ।
मरघट लौं सब बीर भतीजे, हंस अकेलो जाई ॥३॥
द्रव्य गड़े अरु महल खड़े ही, पूत रहैं घर माहीं ।
जिन के काज पचे दिन राती, सो सँग चालत नाहीं ॥४॥
देव पितर तेरे काम न आवैं, जिन की सेवा लावै ।
चरनदास सुकदेव कहत है, हरि बिन मुक्ति न पावै ॥५॥

(३)

अपना हरि बिन और न कोई ।
मातु पिता सुत बंधु कुटुँब सब, स्वारथ ही के होई ॥१॥
या काया कूँ भोग बहुत दै, मरदन करि करि धोई ।
सो भी छूटत नेक तनिक सी, सँग न चाली वोई ॥२॥
घर की नारि बहुत ही प्यारी, तिन मैं नाहीं दोई[1] ।
जीवत कहती साथ चलूँगी, डरपन लागी सोई ॥३॥
जो कहिये यह द्रव्य आपनी, जिन उज्जल मति खोई ।
आवत कष्ट रखत रखवारी, चलत प्रान ले जोई ॥४॥
या जग मैं कोइ हितू न दीखे, मैं समझाऊं तोई ।
चरनदास सुकदेव कहैं यों, सुनि लीजै नर लोइ ॥५॥

॥ बिरह ॥

(१)

सुधि बुधि सब गइ खोय री, मैं इस्क दिवानी ।
तलफत हूँ दिन रैन ज्यौं, मछली बिन पानी ॥ १ ॥
बिन देखे मोहि कल न परत है, देखत आँख सिरानी[2] ।
सुधि आये हिय मैं दव[3] लागै, नैनन बरखत पानी ॥२॥
जैसे चकोर रटत चंदा को, जैसे पपिहा स्वाँती ।
ऐसे हम तलफत पिय दरसन, बिरह बिथा यहि भाँती ॥३॥

जब तें मीत बिछोहा हुआ, तब तें कछु न सुहानी ।
अंग अंग अकुलात सखी री रोम रोम मुरझानी ॥४॥
बिन मनमोहन भवन अँधेरो, भरि भरि आवे छाती ।
चरनदास सुकदेव मिलावो, नैन भये मोहि घाती[1] ॥५॥

(२)

हमारो नैना दरस पियासा हो ।
तन गयो सूखि हाय हिये बाढी, जीवत हूँ वोहि आसा हो॥१
बिछुरन थारो[2] मरन हमारो, मुख मैं चलै न ग्रासा[3] हो ।
नींद न आवे रैनि बिहावे, तारे गिनत अकासा हो ॥२॥
भये कठोर दरस नहिं जाने, तुम कूँ नेक न साँसा[5] हो ।
हमरी गति दिन दिन औरे ही, बिरह बियोग उदासा हो ३
सुकदेव प्यारे मत रहु न्यारे, आनि करो उर बासा हो ।
रनजीता[6] अपनो करि जानो, निज करि चरनन दासा हो॥४

(३)

मो बिरहिन की बात, हेली बिरहिन हो सोइ जानि है ।
नैन बिछोहा जानती, हेली बिरहै कीन्हो घात ॥१॥
या तन कूँ बिरहा लगो, हेली ज्यों घुन लागो काठ ।
निस दिन खाये जातु है, हेली देखूँ हरि की बाट ॥२॥
हिरदे मैं पावक जरै, हेली तपि नैना भये लाल ।
आँसूँ पर आँसू गिरैं, हेली यही हमारो हाल ॥३॥
प्रीतम बिन कल ना परै, हेली कलकल[7] सब अकुलाहि ।
छिगी[8] पहूँ सत[9] ना रहो, हेली कब पिय पकरैं बाँहि ॥४॥

---

(१) दुखदाई जीवलेवा । (२) तेरा । (३) लुकमा या कौर । (४) बितती है ।
(५) फ़ुरसत । (६) चरनदासजी का [illegible] का रक्खा हुआ नाम । (७) व्याकुल ।

गुरु सुकदेव दया करैं, हेली मोहिं मिलावैं काल ।
चरनदास दुख सब भजैं, हेली सदा रहू पति नाल[1] ॥५॥

॥ प्रेम ॥

गुरु हमरे प्रेम पियायो हो ।
ता दिन तैं पलटो भयो, कुल गात नसायो हो ॥१॥
अमल चढ़ो गगनैं लगे। अनहद मन छायो हो ।
तेज पुंज की सेज पै, प्रीतम गल लायो हो ॥२॥
गये दिवाने देसड़े, आनंद दरसायो हो ।
सब किरिया सहजै छुटी, तप नेम भुलायो हो ॥३॥
त्रैगुन तैं ऊपर रहूं, सुकदेव बतायो हो ।
चरनदास दिन रैन नहिं, तुरिया पद पायो हो ॥४॥

॥ विनती ॥

पतित उधारन बिरद[2] तुम्हारो ।
जो यह बात साच है हरि जू तौ तुम हम कूँ पार उतारो ॥१
बालपने औ तरुन अवस्था, और बुढ़ापे माहीं ।
हम से भई सभी तुम जानौ, तुम से नेक छिपानी नाहीं ॥२
अनगिन पाप भये मनमाने, नखसिख औगुन धारी ।
हिरि फिरि कै तुम सरनै आयो, अब तुम को है लाज हमारी ॥३
सुभ करमन को मारग छूटो, आलस निद्रा घेरो ।
एकहिं बात भली बनि आई, जग में कहायो तेरो चेरो ॥४
दीनदयाल कृपाल बिसंभर, स्री सुकदेव गुसाईं ।
जैसे और पतित घन[3] तारे, चरनदास को गहियो बाहीं ॥५

(९)

राखो जी लाज गरीब निवाज ।
तुम बिन हमरे कौन सँवारे, सबही बिगरे काज ॥१॥

भक्त बछल हरि नाम कहाबो, पतित उधारनहार ।
करो मनोरथ पूरन जन को, सीतल दृष्टि निहार ॥२॥
तुम जहाज मैं काग तिहारो, तुम तजि अत न जाउँ ।
जो तुम हरि जू मारि निकासो, और ठौर नहि पाउ ॥३॥
चरनदास प्रभु सरन तिहारी, जानत सब ससार ।
मेरी हँसी सो हँसी तुम्हारी, तुम हूँ देखु बिचार ॥४॥

॥ उपदेश ॥

सोई सोहागिल नारि, पिया मन भावई ।
अपने घर को छोडि, न पर घर जावई ॥१॥
अपने पिय का भेद, न काहू दीजिये ।
तन मन सुरति लगाय के, सेवा कीजिये ॥२॥
पति की अज्ञा चाल पाल, पिय को कहो ।
लाज लिये कुलवत, जतन हीं सूँ रहो ॥३॥
धन धनि है जग माहिं, पुरुष बहु हित धरै ।
सब सूँ नायक[1] होय जो, सिर बर[2] को करै ॥४॥
पिय कूँ चाहो रूप, सिँगार बनाइये ।
पतिबरता कुल दोय मैं, सोभा पाइये ॥५॥
नौधा बस्तर पहिरि, दया रँग लाल है ।
भूखन बस्तर धारि, बिचित्तर जाल है ॥६॥
रगमहल निर्दोष, वहँ झिलमिल नूर है ।
निरगुन सेज बिछाय, सभी करि दूर भै[3] ॥७॥
मदिर दीपक बारि, बिन बाती घीव की ।
सुघर चतुर गुन रासि, लाडिली पीव की ॥८॥
कहैं गुरु सुकदेव यौं बालम मोहिये ।

बुल्ले शाह

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १५१]

॥ चितावनी ॥

( )

अब तो जाग मुसाफर प्यारे, रैन घटी लटके सब तारे ॥ टेक
आवागौन सराईं डेरे, साथ तयार मुसाफर तेरे ।
अजे[1] न सुन दा कूच नगारे ॥१॥
करले आज करन दी बेला[2], बहुरि न होसी आवन तेरा ।
साथ तेरा चल चल्ल पुकारे ॥२॥
आपो अपने लाहे[3] दौडी, क्या सरधन क्या निरधन बौरी ।
लाहा नाम तू लेहु सँभारे ॥३॥
बुल्ले सहु[4] दी पैरी परिये गफलत छोड हीला[5] कुछ करिये ।
मिरग जतन बिन खेत उजारे ॥४॥

(२)

माटी खुदी करेंदी यार ॥ टेक ॥
माटी जोडा माटी घोडा, माटी दा असवार ॥१॥
माटी माटी नूँ मारन लागी, माटी दे हथियार ॥२॥
जिस माटी पर बहुती माटी, तिस माटी हंकार ॥३॥
माटी बाग बगीचा माटी, माटी दी गुलजार ॥४॥
माटी माटी नूँ देखन आई, माटी दी बहार ॥५॥
हस खेल फिर माटी होई, पौंदी[6] पाँव पसार ॥६॥
बुल्ले साह बुझारत[7] बूझो, लाह सिरों भो मार[8] ॥७॥

---

(१) अब भी । (२) समय, अवसर । (३) लाहा = लाभ । (४) खाविन्द ।

॥ बिरह ॥

कद मिलसी मैं बिरहों सताई नूं ॥ टेक ॥

आप न आवे नाँ लिख भेजे, भट्ठि अजेही लाई नूं[1] ॥१॥

तैं जेहा[2] कोइ होर[3] नाँ जाणा, मैं तनि सूल सवाई नूं ॥२॥

रात दिनें आराम न मैं नूं, खावे बिरह कसाई नूं ॥३॥

बुल्ले साह धृग[4] जीवन मेरा, जौं लग दरस दिखाई नूं ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

घूँघट चक[5] प्यारे, हुन सरमाँ केहियाँ रखियाँ वे[7] ॥टेक॥

प्रीत लगा के मन हर लीना, फिर तैं अपना दरस न दीना।

जहर पियाला आपे पीना, सो मैं अक्लों कचियाँ वे[8] ॥१॥

जुल्फ कुंडल ने घेरा पाया, बिसियर[9] हो के डंक चलाया।

तैं नूँ देख तरस ना आया, मैं इसक तेरे ने पटियाँ वे[10] ॥२॥

प्रेम कटारी कस कर मारी, हुन मैं होइयाँ बेदल[11] भारी।

त ताँ सार[12] न लई हमारी, लाके खूनी अखियाँ वे ॥३॥

दो नैनाँ दा तीर चलाया, मुझ आजिज[13] दे सीने लाया।

घायल करके मुख छुपाया, (तैनूं) पक चोरियाँ किन दसियाँ[14] वे ॥४

मैं बंदी दा जे तू साईं, कदी तो आवी फेरा पाईं।

मिहर करीं ते मुख दिखलाईं, मैं काग उडाँदी थकियाँ वे ॥५

बुल्ले साह मैं मुखों न बोलाँ, हर सूरत बिच तैनूं टोलाँ[15]।

साईं लोकाँ भेद न खोलाँ, डर दी आख[16] न सकियाँ वे ॥६

---

(१) व्यथ ऐसी प्रीत लगाई। (२) जैसा। (३) और। (४) धिक्कार है। (५) हटाओ ( ) अब। (७) हम से क्यों शर्म करते हो। (८) मैं अनसमझ थी। (९) [illegible]

(२)

ओल्हे बह बह झाकी दा, हुन पड़दा किस तों राखीदा ॥ टेक[1]

जिस तन इसक दा जोर हुआ, वह बेखुद हो बेहोस हुआ
वह क्योंकर रहे खमोस हुआ, जिन प्याला पीना साकी[2] दा ॥१॥
तुसीं आप असाँवल[3] आये हो, किस कोलों[4] भेद छपाये हो।
किते[5] आदम[6] पीर[7] बन आये हो, विच पड़दा रखिया खाकी[8] दा ॥२॥
तुसीं आपे कहँदे सारे हो, तुसीं आपे कहँदे न्यारे हो।
तुसीं आपे लई नजारे हो, किते लाला नैन झमाकी दा ॥३॥[9]
तू ना कर इतना झेड़ा है, तुझ बाझों दूजा केहड़ा है।
असाँ देख्या बड़ा अँधेरा है, अपने आप नूँ दूजा आखी दा ॥४॥[10]
किते रूमी हो किते सामी हो, तुसीं अपने आप तमामी[11] हो
किते साहिब किते सलामी[12] हो, की हूँ खोटा खरा सुलाकी[13] दा ॥५॥
मनसूर नूँ सूली चाढ़ा है, साह समस पोस उतारा है[14]।
हुन मिसकीनाँ वल आया है, कुछ लेखा रहिंदा बाकी दा[15]। ६
बुल्ले इस तन दी तू भाठी कर, बाल हड्डाँ नूँ काठी कर[16]।
ज्ञान अगन सों ताती कर, फिर तिस पर मधुआ[17] चाखीदा ७

---

(१) छिप कर [ओल्हे] बैठे बैठे [बह बह] दर्शन देते हो अब किस से परदा रखते हो। (२) शराब पिलाने वाला अर्थात प्रीतम। (३) अपने से। (४) से। (५) कहीं। (६) बड़े। (७) गुरू। (८) मिट्टी अर्थात तन। (९) तुम्हीं आप सब में बोलते हो और तुम्हीं अलग रहते हो तुम्हीं आप झमकड़ा मार कर दर्शन देते हो। (१०) तू इतना झगड़ा मत कर हम तेरे बिन [बाझों] दूसरा [दूजा] कौन [केहड़ा] है पर हम घोर अन्धकार में पड़े हुए हैं कि अपने को तुझ से न्यारा समझते है। (११) समस्त। (१२) सलाम करने वाले। (१३) टाँकी दिया हुआ सिक्का। (१४) शम्स तबरेज जिन्हों ने अपनी खाल [पोस] आप उतार दी थी। (१५) अब हम अधीन की ओर [वल] थाकी [illegible]

(२)

मन अटक्या बेपरवाहे नाल ॥ टेक ॥

नैन फसे दिल मिलया लोड़े, मूरख लोक असानूँ मोड़े।

मेरा हर दम जांदा आह नाल ॥ १ ॥[1]

मुल्लाँ क़ाज़ी नमाज़ पढ़ावन, हुकम सरा दा भय दिखलावन।

साडे इश्क़ नूं की सरा दे नाल ॥ २ ॥[2]

नदियों पार सजन दा ठाना, कीते कौल ज़रूरी जाना।

कुछ करले सलाह मलाहे नाल ॥ ३ ॥[3]

आशिक सोई जेहड़ा[4] इश्क़ कमावे, जित वल[5] प्यारा उते नज़र आवे॥

बुल्ले शाह जा मिल तूं अलाहे नाल ॥ ४ ॥

॥ उपदेश ॥

इक बूझ कवन छप आया है।

इक नुकते में जो फेर पड़ा, तब ऐन ग़ैन[7] का नाम धरा।

जब मुरशद नुकता दूर किया, तब ऐनों ऐन[8] कहाया है ॥१॥

तुसी इलम किताबाँ पढ़दे हो, केहे उलटे माने[9] करदे हो।

बेमूजब ऐवें लड़दे हो, केहा[10] उलटा बेद पढ़ाया है ॥२॥

दुइ दूर करो कोइ सोर नहीं, हिंदू तुरक कोइ होर[11] नहीं।

सब साधु लखो कोइ चोर नहीं, घट घट में आप समाया है॥३

(१) मेरी आँख प्रीतम से लग गई है और दिल मिलने को तरसता है मूरख लोग बरजते हैं [मोड़ें] पर मेरा हर साँस आह के साथ निकलती है। (२) क़ाज़ी मुल्ला नमाज़ पढ़ने को कहते हैं और शरअ [मुसलमानों के कर्मकांड] के हुक्म का डर दिखलाते हैं लेकिन हमारे इश्क़ को शरअ की क्या परवाह है। (३) हमारे प्रीतम का स्थान [ठाना] भवसागर के पार है उसने वचन दिया है कि ज़रूर आऊँगा तो अब केवट अर्थात् सतगुरु से सलाह करले। (४) जो। (५) तरफ़। ( ) अल्लाह के। (७) फ़ारसी हर्फ़ ऐन [ ] पर एक नुक़्ता

ना मैं मुल्ला ना मैं काजी, ना मैं सुन्नी ना मैं हाजी।
बुल्ले साह नाल लाई[१] बाजी, अनहद सबद बजाया है ॥४॥

सहजो बाई

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १५८]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

हमारे गुरु पूरन दातार।
अभय दान दीनन को दीन्हे, किये भवजल पार ॥१॥
जन्म जन्म के बंधन काटे, जम की बंध निवार।
रंक हुते सो राजा कीन्हे, हरि धन दियो अपार ॥२॥
देवैं ज्ञान भक्ति पुनि देवैं, जोग बतावनहार।
तन मन बचन सकल सुखदाई, हिरदे बुधि उजियार ॥३॥
सब दुख गंजन पातक भंजन, रंजत ध्यान बिचार।
साजन दुर्जन जो चलि आवैं, एकहि दृष्टि निहार ॥४॥
आनँद रूप सरूप मई है, लिप्त नहीं संसार।
चरनदास गुरु सहजो केरे, नमो नमो बारम्बार ॥५॥

(२)

राम तजूँ पै गुरु न बिसारूँ, गुरु के सम हरि कूँ न निहारूँ ॥१
हरि ने जन्म दियो जग माहीं, गुरु ने आवागवन छुटाहीं २
हरि ने पाँच चोर दिये साथा, गुरु ने लई छुटाय अनाथा ३
हरि ने कुटुँब जाल में गेरी, गुरु ने काटी ममता बेरी[२] ॥४
हरि ने रोग भोग उरझायौ, गुरु जोगी करि सबै छुटायो ॥५

हरि ने मो सूं आप छिपायौ, गुरु दीपक दै ताहि दिखायौ ७
फिर हरि बंध मुक्ति गति लाये, गुरु ने सबही मर्म मिटाये ८
चरनदास पर तन मन वारूं, गुरु न तजूं हरि कूं तजि डारूं ॥ ९

॥ चितावनी ॥

(१)

पानी का सा बुलबुला, यह तन ऐसा होय ।
पीव मिलन की ठानिये, रहिये ना पड़ि सोय ॥
रहिये ना पड़ि सोइ, बहुरि नहिं मनुखा देही ।
आपन ही कूं खोजु, मिलै तब राम सनेही ॥
हरि कूं भूले जो फिरैं, सहजो जीवन छार ।
सुखिया जब ही होयगो, सुमिरैगो करतार ॥

(२)

चौरासी भुगती घनी बहुत सही जम मार ।
भरमि फिरे तिहु लोक मैं, तहू न मानी हार ॥
तहू न मानी हार, मुक्ति की चाह न कीन्ही ।
हीरा देही पाइ, मोल माटी के दीन्ही ॥
मूरख नर समुझै नहीं, समुझाया बहु बार ।
चरनदास कहैं सहजिया, सुमिरै ना करतार ।

॥ प्रेम ॥

मुकट लटक अटकी मन माहीं ।
निरतत नटवर मदन मनोहर, कुंडल झलक पलक थिरथराई १
नाक बुलाक हलत मुक्ताहल, होठ मटक गति भौंह चलाई ।
ठुमक ठुमक पग धरत धरनि पर, बाँह उठाय करत चतुराई २
[illegible]

॥ विनय ॥

(१)

अब तुम अपनी ओर निहारो ।
हमरे औगुन पै नहिं जावो, तुमही अपनो बिरद सम्हारो १
जुग जुग साख तुम्हारी ऐसी, बेद पुरानन गाई ।
पतित उधारन नाम तुम्हारो, यह सुन के मन दृढ़ता आई २
मैं अजान तुम सब कछु जानो, घट घट अंतरजामी ।
मैं तो चरन तुम्हारे लागी, हो किरपाल दयालहि स्वामी ३
हाथ जोरि के अरज करत हौं, अपनाओ गहि बाँहो ।
द्वार तिहारे आय परी हौं, पौरुष गुन सो मैं कछु नाहीं ४
चरनदास सहजिया तेरी, दरसन की निधि पाऊँ ।
लगन लगी और प्रान अड़े हैं, तुम को छाँड़ि कहाँ कित जाऊँ ५

(२)

हम बालक तुम माय हमारी, पल पल माहिं करो रखवारी १
निस दिन गोदी ही में राखो, इत तित बचन चितावन भाखो २
बिषै ओर जाने नहिं देवो, दुरि दुरि जाऊँ तो गहि गहि लेवो ३
मैं अनजान कछू नहिं जानूँ, बुरो भलो को नहिं पहिचानूँ ४
जैसी तैसी तुमही चीन्हेव, गुरु ह्वै ध्यान खिलौना दीन्हेव ५
तुम्हरी रच्छा ही से जीऊँ, नाम तुम्हारो अमृत पीऊँ ॥६
दिष्टि तिहारी ऊपर मेरे, सदा रहूँ मैं सरनै तेरे ॥७॥
मारो झिड़को तो नहिं जाऊँ, सरकि सरकि तुम्ही पै आऊँ ८
चरनदास है सहजो दासी, हो रच्छक पूरन अबिनासी ।९

॥ उपदेश ॥

सो बसत नहिं बार बार । तैं पाई मानुष देह सार ॥१॥
यह औसर बिरथा न खोव । भक्ति बीज हिये धरती बोव २

नीकी बार बिचार देय । परन राखि या कूँ जु सेय ॥४॥
रखवारी करु हेल हेल । जब तेरी सींचै बेल बेल ॥५॥
खोट कपट पंछी उड़ाव । मोह प्यास सब ही जलाव ॥६॥
सभलै बाड़ी नऊ पग । प्रेम फूल फूलै रंग रंग ॥७॥
पहुप गूँथ माला बनाव । आदि पुरुष कूँ जा चढ़ाव ॥८॥
तौ सहजो बाई चरनदास । तेरे मन की पुरवै सकल आस ९

दया बाई

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १६७]

गुरु बिन ज्ञान ध्यान नहिं होवे ।
गुरु बिन चौरासी मग जोवे ॥ १ ॥
गुरु बिन राम भक्ति नहिं जागे ।
गुरु बिन असुभ कर्म नहिं त्यागे ॥ २ ॥
गुरु ही दीन-दयाल गुसाईं ।
गुरु सरनै जो कोई जाई ॥ ३ ॥
पलटैं करैं काग सूँ हंसा ।
मन को मेटत हैं सब संसा ॥ ४ ॥
गुरु हैं सब देवन के देवा ।
गुरु को कोउ न जानत भेवा ॥ ५ ॥
करुना सागर कृपा निधाना ।
गुरु हैं ब्रह्म रूप भगवाना ॥ ६ ॥
दै उपदेस करैं भ्रम नासा ।

गुरु को अहि निसि[1] ध्यान जो करिये।
विधिवत सेवा मैं अनुसरिये[2] ॥ ८ ॥
तन मन सूँ अज्ञा में रहिये।
गुरु अज्ञा बिन कछू न करिये ॥ ९ ॥

गरीबदास जी

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १८१]

—— ०:‌० ——

॥ चितावनी ॥

(१)

सुनिये संत सुजान, गरब नहिं करना रे ॥ टेक ॥
चार दिनों की चिहर[3] बनी है, आखिर तो कूँ मरना रे ॥१
तू जाने मेरि ऐसी निभैगी, हर दम लेखा भरना रे ॥२॥
खाय ले पी ले बिलस ले हंसा, जोरि जोरि नहिं धरना रे ॥३
दास गरीब सकल में साहिब, नहीं किसी सूँ अड़ना रे ॥४

अरिल

(२)

मरदाने मरि जाहिं मनी पर मार है।
ऐसा महल अनूप पलक में छार है ॥ १ ॥
जोरा[4] बुरी बलाय जीव जग भूँच[5] है।
पलक पहर छिन माहिं नगारा कूँच है ॥ २ ॥
सुरत सोहंगम नेस पेस है बावरे।
बदी बिदारो बेग धनी कूँ ध्याव रे ॥ ३ ॥

---

(१) दिन रात। (२) लगिये। (३) चिड़िया के किलोल की जगह जो साँझपड़े

दम को डोरा खोज दरीबा[1] खूब है ।
अमर दीप सतलोक अजब महबूब है ॥ ४ ॥
सखा[2] पुत्र गृह नारि और सब मीत रे ।
का तू लाया नेह संग नहिं साथ रे ॥ ५ ॥
हंस अकेला जाय हिरम्बर हेत रे ।
सब्द हमारा मान नाम निज चेत रे ॥ ६ ॥
कोतल घोड़े पीनस[3] रथ संग पालकी ।
गज गैवर[4] दल ठाठ निसानी काल की ॥ ७ ॥
हक हलाल पहिचान बदी कर दूर रे ।
यह मुरगी रब रूह गऊ क्या सूर[5] रे ॥ ८ ॥
तीतर चिड़ी बटेर भखे हलवान रे ।
मुल्ला बाँग पुकार अलह रहमान रे ॥ ९ ॥
रमजानी रमजान धारा चोखा दिया ।
पकड़ पछाड़ी रूह कहो यह क्या किया ॥ १० ॥
खूनी खून मंझार खाल क्यूं काढता ।
देखै रब रहमान गला ज्यूं बाढता[6] ॥ ११ ॥
ऐसे बूड़े नाव होत हैं गरक रे ।
हरे हाँ रे कहता दास गरीब नाम निज परख रे ॥१२

अरिल

(३)

यह सौदा सतभाय[7] करो परभात रे ।
तन मन रतन अमोल बटाऊ[8] साथ रे ॥ १ ॥
बिछुर जायगे मीत मला सुन लीजिये ।
बहुर न मेला होय कहो क्या कीजिये ॥ २ ॥

सील संतोष बिबेक दया के बाग हैं ।
ज्ञान रतन गुलजार सँघाती राम हैं ॥ ३ ॥
धरम धजा फरकंत फरहरै लोक रे ।
ता मध अजपा नाम सु सौदा रोक[1] रे ॥ ४ ॥
चलै बनिजवा[2] ऊठ[3] हूठ गढ छाड़ रे ।
हरे हाँ रे कहता दास गरीब लगै जम डाँड़ रे ॥ ५ ॥

॥ रेख़ता ॥

अरिल छंद

(१)

बिना मूल अस्थूल, गगन मैं रमि रहा ।
कोई न जाने भेव, सकल सब भमि रहा ॥ १ ॥
अछै बृच्छ बिस्तार, अपार अजोख है ।
नहीं गाम नहिं धाम, मुक्त नहिं मोख है ॥ २ ॥
छत्र सिंघासन सेत, पुरुष का रूप है ।
बरन अबरन बिचार, न छाया धूप है ॥ ३ ॥
देख पदम उँजियार, परख नहिं आवही ।
करम लिखा सो होय, टरै नहिं भावही[4] ॥ ४ ॥
अविगत पूरन ब्रह्म, परम परवान रे ।
हरे हाँ रे कहता दास गरीब, सब्द पहिचान रे ॥ ५ ॥

॥ बिनय ॥

दीन के दयाल, भक्ति बिर्द[5] दीजिये ।
खानाजाद गुलाम, अपन कर लीजिये ॥१॥
खानाजाद गुलाम, तुम्हारा है सही ।
मिहरबान महबूब, जुगन जुग पत रही ॥२॥

(१) सकल शाख से मिलाव का । (२) बनजारा प्राणी । (३) उठना । (४) भावी = होनी

बाँदी जाद[1] गुलाम, गुलाम गुलाम है ।
खड़ा रहै दरबार, सु आठों जाम है ॥३॥
सेवक तलबदार[2], तलबरी दूर कहा ।
औगुण अनंत अपार, परो मोहि चूक हा ॥४॥
मैं घर का बन्दाजादा अरज मोर मानिये ।
कहता दास गरीब, अपना कर जानिये ॥५॥

॥ साध महिमा ॥

सोई साध अगाध है, आपा न सरावे[3] ।
पर निंदा नहिं श्रवै, चुगली नहिं खावै ॥१॥
काम क्रोध त्रिस्ना नहीं, आसा नहिं राखै ।
साचे सूं परचा भया, जग कूड़ न भाखै ॥२॥
एकै नजर निरंजना, सबही घट देखै ।
ऊंच नीच अंतर नहीं, सब एकै पेखै ॥३॥
सोई साध सिरोमनी, जप तप उपकारी ।
भूले कूँ उपदेस दे, दुर्लभ संसारी ॥४॥
अकल[4] यकीन पठाय दे, भूले कूं चेलै ।
सो साधू संसार मैं, हम बिरले भेलै ॥५॥
सूतक[5] खोवै सत कहै, साचे सूं लावै ।
सो साधू संसार मैं, हम बिरले पावै ॥६॥
निरख निरख पग धरत हैं, जिव हिंसा नाहीं ।
चौरासी तारन तरन, आये जग माहीं ॥७॥
इस सौदे कूँ ऊतरे, सौदागर सोई ।
भरे जहाज उतारि दे, भौसागर लोई ॥८॥

भेष धरैं भाजे फिरैं, बहु साखी सीखें ।
जानैं नहीं बिबेक कूं, खर के ज्यूं रीकैं[१] ॥९॥
खास मुक़ामा दरस है, जो अरस रहता ।
उनमुन में तारी लगी जहं अजप जपता ॥१०॥
सुन्न महल अस्थान है, जहं इस्थिर डेरा ।
दास गरीब सुभान[२] है, सत साहिब मेरा ॥११॥

॥ सारंगहनी ॥

मन मगन भया जब क्या गावे ॥ टेक ॥
ये गुन इन्द्री दमन करेगा, वस्तु अमोल्ली सो पावे ॥१॥
तिरलोकी की इच्छा छाडै, जग में बिचरै निर्दावै ॥२॥
उलटी सुलटी निरति निरंतर, बाहर से भीतर लावै ॥३॥
अधर सिंघासन अबिचल आसन, जहँवाँ सूरति ठहरावै ४॥
त्रिकुटी महल में सेज बिछी है, द्वादस[३] अंदर छिप जावै ॥५॥
अजर अमर निज मूरत सूरत, ओअं सोहं दम ध्यावे ॥६॥
सकल मनोरथ पूरन साहिब, बहुरि नहीं भौजल आवै ॥७॥
गरीबदास सतपुरुष बिदेही, साचा सतगुरु दरसावै ॥८॥

॥ उपदेश ॥

(१)

घट ही में चंद चकोरा साधो, घट ही चंद चकोरा ॥टेक॥
दामिनि दमके घनहर[४] गरजै, बोलै दादुर मोरा ।
सतगुरु गस्ती गस्त फिरावै, फिरता ज्ञान ढँढोरा ॥१॥
अदली राज अदल बादसाही, पाँच पचीसौं चोरा ।
चीन्हो सबद सिंध घर कीजै, होना गारतगोरा[५] ॥२॥

त्रिकुटी महल में आसन मारो, जा[illegible] । चलै जम जोरा ।
दास गरीब भक्ति को कीजो, हुआ जाल है मोरा[1] ॥३॥

(२)

राम सुमिर राम सुमिर, राम सुमिर ले रे ।
जम और जहान जीत तीन लोक जे रे ॥१॥
इन्द्री अदालत चोर, पकड़ो मन अहि[2] रे ।
अनहद टकोर घोर, सुनै क्यूं न बहिरे ॥२॥
सुरत निरत नाद बिंद, मन पवना गाहे रे ।
उनमुनी अलेल[3] रूप, निराकार लहि रे ॥३॥
धनुष[4] ध्यान मार बान[5], दुरजन से कहिरे[6] ।
देखत के सात कोट, भरम बुर्ज ढहि रे ॥४॥
साचे से प्रीत कीन, झूठा मन महि[7] रे ।
कहत है गरीबदास, कुटिल बचन सहि रे ॥५॥

(३)

मग[8] पूछत हैं परतीत नहीं, नादी[9] बादी[10] झगड़ा ठानैं ।
सुकता जुगता नहिं राह लहैं, नहिं साध असाध कूं जानत हैं ॥१
देवल जाहीं मसजिद माहीं, साहिब का सिरजा भानत हैं[11] ।
पंडित काजी डोबी[12] बाजी, नहिं नीरखीर[13] कूं छानत हैं ॥२
चेतन का गल काटत हैं, धर पत्थर पाहन मानत हैं ।
कहै दास गरीब निरास चले, धिरकार जनम नर लानत है ॥३

॥ जाति पाँति भेद खंडन ॥

कैसे हिंदू तुरक कहाया । सबही एकै द्वारे आया ॥१॥
कैसे बाम्हन कैसे सूद्र । एकै हाड़ चाम तन गूद ॥२॥

एकै बिंद एक भग द्वारा । एकै सब घट बोलनहारा ॥३॥
कौम छतीस एकही जाती । ब्रह्मबीज सब की उतपाती ॥४
एकै कल एकै परिवारा । ब्रह्मबीज का सकल पसारा ।५॥
ऊँच नीच इस बिधि है लोई । कर्म कुकर्म कहावै दोई ॥६॥
गरीबदास जिन नाम पिछाना । ऊँच नीच पद ये परमाना ॥७

गुलाल साहिब

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृ० २०८]

॥ नाम ॥

नाम रस अमरा है भाई, कोउ साध संगति तें पाई ॥टेक॥
बिन घोटे बिन छाने पीवै, कौड़ी दाम न लाई ।
रंग रँगीले चढ़त रसीले, कबहीं उतरि न जाई ॥१॥
छके छकाये पगे पगाये, झूमि झूमि रस लाई ।
बिमल बिमल बानी गुन बोलै, अनुभव अमल चलाई ॥२॥
जहँ जहँ जावै थिर नहिं आवै, खोल[1] अमल लै धाई ।
जल पत्थल पूजन करि मानत, फोकट गाढ़ बनाई[2] ॥३॥
गुरु परताप कृपा तें पावै, घट भरि प्याला[3] फिराई ।
कहै गुलाल मगन ह्वै बैठे, भागिहै हमरि बलाई ॥४॥

॥ अनहद शब्द ॥

रे मन नामहिं सुमिरन करै ।
अजपा जाप हृदय लै लावो, पाँच पचीसो तीन मरै ॥१॥

अष्ट कमल में जीव बसतु है, द्वादस में गुरु दरस करै।
सोरह ऊपर आनि उठतु है, दुइ दल अमी झरै ॥२॥
गंगा जमुना मिली सरसुती, पदुम झलक तहँ करै।
पच्छिम दिसा ह्वै गगन मंडल में, काल बली सों लरै ॥३॥
जन जीतो है परम पद पायो, जोती जगमग बरै।
कह गुलाल सोइ पूरन साहिब, हर दम मुक्ति फरै ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

अविगत जागल हो सजनी।
खोजत खोजत सतगुरु पावल,
ताहि चरनवाँ चितवा लागल हो सजनी ॥टेक॥
साँझि समय उठि दीपक बारल,
कटल करमवा मनुआँ पागल[1] हो सजनी ॥ १ ॥
चललि उलटि बाट छुटलि सकल घाट,
गरजि गगनवा अनहद बाजल हो सजनी ॥ २ ॥
गइली अनँदपुर भइली अगम सूर,
जितली मैदनवाँ नेजवा गाड़ल हो सजनी ॥ ३ ॥
कहै गुलाल हम प्रभुजी पावल,
फरल ललरवा पपवा भागल हो सजनी ॥ ४ ॥

(२)

जो पै कोइ प्रेम को गाहक होइ।
त्याग करै जो मन की कामना, सीस दान दै सोई ॥१॥
और अमल को दूर जो छोड़ै, आपु अपन गलि जोई।
हर दम हाजिर प्रेम पियाला, पलक पलक रस लेई ॥२॥

जीव पीव महँ पीव जीव महँ, बानी बोलत सोई ।
सोई सभन महँ हम सबहिन महँ, बूझल बिरला कोई ॥३॥
वा की गती कहा कोउ जानै, जो जिय साचा होई ।
कह गुलाल वे नाम समाने, मत भूले नर लोई ॥४॥

(३)

आनँद बरखत बुन्द सुहावन ।
उमँगि उमगि सतगुरु बर राजित, समय सुहावन भावन ॥१
चहूँ ओर घनघोर घटा आई, सुन्न भवन मन भावन ।
तिलक तत्त बेंदी पर झलकत, जगमग जोति जगावन ॥२॥
गुरु के चरन मन मगन भयो जब, बिमल बिमल गुन गावन।
कहै गुलाल प्रभु कृपा जाहि पर, हर दम भादों सावन ॥३॥

(४)

होली

सतगुरु सँग होरी खेलो, अनहद तूर बजाई ॥ टेक ॥
काया नगर मैं होरी खेलो, प्रेम कै परल धमारी ।
पाँच पचीस मिलि चाचरि गावहि, प्रभुजी की बलिहारी ॥१
सहज कै फाग पर्यो निस बासर, भरि छूटै पिचुकारी।
नाद बिंदहीं गाँठि पर्यो जब, परलि परस्पर मारी ॥२॥
तारी दै दै भाँवरि नावहि, एक तें एक पियारी ।
तत्त अबीर उड़ावत कर धरि, काहू कोउ न सँभारी ॥३॥
अब खेलो मन महा मगन है, तन मन सर्बस वारी ।
कह गुलाल हम प्रभु सँग खेलल, पूजलि आस हमारी ॥४॥

॥ बिनय ॥

(१)

दीना नाथ अनाथ यह, कछु पार न पावै ।
बरनौं करनी जक्ति से, कछु जक्ति न आवै ॥१॥

यह मन चञ्चल चोर है, निस बासर धावै ।
काम क्रोध में मिलि रह्यो जेहि मन भावै ॥२॥
करुनामय किरपा करहु, मन नित चित लावै ।
सतसंगति सुख पाइ के, निसु बासर गावै ॥३॥
अबकि बार यह अधम पर, प्रभु दया कीजे ।
जन गुलाल बिनती करै, आपनो करि लीजे ॥४॥

(२)

प्रभुजी बरषा प्रेम निहारो ।
ऊठत बैठत छिन नहिं बीतत, याही रीति तुम्हारो ॥१॥
समय होय भा असमय होवै, भरत न लागत बारो ।
जैसे प्रीति किसान खेत सों, तैसो है जन प्यारो ॥२॥
भक्त बछल है बान तिहारो, गुन औगुन न बिचारो ।
जहँ जहँ जावँ नाम गुन गावत, जम को सोच निवारो ॥३॥
सोवत जागत सरन धरम यह, पुलकित मनहिं बिचारो ।
कह गुलाल तुम ऐसो साहिब, देखत न्यारो न्यारो ॥४॥

॥ भेद ॥

(१)

उलटि देखो, घट में जोति पसार ।
बिनु बाजे तहँ धुनि सब होवै, बिगसि कमल कचनार ॥१॥
पैठि पताल सूर ससि बाँधो, साधो त्रिकुटी द्वार ।
गंग जमुन के वार पार बिच, भरतु है अमिय करार ॥२॥
इँगला पिंगला सुखमन सोधो, बहत सिखर मुख[1] धार ।
सुरति निरति ले बैठु गगन पर, सहज उठै झनकार ॥३॥

सोहं डोरी मूल गहि बाँधो, मानिक बरत लिलार।
कह गुलाल सतगुरु बर पायो, भरो है मुक्ति भँडार ॥४॥

(२)

बसंत

मन मधुकर खेलत बसन्त।
बाजत अनहद गति अनन्त ॥ १ ॥
बिगसत कमल भयो गुंजार।
जोति जगामग करि पसार ॥ २ ॥
निरखि निरखि जिय भयो अनन्द।
बाझल[1] मन तब परल फन्द ॥ ३ ॥
लहरि लहरि बहै जोति धार।
चरन कमल तन मिलो हमार ॥ ४ ॥
आवै न जाइ मरै नहिं जीव।
पुलकि पुलकि रस अमिय पीव ॥ ५ ॥
अगम अगोचर अलख नाथ।
देखत नैनन भयो सनाथ ॥ ६ ॥
कह गुलाल मोरी पुजलि आस।
जम जीत्यो भयो जोति बास ॥ ७ ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

हरि नाम न लेहु गँवारा हो।
काम क्रोध में रतल फिरत हौ, कबहुँ न आप सँभारा हो ॥१॥
आपु अपन कै सुधि नहिं जानहु, बहुत करत बिस्तारा हो।
नेम धरम ब्रत तिरथ करतु हौ, चौरासी बहु धारा हो ॥२॥
तस्कर[2] चोर बसहिं घट भीतर, मूसहिं सहज भँडारा हो।
सन्यासी बैरागी तपसी, मनुवाँ देत पछारा हो ॥३॥

धंधा धोख रहत लपटाने, मोह रतो संसारा हो ।
कहै गुलाल सतगुरु बलिहारी, जग तें भयो नियारा हो ॥४॥

(२)

अवधू निर्मल ज्ञान बिचारो ।
ब्रह्म सरूप अखंडित पूरन, चौथे पद सों न्यारो ॥१॥
ना वह उपजै ना वह बिनसै, ना भरमै चौरासी ।
है सतगुरु सतपुरुष अकेला, अजर अमर अबिनासी ॥२॥
ना वा के बाप नहीं वा के माता, वा के मोह न माया ।
ना वा के जोग भोग वा के नाहीं, ना कहुँ जाय न आया ॥३॥
अद्भुत रूप अपार बिराजै, सदा रहै भरपूरा ।
कहै गुलाल सोई जन जानै, जाहि मिलै गुरु सूरा ॥४॥

(३)

मन तू हरि गुन काहे न गावै ।
ता तें कोटिन जनम गवावै ॥१॥
घर में अमृत छोड़ि कै, फिरि फिरि मदिरा पावै ।
छोड़हु कुमति मूढ़ अब मानहु, बहुरि न ऐसो दावै ॥२॥
पाँच पचीस नगर के बासी, तिनहिं लिये सँग धावै ।
बिन पर उड़त रहै निसि बासर, ठौर ठिकान न आवै ॥३॥
जोगी जती तपी निर्बानी, कपि ज्यों बाँधि नचावै ।
सन्यासी बैरागी मौनी, धै धै नरक मिलावै ॥४॥
अबकी बार दाव है मेरो, छोड़ौं न राम दुहाई ।
जन गुलाल अवधूत फकीरा, राखौं जंजीर लगाई ॥५॥

॥ माया ॥

संतो कठिन अपरबल नारी ।
सबहीं बरनहिं[१] भोग कियो है, अजहूँ कन्या क्वारी ॥१॥

(१) ब्याह करके ।

जननी[1] ह्वै के सब जग पाला, बहु बिधि दूध पियाई ।
सुंदर रूप सरूप सलोना, जोय[2] होइ जग खाई ॥२॥
मोह जाल सों सबहि बझायो, जह लक है तन धारी ।
काल सरूप प्रगट है नारी, इन कहँ चलहु सँभारी ॥३॥
ज्ञान ध्यान सब ही हरि लीन्हो, काहु न आप सँभारी ।
कहै गुलाल कोऊ कोउ उबरे, सतगुरु की बलिहारी ॥४॥

॥ मिश्रित ॥

सतहि डोलवा सतगुरु नावल तहवाँ मनुवाँ झुलत हमार ॥टेक॥
बिनु डोरी बिनु खभे पौढल, आठ पहर झनकार ॥१॥
गावहु सखियाँ हिंडोलवा हो, अनुभौ मंगलचार ॥२॥
अब नहिं अवना जवना हो, प्रेम पदारथ भइल निनार ॥३॥
छुटल जगत कर झुलना हो, दास गुलाल मिलो है यार ॥४॥

भीखा साहिब

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २१]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

मेरो हित सोइ जो गुरु ज्ञान सुनावै ॥ टेक ॥
दूजी दृष्टि दुष्ट सम लागै, मन उनमेख[3] उड़ावै ।
आतम राम सूछम सरूप, केहि पटतर[4] दै समझावै ॥१॥
सबद प्रकास बिनाहिं[5] जोग बिधि, जगमग जोति जगावै ।
धन्य भाग ता चरन रेनु ले, भीखा सीस चढ़ावै ॥२॥

कुण्डलिया

(२)

जो भल चाहो आपनो, तो सतगुरु खोजहु जाइ ॥
सतगुरु खोजहु जाइ, जहाँ वे साहिब रहते ।
निसि दिन इहै बिचार सदा हरि को गुन कहते ॥
समुझै बूझि बिचारि कै, तन मन लावे सेव ।
कृपा करहिं तब रीझि कै, नाम देहिं गुरुदेव ॥
भीखा बिछुरे जुगन के, पल महं देहिं मिलाइ ।
जो भल चाहो आपनो, तौ सतगुरु खोजहु जाइ ॥

॥ अनहद शब्द ॥

धुनि बजत गगन महँ बीना, जहँ आपु रास रस भीना ॥टेक॥
भेरी[1] ढोल संख सहनाई, ताल मृदंग नवीना ।
सुर जहँ बहुतै मौज सहज उठि, परत है ताल प्रवीना ॥१॥
बाजत अनहद नाद गहागह, धुधुकि धुधुकि सुर झीना ।
अँगुरी फिरत तार सातहु पर, लय निकसत बिन भीना[2] ॥२
पाँच पचीस बजावत गावत, निर्त चारु[3] छबि दीन्हा ।
उघटत तननन थ्रिता थ्रिता, कोउ तायेइ थेइ तत कीन्हा ३
बाजत ताल तरंग बहु, मानो जंत्री जंत्र कर लीन्हा ।
सुनत सुनत जिव थकित भयो, मानो ह्वै गयो सबद अधीना ४
गावत मधुर चढाय उतारत, रुनझुन रुनझुन धीना[4] ।
कटि किंकिनि पग नूपुर की छबि, सुरति निरत लौलीना ५
आदि सबद ओंकार उठतु है, अटुट रहत सब दीना[5] ।
लागो लगन निरंतर प्रभु सों, भीखा जल मन मीना ॥६॥

॥ चितावनी ॥

मन मानि ले तू कहल हमार ।
फिरि फिरि मानुष जनम न पैहो, चौरासी औतार ॥टेक॥
पागा माया बिषै मिठाई, काम क्रोध रत सोई ।
सुर नर मुनि गन गंधर्ब कछु कछु, चाखत है सब कोई ॥१॥
त्रिबिधि ताप को फंद परो है, सूझत वार न पारा ।
काल कराल बसै निकटहिं, धरि मारि नर्क महँ डारा ॥२॥
सत साध मिलि हाट लगायो, सौदा नाम भराई ।
जो जा को अधिकार होत तिन, तैसी बस्तु मोलाई ॥३॥
सब भक्तन धन धाम सकल लै, सरनागति मैं डारा ।
समझो बूझि बिचारि उतारो, अपने सिर को भारा ॥४॥
जोग जुक्ति के परचा पैहो, सुरति निरति ठहराई ।
अर्ध उर्ध के मध्य निरंतर, अनहद धुनि घहराई ॥५॥
सुरति मगन परमारथ जागै, करम होहि जरि छारा[१] ।
ज्ञान ध्यान के खानि खुलै जब, तब छूटै संसारा ॥६॥
भक्ति भाव कलपद्रुम छाया, ताप रहै नहिं देई ।
चारि पदारथ अज्ञाकारी, पर[२] सों कबहिं न लेई ॥७॥
राम नाम फल मिलो जाहि को, प्रेम सुधा रस धारा ।
पुलकि पुलकि मन पान करो तुम, निस दिन बारम्बारा ॥८॥
गुरु परताप कहाँ लगि बरनौं, उक्ती एक न आई ।
रसना जो कहि होयँ सहसदस, उपमा गाइ न जाई ॥९॥

आतम राम अखंडित आपै, निज साहिब बिस्तारा ।
भीखा सहज समाधी लावा, औरा इहै तुम्हारा ॥१८॥

॥ प्रेम ॥

(१)

प्रीति की यह रीति बखानौं ॥ टेक ॥
कितनौ दुख सुख परै देंह पर, चरन कमल कर ध्यानौ ॥१॥
हो चेतन्य बिचारि तजो भ्रम, खाँड धूर जनि सानौ ॥२॥
जैसे चात्रिक स्वाँति बुन्द बिनु, प्रान समरपन ठानौ ॥३॥
भीखा जेहि तन राम भजन नहिं, काल रूप तेहि जानौ ॥४॥

(२)

कहा कोउ प्रेम बिसाहन जाय ।
महँग बड़ा गथ[2] काम न आवै, सिर के मोल बिकाय ॥टेक॥
तन मन धन पहिले अरपन करि, जग के सुख न सुहाय ।
तजि आपा आपुहिं ह्वै जीवे, निज अनन्य[3] सुखदाय ॥१॥
यह केवल साधन को मत है, ज्यों गूंगे गुड़ खाय ।
जानहि भले कहै सो का सों, दिल की दिलहि रहाय ॥२॥
बिनु पग नाच नैन बिनु देखै, बिन कर ताल बजाय ।
बिन स्रवन धुनि सुनै बिबिधि बिधि, बिन रसना गुन गाय ३
निर्गुन मैं गुन क्योंकर कहियत, ब्यापकता समुदाय[4] ।
जहँ नाहीं तहँ सब कछु दिखियत, अधरन की कठिनाय ॥४॥
अजपा जाप अकथ का कथनो, अलख लखन किन पाय ।
भीखा अविगत की गति न्यारी, मन बुधि चित न समाय ॥५

(१) मोल लेना, ख़रीद करना । (२) सौदा समझ । (३) बेमिलौनी, केवल ।

॥ समरथ ॥

ए हरि मीत बड़े तुम राजा ।
ब्यापक जहाँ तहाँ लगु तुम्हरे हुकुम बिना कहुँ सरै न काजा ॥टेक
तिरगुन सूबा मौज बनाया, भिन्न भिन्न तहँ फौज रखाया ।
हय[1] गय[2] रथ सुखपाल बहूता, माया बढ़ी करै को कूता ।
कहत बनै नहिं अनघड़ साजा, ए हरि मीत० ॥१॥
चारो दिसा कनात गड़ा है, असमान तबू बिन चोब खड़ा है ।
पानी अगिनि पवन है पायक, जो कछु काम सो करिबे लायक
अनहद ढोल दमामा बाजा, ए हरि मीत० ॥२॥
तारागन पैदल समुदाई, अज्ञा ले तहँ तहँ चलि जाई ।
चाँद सूर निस बासर आई, आवत जात मसाल दिखाई ।
ध्रुव कियो थीर अचल मन धाजा[3], ए हरि मीत० ॥३॥
सहजादा है मन बुधि काला, कीन्हेउ सकल जगत पैमाला ।
काल बड़ा उमराव है भारी, डरे सकल जहँ लग तन धारी ।
तुम्हरो दंड सकल सिर ताजा, ए हरि मीत० ॥४॥
सत्त सतोगुन मंत्र दृढ़ावा, ज्ञान आदि दे पुत्र बुलावा ।
अमल करहु तुम जग मेँ जाई, फेरहु केवल राम दुहाई ।
नाम प्रताप प्रकास को छाजा, ए हरि मीत० ॥५॥
चतुरंगिनि उज्जल दल देखा, जोग बिराग बिचार को लेखा ।
छिमा सील संतोष को भाऊ, परमारथ स्वारथ नहिं चाऊ ।
स्वारथ रत पर पारहु गाजा[4], ए हरि मीत० ॥६॥
रज गुन तम गुन कीन्ह्यो मेला, सबहीं भयो सतोगुन चेला ।
हम तुम आइ कछू नहिं कीन्हा, अज्ञाईस सीस पर लीन्हा ।
भरत बहुत डेर आपु की लाजा, ए हरि मीत० ॥७॥

---

(१) घोड़ा। (२) हाथी। (३) ध्वजा = पताका। (४) जो स्वार्थी हैं उनका पर

पठयौ काम क्रोध मद लोभा, जा तें कीन्ह सकल तन छोभा।
केवल नाम भजे सो बाचै, नहिं तौ और सकल मन काचै।
भीखा तुम बिन कौन निवाजा[१], ए हरि मीत बडे तुम राजा ८

॥ बिनती ॥

(१)

प्रभु जी करहु अपनो चेर।
मैं तो सदा जनम को रिनिया[२], लेहु लिखि मोहि केर ॥१॥
काम क्रोध मद लोभ मोह यह, करत सबहिन जेर।
सुर नर मुनि सब पचि पचि हारे, परे करम के फेर ॥२॥
सिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, ऐसे ऐसे ढेर।
खोजत सहज समाधि लगाये, प्रभु को नाम न नेर ॥३॥
अपरपार अपार है साहिब, हूँ अधीन तन हेर।
गुरु परताप साध की संगति, छुटे सो काल अहेर[३] ॥४॥
त्राहि त्राहि सरनागत आयो, प्रभु दरबो[४] यहि बेर।
जन भीखा को उरिन कीजिये, अब कागद जिनि हेर ॥५॥

(२)

अस करिये साहिब दाया ॥ टेक ॥
कृपा कटाच्छ होइ जेहि तें प्रभु, छूटि जाय मन माया ॥१॥
सोवत मोह निसा निस बासर, तुमही मोहि जगाया ॥२॥
जनमत मरत अनेक बार, तुम सतगुरु होय लखाया ॥३॥
भीखा केवल एक रूप हरि, व्यापक त्रिभुवन राया ॥४॥

(३)

यार हो हँसि बोलहु मो सों, भरम गाठि छूटै प्रभु तो सो ॥१॥
पालन करि आये मो कह तुम, खाय जियाय किये घर पोसो २

बचन मेटि मैं कहौं गरज बसि, दरदवद प्रभु करौ न गोसो[1] ॥३
हो करता करमन के दाता, आगे बुधि आवत नहि होसो ॥४
तुम अंतरजामी सब जानो, भीखा कहा करहि अपसोसो ॥५

(७)

मोहिं राखो जी अपनी सरन ॥ टेक ॥
अपरम्पार पार नहिं तेरो, काह कहौं का करन ॥१॥
मन क्रम बचन आस इक तेरी, होउ जनम या मरन ॥२॥
अबिरल भक्ति के कारन तुम पर, हैं ब्राम्हन देउँ धरन[2] ॥३॥
जन भीखा अभिलाख इहो, नहि चहौं मुक्ति गति तरन ॥४॥

॥ अद्वैत ॥

कबित

खुद एक मृत्तिम[3] आहि, बासन[4] अनेक ताहि,
रचना बिचित्र रंग, गढ़ेउ कुम्हार है ।
नाम एक सोन आस[5], गहना है द्वैत भास,
कहूँ खरा खोट रूप, हेमहिं[6] अधार है ॥
फेन बुदबुद अरु लहरि तरंग बहु,
एक जल जानि लीजै, मीठा कहूँ खार है ।
आतमा त्यौं एक जाने[7] भीखा कहै याहि मते,
ठग सरकार के, बटोही[8] सरकार के ॥

॥ साध महिमा ॥

भजन तें उत्तम नाम फकीर ।
छिमा सील संतोष सरल चित, दरदवंद पर पीर ॥टेक॥
कोमल गदगद गिरा[9] सुहावन, प्रेम सुधा रस छीर ।
अनहद नाद सदा फल पाये, भोग खाँड घृत खीर ॥१॥

---

(१) गुस्सा । (२) धरना । (३) मिट्टी । (४) बरतन । (५) अस । (६) सोना ।

ब्रह्म प्रकास को भेष बनायो, नाम मेखला चीर ।
चमकत नूर जहूर जगामग, ढाके सकल सरीर ॥२॥
रहनि अचल दृढ़ियर कर आसन, ज्ञान बुद्धि मति धीर ।
देखत आतम राम उघारे, ज्यौं दरपन मधि हीर ॥३॥
मोह नदी भ्रम भँवर कठिन है, पाप पुन्य दोउ तीर ।
हरि जन सहजे उतरि गये ज्यों, सूखे ताल को झीर[1] ॥४॥
जग परपंच करम बहतो है, जैसे पवन रु नीर ।
गुरु गम सबद समुद्रहिं जाने, परत भयो जल थीर ॥५॥
केलि करत जिय लहरि पिया सँग, मति बड गहिर गभीर ।
ताहि काहि पटतरो[2] दीजिये, जिन तन मन दियो सीर[3] ॥६॥
मन मतंग मतवार बडो है, सब ऊपर बल बीर ।
भीखा हीन मलीन ताहि को, छीन भयो जस जीर ॥७॥

॥ उपदेश ॥

(१)

मन तूँ राम से लौ लाव ।
त्यागि कै परपंच माया, सकल जगहिं नचाव ॥१॥
साच की तू चाल गहि ले, झूठ कपट बहाव ।
रहनि सौं लौ लीन ह्वै, गुरु ज्ञान ध्यान जगाव ॥२॥
जोग की यह सहज जुक्ति, बिचार कै ठहराव ।
प्रेम प्रीति सों लागि कै घट, सहजही सुख पाव ॥३॥
दृष्टि लै आकृष्ट देखो, सुरति निरति बसाव ।
आतमा निर्धार निर्भौ बान[4] अनुभव गाव ॥४॥
अचल इस्थिर ब्रह्म सेवो, भाव चित अरुझाव ।
भीखा फिर नहिं कबहु पैहो, बहुरि ऐसो दाव ॥५॥

॥ रेखता ॥

(२)

करो बिचार निर्धार[1] अवराधिये[2],
सहज समाधि मन लाव भाई ।
जब जक्त की आस तें होहु नीरास,
तब मोच्छ दरबार की खबरि पाई ॥
न तो मर्म अरु कर्म बिच भोग भटकन लग्यो,
जरा अरु मरन तन बृथा जाई ।
भीखा मानै नहीं कोटि उपदेस सठ,
थक्यो बेदांत जुग चारि गाई ॥

॥ मिश्रित ॥

(१)

अगह तुम्हरो न गहना है । अकह तुम कहा कहना है ॥१॥
सबद अरु ब्रह्म अधिकारी । चेतन तुम रूप तन धारी ॥२॥
अबिगति तुम्हरी न गति पावै । कहाँ अस ज्ञान बुधि आवै ३
तुम्हरो कहिं वार नहिं पारा । केतो अनुमान करि हारा ॥४॥
अगम का गम कवन पावै । जहाँ नहिं चित्त मन जावै ॥५॥
प्रगट तुम गुप्त सब माहीं । बियापक तुम कहाँ नाहीं ॥६॥
सुनहु सब की कहहु सब से । देखहु सब को मिलो तन से ॥७॥
जहाँ लगि सकल हो तुमहीं । धोख यह बीच हम हमहीं ॥८॥
छुटै जब तैं व मैं मेरा । तहाँ ठाकुर न कोउ चेरा ॥९॥
केवल सोइ आपु आपै हो । दुइत सोइ जाय जा पैहो ॥१०॥
उभै[1] हम एक हो तुम हीं, । हमैं तुम्ह भेद कम कमहीं ॥११॥
भीखा तजो भरम के ताइ । चीन्हो निज आपनो साईं ॥१२॥

(२)

कुंडलिया

जीव कहा सुख पावई बेमुख यह घर माहिं ॥
बेमुख यह घर माहिं एक तें एक अपर्बल ।
तेहु तें हैं अधिक अधिक तें अधिक महाबल ॥
तेहि मैं मन अरु पवन त्रिगुन के डोरि लगाइ ।
बाँधे सब जग जाल छुटै कोऊ नाहिं पाइ ॥
जौ भीखा सुमिरै राम को तौ सकल अर्थ होइ जाहिं ।
जीव कहा सुख पावइ बेमुख यह घर माहिं ॥

पलटू साहिब

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २१३]

॥ नाम ॥

अरिल

जो कोइ चाहै नाम तो नाम अनाम है ।
लिखन पढ़न मैं नाहिं निअच्छर काम है ॥
रूप कहौं अनरूप पवन अनरेख ते ।
अरे हाँ पलटू गैब दृष्टि से संत नाम वह देखते ॥

॥ शब्द ॥

फूटि गया असमान सबद की धमक मैं ।
लगी गगन मैं आग सुरति की चमक मैं ॥
सेसनाग औ कमठ लगे सब काँपने ।
अरे हाँ पलटू सहज समाधि कि दसा खबर नहिं आपने ॥

॥ चितावनी ॥

(१)

कहवाँ से जिव आये, कहवाँ समाने हो साधो ।

निर्गुन से जिव आय, सर्गुन समाने हो साधो ।
भूलि गये हरि नाम, माया लिपटाने हो साधो ॥२॥
जैसे तुरकी घोड़ खैंचि, लट बागा हो साधो ।
ऊँच सीस भये नीच, चुगन लागे कागा हो साधो ॥३॥
आठ काठ कै पिंजरा, दस दरवाजा हो साधो ।
कौनिक निकसा प्रान, कौन दिसि भागा हो साधो ॥४॥
रोवत घर की नारि, केस लट खोले हो साधो ।
आज मंदिर भयो सून, कहाँ गये राजा हो साधो ॥५॥
आलहि[1] बाँस कटाइनि, डँड़िया फदाइनि हो साधो ।
पाँच पचीस बराती, लेइ सब आये हो साधो ॥६॥
तीरे दिहिन उतारि, सकल नहवावैं हो साधो ।
करि सोरहो सिंगार, सकल जुरि आये हो साधो ॥७॥
आलहि चँदन कटाइनि, घेरि घर छाइनि हो साधो ।
लोग कुटुम परिवार, दिहिनि पहुँचाई[2] हो साधो ॥८॥
लाइ दिहिनि मुख आग, काठ करि भारा हो साधो ।
पुत्र लिये कर बाँस सीस गहि मारा हो साधो ॥९॥
चहुँ दिसि पवन झकोरै, तरवर डोलै हो साधो ।
सूझत वार न पार, कौन दिसि जाना हो साधो ॥१०॥
इहवाँ नहिं कोइ आपन, जे से मैं बोलौं हो साधो ।
जस पुरइनि[3] कर पात, अकेला मैं डोलौं हो साधो ॥११॥
बिष बोयौं संसार अमृत, कस पावौं हो साधो ।
पुरब जनम करि पाप, दोस केहि लावौं हो साधो ॥१२॥
भौसागर की नदिया, पार कस जावौं हो साधो ।
गुरु बैठे मुख मोड़ि, मैं केहि गोहरावौं हो साधो ॥१३॥

जेहि बैरिन कर मूल, ताहि हित मान्यौ हो साधो।
पलटूदास गुरु ज्ञान सुनल, अलगान्यौं हो साधो ॥१४॥

(१)

कुंडलिया

खेलु सिताबी फाग तू बीती जात बहार ॥
बीती जात बहार सम्मत लगने पर आया।
लीजै डफ्फ बजाय सुभग मानुष तन पाया ॥
खेलो घूँघट खोलि लाज फागुन मैं नाहीं।
जो कोउ करिहै लाज काज ना सुपनेहु माँहीं ॥
प्रेम की माट भराय सुरति की करु पिचुकारी।
ज्ञान अबीर बनाय नाम की दीजै गारी ॥
पलटू रहना है नही सुपना यह संसार।
खेलु सिताबी फाग तू बीती जात बहार ॥

(२)

कुंडलिया

क्या सोवे तू बावरी चाला जात बसंत ॥
चाला जात बसंत कंत ना घर मैं आये।
धृग जीवन है तोर कंत बिन दिवस गँवाये ॥
गर्व गुमानी नारि फिरै जोबन की माती।
खसम रहा है रूठि नही तू पठवै पाती ॥
लगै न तेरो चित्त कंत को नाहिं मनावै।
का पर करै सिंगार फूल की सेज बिछावै ॥
पलटू ऋतु भरि खेलि ले फिर पछितैहै अंत।

(४)

कुडलिया

माया की चक्की चलै पीसि गया संसार ॥
पीसि गया संसार बचै ना लाख बचावै ।
दोऊ पट के बीच कोऊ ना साबित जावै ॥
काम क्रोध मद लोभ चक्की के पीसनहारे ।
तिरगुन डारै झोंक[१] पकरि कै सबै निकारे ॥
दुरमति बड़ी सयानि सानि कै रोटी पोवै ।
करम तवा मैं धारि सेंकि कै साबित होवै ॥
तस्ना बड़ी छिनारि जाइ उन सब घर घाला ।
काल बड़ा बरियार किया उन एक निवाला ॥
पलटू हरि के भजन बिनु कोऊ न उतरै पार ।
माया की चक्की चलै पीसि गया संसार ॥

॥ ध्यान ॥

कुडलिया

कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान ॥
सो ध्यानी परमान सुरत से अंडा सेवै ।
आपु रहै जल माहिं सूखे मैं अंडा देवै ॥
जस पनिहारी कलस भरे मारग मैं आवै ।
कर छोड़ै मुख बचन चित्त कलसा मैं लावै ॥
फनि मनि धरै उतारि आप चरने को जावै ।
वह गाफिल ना पड़ै सुरत मनि माहिं रहावै ॥
पलटू सब कारज करै सुरत रहै अलगान ।

॥ बिरह ॥

जेकरे अँगने नौरंगिया सो कैसे सोवै हो ।
लहर लहर बहु होय, सबद सुनि रोवै हो ॥१॥
जेकर पिय परदेस, नींद नहिं आवै हो ।
चौंकि चौंकि उठै जागि, सेज नहिं भावै हो ॥२॥
रैन दिवस मारै बान, पपीहा बोलै हो ।
पिय पिय लावै सोर, सवति होइ डोलै हो ॥३॥
बिरहिनि रहै अकेल, सो कैसे कै जीवै हो ।
जेकरे अमी कै चाह, जहर कस पीवै हो ॥४॥
अभरन देहु बहाय, बसन धै फारौ हो ।
पिय बिनु कौन सिंगार, सीस दै मारौ हो ॥५॥
भूख न लागै नींद, बिरह हिये करके हो ।
माँग सेंदुर मसि पोछ[1], नैन जल ढरके हो ॥६॥
का पर[2] करौं सिंगार, सो काहि दिखावै हो ।
जेकर पिय परदेस, सो काहि रिझावै हो ॥७॥
रहै चरन चित लाइ, सोई धन आगर हो ।
पलटुदास कै सबद, बिरह के सागर हो ॥८॥

॥ प्रेम ॥

(१)

गाँठि परी पिय बोलै न हम से ॥ टेक ॥
निसि दिन जागौं मैं पिया की सेजिया ।
नैना अलसाने निकरि गे घर से ॥ १ ॥
जो मैं जनतिऊँ पिय रिसियैहैं ।
काहे को प्रीति लगौतिउ अस ठग से ॥२॥

(१) माँग का सेंदुर और आँख का काजल दोनों पोछ डाले अर्थ । (२) किस

अपने पिया को मैं बेगि मनैहौं ।
सौ तकसीर होत प्रभु जन से ॥३॥
सुनि मृदु बचन पिया मुसुकाने ।
पल्टूदास पिय मिले बड़े तप से ॥४॥

(२)

प्रेम बान जोगी मारल हो, कसकै हिया मोर ॥टेक॥
जोगिया के लालि लालि अँखियाँ हो, जस कँवल कै फूल ।
हमरी सुरुख चुनरिया हो, दूनों भये तूल[1] ॥१॥
जोगिया के लेउँ मिर्गछलवा हो, आपन पट चीर ।
दूनौं के सियब गुदरिया हो, होइ जाबै फकीर ॥२॥
गगना मैं सिंगिया बजाइन्हि हो ताकिन्हि मोरी ओर ।
चितवन में मन हरि लियो हो, जोगिया बड़ चोर ॥३॥
गंग जमुन के बिचवाँ हो, बहै झिरहिर नीर ।
तेहिं ठैयाँ जोरल सनेहिया हो, हरि लै गयो पीर ॥४॥
जोगिया अमर मरै नहिं हो, पुजवल मोरी आस ।
करम लिखा बर पावल हो, गावै पलटूदास ॥५॥

(३)

कुंडलिया

जहाँ तनिक जल बीछुड़ै छोड़ि देत है प्रान ॥
छोड़ि देत है प्रान जहाँ जल से बिलगावै ।
देइ दूध में डारि रहै ना प्रान गवावै ॥
जा को वही अहार ताहि को का लै दीजै ।
रहै ना कोटि उपाय और सुख नाना कीजै ॥

यह लीजे दृष्टान्त सकै सो लेइ बिचारी ।
ऐसो करै सनेह ताहि की मैं बलिहारी ॥
पलटू ऐसी प्रीति करु जल औ मीन समान ।
जहाँ तनिक जल बीछुड़ै छोड़ि देत है प्रान ॥

(४)
कुण्डलिया

मेरे तन तन लग गई पिय की मीठी बोल ॥
पिय की मीठी बोल सुनत मैं भई दिवानी ।
भँवर गुफा के बीच उठत है सोहं बानी ॥
देखा पिय का रूप रूप मैं जाय समानी ।
जब से भया मिलाप मिले पर ना अलगानी ॥
प्रीति पुरानी रही लिया हमने पहिचानी ।
मिली जोति मैं जोति सुहागिन सुरति समानी ॥
पलटू सबद के सुनत ही घूँघट डारा खोल ।
मेरे तन तन लग गई पिय की मीठी बोल ॥

(५)
कुण्डलिया

मगन भई मेरी माइजी जब से पाया कन्थ ॥
जब से पाया कन्थ पन्थ सतगुरु बतलाया ।
सतगुरु बड़े दयाल करी उन मो पर दाया ॥
खस्ता[१] मन मैं आइ छुटी मेरी कुचिलाई ।
सोऊँ कन्थ के साथ अंग से अंग लगाई ॥
अभ्यन्तर[२] जागी प्रीत निरन्तर कन्थ से लागी ।
दरस परस के करत जगत की भ्रमना भागी ॥
पलटू सतगुरु सब्द सुनि हृदय खुला है ग्रन्थ ।
मगन भई मेरी माइजी जब से पाया कन्थ ॥

(६)

कुंडलिया

सोई सती सराहिये जरै पिया के साथ ॥
जरै पिया के साथ सोइ है नारि सयानी ।
रहै चरन चित लाय एक से और न जानी ॥
जगत करै उपहास पिया का संग न छोड़ै ।
प्रेम की सेज बिछाय मेहर की चादर ओढ़ै ॥
ऐसी रहनी रहै तजै जो भोग बिलासा ।
मारै भूख पियास याद सँग चलती स्वासा ॥
रैन दिवस बेहोस पिया के रँग मैं राती ।
तन की सुधि है नहीं पिया सँग बोलत जाती ॥
पलटू गुरु परसाद तें किया पिया को हाथ[1] ।
सोई सती सराहिये जरै पिया के साथ ॥

(७)

कुंडलिया

आठ पहर निरखत रहै जैसे चन्द चकोर ॥
जैसे चन्द चकोर पलक से टारत नाहीं ।
चुगै बिरह से आग रहै मन चन्दै माहीं ॥
फिरै जेही दिसि चन्द तेही दिसि को मुख फेरै ।
चन्दा जाय छिपाय आग के भीतर हेरै ॥
मधुकर तजै न पदम[2] जान से जाय बँधावै ।
दीपक मैं ज्यों पतंग प्रेम से प्रान गवावै ॥
पलटू ऐसी प्रीति कर परधन चाहै चोर ।
आठ पहर निरखत रहै जैसे चन्द चकोर ॥

तरवार दोय है म्यान एकै,
किस भाँति से वा मैं कीजिये जी ॥
मीठे प्याले को दूर करौ,
कडु प्रेम पियाला पीजिये जी।
पलटू जब सीस उतारि धरै,
तब राह पिया की लीजिये जी ॥

॥ सूरमा ॥

समुझिबूझि रन चढ़ना साधो, खूब लड़ाई लड़ना है ॥टेक॥
दम दम कदम परै आगे को पीछे नाहिं पउरना है।
तिल तिल घाव लगै जो तन मैं, खेत सेती क्या टरना है ॥१॥
सबद खैंचि समसेर[1] जेर करि, उन पाँचो को धरना है।
काम क्रोध मद लोभ कैद करि, मन कर ठौरै मरना है ॥२॥
खड़ा रहै मैदान के ऊपर, उनकी चोट सँभरना है।
आठ पहर असवार सुरत पर, गाफिल नाही परना है ॥३॥
सीस दिहा साहिब के ऊपर, किसकी डेर अब डेरना है।
पलटू बाना रुड[2] के ऊपर, अब क्या दूसर करना है ॥४॥

॥ पतिब्रता ॥

कुंडलिया

पतिबरता को लच्छन सब से रहै अधीन ॥
सब से रहै अधीन टहल वह सब की करती।
सास ससुर औ भसुर ननद देवर से डरती ॥
सब को पोषन करै सभन की सेज बिछावै।
सब को लेइ सुताय, पास तब पिय के जावै ॥
सूतै पिय के पास सभन को राखै राजी।
ऐसा भक्त जो होय ताहि की जीती बाजी ॥

पलटू बोलै मीठे बचन भजन में है लौलीन ।
पतिबरता को लच्छन सब से रहै अधीन ॥

॥ साधु ॥

(१)

कुंडलिया

बड़ा होय तेहि पूजिये सन्तन किया बिचार ॥
सन्तन किया बिचार ज्ञान का दीपक लीन्हा ।
देवता तैंतिस कोटि नजर में सब को चीन्हा ॥
सब का खंडन किहा खोजि के तीन निकारा ।
तीनों में दुइ सही मुक्ति का एकै द्वारा ॥
हरि को लिहा निकारि बहुर तिन मंत्र बिचारा ।
हरि हैं गुन के बीच सन्त हैं गुन से न्यारा ॥
पलटू प्रथमै सन्त जन दूजे है करतार ।
बड़ा होय तेहि पूजिये सन्तन किया बिचार ॥

(२)

कुंडलिया

सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल सन्त ॥
तैसे सीतल सन्त जगत की ताप बुझावैं ।
जो कोइ आवै जरत मधुर मुख बचन सुनावैं ॥
धीरज सील सुभाव छिमा ना जात बखानी ।
कोमल अति मृदु बैन बज्र को करते पानी ॥
रहन चलन मुसकान ज्ञान की सुगँधि लगावैं ।
तीन ताप मिटि जाय सन्त के दरसन पावै ॥
पलटू ज्वाला उदर की रहै न मिटै तुरन्त ।

(३)

कुंडलिया

सत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास ॥
जैसे सहत कपास नाथ चरखा में ओटै ।
रूई धरि जब तुमै हाथ से दोउ निमोटै[१] ॥
रोम रोम अलगाय पकरि के धुनिया धूनी ।
पिउनी[२] नँह[३] दै काति सूत ले जुलहा बूनी ॥
धोबी भट्ठी पर धरी कुन्दीगर मुँगरी मारी ।
दरजी टुक टुक[४] फारि जोरि के किया तयारी ॥
पर स्वारथ के कारने दुख सहै पलटूदास ।
सत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास ॥

(४)

झूलना

सील सनेह सीतल बचन,
यही संतन की रीति है जी ।
सुनत बात के जुड़ाय जावै,
सब से करते वे प्रीति हैं जी ॥
चितवनि चलनि मुसकानि नवनि,
नहिं राग द्वेष हार जीत है जी ।
पलटू छिमा संतोष सरल,
तिन कौ गावे स्रुति नीति[५] है जी ॥

(५)

झूलना

पूरब पुन्न भये परगट, सतसंगति के बीच परी ।
आनँद भये जब संत मिले, वही सुभ दिन वहि सूभ घरी ॥

दरसन करत त्रय ताप मिटै, बिन कौड़ी दाम मैं जाय तरी।
पलटू आवागवन छूटा, जा के चरनन की रज सीस धरी ॥

॥ दुष्ट ॥
कुंडलिया

पर दुख कारन दुख सहै सन्त असन्त है एक ॥
सन असन्त है एक काट के जल मैं सारै।
कूँचै खैंचै खाल ऊपर से मुगरा मारै ॥
लेकर बरि के भाँजि भाँजि के बरते रसरा।
नर को बाँधै मुसुक बाँधते गउ औ बछरा ॥
अमरजाल फिर होय बझावै जलचर[1] जाई।
खग मृग जीवा जंतु तेही मैं बहुत बझाई ॥
जिव दै जिव सतावते पलटू उनको टेक।
पर दुख कारन दुख सहै सन्त असन्त है एक ॥

॥ ज्ञान ॥
(१)
कुंडलिया

पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय ॥
आपुइ गई हिराय कवन अब कहै सँदेसा।
जेकर पिय मैं ध्यान भई वह पिय के भेसा ॥
आगि माहि जो परै सोऊ अगनी ह्वै जावै।
भृंगी कीट को भेंटि आपु सम लेइ बनावै ॥
सरिता बहि के गई सिंधु मैं रही समाई।
सिव सक्ती के मिले नहीं फिर सक्ती आई ॥
पलटू दिवाल कहकहा[2] मत कोउ झाँकन जाय।
पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय ॥

(१) जल के जीव। (२) एक दीवार कहानी की जिसका होना चीन देश में

(२)

कुंडलिया

टेढ़ सोझ मुँह आपना ऐना टेढ़ा नाहिं ॥
ऐना टेढ़ा नाहि टेढ़ को टेढ़ै सूझै ।
जो कोइ देखै सोझ ताहि को सोझै बूझै ॥
जा को कछु नहिं भेद भावना अपनी दरसै ।
जा को जैसी प्रीति मुरत सो तैसी परसै ॥
दुर्जन के दुर्बुद्धि पाप से अपने जरते ।
सज्जन के है सुमति सुमति से अपने तरते ॥
पलटू ऐना संत हैं सब देखै तेहि माहिं ।
टेढ़ा सोझ मुँह आपना ऐना टेढ़ा नाहिं ॥

(३)

अरिल

पहिले हो बैराग भक्ति तब कीजिये ।
सतसंगति के जोग ज्ञान तब लीजिये ॥
ऐसे उपजै ज्ञान भक्ति को पाइ कै ।
अरे हाँ पलटू ऊपरै लीजे मारि ठीक ठहराइ कै ॥

(४)

कहिबे से क्या भया भाई, जब ज्ञान आपु से होइ ॥टेक॥
अललपच्छ को चेटुका,[१] वा को कौन करै उपदेस ।
उलटि मिलै परिवार मैं, वा से कौन कहै संदेस ॥१॥
ज्यौं सिसु[१] होत मराल[२] के, वा को कौन सिखावै ज्ञान ।
नीर कहै अलगाइ कै, वह छीर करतु है पान ॥२॥
सिंह कै बच्चा गिरि पत्यो, वह खेलत तुरत सिकार ।

संत को कौन सिखावता उन्ह अनुभव भा परकास ।
सिखई बुधि केहि काम की, जो हृदय न पलटूदास ॥४॥

॥ सतसंग ॥

(१)

कुंडलिया

पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान ॥
लोहा महँग बिकान छुए से कीमत निकरी ।
चंदन के परसंग चंदन भई बन की लकरी ॥
जैसे तिल का तेल फूल संग महंग बिकाई ।
सतसंगति में पड़ा संत भा सदन कसाई ॥
गंगा में है सुभगंग मिली जो नारा सोती ।
सीप बीच जो पड़ै बूंद सो होवै मोती ॥
पलटू हरि के नाम से गनिका चढ़ी बिमान ।
पारस के परसंग से लोहा महंग बिकान ॥

(२)

रेखता

बिना सतसंग ना कथा हरिनाम की,
बिना हरिनाम ना मोह भागै ।
मोह भाग बिना मुक्ति ना मिलैगी,
मुक्ति बिनु नाहि अनुराग लागै ॥
बिना अनुराग के भक्ति न होयगी,
भक्ति बिनु प्रेम उर नाहि जागै ।
प्रेम बिन राम ना राम बिन संत ना,

॥ गुप्त ॥

कुंडलिया

जिन जिन पाया बस्तु को तिन तिन चले छिपाय ॥
तिन तिन चले छिपाय प्रगट में होय हरक्कत ।
भीड़ भाड़ से डरै भीड़ में नही बरक्कत ॥
धनी भया जब आप मिली हीरा की खानी ।
ठग है सब संसार जुगत से चलै अपानी ॥
जो हैं रहते गुप्त सदा वह मुक्ति में रहते ।
उन पर आवै खेद प्रगट जो सब से कहते ॥
पलटू कहिये उसी से जो तन मन दै लै जाय ।
जिन जिन पाया बस्तु को तिन तिन चले छिपाय ॥

॥ बैराग ॥

(१)

अरिल

आठ पहर की मार बिना तरवार की ।
चूके सो नहिं ठाँव लड़ाई धार की ॥
उस ही से यह बनै सिपाही लाग का ।
अरे हाँ पलटू पड़ै दाग पर दाग पंथ बैराग का ॥

(२)

काम क्रोध बसि किहा नींद औ भूख को ।
लोभ मोह बसि किहा दुक्ख औ सुक्ख को ॥
पल में कोस हजार जाय यह डोलता ।
अरे हाँ पलटू वह ना लागा हाथ जौन यह बोलता ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

पड़ा रहु संत के द्वारे, बनत बनत बनि जाय ॥ टेक ॥

ध्यान मिल आवै सो पावै[1], रहै चरन लौ लाय ॥२॥
सरधा होय टरै नहिं टार, लाख कहो समुझाय ॥३॥
पलटूदास काम बनि जावे, इतने पर ठहराय ॥४॥

(२)

कुंडलिया

काजर दिये से का भया ताकन को ढब नाहिं ॥
ताकन को ढब नाहिं ताकन की गति है न्यारी।
इकटक लेवै ताकि सोइ है पिय की प्यारी ॥
ताके नैन मिरोरि नहीं चित जातै टारै।
बिन ताके केहि काम लाख कोउ नैन सवारै ॥
ताके मैं है फेर फेर काजर में नाहीं।
भक्ति[2] मिली जो नाहिं नफा क्या जोग के माहीं ॥
पलटू सनकारत[3] रहा पिय को खिन खिन माहिं।
काजर दिये से का भया ताकन को ढब नाहिं ॥

(३)

रेखता

नाचना नाचु तो खोलि घूँघट कहै[4],
खोलि के नाचु संसार देखै।
खसम रिझाव तो ओट को छोड़ि दे,
भर्म संसार को दूरि फेंकै ॥
लाज किसकी करै खसम से काम है,
नाचु भरि पेट फिर कौन छेकै।
दास पलटू कहै तुही सोहागिनी,
सोव सुख सेज तू खसम एकै ॥

(४)

रेखता

सुंदरी पिया की पिया को खोजलो,
भई बेहोस तू पिया के कै।
बहुत सी पद्मिनी खोजती मरि गईं,
रटत ही पिया पिया एक एकै॥
सती सब होत हैं जरत बिनु आगि से,
कठिन कठोर वह नाहिं झाँकै।
दास पलटू कहै सीस उतारि के,
सीस पर नाचु जो पिया ताकै[१]॥

(५)

झूलना

केतिक जुग गये बीति माला के फेरते।
छाला परि गये जीभ राम के टेरते॥
माला दीजे डारि मनै को फेरना।
अरे हाँ पलटू मुँह के कहे न मिलै दिलै बिच हेरना॥

(६)

अरिल

जीवन है दिन चारि भजन करि लीजिये।
तन मन धन सब वारि संत पर दीजिये॥
संतहि से सब होइ जो चाहै सो करैं।
अरे हाँ पलटू संग लगे भगवान संत से वे डरैं॥

॥ दीनता ॥

(१)

कुंडलिया

दूसर पलटू हुक रहा भक्ति दइ तेहि जान॥
भक्ति दई तेहि जान नाम पर पकर्यो मोकहँ।
गिरा परा धन पाय छिपायों मैं ले ओकहँ॥

लिखा रहा कछु आन कर्म मैं दीन्हा आनै ।
जानौं मही अकेल कोऊ दूसर नाहिं जानै ॥
पाछे मा फिर चेत देय पर नाही लीन्हा ।
आखिर बड़े की चूक जोइ लिक्खा सोई कीन्हा ॥
पलटू मैं पापी बड़ा भूल गया भगवान ।
दूसर पलटू इक रहा भक्ति दई तेहि जान ॥

(१)
कुंडलिया

पतित पावन बाना धर्‍यो तुम्हहि परी है लाज ॥
तुम्हहि परी है लाज बात यह हम ने बूझी ।
जब तुम बाना धर्‍यो नाहिं तब तुम कहँ सूझी ॥
अब तो तारे बनै नहीं तो बाना उतारो ।
फिर काहे को बड़ा बाच जो कहिके हारो ॥
आगहि तुम गये चूक दोष नहिं दीजै मेरो ।
तुम यह जानत नाहिं पतित होइहैं बहुतेरो ॥
पलटू मैं तो पतित हौं कियो अशुभ सब काज ।
पतित पावन बाना धर्‍यो तुम्हहि परी है लाज ॥

॥ दया ॥
(१)
अरिल

माता बालक कहै राखती प्रान है ।
फनि मनि धरै उतारि ओही पर ध्यान है ॥
माली रच्छा करै सींचता पेड़ ज्यौं ।
अरे हाँ पलटू भक्त संग भगवान गऊ औ बच्छ त्यौं ॥

(२)
अरिल

कौन सकस करि जाय नाहि कछु खबर है ।

हरि धरि मेरो रूप करै सब काम है ।
अरे हाँ पलटू बीच मेंहै इक नाम मोर बदनाम है ॥

॥ निन्दक ॥

(१)

कुंडलिया

निन्दक जीवै जुगन जुग काम हमारा होय ॥
काम हमारा होय बिना कौड़ी का चाकर ।
कमर बाँधि के फिरै करै तिहुँ लोक उजागर[1] ॥
उसे हमारी सोच पलक भर नाहिं बिसारी ।
लगा रहै दिन रात प्रेम से देता गारी ॥
भक्त कँहै दृढ़ करै जगत को भरम छुड़ावै ।
निन्दक गुरू हमार नाम से वही मिलावै ॥
सुनि के निन्दक मरि गया पलटू दिया है रोय ।
निन्दक जीवै जुगन जुग काम हमारा होय ॥

(२)

रेखता

देखि के निंदकहिं करौं परनाम मैं,
धन्य महराज तुम भक्ति धोया ।
किहा निस्तार तुम आइ संसार में,
भक्त के मैल बिनु दाम खोया ॥
भयो परसिद्ध परताप से आप के,
सकल संसार तुम सुजस बोया ।
दास पलटू कहै निंदक के मुए से,

॥ तीरथ व्रत ॥

अरिल

तीरथ ब्रत में फिरे बहुत चित लाइ के।
जल पखान को पूजि मुए पछिताइ के॥
बस्तु न बूझी जाइ अपाने हाथ में।
अरे हाँ पलटू जो कुछ मिलै सो मिलै संत के साथ में॥

॥ मंगल ॥

जनमिउँ दुख की राति, परिउँ भौसागर हो।
सोइ गइउँ भ्रम माहिं, कुमति के आगर हो॥ १॥
सतगुरु दिहिनि जगाइ, उठिउँ अकुलाई हो।
टूटि गइल भ्रम फंद, परम सुख पाई हो॥ २॥
पिय को दिहिनि मिलाइ हिये मोहि लीन्हा हो।
अपनी दासी जानि, परम पद दीन्हा हो॥ ३॥
सत्त सुकृति के गैला[1], प्रेम के लेजुर[2] हो।
पनियाँ भरौं हकोरि[3], माँग भरि सेंदुर हो॥ ४॥
सासु मोरि सुतै गजओबरि[4], ननद मोरि अगना हो।
हम धन सूतैं धवराहर[5], पिय सँग जगना हो॥ ५॥
झिरिहिरि बहै बयारि, अमी रस ढरके हो।
बरमी[6] नौरँगिया के डारि, चंदन गछ मरके[6] हो॥ ६॥
तेहि चढ़ि बोलै हंस, सबद सुनि बाउर हो।
मंगल पलटूदास, जगति के नाउर[7] हो॥ ७॥

---

(१) घड़ा। (२) रस्सी। (३) पानी का झकझोर कर जिसमें मैल कतवार छूट जाय। (४) इतना बड़ा कमरा जिस के दरवाज़े में से हाथी चला जाय। (५) ऊपर का कोठा। (६) झुकना। (७) नाऊ जिस के शुभ अवसरों पर

॥ मिश्रित ॥

(१)

कुंडलिया

बार बार बिनती करै, पलटूदास न लेइ ॥
पलटू दास न लेइ रहै कर जोरे ठाढ़ो ।
सरनागति मैं रहौं सरन जिनु लागै गाढ़ो[१] ॥
गोड़ दाबि मैं देउँ चरन धै सेवा करिहौं ।
चौका देइहौं लीपि बहुरि मैं पानी भरिहौं ॥
पैंड़ा देउँ बुहारि सबन कै जूठ उठावौं ।
जनि दुरियावहु मोहिं रहै मैं इहवाँ पावौं ॥
मुक्ति रहै द्वारे खड़ी लट से झाड़ू देइ ।
बार बार बिनती करै पलटूदास न लेइ ॥

(२)

कुंडलिया

बनिया पूरा सोई है जो तौलै सतनाम ॥
जो तौलै सतनाम छिमा का टाट बिछावै ।
प्रेम तराजू करै बाट बिस्वास बनावै ॥
बिबेक की करै दुकान ज्ञान का लेना देना ।
गादी है संतोष नाम का मारै टैना ॥
लादै उलदै भजन बचन फिर मीठे बोलै ।
कुंजी लावै सुरत सबद का ताला खोलै ॥
पलटू जिसकी बनि परी उसी से मेरा काम ।
बनिया पूरा सोई है जो तौलै सतनाम ॥

(३)
कुण्डलिया

चिन्ता की लगी आग है जरै सकल संसार ॥
जरै सकल संसार जरत तिरपुनि दो देखा ।
बादसाह उमराव जरत हैं सैयद सेखा ॥
सुर नर मुनि सब जरैं जती जोगी सन्यासी ।
पंडित ज्ञानी चतुर जरैं कनफटा उदासी ॥
जंगम सेवरा जरैं जरैं नागा बैरागी ।
कोउ न बचते भागि दुपहरी लागी आगी ॥
पलटू बचते संत जन जिन किया नाम आधार ॥
चिन्ता की लगी आग है जरै सकल संसार ॥

(४)
अरिल

सब भेंड़ी की राह चले हैं जूटि[१] के ।
आसिक बीर अकेल चला है फूटि के ॥
उलटि के खेले खेल भया गन मगन मैं ।
अरे हाँ पलटू कुत्ता भुइचपा जाय एक है गगन मैं ॥

(५)
अरिल

खाला[२] के घर नाहिं भक्ति है नाम की ।
दाल भात है नाहिं खाये के काम की ॥
साहिब का घर दूर सहज ना जानिये ।
अरे हाँ पलटू गिरे तो चकनाचूर बचन को मानिये ॥

( )
अरिल

माया ठगनी बड़ी ठगे यह जात है ।
बचै न या से कोऊ लगा दिन रात है ॥
कोटी नाही मग कोरनि जोरि के ।

तुलसी साहिब (हाथरस वाले)

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २२]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

कोइ सतगुरु देव री बताइ, चरन गहौं ताहि के ॥टेक॥
चहुँ दिसि ढूँढि फिरी कोइ भेदी, पूछत हौं गुहराय ।
उन से कहौं बिथा सब अपनी, केहि बिधि जीव जुड़ाय ॥१॥
जो कोइ सखी सुहागिनि होवै, कहै तन तपन बुझाय ।
पिउ की खोलि खबर कहै मो से, मरौं री बिकल करि हाय ॥२॥
जो न्यामत दुनिया दौलत की, सो सब देउँ बहाय ।
बारम्बार वारि तन डारौं, यह कहा मोल बिकाय ॥३॥
बिन स्वामी सिंगार सुहागिनि, लानत तोबा ताय ।
पिय बिन सेज बिछावै ऐसी, नारि मरै बिष खाय ॥४॥
सतगुरु बिरहिनि बान कलेजे, रोवै और चिल्लाय ।
हाय हाय हिय में निसि बासर, हर दम पीर पिराय ॥५॥
यहि झुंड में कोइ पाक पियारी, पिया दुलागी आहि[१] ।
मैं दुखिया हौं दर्द दिवानी, प्रीतम दरस लखाय ॥६॥
तुलसी प्यास बुझै प्यारे से, चढ़ि घर अधर समाय ।
किरपावंत संत समझावैं, और न लगै उपाय ॥७॥

(२)

जिनके हिरदे गुरु संत नहीं ।
उन नर औतार लिया न लिया ॥ टेक ॥
सूरत बिमल बिकल नहिं जा के ।
बहु बक ज्ञान किया न किया ॥१॥

करम काल बस उदर[1] निहारा ।
    जग निच मूढ़ जिया न जिया ॥ २ ॥
अगम राह रस रीति न जानी ।
    बहु सतसंग किया न किया ॥ ३ ॥
नाम अमल घट घोंटि न पीया ।
    अमल अनेक पिया न पिया ॥ ४ ॥
मोह मात जाल जिंदगी मैं ।
    सिर धरि पैर छुआ न छुवा ॥ ५ ॥
तुलसीदास साध नहिं चीन्हा ।
    तन मन धन न दिया न दिया ॥ ६ ॥

(३)

अरिल

सत मता है सार और सब जाल पसारा ।
परमहंस जग भेष बहे सब मन की लारा ॥
सत बिना नहिं घाट बाट एको नहिं पावै ।
अरे हाँ रे तुलसी भटकि भटकि भ्रम खान सत बिन भव मैं आवै ॥

(४)

अरिल

भव जल अगम अथाह थाह नहिं मिलै ठिकाना ।
सतगुरु केवट मिलै पार घर अपना जाना ॥
जग रचना जंजाल जीव माया ने घेरा ।
अरे हाँ रे तुलसी लोभ मोह बस परे करैं चौरासी फेरा ॥

॥ चितावनी ॥

(१)

रेख़ता

जगत मद मान मैं माता । खुदी का खौफ नहिं लाता ॥

कमानी काल के हाथा । करै जम जीव को घाता ॥
पड़ा मगरूर[1] क्या सोवै । बहुर फिर सीस धरि रोवै ॥२॥
अगर यों सोच अपने में । गये दिन बीत सपने में ॥
बदन मट्टी पवन पानी । मलामत[2] हाड मिल सानी ॥३॥
गदगी बीच अंदर में । बदन बदबोय मंदर में ॥
अरे नित क्या अन्हाता है । मैल मन का न जाता है ॥४॥
करेले नीम की भाई । कभी जावै न कड़वाई ॥
अरे दुरगंध का भाँडा । निरख कोइ संत ने छाँडा ॥५॥
खलक दो दिन तमासा यों । परख पानी बतासा ज्यों ॥
अगर यों जान जिंदगानी । अबर ओला घुलै पानी ॥६॥
अबस[3] तन यों बिनस्ता है । इधर घर का न रस्ता है ॥
मिरग की नाभि करतूरी । भटक ढूँढै जो बन भूरी ॥७॥
तेरा महबूब तेरे में । बस्तु गइ ढूँढ डेरे में ॥
सगुनिया संत से पावै । आप में आप दरसावै ।८॥
करै सतसंग मन टूटै । मलामत बुद्धि को छूटै ॥
गुरू मिल मैल कूँ काढै । ज्ञान की उग्रता[4] बाढै ॥९॥
सुरत जब सीतला पावै । गगन की राह चढ़ जावै ॥
होय पति प्रीति निरधारा । मिलै तुलसी पदम प्यारा ॥१०॥

(२)

क्या सोवत गाफिल चेत, सिर पर काल खड़ा ॥टेक॥
जोर जुलम की रीति विचारी, करि माया से हेत ।
जम की जबर खबर नहिं जानी, बाँधि नरक दुख देत ॥१॥
जनसै बदन अगिन बिच जावै, खीर खाँड रस लेत ।
फेरि फिरि काल कमान चढ़ावै, मार लेत खुल खेत ॥२॥

बिष रस रंग संग बहु कीन्हा, करि करि बेस बिसेल[1] ।
वृद्ध अनाथ बूढ़ तन भइया, कारे केस सपेद ॥३॥
सुत दारा आदिक अलसाने, कुटुम्बा भरै परेल ।
छलबल माया करि गइ रे, या दुनिया के हेत ॥४॥
मनी मान से धनी न चीन्हा, चिड़िया चुग गइ खेत ।
तुलसी चरन सरन सतगुरु बिन ग्रासत रवि जस केत ॥५॥

॥ बिरह ॥

(१)

सखी मोहि नींद न आवे री । एरी बैरन बिरह जगावे ॥१॥
सूनी सेज पिया बिन ब्याकुल । पीर सतावै री ॥२॥
रैन न चैन दिवस दुख ब्यापै । जग नहिं भावै री ॥३॥
तलफत बदन बिना सुख साइयाँ । सब जरि जावै री ॥४॥
बिषधर[2] लहर डसै नागिन सी । ज्यों जस खावै री ॥५॥
दैवै मीच दई बिरहन को । हाले मरि जावै री ॥६॥
कैफ[3] बिना तुलसी तन सूखे । जिय तरसावै री ॥७॥

(२)

पी की मोहि लहर उठत छूटत रैन नाहीं ।
कहा कहूँ करमन करी रेख हिये की दरदाई ॥१॥
अँखियाँ ढुर ढुरत नीर सखियाँ सुख नाहीं ।
पपिहा पिउ पिउ के बोल बोलत खिसियाई ॥२॥
जियरा जरजर पिरात रात रटत साईं ।
लाईं सुति चरन सरन हित चित बिन्हवाई ॥३॥
मेरे मन की मुराद साध संगत चाही ।
खोजै खूल खूल बिसेष लेरी अपनाई ॥४॥

तुलसी तन मन बिलास पास प्रेम छाई ।
पाई घर धध॰ धीर रमक सो जनाई ॥५॥

(३)

मेरे दरद की पीर कसक किस से मैं कहूँ ॥ टेक ॥
ऐसा हकीम होय कोई जान दे दहूँ ।
खटकै कलेजे बीच बान तीर से सहूँ ॥१॥
घायल की समझ सूर चूर घाव में रहूँ ।
हीये हवाल हाल गला काटि के लहूँ ॥२॥
जैसे तड़पती मीन नीर पीर ज्यों सहूँ ।
जैसे चकोर चंद चाह चित्त से चहूँ ॥३॥
सोचौ सुबह और साम पिया धाम कस गहूँ ।
तुलसी बिना मिलाप छुरी मार मर रहूँ ॥४॥

(४)

प्यारी पिया पीर खली आधी रतियाँ ॥ टेक ॥
सोवत समझ उठी अपने में। कथा कहुँ बरनि बिपतियाँ ॥१
चोली बन्द बदन बिच खटकै। उमँग उमग फटै छतियाँ ॥२
रोवत रैन चैन नाहिं चित में। क्रूर करम की बतियाँ ॥३॥
तुलसी देस ऐस बिन पिय के। सोच लिखूँ कित पतियाँ ॥४

(५)

सावन

पिय बिन सावन सुख नहीं, हिये बिच उठत हिलोर ।
बोल बचन भावे नहीं, तन मन तड़पि अतोल ॥१॥
पिय बिन बिरहन बावरी, जिय जस कसकत हूल ।
सूल उठै पति पीर की, धन सपत सुख भूल ॥२॥
इत बैरी बदरा भये, गरजि घुमरि घनघोर ।

खोज करूँ कस कस करूँ, सुधि बुधि रहत न हाथ ।
साथ मिलै पिया पंथ को, मारग चलूँ दिन रात ॥४॥
सुरति निरति डोरी करूँ, मन मत खम गड़ाइ ।
लै की लहर उपर मिली, झूली सुरति चढ़ाइ ॥५॥
ये सावन तुलसी कहै खोजो सतसंग माहिं ।
गाइ गवन सज्जन करै, बूझै सत गति पाइ ॥६॥

( )

सावन

पिया बिन बिरहिन बावरी, दइ[1] दुख दियो री कठोर ।
मोरि खबर सुधि ना लई, ज्यों बिन चंद चकोर ॥१॥
चकवा चकई बिछोह की, बरनूँ कौन बयान ।
नदिया पार चकवा रहै, चकई वार मिलाप ॥२॥
रैन बिलग सुनती हुती मोरे हिये बरतत आज ।
बिलग पिय से मरिबो भलो, यह दुख सह्यो न जात ॥३॥
सब सिंगार फीका लगै, पिय बिन कछु न सुहाइ ।
हाय हाय तलफत रहूँ, कहौ केहि जाइ सुनाइ ॥४॥
लोग बटाऊ री बिदेस के, नहिं पर पीर पिछान ।
चरन बिना चहुँ दिसि फिरी, नहिं कछु जियरा जुड़ान ॥५॥
कल्प[2] कल्प कलपत भये, जुग जुग जोवत बाट ।
कोइ री सुहागिनि ना मिली, पूछूँ पिया घर घाट ॥६॥
नर तन नगर डगर मिलै, कहुँ सब संत सुजान ।
फिरि पसु पच्छिन में नहीं, जड़मत[3] जीव भुलान ॥७॥

(१) दैव ईश्वर। (२) ब्रह्मा का एक दिन जो एक हज़ार युग या ४३ करोड़ बीस लाख बरस के बराबर होता है और जिस के बीतने पर समस्त सृष्टि का

बिन सतगुरु व्याकुल हिये, जियरा धरत न धीर ।
पीर पिया बिन को हरै, तुलसी गगन गभीर ।८॥

(७)

व्याकुल बिरह दिवानी, झड़ै नित नैनन पानी ।टेक॥
हर दम पीर पिया की खटकै, सुधि बुधि बदन हिरानी ॥१॥
होस हवास नहीं कुछ तन में, बेदम जोत भुलानी ॥२॥
बहु तरग चित चेतन नाहीं, मन मुरदे की बानी ॥३॥
नाड़ी बैद बिथा नहिं जानै, क्यों औषद दे आनी ॥४॥
हिये में दाग जिगर के अंदर क्या कहि दरद बखानी ॥५॥
सतगुरु बैद बिथा पहिचानैं, बूटी है उनकी जानी ॥६॥
तुलसी यह रोग रोगिया बूझै, जिस को पीर पिरानी ॥७॥

(८)

प्रीतम पीर पिरानी, दरद कोइ बिरले जानी ॥ टेक ॥
डसत भुवंग चढ़त सननननन, जहर लहर लहरानी ॥१॥
घनन घनन घन्नाटी आवै, भावै अन्न न पानी ॥२॥
भवर चक्र की उठत घुमेरैं, फिरै दसो दिसि आनी ॥३॥
अंदर हाल बिहाल हलावत, दुरगम प्रीति निभानी ॥४॥
आसिक इसक इसक आसिक से, करना मौत निसानी ॥५॥
मुरदा ह्वै करि खाक मिली अब, जब पट अमर लिखानी ॥६॥
पिय को रोग सोग तन मन में, सतगुरु सुधि अलगानी ॥७॥
तुलसी यह मारग मुस्किल का, धड़ बिन सीस बिकानी ॥८॥

॥ विनय ॥

कुंडलिया

बार बार बिनती करूं सतगुरु चरन निवास ॥
सतगुरु चरन निवास बास मोहि दीन्ह लखाइ ।

मैं अति पतित मलहीन दीन देखा मोहिं साईं ।
लीन्हा अंग लगाय कहूँ अस कौन बड़ाई ॥
तुलसी मैं अति हीन हूँ दीन्हा अगम अवास ।
बार बार बिनती करूँ सतगुरु चरन निवास ॥

॥ भेद ॥

(१)

रेखता

पैठ मन पैठ दरियाव दर आप में ।
कँवल बिच भौज[1] में कमठ राजै ॥
होत जहँ सोर घनघोर घट में लखै ॥
निरख मन मौज अनहद्द बाजै ॥
गगन की गिरा पर सुरत से सैल कर ।
नहँ तिल तोड़ घर अगम साजै ॥
दास तुलसी कहै पछिम के द्वार पर ।
साहिब घर अद्भुत बिराजै ॥

(२)

कुंडलिया

सुत चढ़ि गई अकास में सोर भया ब्रह्मंड ॥
सोर भया ब्रह्मंड अंड में धधक चढ़ाई ।
जब फूटा असमान गगन में सहज समाई ॥
सुन्न सहर के बीच ब्रह्म से भया मिलापा ।
परमातम पद लेख देख कर भया हुलासा ॥
तुलसी गलि मलि लखि पड़ी निरखि लखा सब अंड ।
सुत चढ़ि गई अकास में सोर भया ब्रह्मंड ॥

॥ उपदेश ॥

होली

कैसे जल भरत गगरिया, तेरी भीजी न नेक अँगुरिया ॥टेक
सतगुरु घाट गई बिन जाने, पैरी न चीन्ह पकरिया ।
सागर थाह अथाह अगम को, कोइ भर नहिं जात अनरिया ॥१
सासु ननद के अनेंद पिया मोरे, डारैंगे फोड़ गगरिया ।
रीती[1] जाति फिरी बिन पानी, मानत नाहिं बहुरिया ॥२॥
सासू ससुर जेठ जुलमाई, साईं ने सील सँवरिया ।
बीतत दिवस रही अब रजनी, खुलत न प्रेम किवरिया ॥३॥
तुलसी ताव दाव यहि औसर, पिय सँग पैठ नगरिया ।
सूरति साज सजो नभ मंदर, झंदर बीच डगरिया ॥४॥

॥ मूर्ति पूजा ॥

(१)

सवैया

नर को यही ठाठ बैराट बनो ।
अस श्रीमत[2] में कह्यो व्यास बखाना ॥ १ ॥
दुतिया अस्कंध में बूझ बिचारि ।
नहीं कह्यो पूजन काठ पषाना ॥ २ ॥
गीता में भाखि कही भगवान ।
सो धरम तजा जिन मोहिं पिछाना ॥ ३ ॥
पूरन ब्रह्म बेदांत कहै ।
तुही आप अपनपौ आप भुलाना ॥ ४ ॥
पाहन पूजत जन्म गयो ।
कछु सूझि परी नहिं लाभ न हाना ॥ ५ ॥
आसा जाइ बसे जड़ में ।
तब अंत भयो जेहि माहिं समाना ॥ ६ ॥

वेद को प्रीति की रीति करी ।
कर्म काण्ड रचे भ्रम जन्म सिराना ॥ ७ ॥
यह तत ज्ञान कहै तुलसी ।
तैं पत्थर में परमेसुर जाना ॥ ८ ॥

(२)

तन के तत मंदर को देखो जाई ।
आतम सा देव जाहि पूजो भाई ॥
पाहन की मूरत का झूठ पसारा ।
तुलसी पूजै बेहोस जनम बिगारा ।

॥ निन्दा ॥

(१)

॥ रेखता ॥

निंदा साध संत की नित्त करै
काला मुँह कर काल घुमावता है ॥
जुग जुग नरक की खानि पड़ै,
जम जाल जंजीर फिर पावता है ॥
तुलसी कुबास बेहाल मरै,
दर हाल का ख्याल कहावता है ॥

(२)

कवित्त

साध संत से उपाध रहत बेसवा[1] के साथ
बड़े कुटिल हैं कुपाथ चलैं पंथ ना निहारि के ॥ १ ॥
कर्मन के मैले और विषरस के पेले ।
सो ऐसे हरामखोर दोजख में परत हैं ॥ २ ॥
देखत के नीके और करनी के फीके ।
सो काटि काटि नीके [illegible] को [illegible] हैं ॥ ३ ॥

खोट मोट मानी आठो गाँठ के हरामी ।
सो ऐसे कुटिल कामी काम राग हू में भरे हैं ॥ ४ ॥
देखत के ज्ञानी कूर खान को निसानी ।
अधम ऐसे अभिमानी सो जानि हानि करत हैं ॥ ५ ॥
साचे संसार लार संतन से फेर फार ।
तुलसी मुख परत छार[1] छली छिद्र भरे हैं ॥ ६ ॥

अरिल

इंद्री रस सुख स्वाद बाद ले जन्म बिगारा ।
जिभ्या रस बस काज पेट भया बिष्ठा सारा ॥
टुक जीवन के काज लाज मन में नहिं आवै ।
अरे हाँ रे तुलसी काल खड़ा सिर ऊपर घड़ी घड़ियाल बजावै ॥

॥ चितावनी ॥

कुंडलिया

जग जग कहते जुग भये जगा न एको बार ॥
जगा न एको बार सार कहो कैसे पावै ।
सोवत जुग जुग भये संत बिन कौन जगावै ॥
पड़े भरम के माहिं बहद से कौन छुड़ावै ।
जो कोइ कहै बिबेक ताहि को नेक न भावै ॥
तुलसी पंडित भेष से सब भूला संसार ।
जग जग कहते जुग भये जगा न एको बार ॥

॥ बारहमासा लावनी ॥

आली असाढ़ के मास बिरह उठि बादल घहराने ।
चहुँ दिस चमकै बीज बिकल पिया के बिन हैराने ॥
खबर बिन धीरज नहिं आवै ।
तन मन बदन बेहाल बिपति में नहिं कोइ कुछ भावै ॥

कहूँ नहिं दिल ठाकन आ के ।
हर दम पिय की पीर दरस बिन मन मोरा भाके ॥ १
सखि सावन के मास सोक मन सन्दर घ रानो ।
रिमझिम बरसै मेघ मोर दादर की सुन बानो ॥
जिगर अन्दर जिय लहरावै ।
तड़पै तन के माहिं हाय पिय खोजै कहं पाव ॥
रही हिये में पिय को रट कै । हर दम पिय० ॥ २ ॥
भर भादों झड़ मेघ अखंडित बरसै जल धारा ।
आवै पिय की पीर नीर नैनों बहै जस धारा ॥
सुरख सब अंखियन में लालो ।
मारै गोसा लागि तीर हिये ज्यों कसके भालो ॥
कलेजे अन्दर में खटके । हर दम पिय० ॥ ३ ॥
ऋतु कुआर के मास आस लागी सब सुध बिसारी ।
हंस सिरोमनि भूल भूल से तजि मेवा मिसरी ॥
मरम सगत बिन कहं पाऊं ।
बिन सतगुरु के बाट घाट घर घाट कैसे जाऊं ॥
सुरत मन त्यों करत लटके । हर दम पिय० ॥ ४ ॥
कातिक तिल के माहिं जाय सोइ सुरत सुधि दरसावै
अष्ट कँवल दल द्वार पार पद हद सब समझावै ॥
सरन है सतगुरु को चेली ।
मैली बुद्धि निकारि सार पावै जब लखि हेली ॥
चाँदनी हियरे में छिटके । हर दम पिय० ॥ ५ ॥
अघ अघहन के मास पाप पुन सब जग जरि जावै ।
[illegible]

करम का भोग भरम छूटै ॥
बिन बेनी असनान पकड़ जम घर धर के लूटै ॥
बचै नहिं कोइ सब को पटकै । हर दम पिय० ॥ ६ ॥
पूस पुरुष की आस बास बिन नहिं जिव निस्तारा ।
सतगुरु केवल गैल गवन करि जब जावै पारा ॥
मिलै जब पिउ परसै प्यारी ।
सुन्दर सेज बिछाय पिया सँग सोवै कर यारी ॥
अरज करि प्रीतम से हटकै । हर दम पिय० ॥ ७ ॥
माघ मनोरथ प्रीति परम पद को सुति सम्हारी ।
ऐसी है कोइ नारि जगत तजि तन मन से न्यारी ॥
सुरत की डोरी लौ लावै ।
मूल मुकर[1] की राह दाव करि सहजहिं चढ़ि जावै ॥
कुमति कुनबे की बुधि झटकै । हर दम पिय० ॥ ८ ॥
फागुन फरक निकारि यार सँग खेलै खुल होली ।
आस अबीर उड़ाय गगन को भर मारै झोली ॥
अरगजा घिसि चन्दन लेपै ।
नील सिखर की राह सुरत चढ़ि सुन्दर मैं चेपै[2] ॥
चरन मैं हित चित से गठि कै । हर दम पि० ॥ ९ ॥
चतुर सहेली चेत हेत हियरे से मन लावै ।
पल पल पालै प्रीति रीति पिया को जो रस चावै ॥
अमल करि होवै मतवारी ।
नसा नैन के माहिं बिसरि गइ सुधि बुधि सब सारी ॥
गरक[2] डोरी बाँधे बटि के । हर दम पिय० ॥ १० ॥

छन्द बैसाख को साख सिख गति सन्तन ने गाई।
सुन के सज्जन होय समझ करि छोड़ चतुराई॥
दोनों दिल दुरमत को छोड़ै।
मन मकरन्द[1] को जानि मान तागा को सब तोड़॥
लहर सतसंग की जब चलके। हर दम पिय०॥ ११॥
जबर जेठ की रीति करै कोइ किंकर जब होवै।
मन के बिषम बिकार काढ़ि के तुलसी सब धोवै॥
भरम तजि भक्ति भजन करना।
मन मूरख को बाँधि पकड़ कर जीवतही मरना॥
निकल घट न्यारी हूं फटकै।
हर दम पिय की पीर दरस बिन मन मोरा भटके॥१२॥

काष्ठ जिह्वास्वामी (देव)

जीवन समय—सं० १८३४ से १९०९ तक। जन्म स्थान—काशी। सत्संग स्थान—काशी और रामनगर। जाति—सरजूपारी ब्राह्मण भीखी मिश्र शाखा के।

इन का बिवाह काशी ही में हो गया था परन्तु वैराग्य उपजने पर गृहस्थ आश्रम को त्याग कर सन्यास ले लिया, और देवतीर्थ स्वामी नाम हुआ।

आप बड़े पंडित थे और एक बार अपने गुरू से विवाद किया जिस के प्रायश्चित में अपनी जीभ पर काठ की खोल चढ़ा कर सदा को बोलना बंद कर दिया और तख्ती पर लिख कर बातचीत करने लगे। यह केवल साग पात खाते थे। महाराज ईश्वरी प्रसाद नारायणसिंह काशिराज के आप दीक्षा गुरु थे। लगभग ७५ बरस की अवस्था में कुआर बदी १२ संवत १९०९ को चोला छोड़ा। इन्होंने विनयामृत और कई उत्तम उत्तम ग्रंथ लिखे हैं।

॥ प्रेम ॥

(१)

बसो यह सिय रघुबर को ध्यान।
स्यामल गौर किसोर बयस[2] दोउ, जे जानहु को जान॥१॥

लटकत लट लहरत स्त्रुति कुन्डल, गहनन की झमकान ।
आपुस मैं हसि हरि के दोऊ, खात खियावत पान ॥२॥
जहँ बसत नित महमह महकत, लहरत लता बितान[१] ।
बिहरत दोउ तेहि सुमन बाग मैं, अलि कोकिल कर गान ॥३॥
ओहि रहस्य सुख रस को कैसे, जानि सकै अज्ञान ।
देवहु की जहँ मति पहुँचत नाहि, थकि गये बेद पुरान ॥४॥

(२)

चीखि चीखि चसकन से राम सुधा पीजिये ।
राम चरित सागर मैं रोम रोम भीजिये ॥१॥
राग द्वेस जग बढ़ाइ काहे को छीजिये ।
परदुक्खन देखत हीं आप सों पसीजिये ॥ २ ॥
तोरि तारि खैंचि खाँचि स्त्रुति को नाहिं गींजिये ।
जा मैं रस बनो रहै वही अर्थ कीजिये ॥ ३ ॥
बहुत काल सन्तन के दोऊ चरन मींजिये ।
देव दृष्टि पाइ बिमल जुग जुग लों जीजिये ॥ ४ ॥

॥ विनय ॥

मैं तो मन ही मन पछिताय रह्यौ ॥ टेक ॥
साज समाज सरस पायहु के, कर से रतन गँवाय रह्यौ ॥१॥
यह नर तन यह काया उत्तम, बिन सतसग नसाय रह्यौ ॥२॥
पढ्यौ गुन्यौ सिखयौ औरन को, आप बिषय लपटाय रह्यौ ३
चित्र बिचित्र करम को धागा, जनम जनम अरुझाय रह्यौ॥४
काहे को कबहू यह सुरझहि, दिन दिन अधिक फसाय रह्यौ ५
सदा मुक्ति को ज्ञान अगम लखि, गले हार पहिराय रह्यौ ॥६
जिव को सूत सिवहि से अरुझै, बिनती देव सुनाय रह्यौ ॥७

॥ उपदेश ॥

(१)

कोइ सफा न देखा दिल का, साँचा बना झिलमिल का ॥ टेक
कोइ बिल्ली कोइ बगला देखा, बाहर फकीरी तिल का[1]।
बाहर मुख से ज्ञान छाँटते, भीतर मैला दिल का ॥ १ ॥
भजन करन में गजब आलसी, जैसे थका मंजिल का।
औरन के पोसन में गरमा, जैसे जहुरा सिल का ॥ २ ॥
पढ़े लिखे कुछ ऐसेहि वैसे, बड़ा घमंड अकिल का।
जहरी बचन यों मुख से निकले, साँप निकला बिल का ॥३
भजन बिना सब जप तप झूठा, झूठ तबक्का फजल[2] का।
क्या कहिये गुरुदेव न पाया, महरम[3] औरा के तिल का ॥४

(२)

समुझ बूझ जिय में नहिं देखे, क्या करना है क्या करता है।
गुन का मालिक आपे बनता, अरु दोष राम पर धरता है ॥१
अपना धरम छोड़ि औरों के, ओछे धरम पै मरता है।
अजब नसे की गफलत आई, साहिब को नाहिं डरता है ॥२॥
जिनके खातिर जान माल से, नाहिं बहि के तू मरता है।
वे क्या तेरे काम पड़ेंगे, उनका रहना मरता है ॥ ३ ॥
देव धरम चाहे सो करि ले, आवागमन न टरता है।
प्यारे केवल राम नाम से, तेरा मतलब सरता है ॥ ४ ॥

फुटकर

कबित्त

काहू के अधार सेवा बनिज ब्योपार को है,
काहू के अधार पितु बित खेत ग्राम को ॥

काहू के अधार तन सार प्रान अधुन को,
काहू के अधार प्रिय सार निज नाम को ॥
काहू के अधार विद्या बुद्धि अरु बल को है,
काहू के अधार हाथी घोड़ा धन धाम को ॥
मैं तो निराधार मेरो हरिहि करैंगे सार,
मेरे तो अधार एक जानो हरि नाम को ॥

कवित्त

कब को पुकारत हौं सुनो नहीं एको बात,
एहो नंदलाल तुम कैसे प्रतिपाल हौ ॥
कहैं हैं दयाल सो तो दया हू न देखियत,
मेरी मति ऐसी ओछी नीके पसुपाल हौ ॥
धर्‍यो हो नृसिंह रूप तबही प्रह्लाद काज,
अब तो न लाज कछू गोधन में ग्वाल हौ ॥
डार्‍यो तेल कान में कि बरयो जाय कानन[1] में,
सेस सेज लेटि कि धौं पौंढे जा पताल हौ ॥

सवैया

आईं सबै ब्रज गोप लली, ठिठकीं ह्वै गली जमुना जल न्हाने १
औचक आय मिले रसखान, बजावत बेनु सुनावत तानैं ॥२
हाहा करी सिसकीं सिगरी मति मैन[2] हरो हियरा हुलसाने ३
घूम दिमाने[3] अमाने चकोर से, ओर सी दे‌ऊ चलैं दृग बानैं ॥४

सवैया

सुनिये सब की कहिये न कछू, रहिये इमि या भव बागर[4] मैं १
करिये ब्रत नेम सचाइ लिये, जिन तैं तरिये भव सागर मैं ॥२
मिलिये सब सों दुरभाव बिना, रहिये सतसंग
रसखान गुविंदहि यों भजिये, जिमि नागरि[5] के

राग

वह साँवरो नन्द को छैल अली, अब तो आँखिन हो प्यारा लगो १
नित घालन बालन कुजन में, मोहिं देखत ही हिय मारन लगो २
रस खान अखान कहाँ कहिये, तकि के री नैनों गुर छान लगो ३
तिरछी बरछी सम मारत है, दृग बान कमान सो कान लगो ४

शब्द

कहाँ गये प्यारे, झलक दिखा के ॥ टेक ॥
हिरदे बसी माधुरी मूरत, कस जाव प्रीतम खूट छुड़ा के ॥१
बिरह अगिन ने तन मन फूँका, हिया जुड़ावो अमी चुवा के २
भई बावरी इत उत डोलौं, तन मन की सब सुद्धि भुला के ३
मैं तो हौं पतितन को नायक, कैसे तरिहौ पार[1] बिसरा के ४
अब तो कर में लीन्ह रसधौरा, तुम ही मिलिहौं देह जरा के ५
बाँह गहे की लाज तुम्हीं को, का पे जावो तुम्हरा कहा के ६
प्रेम प्रसाद देहु निज स्वामी, मो को दासानदास बना के ॥७॥

रुबाई

खाक आप को समझना, इकसीर[2] है तो यह है ।
इखलाक[3] सब से रखना, तराखोर है तो यह है ॥
सब काम अपना करना, तकदीर के हवाले ।
नजदीक आरिफों के, तदबीर है तो यह है ॥

रुबाई

वीरों किया जब आप को बस्ती नजर पड़ी ।
जब आप नेस्त हम हुए हस्ती नजर पड़ी ॥
देखा तो खाकसारी ही आली मुकाम है ।
ज्यों ज्यों बलंद हम हुए पस्ती नजर पड़ी ॥

॥ इति ॥

---

(१) पतित पावन होने का प्रण । (२) रसायन । (३) आदर सत्कार ।

फ़िहरिस्त छपी हुई पुस्तकों की

जीवन चरित्र हर महात्मा के उनकी बानी के आदि में दिया है

कबीर साहिब का साखी संग्रह	१=)
कबीर साहिब की शब्दावली भाग पहला ॥) भाग दूसरा	॥)
भाग तीसरा ।-) भाग चौथा	=)
ज्ञान गुदड़ी रेख़ते और झूलने	।=)
अखरावती	=)
धनी धरमदास जी की शब्दावली और जीवन चरित्र	॥-)
तुलसी साहिब (हाथरस वाले) की शब्दावली और जीवन चरित्र भाग प०	१)
भाग २ पद्मसागर ग्रंथ सहित	१-)
रत्न सागर मय जीवन चरित्र	१।)
घट रामायन मय जीवन चरित्र भाग १	१॥)
भाग २	१॥)
गुरु नानक की प्राण संगली सटिप्पण और जीवन चरित्र भाग पहिला	१॥)
भाग दूसरा	१॥)
दादू दयाल की बानी भाग १ साखी १॥) भाग २ शब्द	१।)
सुंदर बिलास	१-)
पलटू साहिब भाग १—कुंडलियाँ	॥)
भाग २—रेख़्ते झूलने अरिल कवित्त सवैया	॥)
भाग ३—भजन और साखियाँ	॥)
जगजीवन साहिब की बानी भाग पहला ॥-) भाग दूसरा	॥-)
दूलन दास जी की बानी	।)॥
चरनदासजी की बानी और जीवन चरित्र भाग प० ॥-) भाग दू०	॥)
गरीबदास जी की बानी और जीवन चरित्र	१।)
रैदास जी की बानी और जीवन चरित्र	॥)
दरिया साहिब (बिहार वाले) का दरिया सागर और जीवन चरित्र	।=)॥
के चुने हुए पद और साखी	।-)
दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) की बानी और जीवन चरित्र	।=)
भीखा साहिब की शब्दावली और जीवन चरित्र	॥-)॥
गुलाल साहिब (भीखा साहिब के गुरु) की बानी और जीवन चरित्र	॥)
बाबा मलूकदास जी की बानी और जीवन चरित्र	।)॥

[illegible])
[illegible] अब्दुल्लाह और [illegible] चरित्र |)
[illegible] और [illegible] चरित्र)||
[illegible] जी [illegible] चरित्र |)
मीराबाई [illegible] और [illegible] चरित्र ||)
सन्त [illegible] और [illegible] चरित्र |–)||
[illegible] की बानी और जीवन चरित्र |)
संतबानी संग्रह भाग १ [साखी] १||)
[प्रत्येक महात्मा के संक्षिप्त जीवन चरित्र सहित]
संतबानी संग्रह भाग २ [शब्द] १||)
[ऐसे महात्माओं के संक्षिप्त जीवन चरित्र सहित जो भाग १ में नहीं हैं]

कुल ३३|–)

दूसरी पुस्तकें

लोक परलोक हितकारी [illegible] [जिसमें [illegible] हिन्दी और [illegible] महात्माओं और विद्वानों और [illegible] के [illegible] वचन १६२ पृष्ठों में छपे हैं। — तसवीर सहित: सजिल्द १|), अजिल्द |||=)
(परिशिष्ट) [illegible] =)
अहिल्याबाई का जीवन चरित्र अंग्रेजी पद्य में =)

नागरी सीरीज

सिद्धि ||)
[illegible] ध्रुव की भयानक यात्रा ||)
सावित्री गायत्री ||)
[illegible] देवी (स्त्री शिक्षा का [illegible] उपन्यास) ||–)
महारानी शशिप्रभा देवी ([illegible] उपन्यास) १|)
द्रौपदी (चित्र सहित छप रही है)

दाम में डाक महसूल व रजिस्टरी शामिल नहीं है वह इसके ऊपर लिया जायगा। ग्राहकों से निवेदन है कि अपना पता साफ लिखें।

शुद्धि पत्र

प्रथम भाग

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	४	लम्बा	लम्बा
	२ (फुटनोट)	उहा	उह
७	५	नावह कुअगाना ना वह कुआटा गा	
१३	४	फग	फाग
१८	३	में	म
२०	१६	घर	घर
२१	२	कीम	काम
३२	(संक्षिप्त जीवन)	संग्रह	सग्रह
४२	१२	रन	रैन
५४	११	इस्थि	इहि उस
६४	६	जगजीस	जगदीस
७१	४	मे	म
७३	१४	धरि	करि
७८	४ (जीवन चरित्र)	कथा	कथा
८	१० (फुटनोट)	हॅसगे	हॅसगे
८	१५ फुटनोट	मसा	मनसा
८४	१६	ताहि	साहि
८७	१	ट्या	ज्यों
८७	२	उग्त	इग्त
८७	२	का	का
८८	२१	बारा	बानर
८९	१८	हेय	हाय
८९	९ (फुटनोट)	म	म
९०	३	जाति	जाति
९७	२१	रह्या	रह्यो

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	८	[illegible]	[illegible]
११	१२	नाव	नाव
१२	१	[illegible]	[illegible]
१[illegible]	२	[illegible]	[illegible]
१[illegible]	३	[illegible]	[illegible]
१[illegible]	१०	[illegible]	
१३	१७	[illegible]	बिरागी
१४२	४	रामुभि	रामुभि
१४१	२	म	म
१३३		[illegible]	[illegible]
१[illegible]	३	[illegible]	कोत्र
१७२	२ (फुटनोट)	राग	नाग
१८२	४	आ	हुआ
१८३	२ (फुटनोट)	[illegible]	कीति
१६०	८	[illegible]	[illegible]
१६	८	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	म	म
२[illegible]	१	[illegible]	[illegible]
२[illegible]	२	सन्दर	सुन्दर
२[illegible]	१६	[illegible]	[illegible]
२१०	८	[illegible]	[illegible]
२१५	१८	[illegible]	[illegible]
२१[illegible]	१६	[illegible]	[illegible]
२१६	१ (फुटनोट)	म	म
२२१	१४	[illegible]	मोती
२२	३	[illegible]	दीपक
२[illegible]	२	[illegible]	[illegible]
२५१	८	[illegible]	[illegible]
[illegible]	१[illegible]	[illegible]	[illegible]